सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५०

(जून-अगस्त १९३२)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १ जून से ३१ अगस्त, १९३२ तककी सामग्री दी गई है। इस अवधिमे हम गाधीजीके जेल-जीवनकी उस शान्तिको भंग होते देखते है जिसके दर्शन हमे पिछले खण्डमें मिलते है। इस शान्तिको पहले तो भंग किया उनके पत्र-व्यवहारके सम्बन्धमें सरकारी नीतिमे हुए परिवर्तनने, जिसके फलस्वरूप गांधीजीके पत्र पाने और भेजनेमे काफी विलम्ब होने लगा और फिर उसे भंग किया उनके घनिष्ठतम मित्र प्राणजीवन मेहताके निधनके समाचारने। और अन्तमे १७ अगस्तको प्रधान मन्त्री रैमजे मैक्डोनॉल्डकी वह घोषणा आ गई, जिसमे दलित वर्गोको एक ऐसी अल्पसंख्यक-जातिके रूपमे मान्य किया गया था जिसे पृथक् निर्वाचन मण्डलका अधिकार था। गांधीजीने पहले ही कह दिया था कि यदि सरकार ऐसा कोई निर्णय करेगी तो वे उसका मरकर भी विरोध करेंगे (देखिए खण्ड ४८ और ४९)। अपनी इसी घोषणाके अनुसार गांधीजीने प्रधान मन्त्रीको पत्र द्वारा सूचित किया कि वे २० सितम्बरसे "आमरण अनशन करने जा रहे है।" पत्रमे उन्होंने यह भी लिखा कि वे यह अनशन तभी तोड़ेंगे "जब अनशनके दौरान ब्रिटिश सरकार अपनी ही इच्छासे या लोकमतके दबावके कारण, अपने फैसलेपर पुर्नविचार करे और दलित वर्गोके लिए साम्प्रदायिक मताधिकारकी योजनाको वापस ले ले। . . ." गांधीजीने आगे चलकर कहा कि उनका यह कदम "जीवनकी उस योजनाकी पूर्ति-जैसा है, जिसे मैंने एक चौथाई शताब्दीसे अधिक समयतक काफी सफलताके साथ आजमाया है।" (पृष्ठ ३९३-४)

इससे पहले मई मासमें मीराबहनको गांधीजीसे जेलमें मिलने आने देनेकी अनुमति प्रदान किये जानेकी बातको लेकर गांधीजी और सरकारमें संघर्ष चल रहा था। इस खण्डका आरम्भ एक ऐसे पत्रसे होता है जिसमें गांधीजीने मीराबहनको लिखा था कि यदि सरकार अपना रवैया नहीं बदलती तो "मैंने अब निश्चय कर लिया है कि अगले हफ्तेसे मुलाकातें बन्द कर दूंगा।" जैसाकि उन्होंने जेलोंके महानिरीक्षकको लिखा था कि "मैंने अरसा हुआ अपने परिवारके सदस्यों और अन्य लोगोंमें भेद करना छोड़ दिया है" और इसलिए यदि वे मीराबहन जैसी साथी कार्यकर्तासे नही मिल सकते तो वे अन्य लोगोसे भी नही मिलना चाहेगे जिनमे से अधिकांशत: उनके सम्बन्धी अथवा आश्रमवासी थे (पृष्ठ २१)। देवदासके आगे उन्होंने स्वीकार किया कि उनके इस निर्णयसे सबसे ज्यादा आघात कस्तूर-

बाको पहुँचेगा। "लेकिन उसने तो आघात झेलनेके लिए ही जन्म लिया है। मेरे साथ सम्बन्ध बनाने या रखनेवालोको बडी कीमत देनी होती है" (पृष्ठ २५१-२)। जब देवदास गोरखपुरकी जेलमे बीमार थे, उस समय भी गाधीजीने यही तर्क दिया था कि "मै किसीसे देशके पश्चिम भागसे गोरखपुर जानेके लिए नहीं कहूँगा।" उन्होने कहा था कि "तत्वज्ञानका प्रयोग मै यदि तुझपर न करूँ तो और किसपर करूँ? . . . तेरे सगे-सम्बन्धी, मित्र, माता-पिता सब-कुछ ईश्वर है, दूसरे तो नाम-भरके है" (पृष्ठ ४९)। तथापि वल्लभभाईने गांधीजीको इस बातके लिए राजी कर लिया कि वे संयुक्त प्रान्तके गवर्नरको तार भेजे और उसमे उनसे अनुरोध करे कि वे देवदासका तबादला एक ऐसी जेलमें कर दे जहाँकी आबोहवा स्वास्थ्यकर हो।

पत्र-व्यवहारको लेकर जो समस्या उठ खड़ी हुई थी, उसके सुलझनेमे करीब एक महीना लग गया और सरकार भी तभी मानी जब गांधीजीने जेलोके महा-निरीक्षकको एक कडा विरोध पत्र लिखा। पत्रमें उन्होने कहा था कि "मेरे पत्रोको गन्तव्य स्थानतक भेजनेमे यह जो विलम्ब होता है, वह मुझे अपने प्रति घोर अन्याय और सरकारके लिए अशोभनीय प्रतीत होता है। . . . मेरे पत्रोके वितरणसे सम्बन्धित इस दुखदायी परिवर्तनका कारण मेरी समझमें नहीं आता" (पृष्ठ २७६)। गाधीजी द्वारा गुजरातीमे पत्र-व्यवहार करनेके सम्बन्धमे सरकारके बार-बार निर्देश दिये जानेकी आलोचना करते हुए गाधीजीने कहा कि "उससे समूचे भारतीय सरकारी कर्मचारियोके प्रति अविश्वासकी गन्ध आती है, और इसलिए स्वभावत. देशकी उस महान भाषाके प्रति अवमानना भी प्रकट होती है, जिसे यहाँके करोड़ो निवासी बोलते है।" उन्होने आगे कहा, "मुझे यह सोचकर दु ख होता है कि मैं गुजराती या हिन्दी या उर्दूमे जो पत्र लिखता हूँ, वे नियमोकी मर्यादामे आते है या नही, इसका निर्णय करनेके लिए किसी भी भारतीय अधिकारीको, जोकि ये भाषाएँ जानता है, योग्य अथवा विश्वसनीय नही माना जाता" (पृष्ठ २८४-५)।

जान पडता है, इन पत्रोका अपेक्षित प्रभाव पडा और बाहर जानेवाली डाक एक बार फिरसे नियमपूर्वक भेजी जाने लगी। और यह सब ठीक समयपर ही हुआ, क्योकि जिस दिन जेल-अधीक्षकको बाहर भेजी जानेवाली डाकके बारेमे नये निर्देश जारी किये गये (पृष्ठ ४७०), उसके दूसरे दिन अर्थात् ४ अगस्तको, गाधीजीको रंगूनमे डा० प्राणजीवनदास मेहताके निधनका समाचार मिला। उनके "जीवन-भरके विश्वस्त मित्र" (पृष्ठ ३३६) के निधनसे न केवल उनको व्यक्तिगत क्षति हुई थी, बल्कि वे प्राणजीवनदासके तीनो पुत्रोंके भविष्यके बारेमे भी बहुत चिन्तित थे। इनमे से एक, रतिलाल, साबरमती आश्रमके निकट रहते थे और उन्हें पागलपनके दौरे पड़ा करते थे तथा सबसे छोटे पुत्र मगनलाल अध्ययनके लिए विदेश गये हुए थे। उसी दिन

एच० एस० एल० पोलकको लिखते हुए गांधीजीने यह आशा व्यक्त की थी कि डा० मेहताने "अपनी स्वभावगत सावधानी बरतते हुए . . . मगनलालके लिए उपयुक्त आर्थिक प्रबन्ध कर दिया होगा।" पत्रमे उन्होंने आगे लिखा, "मुझे खेद है कि इस वक्त उनके परिवारके लोगोंके पास मैं नहीं हूँ। लेकिन मेरी नही, ईश्वरकी इच्छा ही पूरी हो, आज और हमेशा" (पृष्ठ ३३७)। डा० मेहताके भतीजेको लिखे एक पत्रमे उन्होने कहा, "ऐसे मे मगनका क्या होगा? यह सुन्दर घोंसला अब बिखर जानेवाला है। . . . लेकिन मैं यहाँ बैठे-बैठे उनके नीड़को अविच्छिन्न रखनेमें लगभग कोई भाग नहीं ले सकता, यह बात मेरे लिए अत्यन्त कष्टदायक है" (पृष्ठ ३३८)। डाक्टरके सबसे बड़े पुत्र छगनलालको उन्होने लिखा कि मैं इस समय जेलमे हूँ "अन्यथा इस समय मैं तुम्हारे निकट खड़ा होता और कदाचित डाक्टरका सिर मेरी गोदमे होता और उनका अन्तिम श्वास छूटता" (पृष्ठ ३४०)। इसके बादके कई महीनोंतक गांधीजी डाक्टर-परिवारके मामलोंमे गहरी दिलचस्पी लेते रहे।

इस अवधिके दौरान अन्य मृत्युएँ भी हुईं और हर अवसरपर गांधीजीने शोकाकुल परिवारको जो सम्वेदनापूर्ण पत्र भेजे, उनमे सहानुभूति और दार्शनिक गम्भीरताका अद्भुत सम्मिश्रण दिखाई पड़ता है। च० राजगोपालाचारीके दामादकी भरी जवानीमे मृत्यु हो गई। उसके सम्बन्धमे उन्होने राजगोपालाचारीको पत्र लिखा कि "तुम्हारे ऊपर जो विपत्ति आ पड़ी है, उसको देखते हुए मैं तुमसे मृत्युकी चर्चा नहीं करना चाहता। जॉबकी तरह तुम भी कह सकते हो कि 'यह तो ढाढ़स बँधाते हतोत्साह कर देनेवाला आदमी है'। लेकिन मुझे इतना तो लगता ही है कि यदि हम ईश्वरको पहचानते हैं तो हमें मृत्युमें भी आनन्द मानना सीखना ही चाहिए" (पृष्ठ २९८)। और इसी तरह एक पारसी पत्र-लेखिकाको उसके भाईकी मृत्युपर लिखते हुए वे कहते है, "तुम्हारे और तुम्हारी बूढ़ी माताजीके प्रति मेरी हार्दिक सहानुभूति है। . . . मगर हम इतना तो जानते ही है या हमे जानना चाहिए कि ईश्वर पूरी तरह भला है और पूर्णतः न्यायी है" (पृष्ठ ३०१)। शोक-सन्तप्त लोगोको वे सदा एक ही सलाह देते हैं: "शोकको भुला दो और . . . सेवामे जुट जाओ" (पृष्ठ ३०२)।

इस खण्डमे एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है "सत्याग्रह आश्रमका इतिहास", जिसे गांधीजीने ५ अप्रैल, १९३२ को लिखना शुरू किया था और जिसका अन्तिम उपलब्ध अंश ११ जुलाईका है। इसमे मुख्यतः उन आदर्शोंकी व्याख्या की गई है जिनसे प्रेरित होकर आश्रमकी स्थापना की गई थी और इसके साथ ही उन आदर्शोंको जीवनमे उतारनेके प्रयत्नोंका लेखा-जोखा भी है। गांधीजीने काकासाहब कालेलकरको लिखा

था कि "आश्रमका इतिहास विचित्र स्वरूप धारण करता जा रहा है।" "इसमें व्यक्तियोका उल्लेख कम ही हुआ है। इसमें भिन्न-भिन्न व्रतोके बारेमें और उनका पालन कैसे किया जाता है, इस विषयपर लिखा गया है" (पृष्ठ २८२)।

जैसाकि गांधीजीने स्पष्ट किया है, आश्रमकी स्थापना एक व्यक्तिगत आवश्यकताके रूपमे की गई थी और बादमें समयके साथ यह राष्ट्रीय पुनरुद्धारके प्रयोग करनेवाली एक सस्थाके रूपमें परिवर्तित हो गया। वे लिखते है, "आजकी दृष्टिसे भूतकालका अवलोकन करते हुए मुझे लगता है कि इस तरहका आश्रम मेरे स्वभावमे ही था। जबसे मैंने अलग घर बसाया, तभीसे मेरा घर ऊपरकी व्याख्याकी दो शर्तोंके अनुसार आश्रम-जैसा बन गया था, क्योकि यह कहा जा सकता है कि गृहस्थाश्रम भोगके लिए नही, बल्कि धर्मके लिए बना है" (पृष्ठ १८९)। धर्मके प्रति उनकी यह दिलचस्पी जितनी गहन थी उतनी ही नैसर्गिक भी थी। और उनकी 'आत्मकथा' से पता चलता है कि इसमें कैसे वृद्धि होती गई और जीवनमें वह उत्तरोत्तर दृढ होती चली गई। रस्किनकी 'अनटु दिस लास्ट' पढनेके बाद उनकी इस कल्पनाने ठोस योजनाका रूप धारण कर लिया और जैसाकि गांधीजीने 'इतिहास' मे लिखा है, आश्रमके उनके आदर्शकी विकास-प्रक्रियामें पहला कदम था १९०४ मे फीनिक्स बस्तीकी स्थापना। इससे अगला कदम था ब्रह्मचर्यका व्रत लेना, जो उन्होने १९०६ मे लिया। उनका यह व्रत भी व्यक्तिगत आवश्यकताकी ही उपज था। लेकिन इसके बाद उन्होंने जो दो कदम उठाये—अर्थात् १९११ मे जोहानिसबर्गमें टॉल्स्टॉय फार्मकी स्थापना और १९१२ में फीनिक्स आश्रमका सत्याग्रहियोंकी बस्तीके रूपमे रूपान्तरण—वे एक जीवन-पद्धतिके रूपमे गांधीजीकी सत्याग्रहकी विकासशील कल्पना और अपने-आपको राष्ट्र-सेवाके योग्य बनानेके आवश्यक और प्रभावकारी उपायके रूपमे व्यक्तिगत जीवनमें अनुशासनके समावेशकी स्वीकृतिके परिणाम थे। भारतमे इस आदर्शका और भी विस्तार हुआ और आश्रमकी स्थापना सत्य, अहिंसा और भारतीय आध्यात्मिक परम्पराके अन्य नैतिक नियमोंका पालन करनेवाले समाजके रूपमें की गई। वे कहते भी हैं कि "आश्रमने देश और समाज-सम्बन्धी जिन-जिन बातोको दोषपूर्ण माना, उन्हें दूर करनेका प्रयत्न आश्रममे किया जाये, यही इच्छा थी" (पृष्ठ १९३)। सामाजिक उद्देश्यके विचारसे नैतिक अनुशासन और आध्यात्मिक साधनाकी अभिस्थापना गांधीजीके आश्रमकी सर्जनात्मक विशिष्टता थी और यही विशिष्टता उसे प्राचीन आश्रमोसे अलग करती है; और सम्भवत: उनके मनमें भी यही बात रही होगी क्योकि वे कहते हैं, जैसाकि वे अक्सर कहते थे, आश्रम ही उनकी सबसे महत्त्वपूर्ण कृति है और एक नेताके रूपमें उनकी सफलता-असफलता आश्रमकी सफलता-असफलतापर से कूती जानी चाहिए।

आश्रममें जिन व्रतोंका पालन किया जाता था, वे मुख्यतः परम्परागत यम-नियम पर आधारित थे, लेकिन इस बातकी पूरी-पूरी कोशिश की जाती थी कि भावना और शब्दोंमें उनका समान रूपसे पालन किया जाये। इसमे गांधीजी कोई असाधारण सफलता मिलनेका दावा नही करते। इसके विपरीत वे यह स्वीकार करते है कि "आदर्श सत्यसे अभी आश्रम दूर ही है।" अन्य व्रतोंके पालनके बारेमे भी निश्चय ही यही बात थी। लेकिन वे यह दावा भी करते दिखाई देते है कि "उसके कार्यकर्ता सावधान है, अपनी अपूर्णताका उन्हें भान है और उनकी यह कोशिश रहती है कि कहीं भी असत्य न घुस जाये" (पृष्ठ १९८)। वे आश्रमकी सभी असफलताओकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेते है तथापि पूछते है "...क्या पलायन कर जाऊँ, गुफामें जा बसूँ या मौन ले लूँ?" और उनका यह विश्वास था कि यदि वे ऐसा करते है तो यह कायरता होगी। "गुफामे बैठकर सत्यकी खोज नहीं होती ... खास परिस्थितियोंमें गुफाका महत्त्व है। मगर सामान्य मनुष्यकी कसौटी तो समाजमे रहते हुए ही हो सकती है" (पृष्ठ १९५)। गांधीजीको विश्वास था कि "यदि कार्यकर्ता सच्चे होंगे तो परीक्षा कितनी ही कठिन होनेपर भी आश्रमको उसमे उत्तीर्ण होना ही चाहिए। सत्यार्थीकी शक्तिका माप भले ही हो किन्तु सत्यकी शक्ति असीम है। लेकिन यदि सत्यार्थी जागरूक साधक हो तो उसकी शक्तिका भी अन्त नही है" (पृष्ठ १९८)।

आश्रममें सबसे ज्यादा साहसपूर्ण प्रयोग तो सम्भवतः ब्रह्मचर्यका पालन करनेके सम्बन्धमें था। आश्रममे स्त्री और पुरुष संग रहते और काम करते थे और गाधीजीके शब्दोंमें उनमे से कई लोगोंको "एक-दूसरेके साथ मिलनेकी काफी आजादी है;" क्योकि आश्रमका आदर्श यह था कि "जितनी स्वतन्त्रता माँ-बेटे या बहन-भाई भोगते है, वही परस्पर व्यवहारमें आश्रमवासियोको मिल सके" (पृष्ठ २१०)। गाधीजीका कहना है कि ब्रह्मचारीके लिए स्त्री "नरककी खान" नहीं है बल्कि "वह अम्बा माता है, वह जगत्-जननी है।" गांधीजी स्वीकार करते है कि आश्रमवासियोको उन्होंने यह जो स्वतन्त्रता दी है "वह एक हदतक जानबूझकर की जानेवाली पश्चिमकी नकल है" (पृष्ठ २१२)। और इसमें जो खतरा है उससे वे पूरी तरह भिज्ञ है, लेकिन उन्हें भगवानपर पूरा भरोसा था जोकि इस सृष्टिका नियन्ता है। और गांधीजी ठीक ही कहते है कि "जो स्वतन्त्रता और आत्मविश्वास आश्रमकी स्त्रियोमे आया है, वह उतने ही अरसेमें और उसी वर्गकी स्त्रियोंमे अन्यत्र कही भी देखनेमे नही आया", और ऐसा इसलिए हुआ कि "स्त्रियोके मनमें समानताका विचार शुरूसे हो भर दिया जाता है। कामोमें सबको एक-सा भाग लेना पड़ता है" (पृष्ठ २३६)। प्रेमाबहनको लिखे एक पत्रमे वे कहते है, "स्त्री-पुरुषके बीच जो प्रकृतिने

भेद किया है . . उसके अलावा" (पृष्ठ ८८) मै और कोई भेद नहीं मानता। लगता है कि इस सम्बन्धमे उनके विचार धीरे-धीरे परिवर्तित होते गये। अपने पुत्र रामदासको लिखे एक पत्रमे वे कहते है, "पति-पत्नीके सम्बन्धके बारेमे मेरे विचारोमे परिवर्तन तो अवश्य हुआ है। मै यह अवश्य चाहूँगा कि मैने बा के साथ जैसा व्यवहार किया था, वैसा व्यवहार तुम लोग अपनी पत्नियोके साथ न करो" (पृष्ठ ३६४)।

इसी तरह आश्रमवासियोके प्रति उनके रवैयेमे भी परिवर्तन दिखाई देता है। गाधीजीने अपने परिवारके सदस्यो और आश्रमवासियोके सम्मुख अनुशासनपूर्ण और समर्पित जीवनका जो आदर्श रखा था उस आदर्शका निरन्तर वर्षोतक प्रशिक्षण देनेके बाद वे रामदाससे यह कह सकनेकी स्थितिमे थे कि उनकी अब हल्की-सी झिड़कीका भी लोगोपर बडा प्रभाव होता है और इसलिए "आज मेरी तनिक भी सख्ती हिमालयके समान भारी लगती है" (पृष्ठ ३६३)। उनका इस छूट देनेका एक कारण यह भी था कि वह अपने प्रति भी अपेक्षाकृत कम कठोर हो गये थे। वे कहते है, "मै जितना चाहता हूँ शरीर अब उतना काम नहीं करता, और जो मै स्वय ही नही करता, वह अन्य लोगोसे करवाते हुए सकोच होता ही है" (पृष्ठ ३६४)। मीराबहनसे वह कहते है कि हालाँकि हम अपनी ही भूलोंके परिणामस्वरूप बीमार पड जाते है फिर भी "बीमार पड जानेपर हमे हमेशा अपनी भर्त्सना नही करनी चाहिए" (पृष्ठ ४१७)।

मानसिक चिन्ताओसे निपटनेके लिए भी गाधीजी इसी तरहकी निस्पृहताकी सलाह देते है। एक पत्र-लेखकसे वे कहते है कि अशुद्ध विचारोके लिए दुखी होना तो "अपने-आप बनाया हुआ नरक" है। "तुम्हे बुरे विचार आते है, उनका पुन-र्चिन्तन तो करना ही नही चाहिए, अपितु ऐसा सोचकर आगे बढते जाना चाहिए मानो कुछ हुआ ही न हो" (पृष्ठ २३)। लेकिन इसका मतलब यह नही कि मनुष्यको विचारोके प्रति सजग नही रहना चाहिए। जिस तरह हम रोज अपने घरोको साफ करते है, उस तरह हमे अपने दिलोसे गन्दे विचारोंको निकाल बाहर करना चाहिए, उन्हें छिपानेके स्थानपर हमे किसी मित्रसे कहना चाहिए (पृष्ठ ५३)। सत्यके उपासकका जीवन सहज और निश्छल होता है। वह जैसा होता है वैसा ही दिखाई देता है, क्योकि "उसके विचार, वाणी और व्यवहारमे एकरूपता होगी" (पृष्ठ २९१)। इस स्थितिको प्राप्त करनेके लिए उसे चिन्तन-शक्तिका विकास करना होगा। और यदि इसे हम हस्तगत कर सकते है तो बाकी सब उसके पीछे सुन्दर ढगसे होता चला जायेगा (पृष्ठ ४४५)। किसी कार्यमें दक्षता या निपुणता तभी आती है जब उस कार्यके पीछे विचार हो। भंगीका काम भी कताईकी तरह यज्ञ हो सकता है यदि उसे सजग मन और ममतापूर्ण हृदयसे किया जाये। लेकिन व्यर्थके

विचार और ऐसी योजनाएँ और प्रस्ताव जिनपर अमल न किया जाये, "विचार व्यभिचार" है और यह "ब्रह्मचर्यका भग" (पृष्ठ ४२०) करनेके समान है। व्यर्थके विचारोंपर नियन्त्रण रखनेसे व्यक्तिमे अपरिमित शक्ति आ जाती हैं (पृष्ठ २५)।

और अपने ऊपर इस तरहका अधिकार प्राप्त करनेका तरीका गाधीजीके अनुसार प्रार्थना और कार्य है। हमारे अन्दर जो परमशक्ति विद्यमान है, उसके मार्गमे स्वय हमारे द्वारा उपस्थित की गई बाधाओंको प्रार्थना दूर करती है, क्योकि "मनुष्य जैसा सोचता है वैसा हो जाता है" और "रामनाममे यही बात लागू होती है" (पृष्ठ ३३५)। जो स्त्री अथवा पुरुष आध्यात्मिक रूपसे जाग्रत है, वह "अपने प्रत्येक विचारका साक्षी ईश्वरको मानेगा, उसे स्वामी बनायेगा। . . . इस तरह जिसके समक्ष सारा समय ईश्वर विद्यमान रहता है, उसके हृदयमें राम वास करता है" (पृष्ठ २४८)।

लेकिन, हालाँकि प्रार्थना बहुत जरूरी चीज है, फिर भी पर्याप्त नही है। "जब तक हम सभी प्राणियोके साथ एक जीवन्त समानता नही अनुभव करते तबतक हमारी सारी प्रार्थनाएँ, उपवास और व्रतादि बिल्कुल व्यर्थ है" (पृष्ठ ३३७)। और यदि हमारा दर्शन हमे अन्य मानवोंके सम्पर्कसे आनन्द पाना और उनकी सेवा करना नही सिखाता तो फिर वह सबका-सब बेकार है" (पृष्ठ ३७४)। गाधीजीका यह भी कहना है कि "सच्ची और शाश्वत चित्तशुद्धि तो मनुष्य कर्म करते हुए ही साध सकता है" (पृष्ठ ४२०-१)। लेकिन गांधीजी यह स्वीकार करते है कि ऐसे अपवाद भी हो सकते है जहाँ "विशुद्ध चित्तके विचार ही कार्य है और महत् परिणाम पैदा करते है" (पृष्ठ १३)। इस मानसिक यज्ञमे भी रचनात्मक कार्यके यज्ञकी तरह सभी प्राणियोके साथ तादात्म्य स्थापित करनेकी आवश्यकता होती है और इसका ज्यादा-से-ज्यादा लोगोका ज्यादा-से-ज्यादा भला करनेके 'निर्दय सिद्धान्त' के साथ कोई वास्ता नही है। गांधीजीके अनुसार "सबका ज्यादा-से-ज्यादा भला किया जाये यही एकमात्र सच्चा, गौरवपूर्ण और मानवीय सिद्धान्त है और इसे पूर्ण आत्म-बलिदानके द्वारा ही अमलमे लाया जा सकता है" (पृष्ठ १४)।

जबकि गाधीजी हर किसीको सलाह द्वारा मदद देनेके लिए तत्पर रहते थे फिर भी वे लोगोंकी उनपर निर्भर करनेकी आदत छुड़ाना चाहते थे (पृष्ठ २५)। उन्होने आध्यात्मिक मामलोपर जो बातचीत और लेख लिखे है वे "किसी-न-किसी व्यक्तिको सामने रखकर" लिखे गये है और उनका मूल स्रोत बुद्धि न होकर हृदय है (पृष्ठ ७७-८)। मन, बुद्धि और शरीरका यह सामजस्य गाधीजीको कभी एक नये अनुभव-जैसा नही जान पड़ा, वह उनके लिए सहज चीज थी। इसलिए उनका यह दावा है अथवा वह स्वीकार करते है कि "जैसे हमारे जाने बिना बाल बढते है, उसी तरह मेरे आध्यात्मिक जीवनमे भी वृद्धि हुई है" (पृष्ठ ३३५)।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरोंके द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय भाषाको यथासम्भव मूलके निकट रखनेका प्रयत्न किया गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके है, हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणके बारेमें संशय था, उनको वैसे ही लिखा गया है जैसाकि गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजीके नहीं है, कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमें ऊपर दी गई है। जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यकता होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी निश्चित आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोका, 'एम० एम० यू०' गांधी स्मारक संग्रहालयकी मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिट द्वारा तैयार कराई गई रीलोंका, 'एस० जी०' सेवाग्राममें उपलब्ध सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाधी) द्वारा संगृहीत पत्रोका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध परिशिष्ट दिया गया है। अन्तमे साधन-सूत्रोकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई है।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी हैं :

संस्थाएँ : साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय; नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्ली; राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली और महाराष्ट्र सरकारका गृह-विभाग।

व्यक्ति : श्रीमती एफ० मेरी बार; श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला; श्रीमती गगाबहन वैद्य; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्रीमती चम्पाबहन मेहता; श्री जयरामदास दौलतराम; श्रीमती तहमीना खम्भाता; श्री दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर, नई दिल्ली; श्री धीरूभाई झवेरी; श्री नारणदास गाधी, राजकोट; श्रीमती निर्मला शराफ; श्रीमती निर्मलाबहन, बम्बई; श्री परशुराम मेहरोत्रा; श्री पुरुषोत्तम डी० सरैया; श्री प्रभुदास गांधी; श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक; श्री बनारसीलाल बजाज; श्री भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या; श्री भाऊ पानसे; श्रीमती मनुबहन मशरूवाला; श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया; श्री रामनारायण एन० पाठक; श्रीमती लक्ष्मीबहन खरे, अहमदाबाद; श्रीमती लीलावती आसर; श्रीमती वनमाला देसाई; श्री वालजी गोविन्दजी देसाई; श्रीमती शान्ता शकरभाई पटेल; श्री शान्तिकुमार मोरारजी; श्री शामल रावल; श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर और श्रीमती हरिइच्छा देसाई।

पुस्तकें : 'द डायरी ऑफ महादेव देसाई', खण्ड – १, 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व गंगाबहेनने', 'बापुना पत्रो – ९ : श्री नारणदास गांधीने' भाग १, 'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'महादेवभाईनी डायरी', भाग – १ और 'सत्याग्रहाश्रमनो इतिहास'।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'एडवांस', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'भावनगर समाचार' और 'हिन्दुस्तान टाइम्स'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमे मदद देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके भी आभारी हैं।

विषय-सूची

१. पत्र : मीराबहनको

१ जून, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र आज पहुँचा।

अगर निर्णयमे विलम्ब किया गया तो मैंने अब निश्चय कर लिया है कि अगले हफ्तेसे मुलाकाते बन्द कर दूंगा।[1] यदि निर्णय अनुकूल हुआ तो इन्हें फिरसे चालू कर दिया जायेगा।

बायें हाथकी कुहनीका हाल तो दाहिने हाथसे भी ज्यादा खराब है। बायी कुहनीसे होनेवाला सारा काम बन्द हो गया है और शीघ्र ही इसे खपचियाँ लगाकर बाँध दिया जायेगा। डाक्टरोका निश्चित मत है कि दिन-प्रतिदिन लगातार चरखा चलानेसे मोच बैठ गई है और कुछ नही। मुझे खुशी है कि मगन चरखेपर अब मेरा हाथ पूरी तरह सध गया है। इसलिए जबतक दाहिनी कुहनी भी सहानुभूतिमे हड़ताल न कर बैठे तबतक कताई उसी प्रकार मजेमे जारी है और जारी रहेगी।

तुम्हें जानकर खुशी होगी कि आज मेरा वजन १०६½ पौड है। यह अच्छा रिकार्ड है। इसलिए तुम देख सकती हो कि कुहनीके लिए भी चिन्ता करनेका तनिक भी कारण नही है।

अलोने आहार सम्बन्धी तुम्हारे प्रयोगके दिलचस्प परिणाम निकल रहे हैं। लेकिन जो भी अच्छे परिणाम हैं वे नमक न लेनेके कारण है, ऐसा मान बैठनेकी जल्दबाजी मै नही करूँगा।

पिछले सप्ताह मैंने खम्भाताके पतेपर वेरियरको पत्र लिखा था।[2] आशा है उन्हें मेरा पत्र मिल गया होगा। हाँ, स्वास्थ्य-लाभके लिए उनके इंग्लैंड जानेका विचार अच्छा है। जितनी जल्दी वे जाये उतना ही अच्छा है। शामरावको बुखार आया, यह बुरी बात है। क्या तुम उससे मिली हो?

दामोदरदासके बारेमे मुझे दुःख है। संलग्न पत्र उसके लिए है।

यह एक अन्धविश्वास है कि अलोना आहार स्वादहीन होता है। नमक तो स्वादको मार देता है। मै ऐसे लोगोंको जानता हूँ जो नमक पडी चीजको छूते भी नही। स्वाद तो आदतकी बात है। मै समझता हूँ कि तुम मक्खन और रोटी लेती हो। इनमे नमक होता है। तुम्हारा प्रयोग तो अलगसे उपयोग किये जानेवाले नमककी

१. गांधीजीने सरकारसे अनुरोध किया था कि वह मीराबहन (कुमारी मैडेलिन स्लेड) को उनसे (गांधीजीसे) मुलाकातकी अनुमति न देनेके अपने निर्णय पर पुनर्विचार करे, अन्यथा वे अन्य मुलाकातियोंसे मिलनेकी जो सुविधा दी गई है उसका उपयोग नहीं करना चाहेंगे; देखिए खण्ड ४९, "पत्र: ई० ई० डॉयलको", १९-५-१९३२ तथा "पत्र: ई० ई० डॉयलको", ९-६-१९३२ भी।

२. २७ मईको, देखिए खण्ड ४९।

मात्राको कम करनेका है। तुमपर जो असर हुआ है वह नमककी मात्रामें कमीके फलस्वरूप हुआ है, आहारमें नमकके सर्वथा अभावके कारण नहीं। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। न तुम्हें इसकी चिन्ता करनी चाहिए कि तुम किसी-न-किसी प्रकार कुछ नमक ले रही हो। इसमें दखल मत दो। क्या तुम्हारी मणिलालसे कभी भेंट होती है? या वह अभी भी वहाँ नहीं है?

हम सबकी तरफसे प्यार सहित,

बापू

[पुनश्च :]

वेरियरका सुझाव है कि हम लोगोंको हर शुक्रवारके दिन शामकी प्रार्थनामें ईसाइयोंका एक भजन गाना चाहिए। अतः महादेवने 'लीड काइंडली लाइट' को[1] गुजरातीमें शुरू किया, और इसे हम प्रत्येक शुक्रवारको जारी रखेंगे। अगर वेरियरको अभी मेरा पत्र न मिला हो तो कृपया वेरियरको यह बात बता देना।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९० से भी।

२. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

यरवडा मन्दिर[2]
१ जून, १९३२

चि० परसराम,[3]

हिन्दीके बारेमें निर्मलाका उत्साह बढ़ता जाता है, यह बहुत अच्छी बात है। हिन्दी कविता खुशीके साथ सिखाना। हाथकी रेखाओं आदिमें कुछ है या नहीं यह मैं नहीं जानता, लेकिन इनमें अथवा ज्योतिषमें अथवा किसी भी अन्य तरीकेसे भविष्य जाननेमें कुछ सार नहीं है, नुकसान तो है ही। और जो व्यक्ति 'गीता' का भक्त है अर्थात् जो परिणामका आधार ईश्वरपर रखे हुए है उसके लिए पहलेसे ही भविष्य जाननेकी इच्छा रखनेका निषेध है। पुस्तिका मुझे मिली नहीं, मिलनेपर देख जाऊँगा। आवश्यक कार्योंको करते हुए नाना प्रकारके जीवोंकी हिंसा अनिवार्य है। अतः जिन जीवोंको हम अपनी आँखोंसे देख सकते हैं उनके बारेमें जहाँतक हो सके हमें सावधानी बरतनी चाहिए। इससे आगे तो हम जा ही नहीं सकते। हमारे चलनेसे चींटीके समान छोटे जन्तु कुचलकर मर नहीं जाते। छोटे होनेके कारण ही ये सुरक्षित हैं,

१. प्रेमलज्योति — नरसिंहराव दिवेटिया द्वारा किया हुआ गुजराती अनुवाद; देखिए पृष्ठ ३३ भी।

२. यरवडा मन्दिरका वास्तविक अर्थ यरवडा सेन्ट्रल जेल है, जहाँ गांधीजी ४ जनवरी, १९३२ से ८ मई, १९३३ तक रहे थे।

३. खादी कार्यकर्ता और हिन्दीके अध्यापक तथा कुछ समयके लिए गांधीजीके सेक्रेटेरिएटके सदस्य।

लेकिन इससे बड़े जन्तु कुचल जाते होंगे इसीलिए देख-समझकर और हमेशा अपनी दृष्टि नीचे और सामने रखकर चलना आवश्यक माना गया है। यह सब चीजें कोमलताकी सूचक हैं, लेकिन अहिंसा इससे बहुत आगे जानेवाली और आलौकिक वस्तु है। हमारे प्रत्येक कार्यमें, पारस्परिक सम्बन्धोंमें और हमारे प्रत्येक व्यवहारमें यह स्पष्ट दिखाई देनी चाहिए। जिस समय मोर सर्पका भक्षण कर रहा हो उस समय उदासीन रहना हमारा धर्म है। मोरके लिए यह खाद्य पदार्थ है, और इसमें हम हस्तक्षेप नहीं कर सकते। नारीके सम्बन्धमें तुमने तुलसीदासकी जिस चौपाईका[1] उल्लेख किया है वह नारीमात्रपर लागू नहीं होती। इतना ही नहीं, यह व्यंग्य नारी को लेकर नहीं, अपितु पुरुषकी विषय-भोगकी वृत्तिको लेकर किया गया है। इसमें तुलसीदासजीके कहनेका तात्पर्य यही है कि पुरुष विषयासक्त होकर केवल स्त्रीका ही विचार किया करता है और उस समय वह कैसा बन जाता है, तुलसीदासजीने उक्त चौपाईकी रचना यह बतानेके लिए ही की है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५००) से। सी० डब्ल्यू० ४९७७ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

३. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

१ जून, १९३२

भाई रामेश्वर,

तुम्हारा कार्ड और तुम्हारा पत्र दोनों मिले हैं। मेरे पत्रका तुमने जो भावार्थ किया है वह बिल्कुल ठीक है। बड़ी छलाँग न मारकर अपनी शक्ति-अनुसार पग भरनेसे उत्साह बढ़ता है और उत्साहके साथ आत्मविश्वासमें वृद्धि होती है। जमनालालजीकी तबीयत और सब तरह ठीक रहती है, इसलिए वजन घटनेसे मुझे कोई चिन्ता नहीं होती और जबतक विनोबा अपनी शक्ति बनाये रखते हैं तबतक वे भले ही दूध, घी न लें। उन्होंने मुझे सन्देश भेजा है, इससे मेरे मनको सन्तोष है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७९) से।

१. बुधि बल सील सत्य सब मीना। बनसी सम त्रिय कहहिं प्रवीना॥
रामचरितमानस, अरण्यकाण्ड

४. पत्र : नारणदास गांधीको[1]

२ जून, १९३२

चि० नारणदास,

मीराबहनके बारेमे अभी कोई जवाब नही आया है। इसलिए मुझे लगता है कि जबतक उत्तर नही आता तबतक मुझे मुलाकातें बन्द रखनी चाहिए। अतएव आगामी सप्ताहके लिए कोई नाम नही भेजना। अनुकूल उत्तर मिलनेपर मै तुम्हें तार दूंगा। महादेवकी इच्छा है कि इस बातकी सूचना दुर्गाको[2] भी दे देना।

बापू

श्रीयुत नारणदास गाधी
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२३१ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी

५. पत्र : फीरोजाबहन तलयारखाँको

२ जून १९३२

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र पढ़कर खुशी हुई। मुझे भाई नरीमनने तुम्हारा सदेश नही दिया था। लेकिन चूंकि तुम्हें मैंने कहीं नही देखा इसलिए सोचा कि तुम बम्बईमे नहीं होगी। उम्मीद है, तुम्हारी तबीयत ठीक रहती होगी। मुझसे मिलना तो मुश्किल है। ज्यादा-से-ज्यादा मेरा सब लोगोसे मुलाकात करना बन्द हो जायेगा। लेकिन आनेपर क्या होता है सो मालूम हो जायेगा। सरदार और महादेव मेरे साथ हैं। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापू

श्रीमती फीरोजाबाई तलयारखाँ
मार्फत पोस्ट मास्टर, बोधगया
विहार

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७७५)से।

१. यह पत्र "'तितिक्षा' और 'यज्ञ'के विषयमें" नामक लेख (देखिए पृष्ठ १४-१६)के साथ भेजा गया था।

२. महादेव देसाईकी पत्नी।

६. पत्र : प्रभावतीको

२ जून, १९३२

चि० प्रभावती[1],

तुमारा खत मिला है। जान बुझकर यह खत हिंदीमे लिखता हुं जिससे शीघ्र दिया जाय। मैने दो खत कमसे कम तुमको लिखे है। यहांसे गये है। तुमको क्यो नहिं मिले समझमे नहिं आता। तुमारे दूध और फल लेने चाहिए। जयप्रकाश कहता है वह ठीक है। मेरी प्रकृति अच्छी है। इस खतका उत्तर आनेसे अधिक लिखुगा। मेरे साथ सरदार और महादेव हैं। सरुप किसन कांताको आशीर्वाद।

बापुके आशीर्वाद

श्री प्रभावती देवी
'ए' क्लास प्रिजनर
सेंट्रल जेल
लखनऊ[2]

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४२२) से।

७. पत्र : वनमाला एन० परीखको

२ जून, १९३२

चि० वनमाला[3],

तुझे बाये हाथसे लिखनेकी आदत है इसलिए तुझे दाये हाथसे लिखनेकी टेव भी डालनी चाहिए। जन्म लेकर ही मनुष्य (एकसे) अनेक होता है। तू कैसे हुई, इसकी तुझे खबर है क्या? जैसे तू हुई वैसे ही सब लोग हुए। मनुष्यकी उत्पत्तिका कारण उसके माता-पिता हैं।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७२) से। सी० डब्ल्यू० २९९६ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

१. जयप्रकाश नारायणकी पत्नी।

२. मूलमें पता अंग्रेजी लिपिमें है।

३. महात्मा गांधीके निकटतम सहयोगी नरहरि परीखकी सुपुत्री।

८. पत्र : नारणदास गांधीको

मंगलवार, ३१ मई/३ जून, १९३२

चि० नारणदास,

मैंने लगभग निश्चय कर लिया है कि फिलहाल कल अर्थात् बुधवार मेरी अन्तिम मुलाकात होगी। चूँकि मीराबहनके बारेमें उत्तर मिलनेमें देर हो रही है इसलिए उसका उत्तर 'ना' ही होगा ऐसा मानकर अब मुलाकात मुल्तवी रखनी चाहिए, ऐसा मुझे लगता है। बादमें अनुकूल उत्तर आनेपर क्या नहीं मिला जा सकता?

हरिलाल अपना रोष बलीपर[1] उतारना चाहे तो भले उतारे। बलीमें इसे सहन करनेकी शक्ति है और हरिलालसे निपट लेनेकी भी। ऐसा हो अथवा न हो, हमें तो परिणामका विचार किये बिना यदि उचित मार्ग दिखाई देता हो तो उसे इख्तियार करना ही होगा। परिणामके प्रपंचमें पड़कर ही व्यक्ति बहुधा धर्ममार्गका त्याग कर बैठता है न? इसी एक चीजको स्पष्ट रूपसे बतानेके लिए 'गीता'की रचना की गई है और उसमें इसी वस्तुको किसी-न-किसी बहाने बार-बार दोहराया गया है।

[प्रार्थनाके समय] पाँच मिनटके मौनके पीछे जो उद्देश्य निहित है वह जैसे-जैसे हमारी आँखोंके सामने उभरकर आयेगा वैसे-वैसे वह हमें और भी भव्य लगेगा। वसुमती ठाकोरकी अच्छी तरहसे सार-सँभाल की जाती है। उसका रोग पुराना है, ऐसा डाक्टरोंका कहना है।

जो मजदूर खुशीसे आश्रमके नियमोंका पालन करनको तैयार हो, उसे काम न होने पर भी नहीं निकालना। वह स्वयं खुशीसे जाना चाहे तो बात और है। खर्च बचानेके विचारसे भी हमें योग्य व्यक्तिको नहीं निकालना चाहिए। मजदूरी करने-वाले व्यक्तिका बोझ हमें कदापि भारी नहीं पड़ेगा और मजदूरके होते हुए हम भी हाथो-हाथ काम करें और उसके साथ कन्धेसे-कन्धा मिलाकर खड़े रहे, इसीमें हमारी शोभा है।

धीरू और कुसुमको अब कतई वापस न आने देना। जरा तबीयत सुधरने पर वे लोग आश्रममें ठीक रहेंगे, ऐसा मानना भारी भूल है। तबीयत अच्छी तरहसे सुधर जाये तभी वे आयें। वहाँ बैठे-बैठे नियमोंका पालन करें; जितना शरीरसे काम हो सके, करें, यह आश्रममें रहनेके समान ही है।

बा के पत्रोंके पीछे व्यर्थ परेशान न होना। एक पोस्टकार्ड मिला है। छारा[2] लोग कितने हैं और कहाँ हैं? वे कहाँके हैं? कौन-सी भाषा बोलते हैं? वे हमें परेशान करेंगे अथवा नहीं, यह खयाल बिल्कुल अलग रखकर हमें उनके प्रति अपने कर्तव्यका विचार कर लेना चाहिए। यदि इस सम्बन्धमें कुछ हो सकता हो तो करना।

१. बलीबहन वोरा, हरिलाल गांधीकी साली।

२. मध्य गुजरातकी एक भूतपूर्व जरायमपेशा जाति।

मगन चरखेके बारेमे अब मेरे पास नया कुछ लिखनेको नही है। उसपर हाथ अच्छी तरहसे बैठ गया है। आवाज कहाँसे आती है, इसके बारेमे भी आज कुछ मालूम तो हुआ है। अभी मै छक्कड़दासकी पूनीका इस्तेमाल कर रहा हूँ। इतनी बढ़िया पूनियोसे महीन तार निकालनेका लोभ रहता ही है। एक पूनीसे आज २२ तार निकले। एक पूनी इकन्नीके भारसे भी कम वजन की है। अनुमान तो यह है कि मेरे सूतका अक ३० के आसपास होगा। ऐसे तार आज एक घटेमे ११० निकले। इससे मोटे सूतकी गति १५० तक तो आ ही गई थी।

तोतारामजीके[1] पत्रको मैने सँभाल कर रखा है। उसकी दो नकल भी की थी। एक गंगाबहनको और एक छगनलाल जोशीको भेजी है। यदि तोतारामजीने उसकी नकल अपने पास नही रखी है तो मै उसकी नकल अथवा मूल पत्र यहाँसे भेज दूँगा। मुलाकातकी बात अभी कुछ अनिश्चित ही है, इसीसे मैने जेल-अधिकारियोसे चितालिया आदिसे मिलनेकी अनुमति नही माँगी है। मुझे भय है कि ठक्कर बापाके लिए तो इतना भी यहाँसे नहीं लिखा जा सकता। भणसाली अपने बारेमे समय-समय पर समाचार भेजता रहता है, यह भी गनीमत है।

गाडीवके हत्थेमे फेर-बदल करनेसे अक, गति आदि एकदम कैसे बढ़ गई, इस विषयपर मैने लक्ष्मीदासको सविस्तार पत्र लिखा था। वह उन्हे निश्चय ही मिल गया है, क्योकि उसकी उन्होने पहुँच दी थी। इसलिए मुझे लगता है कि कुछ गलतफहमी हो गई है। मुझे कृष्णाका एक पत्र मिला है, उसमे चौधरीजीका कोई उल्लेख नही है, और न चौधरीजीका ही कोई पत्र आया है। यह कौनसे चौधरीजी है? लगता है बा का वजन बहुत कम हो गया है, लेकिन उम्मीद है, अब बा और नवीन ठीक हो रहे होगे। मीराबहनके पत्रसे यदि तुमने उपवासका अर्थ लगाया है तो यह उपवास नही अपितु उपवासका उपहास था। राष्ट्रीय सप्ताहकी[2] ६ और १३ तारीखको एक जून भोजन करनेकी बात थी।

नारायणप्पाका किस्सा सचमुच लज्जाजनक है। इस चोरीके प्रगट हो जाने पर अब हमे यह मानना चाहिए कि भगवानजीका सन्देह भी सच था। लेकिन यदि नारायणप्पाको सही अर्थोमे पश्चाताप हुआ है और यदि तुम सबको ठीक लगे तो उसे अवश्य रहने देना। यज्ञका सूत यदि सब लोग दे दे तो यह यज्ञ पूरा हुआ माना जायेगा। जबतक यज्ञका सूत अपने निमित्त रखनेका लोभ रहता है, तबतक यज्ञ अधूरा है, इसमे कोई सन्देह नही है। मैने जिस नियमकी चर्चा की है वह यह है कि जो जितना सूत काते आश्रमको दे दे और अपने पहननेकी जरूरत-भरकी खादी आश्रमसे ले ले। स्वयं महीनसे-महीन सूत काते और जितना शरीर सहन कर सके उतना मोटा अथवा उसके हिस्सेमे जो कपड़ा आश्रमसे प्राप्त हो उसे ले ले। यह सब अपरिग्रहके व्रतमे और सर्वस्व अर्पणमे आ जाता है। लेकिन यह नियम

१. तोताराम सनाढ्य, एक किसान जो फीजीसे आकर आश्रममें रहने लगे थे।

२. यह १९१९ में सत्याग्रह आन्दोलनके बादसे प्रति वर्ष अप्रैलमें मनाया जाता था।

सब पर लागू कर दिया जाये ऐसी मेरी हिम्मत नही होती। और फिर मै अलग पड़ा हुआ हूँ, इसीसे प्रसंग उपस्थित होनेके कारण ही केवल इतना बता रहा हूँ कि आश्रम-धर्म क्या कहता है। यह सबको सुनाना और उन्हे समझाना और इसमें से जो व्यक्ति जितना ग्रहण कर सके उतना करे। इतना नियम तो बना ही दिया जाना चाहिए कि हर कोई यज्ञका सूत उसी दिन अथवा प्रत्येक सप्ताह सुन्दर गुंडी बनाकर नाम, पता, सूतका अंक आदि लिख कर दे दे और जब कपड़ा बुने जानेका समय आये तब जो बात तय हो उसके अनुसार ले जाये। सावधानी बरतनेकी खातिर इतना करना तो आवश्यक है ही।

रामभाऊकी एक हाथसे मगन चरखा चलानेकी गति कितनी और सूतका अक क्या है?

महादेवका ४० अंकका सूत तो पुष्कल मात्रामें इकट्ठा हो रहा है, क्योकि प्रतिदिन ६३० तार निकलते हैं। इसलिए इस सूतकी बुनाईके लिए आवश्यक राछ और फनी तैयार करवा लेना। सहज ही ४० अंकके सूतकी बुनाई करनेकी कुशलता हममे आनी चाहिए।

इमाम साहबके[1] लिए पक्की कब्र बनवानी चाहिए, ऐसा मै मानता हूँ। लेकिन इस बारेमें उचित क्या है यह तो किसी अच्छे मुसलमानसे ही जानना चाहिए। जो एक समय विद्यापीठमे अध्यापक थे और जिनके इमाम साहबके साथ मधुर सम्बन्ध थे और दफनानेके समय भी जो हाजिर थे वे मौलवी साहब गुलाम नदवी[2] बहुत करके अभी अहमदाबादमें होगे। उनसे इस बारेमें पूछना ठीक होगा। कोई जल्दी नही है। प्यारअलीने[3] स्वयं यदि इस बारेमें कोई सुझाव दिया हो तो मुझे बताना।

तुमने जिन व्यक्तियोके नाम भेजे थे वे सब तो मिल गये। साथमें आनन्दलालका रणछोड़ था, वह भी उस दलमे शामिल था। इस तरह छ: व्यक्ति हुए। लेकिन यह कुछ समय तक चल सकता है। अब जबतक मै नाम लिखकर न भेजूँ तबतक कोई नाम न भेजना।

३ जून, १९३२

गंगाबहनके लिए एक रतल हीगकी गोली पार्सल करके भेजो। गंगाबहनको जल्दी जरूरत है।

पिछली बार जो मैने लेख[4] भेजा था उसकी एक प्रति यह सोचकर अपने पास नही रखी थी कि वह देर-सबेर तुम्हारी ओरसे मिल जायेगी, लेकिन वह अभी नहीं मिली है।

१. अब्दुल कादिर बावजीर, दक्षिण आफ्रिकाके समयसे गांधीजीके सहयोगी और आश्रमवासी; देखिए खण्ड ४९, "इमाम साहब–१", ७-३-१९३२।

२. अबु जफर नदवी।

३. बम्बईके एक व्यापारी।

४. "बिल्ली—एक शिक्षिका", २२-५-१९३२; देखिए खण्ड ४९।

आशा करता हूँ कि वह देर-सबेर अवश्य मिलेगी।

बापू

[पुनश्चः]

आजकी डाकमें यह मेरा २९वाँ पत्र है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२३० से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

९. पत्र : मणिबहन एन० परीखको

३ जून, १९३२

चि० मणि[1],

धीरज अभ्याससे आता है। दुखको सुख माननेकी कला सब-कुछ ईश्वरपर छोड़ देनेसे आती है। इसलिए महिलाओंकी प्रार्थनामें वे तीन श्लोक[2] शामिल किये गये हैं। वे याद हैं न? प्रयत्न करनेसे ही दुखके प्रति उपेक्षा करना सीखा जा सकता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९६९)से। सी० डब्ल्यू० ३२८६ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

१०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३ जून, १९३२

चि० प्रेमा,

आज तो तुझे लिखनेकी खातिर ही मैं यह छोटा-सा टुकड़ा लिख रहा हूँ। उर्दू किताबें भेजना न भूलना। अब अगर मुलाकातें बन्द हो जायें तो रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट भेजना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८८)से। सी० डब्ल्यू० ६७३६ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

१. नरहरि परीखकी पत्नी।

२. इनमें, जब कौरवों द्वारा द्रौपदीका चीर-हरण किया जा रहा था उस समय द्रौपदीने भगवान श्रीकृष्णसे जो प्रार्थना की थी, वह शामिल है; देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ४०४-५, सं० ५६।

११. पत्र : द० बा० कालेलकरको

३ जून, १९३२

चि० काका[1],

तुम्हारे बारेमे समाचार तो मिलते ही रहते है। लेकिन जब तुम्हे लिखनेका समय मिले तब तुम अपनी तबीयतका हाल लिखना। . . .[2] तुम्हारी पीठका दर्द अब मिट गया होगा। आशा करता हूँ कि चौमासेका असर खराब नही हुआ होगा। तुम्हारे साथ कौन-कौन रहते है ? मै आजकल मगन चरखा चलाता हूँ। बाये हाथकी कुहनीमे दर्द होता है। डाक्टरोका कहना है कि उसे सिर्फ आराम की जरूरत है और बहुत ज्यादा समय तक तार निकालनेसे यह दर्द उठ खडा हुआ है। इसलिए गाडीव पर ही दाये हाथसे सूत कातनेका अभ्यास किया। लेकिन डाक्टरोंका यह कहना है कि मुझे बाये हाथसे गाडीवके चक्रको घुमाने-जितनी मेहनत भी नही करनी चाहिए। मेरा मगन चरखा चलानेका तो पहलेसे ही विचार था, लेकिन डाक्टरोके इस कथनसे उसे चलानेका एक और कारण बढ़ गया है और इसलिए मैंने चलाना शुरू किया। आरम्भमे इसपर हाथ बिठानेमे जरूर तकलीफ हुई, लेकिन अब अच्छा हाथ बैठ गया है, ऐसा कहा जा सकता है। अच्छी पूनीसे १५०की गति तक पहुँच सका था। अभी तो खराबसे-खराब पूनी कात रहा हूँ। उसमे १००से कम गति है, लेकिन इसके आसपास ही कही जा सकती है। थोडा समय उर्दूको देता हूँ। इसके अलावा आकाश-दर्शनकी कोई-न-कोई पुस्तक भी होती ही है। मै इसमे खूब रुचि लेने लगा हूँ। अब तुम्हारे साथ बात करते हुए मै नितान्त मूर्ख नही लगूँगा। अब तक जितनी पुस्तके मेरे हाथ लगी है उनमे मुझे सबसे ज्यादा उपयोगी फ्लेमैरिअनकी पुस्तक लगी है। दीक्षितवाली[3] पुस्तकमे मेहनत तो खूब की गई है, लेकिन सीखनेवालेकी दृष्टि से उसमें अनेक संशोधन-परिवर्तन करानेकी जरूरत है। पटवाने 'आकाश-दर्शन' लिखी है, लेकिन वह बहुत सतही है। एक अच्छी पुस्तक गुजरातीमे होनी ही चाहिए और उसमे खगोलशास्त्रका ज्ञान भी होना चाहिए। हमारे यहाँ दो अलग-अलग पुस्तकें नही चल सकती। हमें तो खगोलका शास्त्रीय ज्ञान और अनुभव, दोनोका मिश्रण चाहिए। तुम यहाँ होते तो ऐसी पुस्तकका काम मै तुमसे लेता और इसमे मै ठीक योगदान भी देता। मुझे यह इतना दिलचस्प लगा है और मै इस शास्त्रकी धार्मिक उपयोगिताको भी समझ गया हूँ कि मेरा अपना ज्ञान यदि अत्यन्त कच्चा न होता

१. दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर (जन्म १८८५); काका साहब उपनामसे प्रख्यात, सन् १९१५ से गांधीजीके साथ काम करना प्रारम्भ किया।

२. यहाँ जेल अधिकारियों द्वारा ७ पंक्तियाँ मिटा दी गई थीं।

३. शंकर बालकृष्ण दीक्षित, भारतीय ज्योतिषशास्त्र के लेखक।

तो मैं स्वयं लिखने बैठ जाता। हीरालालके साथ इस विषयको लेकर कभी-कभी पत्र-व्यवहार चलता है। उसने मुझे दो-तीन पुस्तकें भेजी हैं। रोलाँ द्वारा लिखित रामकृष्ण और विवेकानन्दका जीवन-वृत्तान्त मैं पढ़ गया हूँ। उनमें से एक पुस्तक महादेव पढ़ रहा है और दूसरी सरदार पढ़ रहे हैं। (सरदारका खास काम समाचारपत्र देखने और रद्दी खाकी कागज अथवा इस तरहके मोटे कागज मिल जाये तो उनके सुन्दर-सुन्दर लिफाफे बनानेका है। इस तरह देशके उत्पादनमें वृद्धि होती है और 'धूलमें से धन' पैदा करनेका प्रयोग चलता है।)

महादेव पीजनेमें और कताईमें रोज लगभग पाँच घंटे देता है। छक्कडदास नामके चिमनलालके एक मित्र हैं जिन्हें कातनेका बहुत शौक है। उन्होंने कम्बोडिया और नवसारीकी रुईकी सुन्दर पूनियाँ भेजी हैं उनसे महादेव रोज ४०-४५ अंकके ६५० तार निकालता है, और हमने जो रुई मँगवाई है उसमें से भी रोज थोडा पीजता है। इस तरह हमारे पास पूनियोंका संग्रह बना ही रहता है। अभी तक दूध-त्यागका मेरा प्रयोग जारी है। वजन वही बना है। हम तीनोंकी तबीयत अच्छी है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

एक महीना पहले गंगादेवी[1]का देहान्त हो गया। मृत्युके समय वे अत्यन्त शान्त थी। उनकी मृत्यु आश्रमके अनुरूप हुई। मेरे कहने पर तोतारामजीने उनके कुछ संस्मरण भेजे हैं, वे बहुत सुन्दर हैं। गंगादेवीका जीवन बहुत भव्य था, यह उनसे देखा जा सकता है।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८६) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

१२. पत्र : विद्या आर० पटेलको

३ जून, १९३२

चि० विद्या[2],

कच्ची अमिया मसालेके रूपमें खाये तो मसाला, और फलके रूपमें खाये तो फल है। आँखमें काजल सौन्दर्यकी दृष्टिसे नहीं आँजा जाता अपितु आँखके कुछेक रोगोंके लिए उसका उपयोग किया जाता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४२९)से; सौजन्य : रवीन्द्र आर० पटेल

१. तोताराम सनाढ्यकी पत्नी।
२. रावजीभाई म० पटेलकी पुत्री।

१३. पत्र : भाऊ पानसेको

३ जून, १९३२

चि० भाउ[1],

तुमारे पत्रका उत्तर मैं भेज चुका हुं। उसमें से यदि कोई नया प्रश्न उठे तो लिखो।

तकलीके लायकके मेरे दोनो हाथ नहिं रहे। उंगलियां ऐसी निर्बल हो गई हैं जिससे जो क्रिया तकलीके लिये हाथोको करनी पडती है वह आज तो मेरेसे नहिं हो सकती। भविष्यमें क्या होता है भगवान जानता है। इसलिये दूसरोकी प्रगति सुनकर हि मुझको सतुष्ट रहना पड़ता है।

बापु

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३०) से। सी० डब्ल्यू० ४४७३ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

१४. पत्र : डी० वी० परचुरे शास्त्रीको[2]

३ जून, १९३२

तुम्हारा पत्र पढ़कर हम तीनोंको बहोत आनन्द हुआ। मैं कैसा मूर्ख हरोलीकरकी हुकेरिकर मान लिया। नाम और चेहरा याद रखनेमें मैं बहुत मन्द हूँ। आप लोग आनदसे व्याधि सहन कर लेते हैं, यह जानकर मुझे बडा हर्ष होता है। आप लोगोसे मैं यही आशा करता था।

तुम्हारी पत्नीके व्याधिका सुनकर दु:ख होता है। उनकी सेवामें कोई रहते हैं? मातपिता हैं? पूनीकी एक पूड़ी भेजता हूँ। महादेवने यहा बनाई हैं। हमारे पास हमेशा काफीसे ज्यादा भंडार रहता है, इसलिए मंगानेमे संकोच नही रखना। पुस्तक कौनसे चाहिए? यह भी बता दो। मैं मंगवानेकी कोशिश करूगा।

प्राणत्यागके बारेमे जो कथन लिखा है, वह किसी ग्रन्थमें है? इस बारेमे मेरा अभिप्राय यह है: जिसको असाध्य रोग है, जो दूसरोकी सेवा लेकर ही जीता रहता है और जो कुछ भी सेवा नही करता, उसे प्राणत्यागका अधिकार है। डूबकर मरनेसे पूर्ण अनशन करके प्राणत्याग करना बहुत ज्यादा अच्छा प्रतीत होता है। अनशनमे मनुष्यकी दृढताकी परीक्षा होती है और अपना विचार बदलनेको भी स्थान रहता

१. एक आश्रमवासी।

२. इस समय परचुरे शास्त्री यरवदा सेंट्रल जेलके कुष्ठरोगी कक्षमें बन्दी थे।

हैं। रखना उचित और आवश्यक लगता है। परन्तु जहाँ तक ऐसा मनुष्य कुछ भी सेवा कर सकता है, वहां तक उसे प्राणत्याग करना अनुचित है। यद्यपि यज्ञमें शारीरिक क्रिया एक बड़ा और आवश्यक अंग है, तदपि अशक्तिके कारण शरीरसे कुछ भी न बन सके तो मानसिक यज्ञ सर्वथा निरर्थक नही है। मनुष्य अपने शुद्ध विचारसे भी सेवा कर सकता है। सलाह, इत्यादिसे भी कर सकता है। विशुद्ध चित्तके विचार ही कार्य है; और महत् परिणाम पैदा करते है।

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१५. पत्र : जाल ए० डी० नौरोजीको[1]

४ जून, १९३२

कूपर अपने बनाये हल के बारेमे जो दावा करते है, वह सच्चा हो तो मै सिर्फ इसी कारण उसपर आपत्ति नही करूँगा कि वह हल लोहेका है और उससे गाँवके बढ़ईका इतना काम कम हो जायेगा। अगर इस हल के प्रयोगसे किसानकी कमाई बढ़ जाती है, तो भले ही बढ़ईका काम इतना कम हो जाये। मगर कूपरने अपने हल के बारेमे जो दावे किये है, उनके बारेमे मेरे मनमे बड़ी शंकाएँ है। साबरमतीमे हमने हिन्दुस्तान और, मेरा खयाल है, दूसरे देशोमे बने हुए करीब-करीब सभी किस्मके सुधरे हुए हल काममे लेकर देखे है और उनके बारेमें किये गये दावे अन्तमे सच्चे नही निकले। एक अनुभवी आदमीने कहा है कि देशी हल की बनावट हिन्दुस्तानकी जमीनके बहुत अनुकूल है। वह जमीनकी रक्षा करता है, क्योकि वह जमीन इतनी ही गहरी जोतता है, जितनी किसानकी फसलके लिए जरूरी है; मगर इतनी ज्यादा गहरी नही जोतता जिससे जमीनको नुकसान पहुँचे। निश्चय ही मै खेती-बारीका जानकार होनेका दावा नही करता। मै तो उन्हीके सबूत दे रहा हूँ, जिन्हे इस मामलेमे खासा अनुभव है। हमे इतना याद रखना चाहिए कि सुधरे हुए औजार भारतकी विशिष्ट परिस्थितिके अनुकूल होने चाहिए। खुद इंजनवाले हल के विरुद्ध भी मुझे कोई आपत्ति नही है। जिसके पास हजारो एकड़ जमीन हो और वह जमीन दरारोसे भरी और सख्त हो, उसके लिए यह बड़ा लाभदायक साबित होगा। ऐसी जमीनपर देशी हल नही चल सकता। मगर हमे तो ऐसा औजार चाहिए, जो एकसे लेकर तीन एकड़की थोडी जमीनवाले किसानोके अनुकूल हो।

ज्यादासे-ज्यादा लोगोंका ज्यादासे-ज्यादा लाभवाला सिद्धान्त मै नही मानता। उसे नगे रूपमें देखे तो उसका अर्थ यह होता है कि ५१ फीसदी लोगोके हितोकी खातिर ४९ फीसदी लोगोके हितोंका बलिदान किया जा सकता है, बल्कि कर देना

१. श्री नौरोजीने कूपर द्वारा आविष्कृत एक नये हल के बारेमें गांधीजीको लिखा था जिसकी मददसे पैदावारमें १५ से लेकर १५० प्रतिशत तककी वृद्धि हो सकती थी।

चाहिए। यह एक निर्दय सिद्धान्त है, और मानव-समाजको इससे बहुत हानि हुई है। सबका ज्यादासे-ज्यादा भला किया जाये यही एकमात्र सच्चा, गौरवपूर्ण और मानवीय सिद्धान्त है और इसे पूर्ण आत्मबलिदानके द्वारा ही अमलमें लाया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१६. पत्र : ऐन मारी पीटर्सनको[1]

४ जून, १९३२

'किसी बातकी चिन्ता न करो' यह पंक्ति मुझे हमेशा याद रही है, और इसे मैं कभी भूलता नही। ईश्वरके रहते मुझे चिन्ता क्यो हो? हमारी अचूक सँभाल करनेवाला वह बैठा है। अच्छी तरह सुरक्षित होते हुए भी जो चिन्ता करता है वह मूर्ख है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१७. 'तितिक्षा' और 'यज्ञ' के विषयमें[2]

६ जून, १९३२

कोढ़से पीड़ित एक भाई[3] के उद्‌गार निम्नलिखित है :

> मेरे जैसे रोगियोके लिए आसन, प्राणायाम आदि सामान्य क्रिया और यज्ञ करनेके बाद प्राप्त किया हुआ भोजन इस रोगके लिए सबसे अच्छी दवा है, ऐसा मेरा विश्वास दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता है। मेरा समय 'गीता' आदि पढ़नेमें, भजन गानेमे, चिन्तन-मननमें और कमसे-कम ५०० बार सूत कातनेमे जाता है। हमारा धर्म तितिक्षा सिखाता है और तितिक्षाका तो अर्थ यह है: सब दुखोको, मनमे कोई विरोध किये बिना, चिन्ता-शोक किये बिना, सहन करना। मै इस सहन-शक्तिका विकास कर रहा हूँ और इस विकास-क्रमके दौरान यह अनुभव कर रहा हूँ कि यदि हम कोई भी यज्ञकार्य न करे तो ऐसी तितिक्षा नही आती। मुझ जैसे लोगोसे अन्य प्रकारके यज्ञकार्य तो हो नही

१. ऐन मारी पीटर्सन दक्षिण भारतमें डैनिश मिशनरी सोसाइटीकी सदस्या थीं।

२. यह लेख "पत्र : नारणदास गांधीको", २-६-१९३२ के साथ भेजा गया था।

३. डी० बी० परचुरे शास्त्री; देखिए "पत्र : डी० बी० परचुरे शास्त्रीको", ३-६-१९३२।

सकते, लेकिन लोकोपयोगी कार्य जैसे रास्ता साफ करने, मला उठाने और कातने के कार्य ईश्वरकी अनुकम्पासे मेरे लिए खुले है और उनसे मै आनन्द प्राप्त कर लेता हूँ तथा सहनशक्तिकी साधना करता हूँ। लेकिन अनेक बार मनमे विचार उठता है कि यदि शरीर ऐसा हो जाये कि कोई भी यज्ञ मुझसे न बन सके तो क्या होगा? शास्त्र तो पुकार-पुकार कर कहते है, आपने भी अनेक बार कहा और लिखा है तथा मैने भी इस बातका अनुभव किया है कि यज्ञहीन जीवन मृतवत् है, भारमय है और जगतके लिए त्रासदायक है। तब सवाल यह उठता है कि अगर मनुष्य व्याधिसे इतना ज्यादा घिर जाये कि उससे किसी प्रकारका भी यज्ञ न बन पडे और उसका शरीर प्रतिक्षण दूसरोंकी सेवापर ही निर्भर रहे तो ऐसे समय उसका क्या कर्तव्य है? मैने किसी शास्त्रमे यह भी पढ़ा है कि यदि व्यक्तिको ऐसा असाध्य रोग हो जाये तो उसे पानीमे डूबकर अथवा किसी और ढंगसे अपने प्राण त्याग देने चाहिए।

यह तो मैने सुन्दर पत्रका अपनी भाषामे सार दिया है। इस पत्रमे मै हम सब लोगोके लिए केवल इतना ही सार निकालना चाहता हूँ कि यह भाई जिस सहन-शक्तिके बारेमे लिखते है उस सहनशक्तिकी हम सबको साधना करनी चाहिए और व्याधि होने पर भी जबतक शरीर बोझ उठा सके तबतक यज्ञकर्म करते ही जाना चाहिए। सहनशक्तिका विकास करना और यज्ञ करना, ये दोनो बाते बहुत पुरानी है। आश्रममे तो पग-पग पर हम इसकी चर्चा सुनते है। लेकिन जब किसी अनुभवीकी कलमसे यह बात हमारे पास आती है तब यह नई सी जान पड़ती है और वह शक्ति से ओतप्रोत होती है। कोढ़से पीडित लोगोसे हम ऐसी भाषाकी और अनुभवकी अपेक्षा नही करते। अधिकांश तो ऐसे लोग जब लिखते है तो उसमे अपने दुखका ही रोना रोते दिखाई देते है। यहाँ हम एक भिन्न बातका अनुभव करते है। इसीलिए मैने आश्रमवासियोके लिए इसका सार लिखा दिया है। इसमे जो शका उठाई गई है वह भी विचारणीय है।

'यज्ञ' अर्थात् परोपकारके उद्देश्यसे प्रेरित होकर मनःपूर्वक किया गया कोई भी शारीरिक कार्य, ऐसा अर्थ हम करते है। लेकिन इससे यह नही मान लेना चाहिए कि जो शरीरसे अशक्त है वह यज्ञहीन है। जो शरीरसे सर्वथा अशक्त है वे अपने मानसिक बलसे अनेक प्रकारकी सेवा कर सकते है और यह अवश्य यज्ञरूप माना जायेगा। लेकिन ऐसी स्थितिकी कल्पना की जा सकती है कि जब व्यक्तिमे ऐसा यज्ञ करनेके लिए आवश्यक शुद्धि न हो, इतना मनोबल न हो, फिर भी यज्ञकर्म करनेकी तीव्र इच्छा हो, देहके प्रति उदासीनता आ गई हो, दूसरोसे सेवा लेनेमे दुख होता हो और व्याधि प्राणलेवा दीख पड़े तो मुझे लगता है कि ऐसी स्थितिमे जिसमे ऐसी शक्ति है उसे प्राण-त्याग करनेका पूरा अधिकार है; और कदाचित् यह भी कहा जा सकता है कि यही धर्म भी है। लेकिन "धर्म है" इस कथनसे सम्भवतः सुननेवालेको आघात पहुँच सकता है। जीवित व्यक्तिके मुखसे यह बात शोभा नही देती कि वह दूसरोके लिए यह कहे कि प्राणत्याग करना धर्म है। और इस वाक्यको

सुननेवाला व्याधिग्रस्त मनुष्य कदाचित् व्याकुल भी हो उठे। लेकिन यहाँ ऐसा अनर्थ होनेकी सम्भावना नही है, ऐसा जानकर ही मुझे जो उचित लगा है सो संयमित ढगसे मैंने लिख दिया है। असख्य उपाय करनेके बाद और दूसरोसे असीमित सेवा लेनेके बाद भी यदि जीनेकी तृष्णा कम और मृत्युका भय दूर हो जाये तो यह स्पृहणीय है। इसी चीजको लक्ष्यमे रखकर मैंने लिखा है कि यदि समझदार मनुष्य असाध्य रोगके समय प्राणत्यागको धर्म मानता है तो वह गलत काम करता है, ऐसा माननेका कोई कारण नही।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/११) से।

१८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

७ जून, १९३२

भाई घनश्यामदास,

आपका खत मिला। मेरा शरीर तो अच्छा ही लगता है। वजन खासा है। आज एक सौ साडे छः रतल हुआ। डाक्टर लोग बताते हैं जैसा टैनिस खेलनेवालोकी कई दफा बहुत खेलनेसे कहोनीमे दर्द होता है और उसका इलाज एक आराम ही है ठीक उसी तरह मुझको तार खेंच खेंच कर बरसोके बाद कोहनीमे दर्द प्रतीत होता है। इसी कारण कहौनीको तीन चार हफ्ते तक पूर्ण आराम देना चाहिये। इसी लिये मैं मगनचर्खा चलानेका शुरू कर दिया। उसके पहले बाये हाथसे तार खीचनेके वदले चक्की घुमाता था। इतनेसे डाक्टरोको संतोष न हुआ, तब मैंने पैरोसे चक्र चलानेका रक्खा। उससे वे लोग राजी हुए। लेकिन अब लकड़ीकी पट्टीमे हौनीको बांध ली है जिससे कि वह बिलकुल हिल न सके। अब देखा जायेगा कि डाक्टर लोगोंका अनुमान सही है या नही। इसमें फिकरका कोई कारण नही है क्योकि हिलाने सीवा कुछ दर्द प्रतीत होता ही नही है।

बहनजीके हाथके सूतकी खादी अवश्य भेजे। मेरे सामने उत्तर लिखनेके वक्त पत्र न रहा इसलिये खादीके बारेमे लिखना रह गया। यहाँसे निकलनेके पहले अर्थशास्त्रका अभ्यास जहातक संभवित है कर लेनेका इरादा कर लिया है। ऐसी उम्मीदसे कि यहाँसे जल्दी छूटना नही है मैंने और पुस्तक पढनेका शुरू कर दिया। लेकिन अव शीघ्रतासे अर्थशास्त्रका अभ्यास शुरू कर दूंगा।

मील २४ घटे चलानेके बारेमें समजा। आपकी मिलोंका सूक्षमतासे निरीक्षण करनेका इरादा बहुत दफा किया। लेकिन मैं सफल नही हो सका। मेरी आंखोसे मैं देख लेना चाहता हू कि मजदूर लोगोंकी हालत कैसी है। हम सब कुशल हैं।

बापु

सी० डब्ल्यू० ७८९९ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१९. पत्र : मीराबहनको

[८ जून, १९३२][1]

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र आज आया। हाँ, बायी भुजापर पट्टी चढ़ी हुई है। देखनेवाले, जो कारण नही जानते, मुझपर जरूर दया करते होंगे। अगर पट्टीसे कुहनीकी हालत न सुधरी, तो शायद मुझे दूधका प्रयोग करना पड़ेगा; और अगर मैंने ऐसा किया तो मै नमक छोड़कर भी देखूंगा। लेकिन जब मैंने यह जाना कि सर्वथा नमक छोड़ने के प्रयोग जैसी चीज है ही नही, तभी मैंने डाक्टर मित्रोकी सलाह मानी और नमक लेना शुरू किया। पानीकी भाँति ही दूधमे भी काफी नमक होता है। और किसी तटवर्ती जगहपर तो आदमी बराबर नमक पीता है। तथापि मसालेके रूपमे अतिरिक्त नमक न लेनेका निश्चित ही कुछ लाभ है। पानी, दूध और हवासे जितना नमक हमारे शरीरमें पहुँच जाता है वह उसके लिए पर्याप्त है। मुझे अलोने भोजनके प्रति पक्षपात है। अलबत्ता, जबतक मुझे आवश्यकता प्रतीत नही होती, तबतक मै व्रत मानकर उससे परहेज नही रखना चाहता। इस बीच तुम्हारे अनुभव तो जमा हो ही रहे हैं। वे उपयोगी सिद्ध होंगे।

वेरियरके बारेमे जो स्थिति है वह मै ठीक समझ नही पा रहा हूँ। वह अब क्या करनेका विचार रखता है? अगर अवधि जुलाई तकके लिए ही बढ़ाई गई है, तो उसके बाद क्या होगा? पासपोर्ट-सम्बन्धी बारीकियाँ मै कभी नही समझ पाया। अगर वह इग्लैंड नही जा सकता तो उसे किसी पहाड़ीपर जाना चाहिए। अलमोड़ा उपयुक्त जगह हो सकती है। अगर वह शाकाहारी हो और शाकाहारी ही रहनेवाला हो तो उसे तुम्हारे आहारका यथासम्भव अनुकरण करना चाहिए। बहुत थोड़ा मण्ड (स्टार्च), दालके रूपमे कोई प्रोटीन बिल्कुल नही, काफी मात्रामें दूध और हरी सब्जियाँ, आलू या अन्य ऐसी ही मण्डयुक्त सब्जियाँ बिल्कुल नही और मसाला तो बिल्कुल नही। उसे मेरा पत्र मिला है या नही?

तुम्हारे बारेमे जिसे अन्तिम उत्तर समझा जा सकता है वह मिल गया है। सरकारका कहना है कि चूंकि कैद होनेसे पहले तुम आन्दोलनका संचालन कर रही थी, इसलिए तुम मुझसे नही मिल सकती। मैंने इस बयानका खण्डन किया है[2] और कहा है कि तुम्हे सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे भाग न लेनेकी हिदायत थी और तुम सिर्फ

१. साधन-सूत्रमें "८-५-१९३२." है जो स्पष्ट ही भूल है। गांधीजीकी बाँहपर ५ जून, १९३२ को पट्टी चढ़ाई गई थी; देखिए इस खण्डके अन्तमें दी गई "दैनन्दिनी, १९३२" में ५ जून, १९३२ के अन्तर्गत प्रविष्ट। बापूज लेटर्स टु मीरामें भी यही तारीख दी गई है।

२. देखिए "पत्र: ई० ई० डॉयलको", ९-६-१९३२।

खादीका काम करती थी और मित्रोको समाचार भेजती थी। अगर इसमे मेरी भूल हो तो मुझे बता देना। अपनी गलती सुधारनेमें सकोच नही करूँगा।[1] मुझे पता नही कि मेरे पत्रका कोई परिणाम निकलेगा या नही। कुछ भी हो, मैं इस उत्तरको अन्तिम निर्णय मानकर चल रहा हूँ और इसलिए ना०[2] को लिख दिया है कि वह मुलाकातके लिए किसीको न भेजे। मैंने पहले ही सोचकर पिछले सप्ताह मुलाकाते बन्द कर दी थी। अर्थात् मैंने मणिबहन और डाह्याभाईसे भेंट नही की।

तुम्हे इस नई परीक्षासे खुशी होनी चाहिए और ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए कि हम एक-दूसरेको पत्र लिख सकते है। परन्तु यदि यह बन्द हो जाये तो भी हमे प्रसन्न ही होना चाहिए। ईश्वरके हुक्मके बिना कुछ नही होता। और जो-कुछ वह होने देता है, उसपर हम शोक कैसे कर सकते हैं?

तुम्हे राधासे बराबर पत्र-व्यवहार करना चाहिए। उसके बारेमें तुम्हारी जो राय बनी है उसे मैं ठीक मानता हूँ। मुझे उस विषयमें नही लिखना चाहिए। उससे वह परेशान होगी। वह शायद तुम्हारी बात मान लेगी। उसे पत्र लिखनेके लिए तुम्हे समय निकालना चाहिए। मैं मानता हूँ कि उसका खर्च आश्रम उठाता है और पिछले कुछ महीनोसे दामोदरदास पर उसका भार नही है।

तुम दामोदरदाससे फिर बात करना और यदि इससे उसका बोझ कम होता हो तो उसका घर छोड़ देना।

हम सबकी तरफसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६८६ से भी।

२०. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको[3]

८ जून, १९३२

वह[4] बूढी हो गई है — कई बातोमें तो मुझसे भी ज्यादा। आध्यात्मिक दृष्टिसे उसने अद्भुत प्रगति की है। . . .

चरखेकी धीमी गतिके कारण उसके प्रति मेरा मोहभंग होनेके लिए तो मुझे कई जन्म लेने पड़ेगे। चरखेकी धीमी गति ही शायद मुझे सबसे ज्यादा आकृष्ट करती

१. मीराबहनके अनुसार यह सही है।

२. नारणदास गांधी, जो उस समय साबरमती आश्रमके व्यवस्थापक थे।

३. हेनरी सोलोमन लिअन पोलक, दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाईमें गांधीजीके निकट सहयोगी। उन्होंने गांधीजीको लिखा था: "लन्दनके समाचारपत्रोंने रिपोर्ट दी है कि चरखेकी धीमी गतिके कारण उसके प्रति मोहभंगके लिए आपने सिलाईकी मशीन ले ली है। मुझे इस बातमें तनिक भी विश्वास नहीं है। फिर भी बहुत जल्द इसका खण्डन जरूरी है।"

४. कस्तूरबा गांधी।

है। मगर उसमें तो मेरे लिए और भी कई आकर्षण हैं, जिनके कारण मुझे उससे कभी अरुचि नही हो सकती। उसमे मेरी दिलचस्पी स्थायी है। उसकी नई-नई खूबियाँ दिन-दिन मेरे सामने आती जा रही हैं और उसके गहरे अर्थ अधिकाधिक मेरी समझमे आते जा रहे है। चरखेके बजाय सिलाईकी मशीनका इस्तेमाल करनेकी बात तो दूर, मै उसका बिल्कुल इस्तेमाल नही कर रहा हूँ। मै जानता हूँ कि अखबारोमे यह गपोड़ा किस तरह उठा है। पिछले दस सालसे लगातार चरखा चलानेके कारण मेरे दाये हाथकी कुहनीमे दर्द होने लगा और इस कारण डाक्टर इस नतीजेपर पहुँचे कि टेनिस खेलनेवालोंको लगातार रैकेट काममे लेनेसे अकसर जैसा दर्द हो जाता है, वैसा ही मुझे हुआ है। इसलिए उन्होने कुहनीको कुछ समय तक आराम देनेकी सलाह दी। इसके मतलब होते कि मुझे कुछ समय तक कताई बन्द रखनी पड़ती; किन्तु प्रभुदासके आविष्कारने बचा लिया। प्रभुदासको तो तुम जानते हो न? छगनलालका लड़का। उसका आविष्कार ऐसा है कि चरखेका पहिया पैरसे चलाया जा सकता है और सूतका तार खीचनेके लिए दाहिना हाथ भी मुक्त रहता है और इस तरह सूत भी लगभग दूना निकलता है। मैंने इस किस्मका चरखा मँगवा लिया और डाक्टरोंको मात कर दिया और दाये हाथसे बिल्कुल काम बन्द करनेका ताकीदी हुक्म मिलनेसे पहले ही मै पैडलवाला चरखा, जो स्व० मगनलालके नाम पर 'मगन चरखा' कहलाता है, चलाना सीख गया। एक मूर्ख अखबारवालेने जो इस आविष्कारके बारेमे कुछ भी नही जानता था, जब सुना कि मै पैडलसे पहिया चलाता हूँ, तो वह मान बैठा कि मै सिलाईकी मशीन चला रहा हूँ। और, अखबारवालोमे ऐसे भलेमानस तो मौजूद ही है जो मेरे बारेमे कई तरहकी कल्पनाएँ कर लेते है और तरह-तरहकी बातोसे मेरा सम्बन्ध जोड़ देते है। बस, उन्होने उस गलत रिपोर्टमें इजाफा कर दिया और घोषणा कर दी कि चरखेके बारेमें मेरा भ्रम दूर हो गया है। सारी बात यह है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

खादीका काम करती थी और मित्रोको समाचार भेजती थी। अगर इसमे मेरी भूल हो तो मुझे बता देना। अपनी गलती सुधारनेमे सकोच नही करूँगा।[1] मुझे पता नही कि मेरे पत्रका कोई परिणाम निकलेगा या नही। कुछ भी हो, मै इस उत्तरको अन्तिम निर्णय मानकर चल रहा हूँ और इसलिए ना०[2] को लिख दिया है कि वह मुलाकातके लिए किसीको न भेजे। मैने पहले ही सोचकर पिछले सप्ताह मुलाकाते बन्द कर दी थी। अर्थात् मैने मणिबहन और डाह्याभाईसे भेंट नही की।

तुम्हे इस नई परीक्षासे खुशी होनी चाहिए और ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए कि हम एक-दूसरेको पत्र लिख सकते है। परन्तु यदि यह बन्द हो जाये तो भी हमे प्रसन्न ही होना चाहिए। ईश्वरके हुक्मके बिना कुछ नही होता। और जो-कुछ वह होने देता है, उसपर हम शोक कैसे कर सकते हैं?

तुम्हे राधासे बराबर पत्र-व्यवहार करना चाहिए। उसके बारेमे तुम्हारी जो राय बनी है उसे मै ठीक मानता हूँ। मुझे उस विषयमे नही लिखना चाहिए। उससे वह परेशान होगी। वह शायद तुम्हारी बात मान लेगी। उसे पत्र लिखनेके लिए तुम्हे समय निकालना चाहिए। मै मानता हूँ कि उसका खर्च आश्रम उठाता है और पिछले कुछ महीनोसे दामोदरदास पर उसका भार नही है।

तुम दामोदरदाससे फिर बात करना और यदि इससे उसका बोझ कम होता हो तो उसका घर छोड़ देना।

हम सबकी तरफसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६८६ से भी।

२०. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको[3]

८ जून, १९३२

वह[4] बूढ़ी हो गई है — कई बातोमे तो मुझसे भी ज्यादा। आध्यात्मिक दृष्टिसे उसने अद्भुत प्रगति की है। . . .

चरखेकी धीमी गतिके कारण उसके प्रति मेरा मोहभंग होनेके लिए तो मुझे कई जन्म लेने पड़ेंगे। चरखेकी धीमी गति ही शायद मुझे सबसे ज्यादा आकृष्ट करती

१. मीराबहनके अनुसार यह सही है।

२. नारणदास गांधी, जो उस समय साबरमती आश्रमके व्यवस्थापक थे।

३. हेनरी सोलोमन लिअन पोलक, दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाईमें गांधीजीके निकट सहयोगी। उन्होंने गांधीजीको लिखा था: "लन्दनके समाचारपत्रोंने रिपोर्ट दी है कि चरखेकी धीमी गतिके कारण उसके प्रति मोहभंगके लिए आपने सिलाईकी मशीन ले ली है। मुझे इस बातमें तनिक भी विश्वास नहीं है। फिर भी बहुत जल्द इसका खण्डन जरूरी है।"

४. कस्तूरबा गांधी।

है। मगर उसमें तो मेरे लिए और भी कई आकर्षण हैं, जिनके कारण मुझे उससे कभी अरुचि नही हो सकती। उसमे मेरी दिलचस्पी स्थायी है। उसकी नई-नई खूबियाँ दिन-दिन मेरे सामने आती जा रही हैं और उसके गहरे अर्थ अधिकाधिक मेरी समझमे आते जा रहे हैं। चरखेके बजाय सिलाईकी मशीनका इस्तेमाल करनेकी बात तो दूर, मैं उसका बिल्कुल इस्तेमाल नही कर रहा हूँ। मै जानता हूँ कि अखबारोमे यह गपोड़ा किस तरह उठा है। पिछले दस सालसे लगातार चरखा चलानेके कारण मेरे दाये हाथकी कुहनीमे दर्द होने लगा और इस कारण डाक्टर इस नतीजेपर पहुँचे कि टेनिस खेलनेवालोको लगातार रैकेट काममे लेनेसे अकसर जैसा दर्द हो जाता है, वैसा ही मुझे हुआ है। इसलिए उन्होने कुहनीको कुछ समय तक आराम देनेकी सलाह दी। इसके मतलब होते कि मुझे कुछ समय तक कताई बन्द रखनी पड़ती; किन्तु प्रभुदासके आविष्कारने बचा लिया। प्रभुदासको तो तुम जानते हो न? छगनलालका लडका। उसका आविष्कार ऐसा है कि चरखेका पहिया पैरसे चलाया जा सकता है और सूतका तार खीचनेके लिए दाहिना हाथ भी मुक्त रहता है और इस तरह सूत भी लगभग दूना निकलता है। मैंने इस किस्मका चरखा मँगवा लिया और डाक्टरोंको मात कर दिया और दायें हाथसे बिल्कुल काम बन्द करनेका ताकीदी हुक्म मिलनेसे पहले ही मै पैडलवाला चरखा, जो स्व० मगनलालके नाम पर 'मगन चरखा' कहलाता है, चलाना सीख गया। एक मूर्ख अखबारवालेने जो इस आविष्कारके बारेमे कुछ भी नही जानता था, जब सुना कि मै पैडलसे पहिया चलाता हूँ, तो वह मान बैठा कि मै सिलाईकी मशीन चला रहा हूँ। और, अखबारवालोमे ऐसे भलेमानस तो मौजूद ही है जो मेरे बारेमे कई तरहकी कल्पनाएँ कर लेते है और तरह-तरहकी बातोसे मेरा सम्बन्ध जोड़ देते हैं। बस, उन्होने उस गलत रिपोर्टमे इजाफा कर दिया और घोषणा कर दी कि चरखेके बारेमे मेरा भ्रम दूर हो गया है। सारी बात यह है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

२१. एक पत्र

८ जून, १९३२

तुम्हारी हालत कैसी भी हो, इतना याद रखना:

१. जो रुपया कमाता हो, उसीको खो देनेका अधिकार है।

२. रुपया गँवा देनेमें शर्मकी बात नहीं है, गँवा देनेके बाद छिपानेमें शर्म है, पाप भी है।

३. हैसियतसे ज्यादा रहन-सहन कभी नहीं रखना चाहिए। आज बंगलेमें रहते हुए भी कल झोंपड़ीमें रहनेकी तैयारी रखनी चाहिए।

४. ऋणदाताको देने जितना रुपया हमारे पास न हो, तो इसमें शर्मकी बात नहीं है।

५. जो व्यक्ति एक दमड़ी भी अपने पास न रखकर सबकुछ ऋणदाताको दे देता है, उसने सब चुका दिया।

६. कर्ज लेकर व्यापार न करना यह पहली समझदारी है। यदि कर्ज लिया हो, तो जो-कुछ पास हो वह देकर उसमेंसे निकल जाना दूसरी समझदारी है।

आश्रममें जब जाना हो जा सकते हो।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

२२. पत्र : ई० ई० डॉयलको

९ जून, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल[1],

मेजर भण्डारीने[2] मुझे श्रीमती मीराबाई (स्लेड)के बारेमें सरकारका निर्णय सूचित किया है। इस निर्णयके लिए जो स्पष्ट कारण बताये गये हैं, मैं उनकी कद्र करता हूँ। मैं नहीं जानता कि सरकार किस चीजको "सविनय अवज्ञा आन्दोलनको सक्रिय रूपसे प्रोत्साहन देनेमें व्यस्त" मानेगी। यह भी सम्भव है कि सरकारको गलत जानकारी मिली है। स्पष्ट है कि सरकारको जो सूचना दी गई थी, उसका खण्डन करनेका मीराबाईको कोई अवसर नहीं दिया गया। मैं तो सिर्फ अपने इस कथनको दोहरा सकता हूँ कि मेरे अन्य साथियोंकी भाँति ही उसे [मीराबाईको]

१. बम्बई प्रेसिडेन्सीके जेल-महानिरीक्षक।

२. यरवडा सेंट्रल जेलके अधीक्षक।

भी जानबूझकर और आन्दोलनके हितमे ही आन्दोलनके सविनय अवज्ञावाले हिस्सेसे अलग रखा गया है। किन्तु यदि मीराबाई किसी भी समय सविनय अवज्ञा आन्दोलनको सक्रिय प्रोत्साहन देनेमे सक्रिय रूपसे लगी हुई थी या इस समय लगी हुई हो, तो मेरी पत्नी और मेरे दो लड़के भी तो उसमे सक्रिय भाग ले रहे थे। फिर भी यदि वे जेलमे न होते तो मै मानता हूँ कि मेरे परिवारके सदस्य होनेके नाते उन्हे मुझसे मुलाकातकी अनुमति दी जाती। जैसा कि मै सरकारको लिखे अपने पिछले पत्रोमे स्पष्ट कर चुका हूँ, मैने अरसा हुआ अपने परिवारके सदस्यो और अन्य लोगोंमें भेद करना छोड़ दिया है। मेरे साथी भी मेरे परिवारके उसी प्रकार सदस्य है जिस प्रकार परिवारके तथाकथित सदस्य।

इसलिए जबतक सरकार अपने निर्णयपर पुनर्विचार नही करती तबतक मै प्रति सप्ताह मुलाकातियोसे मिल सकनेके सुखसे अपनेको वचित रखूँगा। मैने आत्म-त्यागके इस नियमको पिछले शनिवारसे लागू कर दिया है। वस्तुतः मीराबाईके मामलेमे सरकारने जो निर्णय दिया है, उसके तहत आश्रमवासियोमें से कौन मुझसे मिले और कौन न मिले इसका निर्णय करनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेना मेरे लिए कठिन होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (२) भाग १, पृष्ठ १०९।

२३. पत्र : नथुराम त्रिकमदासको

९ जून, १९३२

भाई नथुराम,

तुम्हारा ब्यौरेवार पत्र पढ़कर खुश हुआ हूँ। अच्छा है कि तुम खादीकार्य सीखनेके लिए आये हो। यह काम अच्छी तरहसे सीखना। ऊपर-ऊपरसे यों ही सीखोगे तो वापस जानेपर तुम सिखानेका काम नही कर सकोगे। सूक्ष्मसे-सूक्ष्म वस्तुपर अधिकार प्राप्त करनेपर ही सिखाना सम्भव होगा। आश्रमके नियमोका ठीक-ठीक पालन करना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२४. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

९ जून, १९३२

भाई रामेश्वरदास,

तुम्हारा पत्र मिला। पहलेके पत्र भी मिले हैं। उम्मीद है, तुम्हें मेरे उत्तर भी मिल गये होंगे। रामनामका उच्चारण करनेका कदापि यह अर्थ नहीं कि वह मात्र जीभ पर ही रहे, अपितु उसके पीछे यह विश्वास निहित है कि जो व्यक्ति श्रद्धापूर्वक आज जीभसे ही रामनामका उच्चारण करता है तो उसका विश्वास किसी-न-किसी दिन इस शब्दको गलेसे नीचे भी ले जायेगा और उसे हृदय तक पहुँचायेगा; और जबतक रामनाम हृदय तक नहीं पहुँचता तबतक मनुष्यको सच्ची शान्ति नहीं मिल सकती। तुम्हारी शान्तिके लिए मैं और कोई औषधि नहीं जानता। वैद्यकीय उपचार मानकर भी तुम्हे अपनी खुराककी मात्रा घटा देनी चाहिए और उससे भी यदि शरीर अच्छा न रहे तो उपवासादि करने चाहिए। प्यारेलालको तो अभी थोड़े ही दिन पहले मैंने एक कार्ड लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८०) से।

२५. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

९ जून, १९३२

चि० परसराम,

पिनसे जुड़े हुए तुम्हारे दो पत्र मिले। मैं देखता हूँ कि वह पत्र जिसम तुमन उपशीर्षक दिये हैं पहले पत्रका सार-रूप है और उसको पढनेसे विस्तृत पत्रको पढनेका हेतु सिद्ध हो जाता है। तथापि तुमने यह सोचकर पहला पत्र भी साथ भेजा है कि यदि मैं ज्यादा ब्यौरेसे पढ़ना चाहूँ तो वह भी पढ सकूँ।

जिस जगह दर्द होता हो उसका बलपूर्वक अर्थात् दर्द सहन करते हुए उपयोग नही करना चाहिए, और ऐसा करनेसे यदि तुम्हे यह लगे कि दर्द धीरे-धीरे कम होता जा रहा है तो समझ लो कि अन्य कुछ करनेकी जरूरत नही है। और यदि दर्दवाली जगहका उपयोग न करनेपर भी दर्द कम होनेके आसार दिखाई न दे तब तो पूरा आराम किये बिना कोई चारा नही।

मनुष्यको भोजन करनेके लिए कितना समय चाहिए इसके बारेमे सबके लिए एक-सा नियम नही हो सकता। किसीका भोजन केवल दूध हो तो वह पाँच-सात मिनटमें ही पूरा हो जायेगा। किसीका भोजन यदि एक अनार ही हो और उसके दाँत न हों तथा अनारके रसके बदले उसे दाने चबाने हों तो उसे एक घंटा भी लग सकता है। इसलिए नियम तो यह हुआ कि जिस व्यक्तिके लिए जितना खाना और जो खाना जरूरी है उसे अच्छी तरह चबाकर खानेमे जितना समय लगे उतना समय उसकी खातिर समझा जाये। सामान्य रूपसे जो रोटी, दाल, भात, शाक आदि खाता है और जिसके दाँत अच्छे है उसके लिए २०-३० मिनट पर्याप्त माने जाये। अमुक दिशाकी ओर सिर करके सोनेकी जो बात कही जाती है उसके बारेमें मेरे मनमे कोई श्रद्धा नही जगी। मैंने इस नियमका पालन कभी नही किया।

पीपलका वृक्ष बहुत बडा होता है, खूब छाया देता है तथा अनेक स्थानोंपर उगाया जा सकता है इसीसे उसकी महिमा गाई गई है, ऐसी मेरी मान्यता है।

मेरे पत्रो आदिका हिन्दीमे अनुवाद करनेकी बातको मै समझ गया हूँ। इस सम्बन्धमे सबको सन्तोष मिले, मेरे लिए इतना ही पर्याप्त है।

लौग और मिश्रीका उपयोग मै केवल आवाजको ठीक बनाये रखनेके लिए करता था। जबसे ऐसे और इतने ज्यादा भाषण देने बन्द हो गये तबसे लौग और मिश्री लेना भी बन्द हो गया सो आज तक फिर जारी नही हुआ।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५०१) से। सी० डब्ल्यू० ४९७८ से भी; सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा

२६. एक पत्र

९ जून, १९३२

जैसा कि तुमने लिखा है, तुम्हें बराबर बुरे विचार आते रहते है और उनसे तुम परेशान रहते हो; इसीका नाम है अपने-आप बनाया हुआ नरक। इसमे मैंने तुम्हारे दोनों प्रश्नोंका उत्तर दे दिया। इससे यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि ऐसा मैंने किसपर से लिखा; और इसे नरक क्योंकर कहा जाता है, यह भी स्पष्ट रूपसे कह दिया गया। इसकी प्रतीति हो जानेपर इससे कैसे निकला जा सकता है, यह तो सहज ही समझमे आ जाना चाहिए। तुम्हें बुरे विचार आते है उनका पुनर्चिन्तन तो करना ही नही चाहिए, अपितु ऐसा सोचकर आगे बढ़ते जाना चाहिए मानो कुछ हुआ ही न हो। मनुष्य राह चलते जब किसी चीजसे ठोकर खाता है तो वह यह सोचने नही बैठ जाता कि ऐसा क्योंकर हुआ। और फिर यदि वह उसके कुपरिणामका खयाल करके वही बैठा रहे तो वह आगे बढ़ ही नही सकता। लेकिन ठोकरका

विचार न करके वह आगे ही बढ़ता जाता है तो वह उसे अन्ततः भूल जाता है। निरन्तर बढते रहनेसे उसकी शक्ति बढती जाती है और शक्ति बढ़नेके साथ-साथ ठोकरें भी कम लग पाती हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

२७. पत्र : छगनलाल जोशीको

१० जून, १९३२

आश्रममें शारीरिक-श्रमका प्रायः सारा काम हाथों-हाथ हो जाता है। थोड़े मजदूर लोग भी हैं, लेकिन ऐसे मजदूर ही बच रह गये हैं जो आश्रमके नियमोंका पूरा-पूरा पालन करते हैं और उनके साथ ही आश्रमवासी काम करते हैं। धीरे-धीरे हर तरहकी मजदूरी पर काबू पानेका प्रयत्न किया जा रहा है। इसमें बच्चे यथा-शक्ति अपना योगदान देते हैं।

नवागन्तुकोंको सर्वप्रथम प्रार्थना, भजन आदि सिखाया जाता है। इतना सीख लेनेके बाद ही जो अंग्रेजी सीखना चाहे वे अंग्रेजी सीख सकते हैं।

यज्ञके रूपमें की जानेवाली कताई सब लोग एकसाथ मिलकर करते हैं; यह एक घंटे तक चलती है। २० आँकसे नीचे काते गये सूतकी गणना यज्ञके हिसाबमें नहीं गिनी जाती। जितना सूत काता गया हो उस सारेको टोकरीमें डालकर उसी दिन दे देना चाहिए। मैंने यह सुझाव दिया है कि यदि सब इस बातपर राजी हों तो इस सूतको खुद अपने इस्तेमालके लिए कोई नहीं खरीद सकता।[१] मेरी हमेशासे यह मान्यता रही है कि जबतक इसे खरीदनेकी छूट है तबतक यज्ञ अधूरा है।

गत सप्ताहसे सब लोगोंकी मजदूरीका — चाहे वह किसी तरहकी भी हो — प्रति घंटा एक आनाके हिसाबसे हिसाब-किताब रखनेका निश्चय किया गया है। लेकिन उसीके अनुसार भुगतान भी किया जायेगा, यह तय नहीं हुआ है। फिलहाल नारण-दासको मैंने इतना ही सुझाव दिया है कि यदि यह बात उसके गले उतरे तो वह इस तरह हिसाब-किताब रखना शुरू कर दे। यह हिसाब-किताब वैसा ही है जैसा हम सामान्य हिसाब-किताब रखते हैं; उसके अलावा अभी तो केवल परिणाम देखने-भरके लिए ही यह हिसाब रखा जायेगा। इससे हमको काफी कुछ मालूम हो सकेगा, जिसके फलस्वरूप इस परिणाम पर पहुँच सकेंगे कि सबकी मजदूरी एक समान हो सके। तात्पर्य यह कि कताई, बुनाई, पाखाना-सफाई अथवा किसी भी समाजसेवाके कार्यका प्रति घंटा एक आना माना जाये। इसकी हमने चर्चा तो खूब की है, यह तुम्हें याद होगा। आजकल मैं नारणदासको बहुत पत्र लिख रहा हूँ। इन पत्रोंमें मैंने उससे इस

१. देखिए पृष्ठ ७-८।

विषयपर फिर चर्चा की है। मुझे लगता है कि नारणदासमे ऐसे विचारोंको ग्रहण कर लेनेकी शक्ति आजकल बहुत बढ़ गई है। अतः उसने मेरे इन सुझावोंका स्वागत किया है। यह हिसाब लिखनेमे बहुत समय जाता हो, ऐसी कोई बात नही। और इस समय जो प्रयोगकी स्थितिमें है वही जब अमलमे लाया जायेगा तब हिसाब रखनेका यह काम तो इतना आसान हो जायेगा कि सामान्य गुजराती जाननेवाला व्यक्ति भी इसे रख सकेगा। इस तरहके हिसाबकी सफलताका आधार समाजपर है। क्योकि जो व्यक्ति अपने कामके घंटोंको लिखता अथवा लिखाता है, उसने यदि कामकी चोरीकी हो अथवा चाहे जैसा काम किया हो तो जाहिर है कि उसका हिसाब गलत होगा। मतलब यह कि, यह तो खोटा और सच्चा सिक्का एकसाथ मिल जानेकी बात होगी।

बच्चोंकी शिक्षाके बारेमे भी मै यहाँसे काफी कुछ लिख रहा हूँ। इसमे से आश्रमवासी कितना ग्रहण कर सकेंगे, सो नहीं कहा जा सकता। लेकिन यदि मै वह सब लिखने बैठूंगा तो इसमे बहुत समय चाहिए और उतना समय नही दिया जा सकता। इस विषयमे तुम धीरज रखना।

हम सबको यह जो अमूल्य अवसर प्राप्त हुआ है, उसका अपनी-अपनी समझके अनुसार सदुपयोग करना चाहिए और इसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग अन्तर्चिन्तन करनेकी शक्तिका विकास करना है। बहुधा हम विचार-शून्य होते है, इसीसे हमें पढ़ना अथवा संलाप करना अच्छा लगता है। हममें से कुछ लोग सोच-विचार करते है, लेकिन केवल हवाई किले बाँधनेके लिए ही। वस्तुतः देखा जाये तो जिस तरह अध्ययन करना अपने-आपमे एक कला है उसी प्रकार चिन्तन करना भी एक कला है। निश्चित समय पर ही निश्चित विचार उत्पन्न हों। जिस तरह हम व्यर्थकी कितावोको नही पढ़ते उसी तरह हम व्यर्थके विचारोंको भी मनमें न आने दे। ऐसा करनेसे जो शक्ति उत्पन्न होती है और जिस शक्तिका संग्रह होता है उसका अनुमान नही लगाया जा सकता। इस तरह चिन्तन करना सीखनेके लिए यह सुन्दर अवसर है, यह बात मैने कैदके दौरान हर बार अनुभव की है।

अतएव मेरी तुम सबको यही सलाह है कि सब कोई गम्भीर चिन्तन करनेकी कलाको साध लेना और यदि वैसा करोगे तो मुझसे पूछ-पाछकी जरूरत नही रहेगी। लेकिन इसका कोई उल्टा अर्थ न करना। प्रश्न पूछनेसे मै किसीको मना नही करता, लेकिन मै परावलम्बनको टालना चाहता हूँ। बाकी तो मै बैठा ही हूँ और जिस विषयपर मैने दूसरोकी अपेक्षा ज्यादा सोच-विचार किया है अथवा जिस विषयका मुझे ज्यादा अनुभव है और जिससे लाभ मिल सकता हो उसे प्राप्त करनेका तुम्हे अधिकार है, और यह तुम्हारा कर्तव्य भी है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

२८. पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको

११ जून, १९३२

चि० मथुरादास[1],

तुम ऐसा क्यों मानते हो कि मेघजीकी[2] मृत्युके लिए तुम उत्तरदायी हो? यदि तुम जिम्मेदार हो तब तो मैं तुमसे भी कितना ज्यादा होऊँगा? और यदि यह मान भी लो कि तुम उत्तरदायी हो तो अब उसका शोक क्या करना? भूतकालका शोक नही करना चाहिए। उसमे से जो-कुछ सीखने लायक हो उसे ग्रहण करके उसे भूल जाना चाहिए।

बुनाईकी पुस्तकके पीछे रात-दिन एक न करके नियमित रूपसे समय देना ही उपयुक्त होगा। जल्दबाजीमे लिखी गई चीज बहुधा अपरिपक्व होती है। यदि विचार परिपक्व हो तो रचना प्रवाहबद्ध भी होगी और शोभायुक्त भी।

मैं एक ही दवा बताता हूँ। क्योंकि अनेक नामोंसे पहचाने जानेवाले रोगोका मूल एक ही होता है, इसलिए दवा भी एक ही हो सकती है।

मैं चाहता हूँ कि तुम पूरी तरहसे जागरूक हो जाओ। शरीरको कसो और नियमित रूपसे काम करने लगो।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७५४) से।

२९. पत्र : नानाभाई इच्छाराम मशरूवालाको

११ जून, १९३२

भाई नानाभाई[3],

तुम्हारा कार्ड मिला। मणिलालका पत्र मुझे तो अभी तक मिला नही। मेरी मुलाकाते तो बिल्कुल बन्द हो गई है। यदि बन्द न हुई होती तो भी विशेष अनुमति लिये बिना मेढ मुझसे नही मिल सकता था। तथापि मणिलालका पत्र आनेपर यदि मैं कोई राय बना सका तो बनाऊँगा। फीनिक्ससे कोई तार नही आया है, इसपर से कमसे-कम मैंने तो यह मान लिया है कि मणिलाल और सीता[4] दोनो सकुशल होगे।

१. मथुरादास पी० आसर, आश्रमके एक अनुभवी बुनकर और खादी कार्यकर्ता।

२. आश्रमके उन तीन बच्चोंमें से एक जो चेचकके शिकार हुए थे; गांधीजीकी सलाहपर उन्हें टीका नहीं लगाया गया।

३. मणिलाल गांधीके ससुर।

४. मणिलाल गांधीकी पुत्री वैर्यबाला।

सीताके बारेमें तो तुम्हारे कार्डसे ही मालूम हुआ। सुरेन्द्रके पत्रसे पता चला कि वह वीसापुरमें मजेसे है।

तुम दोनोंको बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८४) से। सी० डब्ल्यू० ४३२९ से भी; सौजन्य: कनुभाई मशरूवाला

३०. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

[११ जून, १९३२][१]

चि० पण्डितजी[२],

मृत्यु-सम्बन्धी लेखमें काकीका[३] नाम बादमें लिया गया है और वह भी महादेवके याद दिलाने पर ही। और चूंकि मैंने दूसरोंकी मृत्युसे तत्व ग्रहण किया था, इसलिए मैंने काकीके बारेमें अधिक नहीं लिखा। इस तरह अन्य मृत व्यक्तियोंके नाम भी छूट गये थे। पूरी तालिका तो वहीं [आश्रममें ही] बननी चाहिए।

रसिककी[४] मृत्युका इस लेखमें उल्लेख नहीं था, क्योंकि वह आश्रमके बाहरका व्यक्ति था। मगनलालका जिक्र कैसे किया गया वह तो लेखमें ही बताया गया है। मथुरी[५] जब मुझे मिली थी तब वह ठीक थी।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २३०) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन एन० खरे

३१. पत्र : जमनाबहन गांधीको

११ जून, १९३२

चि० जमना[६],

तुम राणावाव चली गईं, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी है। अब वहाँसे तुरन्त चली नहीं आना। सेनेटोरियम किसका है? कहाँ है? आसपास बस्ती है? किराया देना पडता है? वहाँ जानेका दुख न मानना। वहाँके गरीबोंसे जानपहचान

१. साधन-सूत्रमें "११-५-१९३२" तारीख दी गई है जो भूल है। मृत्यु-सम्बन्धी लेखकी चर्चासे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह पत्र उसके बाद लिखा गया था; देखिए खण्ड ४९, "मृत्यु बोध", ३०-५-१९३२।

२. आश्रममें संगीत-शिक्षक।

३. द० बा० कालेलकरकी पत्नी।

४. हरिलाल गांधीका लड़का, इसकी १९२९ मे मृत्यु हो गई थी।

५. ना० मो० खरेकी सुपुत्री।

६. नारणदास गांधीकी पत्नी।

करना। हो सके तो सेवा करना। यह कुछ न बन पड़ता हो तो स्वयं अध्ययन करना, ज्ञान बढ़ाना, कार्यक्षमता बढ़ाना। पुरुषोत्तम[1] साथ है, यह बहुत ही अच्छी बात है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५५) से; सौजन्य: नारणदास गांधी

३२. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

१२ जून, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मुझे जरा भी लम्बा नही लगता, क्योंकि तूने मेरा मनचाहा वर्णन दिया है। मै सिंहगढ़ तीन बार गया हूँ। एक बार तो तब जब लोकमान्य थे,[2] और हम परस्पर एक दूसरेसे मिले भी बहुत थे। मैंने उनका घर देखा था। यह सच है कि उन्होंने कुछेक नई चीजें लिखी है। हरिनारायण आप्टेसे[3] मै मिला था। उनके उपन्यास पढ़नेकी इच्छा तो बहुत है, लेकिन फिलहाल कोई नई चीज हाथमे लेनेकी मेरी इच्छा नही होती। उर्दू, अर्थशास्त्र, आकाश-दर्शन, चरखा और पत्र-व्यवहार इन सबको ही मै ज्यों-त्यो करके पूरा कर पाता हूँ और इसके अतिरिक्त बीच-बीचमे और भी बहुत कुछ पढ़ना होता है।

जेल-अधीक्षक[4] के बारेमे तूने जो लिखा है वह सच है। मै सब-कुछ देख-समझ सका था। लेकिन हमें यह सब सहन करना चाहिए। एक व्यक्तिके रूपमे वह बुरा नही है। लेकिन अधिकार बुरी चीज है। और फिर यह अधिकार भी कहाँ है? इसलिए हमें इस तरहसे सोचना चाहिए। यह कितनी अच्छी बात है कि बुरी परि-स्थितियोमे भी [उसमे] थोड़ी बहुत इन्सानियत बच गई है? और फिर कौन जाने हम उस स्थितिमे होते तो कितने गिर जाते? तुझे जो अनुभव हुआ वैसे अनुभव तो होते ही रहेंगे। सहनशक्ति, उदारता, धीरज, विवेक इन्ही बातोसे आते है। सब-कुछ अनुकल हो तो हर कोई ऐसा आचरण कर सकता है जो प्रशंसनीय हो।

"अब सन्तोष हुआ न" से मेरा कोई अभिप्राय नहीं था। यह तो मेरे मुँहसे सहज ही निकल गया। सुशीलाको भले ही बुरा न लगा हो, लेकिन मुझे लगा। उसे आने देनेके बाद मुझे उससे थोड़ी बातें करनी चाहिए थी, लेकिन समय न होनेके कारण जमनादासके बारेमे पूछकर ही सन्तोष करना पड़ा। उसे आशीर्वाद।

१. जमनाबहनका पुत्र।
२. देखिए खण्ड १७, पृष्ठ ४०१।
३. मराठी उपन्यासकार।
४. यरवडा सेंट्रल जेलके, मेजर भण्डारी।

स्त्री-पुरुषके सम्बन्धमे मैने लिखनेकी इच्छा तो की थी। लेकिन यदि तू खास प्रश्न लिख भेजे तो अच्छा होगा। अंग्रेजीका अभ्यास अभी बन्द नही करना है। मेरे कहनेका आशय यही था कि नये विद्यार्थियोंको अमुक विषय सीखनेसे पहले और कुछ नही सिखाना चाहिए। नारणदासके पत्रमे मैने सब कुछ लिखा है।

तेरा शरीर ताँबेका-सा होना चाहिए। यदि मछलीको निषिद्ध न मानती हो और यदि तुझे लगे कि उसे खानेसे शरीर अच्छा रहेगा तो तू बाहर जाकर खा सकती है।[1] इमाम साहब ऐसा ही करते थे। इस बारेमे ज्यादा चर्चा करना चाहो तो करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२८९) से। सी० डब्ल्यू० ६७३७ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कटक

३३. पत्र : नारणदास गांधीको

८/१३ जून, १९३२

चि० नारणदास,

आज तुम्हारी डाक मिलनेसे पहले पोस्टकार्ड मिल गया था। लेकिन चूँकि कलकी डाकमें मैंने नारायणप्पाके बारेमे सविस्तार लिखा है इसीसे पोस्टकार्डका उत्तर अलगसे नही भेजा। मीराबहनके सम्बन्धमे अस्वीकृतिका जवाब आ गया है। अतएव मैंन बीचमे ही जो निर्णय कर लिया था सो ठीक ही हुआ। इसी कारण आज दुर्गा और आनन्दी[2] आये थे, लेकिन वल्लभभाई और मै उनसे न मिल सके। महादेव मिल आये। दु:ख तो हुआ, लेकिन ऐसे दु:खोके घूंट पीनेमे ही हमारा धर्म सुरक्षित रह सकता है। अतएव मैंने इस दु:खको सुख माना है।

आश्रमके लोगोके कार्यका प्रति घंटा एक आना हिसाब रखनेका तुमने जो निश्चय किया है वह ठीक किया है। मुझे लगता है कि इसके जरिये हम भारी खोज कर सकेंगे। यह काम ठीक तरहसे हो इसके लिए प्रत्येक व्यक्तिको समयका ध्यान बराबर रखना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि या तो तुम्हे हर घटेके बाद घटी बजानी पडेगी अथवा किसी और उपायकी खोज करनी होगी जिससे प्रत्येक व्यक्तिको समयका पता रहे। दूसरा यह कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कामके जो आँकड़े पेश करे वे सही हों। समय ही पैसा है, यदि यह बात अच्छी तरहसे समझ ली जायेगी तो जाने-अनजाने गलत समय लिखाना खोटा सिक्का चलानेके समान होगा। इससे हमारा

१. प्रेमाबहन कंटकके एक डाक्टर मित्रने उन्हें सलाह दी थी कि मछलीका अपना परम्परागत आहार न खानेकी वजहसे उनका स्वास्थ्य निरन्तर गिरता जा रहा है।

२. साबरमती आश्रमके लक्ष्मीदास आसरकी पुत्री।

हिसाव-किताव भी गड़वड़ हो जायेगा और हम जिन निष्कर्षो पर पहुँचेंगे वे भी गलत साबित होंगे। मैं समझता हूँ कि हमें कमसे-कम एक महीने तक प्रत्येक व्यक्तिकी कार्य-सम्वन्धी कतरनको सँभाल कर रखना चाहिए। यह काम आसानीसे हो सके, इसके लिए सवको एक ही मापकी कतरने दी जानी होंगी, और उसमे जो-कुछ लिखा हो वह साफ-साफ अक्षरोमे हो। वह लिखवाते समय मनमे यह विचार जरूर आता है कि तुम यदि रोजका हिसाव न भी रखो तो चलेगा। तुम्हारा रोजनामचा तो ये कतरने ही है और ये कतरनें हमेशाके लिए सँभाल कर रखनी हैं, यदि ऐसा विचार हो तो उन्हे चिपकाकर रखा जा सकता है, लेकिन मैं इसकी जरूरत भी नही समझता। जैसे-जैसे कतरने आती जाये, वैसे-वैसे उनमें वताये हुए घटोको वहीखातेमे जमा करते जाये। यदि यह प्रश्न उठे कि इस तरह घंटोको जमा करते हुए किस काममे कितने घंटे गये इसकी खवर नही रहेगी तो वहीखातेमें भिन्न-भिन्न कार्योके शीर्षकके अन्तर्गत घंटे जमा किये जा सकते हैं, लेकिन इसका उपयोग करनेके लिए मेरा खयाल है कि तुम्हें दोहरा हिसाव-किताव रखना होगा। तात्पर्य यह कि (१) नामका और (२) कामका; तभी महीनेके अन्तमे तुरन्त इस निश्चय पर पहुँचा जा सकेगा कि किसने कितने घटे काम किया और किस काममें हमे कितने घंटे देने पड़े। हमारी जानकारी के लिए इन दोनो प्रकारके आँकड़ोकी जरूरत होगी, ऐसा मैं अवश्य देखता हूँ। इससे अधिक सुझाव तो मुझे अभी नही सूझते। तुम्हारे खुदके एक दिनके हिसावको मैं समझ सकता हूँ। आवश्यकतानुसार यज्ञके दो घंटोमें कमी करनी हो तो तुम कर सकते हो। जो व्यक्ति कातकर ही अपने सूतके पैसे चुकाता है वही शुद्ध यज्ञ करता है। इसमें अभी अपने हाथके कते सूतके कपड़े पहननेका लोभ वना हुआ है अर्थात् अच्छा सूत कातनेके पीछे उसका वुना कपड़ा स्वयं पहननेका स्वार्थ छिपा रहता है जवकि यज्ञके रूपमे की गई मजदूरी अथवा वस्तुका निजी उपयोग सर्वथा त्याज्य होना चाहिए। याज्ञिक जितनोके लिए यज्ञ करता हो उसमें से वह मात्र उतने ही भागका उपयोग कर सकता है अर्थात् हमारे इस यज्ञ-कार्यके पीछे यह कल्पना निहित है कि हम तो यह यज्ञ ३० करोड़ व्यक्तियोके लिए करते है, इसलिए हमारे काते गये सूतका ३० करोड़वाँ भाग हमारे हिस्सेमे भले ही आये। और हमें ऐसा समझना चाहिए कि जो खादी हमे पहननेको मिलती है उसमे यह हिस्सा हमें मिल ही जाता है। मेरी इस मान्यताके विरुद्ध महीन खादीके पक्षमे अनेक दलीले दी गई हैं और उन्हे मैं समझा भी हूँ तथा इसी कारण यज्ञके शुद्धाशुद्ध रूपको मैंने सहन कर लिया है, लेकिन मन ही मन मैंने इस यज्ञमे निहित दोषको हमेशा देखा है। इसलिए मैं जो दोष तुम्हें वता रहा हूँ यदि तुमने उसे पूर्णतः समझ लिया है तो तुम अपने यज्ञका सारा ही सूत अवश्य दे डालना। उसमें से तुम अपने अथवा जमनाके कपड़े वनवानेके लोभका त्याग कर देना। सारा सूत इकट्ठा होनेपर उसका जो कपड़ा तैयार हो उसमें से अपनी जरूरतका कपड़ा तुम ले लेना। यदि मेरे विचारोंमें तुम्हे कोई दोष दिखाई दे तो मुझे वताना। दोष देखनेके वावजूद यदि इस समय इसपर अमल करना शक्तिके वाहर हो — फिर भले ही उसका कारण तुम स्वयं हो अथवा जमना — तो भी मेरे

सुझाव पर अमल न करना। यदि कोई कार्य-विशेष हमने आज तक न किया हो और कलसे करने लग जाये तो यदि वह विवेकपूर्वक किया गया हो तो उससे आनन्द की धारा बह निकलती है और हमारे सिरसे एक प्रकारका बोझ उतरता मालूम होता है। तुम्हे जबतक ऐसा अनुभव न हो तबतक मेरे सुझावको अमलमे न लाना। जैसा कि मै अपने एक पिछले पत्रमे लिख गया हूँ, मेरी इच्छा तो यही है कि सबका यज्ञ दोषरहित हो, लेकिन जबतक सब लोग मेरे विचारोंको समझ नही लेते तबतक मुझे प्रतीक्षा करनी है। लेकिन तुम्हारे पत्रपर से मै देखता हूँ कि सब लोग यहाँ तक पहुँच गये हैं कि अन्तिम कदम यदि उसमे [जिसे करनेके लिए वे सहमत है] नही आ पाया हो तो उसे लेना मुश्किल नही है। तुम्हारे पत्रका मैंने यह अर्थ लगाया है कि १२.३० से १.३० बजे तक सब कोई बारामदेमे बैठकर यज्ञ करेंगे और वहाँ जो सूत काता जायेगा उसे वहीका वही दे देंगे। इसका शब्दार्थ तो यह हुआ कि यह सूत पैसा चुकाकर भी अपने लिए नही खरीदा जायेगा और यदि यह बात सबपर लागू होती है तो तुम्हारा एक घटेका सूत भी इसी तरह दे दिया जायेगा। लेकिन इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि एक बार सूत दे देनेके बाद यदि कोई अपने हाथका सूत अपने लिए खरीदना चाहे तो खरीद सकता है। यदि ऐसी बात हो तो इसमे उस हदतक दोष ही रहेगा जैसा मैंने ऊपर लिखा है। इसे दूर करनेके लिए यदि सब लोग सहमत हों तो अच्छा है। लेकिन सहमत होनेका अर्थ यह है कि आजतक जितनी सावधानीके साथ, इस खयालसे कि यह सूत अपने इस्तेमालके लिए काता जा रहा है, हम सूत कातते थ, अब उससे कही अधिक सावधानीके साथ काता जाना चाहिए।

पिछले १०-१२ दिनोंसे मै इतनी खराब पूनियोंसे सूत कात रहा हूँ जितनी खराब पूनियोसे पहले कभी नही काता। ऐसा मै जानबूझकर कर रहा हूँ। मैने प्रेमलीलाबहनसे रुई मँगवाई थी। उसके उत्तरमे उन्होने तुरन्त मुझे पूनियाँ भेज दी। ये पूनियाँ उन्हीमे से है। इन पूनियोंको फेंका तो नही जा सकता। यह तो निठल्लापन होगा। ये बहनोको भी नही भेजी जा सकती। यदि ये कातनेके लायक हो तो इन्हें कातनेके लिए मै अपने-आपको दुगुना ज्यादा योग्य मानता हूँ। इसीसे मैने इनसे कातनेका निश्चय किया है। इसपर से मै देख सकता हूँ कि अच्छी पूनीमे और खराब पूनीमे कितना ज्यादा अन्तर है। यह बात मै हमेशासे जानता आया हूँ। लेकिन इसका अनुभव तो मैने इस बार ही किया है, क्योकि सामान्यतया मेरे हिस्से तो अच्छी पूनी ही आती है। इसलिए किसी भी दिन ऐसी खराब पूनी कातनेकी बात मुझे याद नही आती और अच्छी रुई क्या कर सकती है, इसका अनुभव मुझे महादेवकी कताईसे हो रहा है।

यह सब लिखनेका उद्देश्य केवल इतना ही है कि यदि हम यज्ञार्थ अच्छेसे-अच्छा सूत कातना चाहते हो तो हमारी पूनी भी अच्छीसे-अच्छी होनी चाहिए, रुई बिल्कुल साफ होनी चाहिए और चरखा भी अच्छी स्थितिमे होना चाहिए। इतना हो तो यज्ञका घंटा किसीके लिए भी भारी न पड़े; इतना ही नही अपितु सब एक साथ

बैठकर मौन भावसे काते तो अच्छी तरहसे चलते हुए चरखोसे इतनी मधुर संगीत-लहरी बह निकले कि एक घंटा एक पलमे ही बीत जाये और सारा समय आनन्दसे बीत जाये। इस सबके पीछे यज्ञके प्रति प्रेम-भाव तो निहित ही है। अत्यन्त दिलचस्प कही जानेवाली वस्तु भी जिसे समझमे न आती हो अथवा जिसे रुचिकर न लगती हो तो उससे उसे उकताहट ही होगी और इस तरह मेरा बहीखाता पुराण और उसके अन्तर्गत यज्ञ पुराण समाप्त होता है।

मुलाकात बन्द हो जानेकी बात तो मै लिख ही चुका हूँ। मेरे हाथके बारेमे जबतक मै न कहूँ तबतक चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नही, क्योकि मै उसके बारेमे कुछ नही छिपाता; छिपाना मै अनावश्यक समझता हूँ। हमपर जो गुजरे उसे हमे सहन करना सीखना है। तब दर्द आदिको छिपाना तो दोष माना जायेगा। अभी तो बाये हाथमे प्लास्टर लगा है। इसलिए यदि कोई देखे तो यह करुणाजनक ही लगेगा जबकि दया करनेका कोई कारण ही नही है। यदि इस कुहनीमें दर्द होनेका कारण मेरा उससे जरूरतसे ज्यादा काम लेना ही हो तो स्पष्ट है कि उसे पूरा-पूरा आराम दिया जाना चाहिए। और उसे आराम देनेका तरीका यदि उसपर प्लास्टर लगाना है तो लगा दिया गया है। अब इसका परिणाम क्या निकलेगा यह तो एक-दो सप्ताहमे मालूम होगा और यदि आरामकी ही जरूरत हुई तो बाहरसे जिस सहायताकी आवश्यकता महसूस होगी उसे जेल-अधिकारी स्वयं प्राप्त करेगे। दूसरी तरहसे मेरी तबीयत अच्छी ही कही जा सकती है। मेरा वजन १०६३/४ पौड है, इसलिए कह सकते हैं कि वह बढ रहा है। एक ही हाथ काम देता है इसके बावजूद, और खराब पूनीके साथ माथापच्ची करनेके बावजूद, मै हमेशा २०० तार कात सकता हूँ। दूसरे अध्ययन आदि भी चल पाते हैं। बालकके समान मै बड़ी उर्दू कापी बुकमे लिखता हूँ। यह सब-कुछ अगर तबीयत ठीक न हो तो नही किया जा सकता, मन अवश्य इन्कार कर दे।

जयन्तीप्रसादकी लड़कीके बारेमे मै तुम्हारे निर्णयको बिल्कुल ठीक मानता हूँ। अभी नया बोझ नही ही उठाना चाहिए। लेकिन यदि यह लड़की अपनी देखभाल स्वय कर सके और तन्दुरुस्त हो तो इसे लेनेका मुझे लोभ अवश्य होगा।

चिमनलालको[1] हर सम्भव यत्न करके अपने शरीरको सुधार लेना चाहिए। पारनेरकरको[2] अब तुम उसके पुरुषार्थपर छोड़ देना। वह रह सकता हो तो हमे उसको अपने साथ रखना चाहिए। न रह सके तो आग्रह करनेकी जरूरत नही। यहाँ भी 'गीता' का वह श्लोक[3] लागू होता है कि एक सीमाके बाद निग्रह क्या कर सकता है?

१. एक पुराने आश्रमवासी, दमेके मरीज।

२. यशवन्त महादेव पारनेरकर; पशु-पालनके विशेषज्ञ।

३. सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति॥
३, ३३

सावित्री बहनका पता वहाँ नही मिलता, इसका अर्थ यही हुआ न [कि] फिलहाल उसके पत्र वहाँ नही आते हैं। लेकिन इनके साथ हमारे बहुत पुराने सम्बन्ध हैं। इनके पुराने पत्र भी कही पड़े होगे और यदि नाम, पता कही नोट किये जाते है तो उनका नाम-पता भी कही-न-कही मिलना चाहिए। प्रेसमे यदि कोई रहता हो तो उससे उनका पता मिलना चाहिए। और फिर उन्होने मुझपर जो पुस्तक लिखी है वह हमारे यहाँ है, जिसमे उन्होने मेरे कुछ पत्र दिये हैं। सम्भव है पता वहाँसे मिल जाये। लेकिन इसके लिए मैं तुम्हारा बहुत ज्यादा समय बरबाद नही करना चाहता।

फादर एल्विनने[1] यह नही बताया कि उन्होने ईसाई ढगकी प्रार्थनाके लिए शुक्रवारका सुझाव क्यो दिया है? रविवारकी शामको पवित्र हृदय ईसाई गिरजा-घरोंमे गये हुए होते हैं और विशेष क्रियाओमे लगे रहते है, अतएव इस प्रकारके सार्वजनिक मिलनके लिए कदाचित् रविवार अनुकूल न बैठे और चूँकि शुक्रवार बहुत करके ईसामसीहके सूलीपर चढ़नेका दिन है इसीसे उन्होने शुक्रवार पसन्द किया होगा। पर यह तो मेरी कल्पना-मात्र है। एक दिन इस्लामी भजन भी रखा जाये, यह कल्पना मुझे बड़ी पसन्द है। पर यदि शुक्रवार हमे न मिल पाये तो गुरुवार रहे। गुरुवार यानी जुमेरात। जुमेरात भी इस्लाममे शुभ रात्रि मानी जाती है, ऐसा मेरा खयाल है। पर हमारे लिए तो सारे ही मुहूर्त अच्छे है। भावना शुद्ध हो, इतना ही पर्याप्त है।

सूटकेसकी खबर हमने भी समाचारपत्रोमें यहाँ पढ़ी थी। उसके आधारपर महादेवका खयाल है कि सन्दूक खो ही गया होगा। आलूविहारी तो हमारे साथ था और हमारे दलमे था और लगता है समाचारपत्रोमे यह बात देखकर वहाँ पहुँच गया है। इस सूटकेसमे किसके कपड़े और किताबे होगी, इसका तो महादेवको ही ध्यान नही है, मुझे तो हो ही कैसे सकता है? पर अब जाकर यह सूटकेस ठीक स्थानपर पहुँचा है। कदाचित् आलूविहारी वह सूटकेस तुम्हे भेजेगा अथवा उसे जैसा ठीक लगेगा वैसा करेगा। अवश्य ही उसका पत्र मुझे मिलेगा।

मुझे हमेशा यही उचित लगा है कि आश्रममे नवागन्तुकोको तुरन्त अंग्रेजी शुरू नही करवानी चाहिए। मेरी मान्यता यह है कि नित्यकर्मके लिए आवश्यक संस्कृत आनी चाहिए, हिन्दी आनी चाहिए, उर्दू लिपिका ज्ञान हो, भजनोंमे साथ देने लायक संगीतकी समझ होनी चाहिए और रुई-सम्बन्धी समस्त क्रियाओंको सीख ले, इसके बाद ही वे चाहें तो अंग्रेजी अवश्य सीखें। उपरोक्त कार्यक्रमको पूरा कर पानेके लिए मैं सामान्य व्यक्तिके लिए एक वर्षकी अवधि पर्याप्त समझता हूँ। लेकिन यह अवधि किसीको कम तथा किसीको ज्यादा भी लग सकती है। जो लोग आश्रममे अपना जीवन व्यतीत करनेके लिए आये हैं अथवा जो थोड़ी मुद्दतके लिए ही सही लेकिन सेवाभावसे आये हैं, उन्हें अंग्रेजीका मोह तो होना ही नही चाहिए और जिसे मोह हो उसे जान लेना चाहिए कि आश्रममे उसकी इस इच्छाकी पूर्ति नही हो

१. वेरियर एल्विन।

सकती। इसका अर्थ कोई व्यक्ति यह भी न करे कि हम अंग्रेजीका बहिष्कार किये हुए है अथवा हमारे मनमे उस भाषाके प्रति कम आदरभाव है। हमारा उद्देश्य तो उसे उसकी सीमासे आगे नही ले जाना है। अनेक लोगोके लिए अंग्रेजी भाषा सेवाके अर्थ भी उपयोगी है, लेकिन आश्रममें उसका ज्ञान आश्रमके उद्देश्यको ध्यानमे रखते हुए तथा आश्रमकी सुविधानुसार ही दिया जा सकता है। और इतने धैर्यकी आशा हम आश्रममे रहनेवाले प्रत्येक व्यक्तिसे रख सकते ही है।

११ जून, १९३२

इमाम साहबकी कब्रके लिए भाई प्यारअलीने खतीब साहबसे पूछा था। उनका कहना है कि कब्र बनवाना इस्लामकी दृष्टिसे अनुचित है। अतः वह जगह सुरक्षित रहे तथा उसकी पहचान बनी रहे उस दृष्टिसे उसपर पत्थर रखवा देना चाहिए। तुम अपने साथ किसी मुसलमानको लेकर जाना अथवा भेजना और वहाँ पत्थर रखवा देना। यदि हम अपने ही हाथोसे रख सके तो यों रख दिये जाये।

मौनवार, १३ जून, १९३२

आज तुम्हारा पत्र मिला है। कल (मगलवार)को छुट्टी है इसीलिए आज ही पत्र भेजता हूँ। मैंने सीतला सहायको[1] जो पत्र लिखा है उसे पढ़ जाना। तथापि अन्ततः तुम्हे जो ठीक लगे सो करना। इसके बारेमे मै यहाँसे कोई अन्तिम निर्णय न करूँ, यही उचित है। तुम जो करोगे वह मुझे उचित लगेगा। मेरे पास निर्णयके लिए पूरी जानकारी भी नही है।

माधवलाल आजकल कहाँ है? मेरा खयाल था कि वह जेलमे है, लेकिन विट्ठल लिखता है कि वह जेलमे नही है।

इस सप्ताह मै लेख नही भेज रहा हूँ। समय भी नही है और तुम्हे लिखा यह पत्र भी लेख जैसा ही बन गया है।

बाये हाथसे प्लास्टर उतार दिया है। कोई फायदा नही जान पड़ा। इससे उसका कारण कुछ और ही होना चाहिए। लेकिन चिन्ता करनेका कोई कारण नही है। मीराबहन आजकल अलोना (बिना नमकका) भोजन कर रही है। इसलिए उसका आग्रह है कि मै भी ऐसा ही करूँ। कलसे शुरू किया है। मेरे लिए तो यह खेलके समान है, क्योकि मैंने आठ वर्ष तक अलोना भोजन किया था। अब फिर उसका अनुभव होगा। कोई लिखने लायक बात हुई तो बीचमें लिखूँगा।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२३२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. उत्तर प्रदेशके एक खादी कार्यकर्ता।

३४. पत्र : भारतीको

१३ जून, १९३२

सुन्दर लिखावटसे युक्त तेरा पत्र मिला।[1] ऐसे पत्रोसे मै ऊब जाऊँ, सो बात नही।

तुम भाई-बहन वज्रके समान कठोर और मजबूत बनो। सर्दी-गर्मी सहन कर सको, यह बात तो मुझे अच्छी लगती है। लेकिन शिमलाकी इस गर्मीमे मै तुम पर यह प्रयोग नही कर सकता। ऐसी सहनशक्तिका विकास विधिपूर्वक और धीरे-धीरे हो तभी फलीभूत होता है। कोमल परिस्थितियोमें रहनेवाला व्यक्ति समय आनेपर कठिन बन सकता है, ऐसा मानना बड़ी भूल है। यह तो प्रकृतिके विरुद्ध जानेके समान है। इस तरहकी भूलके सैकड़ों उदाहरण मेरी दृष्टिके सामने है।

साहित्य पढ़ना मुझे निश्चय ही अच्छा लगता है। विद्यार्थी जीवनमे मै स्कूली शिक्षासे आगे नही जा सका। उसके बाद तो एकके बाद एक ऐसे धन्धे आ पड़े कि पठन-पाठन कम ही हो सका, और जो हुआ सो जेलमें ही हुआ। लेकिन इससे मैंने बहुत खोया हो, ऐसा मुझे नही दिखाई देता। विचार करनेको बहुत मिला और अनुभवकी पाठशालाका अभ्यास तो पढ़नेकी अपेक्षा कही अधिक उपयोगी होता ही है।

'कलाके लिए कला'का दावा करनेवाले लोग भी वस्तुतः देखा जाये तो वैसा नही कर सकते। कलाका जीवनमे स्थान है, लेकिन कला किसे कहा जाये यह एक अलहदा सवाल है। लेकिन हम सबको जिस मार्गका अनुसरण करना है उसमे कला आदि साधन मात्र है। यही जब साध्य हो जाती है तब वह मनुष्यके लिए बन्धन रूप बन जाती है और मनुष्यके पतनका कारण होती है।

ईश्वर अर्थात् 'सत्य'। थोड़े वर्षोसे मै यह न कहकर कि 'ईश्वर सत्य है', यह कहने लगा हूँ कि 'सत्य ही ईश्वर है'। यही वाक्य मुझे अधिक उचित जान पड़ता है। सत्यके अतिरिक्त इस संसारमें अन्य कुछ नही।

यहाँ सत्यकी व्यापक व्याख्या करनी होगी। यह सत्य चेतनमय है। यह सत्य रूपी ईश्वर और इसका विधान भिन्न नही है अपितु एक ही है; इसीसे यह भी चेतन-मय है। इसलिए यह जगत सत्यमय अथवा नियमबद्ध है, ऐसा कहना एक समान है। इस सत्यमे अनन्त शक्ति समाहित है। 'गीता'के दशम अध्यायके अनुसार कहा जाये तो उसके एक अंशमात्रसे यह संसार टिका हुआ है। इसीलिए जहाँ-जहाँ ईश्वर शब्द आता है वहाँ-वहाँ यदि तुम सत्य शब्दका व्यवहार करोगी तो उससे जो अर्थ निकलेगा, उससे ईश्वर-सम्बन्धी मेरे अभिप्रायको समझा जा सकता है।

१. भारतीने अपने इस पत्रमें गांधीजीसे पूछा था कि क्या उन्हें साहित्यमें दिलचस्पी है, क्या वे 'कलाके लिए कला' के सिद्धान्तमें विश्वास रखते हैं और ईश्वरके सम्बन्धमें उनकी क्या धारणा है?

जो ईश्वर है — भले ही उसे हम सत्यके नामसे पुकारें — उसकी आराधना करना हमारा धर्म हो जाता है। हम जिसकी आराधना करते हैं स्वयं भी ठीक वैसे ही बन जाते हैं। प्रार्थनाका अर्थ इससे विशेष कुछ नहीं है। लेकिन इस विवेचनसे सब-कुछ समझमें तो आ जाता है न? सत्य हमारे हृदयमें बसता है, लेकिन हमें उसका ज्ञान नहीं है, अथवा थोड़ा है। यह हार्दिक प्रार्थनासे ही सम्भव हो सकता है[1] . . .।

मेरी लिखावट पढ़नेमें कठिनाई होती है क्या? मैं यह पत्र जिस लिफाफेमें भेज रहा हूँ वह सरदारकी कृति है। जितने व्यर्थके और कोरे कागज उनके हाथमें आते हैं उनका इस तरह उपयोग करनेमें वे अपना बहुत-सा समय व्यतीत करते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३५. पत्र : मैत्री गिरिको

१४ जून, १९३२

चि० मैत्री[2],

तेरा पत्र मिला। तुझे दुखी होनेका कोई कारण न था। तुझसे पूछा; ऐसा तो मैं सब लड़कियोंसे, जो बड़ी हो गई हों, पूछता हूँ। तुममें से किसीको विवाह करने की इच्छा हो तो उसे मैं स्वाभाविक मानता हूँ। मनमें घुलते रहनेसे तो मुझसे सब बात कह देना अच्छा है न? लेकिन यदि तुम्हारी ऐसी इच्छा न हो तो यह बात मुझे अवश्य पसन्द आयेगी। मैंने तो तुझे निर्भय करनेके लिए ही पूछा था। लेकिन यदि फिलहाल तेरा विवाह करनेका मन ही न हो तो यह तो सबसे बढ़िया बात है। लेकिन ऐसी पवित्रता बनाये रखनेके लिए भगवद्भक्ति और परोपकारी उद्यमकी बहुत आवश्यकता है, यह अच्छी तरह समझ लेना। तुम सब अपनी सेहत सुधारना। कृष्णमैया देवी[3] की तबीयत कैसी रहती है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३६) से।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ छूटा हुआ है।
२. दलबहादुर गिरिकी पुत्री।
३. दलबहादुर गिरिकी विधवा।

३६. पत्र : शामल आर० रावलको

१४ जून, १९३२

चि० शामल[1],

तेरा पत्र मिला। भाई अथवा अन्य लोग चाहे कितना ही दबाव क्यों न डालें तुझे विनयपूर्वक अपने निश्चय पर दृढ़ रहना चाहिए और जबतक मन पर काबू रख सके तबतक विवाह नही करना चाहिए। इसमे अनसूयाबहन[2] की मदद लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४१) से। सी० डब्ल्यू० २८७७ से भी; सौजन्य: शामल आर० रावल

३७. पत्र : नारणदास गांधीको

१४ जून, १९३२

चि० नारणदास,

कलकी[3] डाक भेजनेके बाद महावीरका पत्र मिला कि उसे पैसे नही मिले। उसने प्रति व्यक्ति १५ रुपये खर्चका अनुमान लगाया है। कितना होना चाहिए, सो तुम विचार करना। मैत्री लिखती है कि फिलहाल उसका विवाह करनेका कोई इरादा नही है।

वह जबतक दार्जिलिंगमे रहे तबतक उसे रहने देना चाहिए, यह बात मुझे तो ठीक लगती है।

बापू

चि० नारणदास गांधी
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२३३ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. नवजीवन प्रेसमें एक कार्यकर्ता।

२. अहमदाबादके एक मिल-मालिक अम्बालाल साराभाईकी बहन, जो अहमदाबादके श्रमिक संघसे सम्बन्धित थीं।

३. कृष्णमैया देवीका पुत्र।

३८. पत्र : तारामती म० त्रिकमजीको[1]

१४ जून, १९३२

मीराबहनको मिलनेकी मनाही होनेके कारण मुझे अन्य सब लोगोसे मिलना बन्द करना पडा है। जब लोगोंसे मिलनेकी छूट मिलेगी मैं तुरन्त लिखूंगा।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

३९. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१५ जून, १९३२

प्रिय अगाथा[2],

तुम्हारा पत्र मिला। प्रतिबन्धोका ईमानदारीसे पालन करके तुम बिल्कुल ठीक कर रही हो। वस्तुतः दीर्घकालीन अभ्यासके कारण कौतूहलकी सारी भावना मुझमें समाप्त हो गई है। एक कैदीका कौतूहल व्यर्थ ही है, क्योकि यदि उसे अप्रत्यक्ष या अवैध तरीकोसे कुछ चीजोकी जानकारी हो भी जाये तो भी वह कुछ नही कर सकता। और जो चीज शायद इससे भी बड़ी है वह यह कि मुझे इस बातका पूरा विश्वास है कि मेरे मित्रोंको जबतक हमारे अनुष्ठानकी न्याय्यतामे आस्था है तब तक वे अपनी भरसक जो कर सकते हैं, करेगे।

हाँ, महादेवको पिछले हफ्ते ही अपनी पत्नी और पुत्रसे मुलाकात करने दी गई थी। उसे प्रतिमाह एक बार मुलाकातियोसे मिलनेका हक है।

हम दोनोंके प्यार सहित,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४५४) से।

१. मथुरादास त्रिकमजीकी पत्नी।

२. इंडिया कंसिलिएशन ग्रुप (१९३१) की मन्त्री।

४०. पत्र : भाऊ पानसेको

१५ जून, १९३२

चि० भाउ,

मै पिछले सप्ताह तुम्हारे छः तारीखके पत्रका उत्तर नही दे पाया और इस सप्ताह तुम्हारा दूसरा पत्र भी मिला। अबसे विनोबाके प्रवचन न भेजनेकी तुम्हारी बात मेरी समझमे आई। विनोबाका प्रतिबन्ध उचित है।

हाँ, 'रामायण' के चित्रोंको लेकर मुझे अवश्य गलतफहमी हुई। कल्पनामें तो चाहे जैसा चित्र खीचा जाये और उसका ध्यान किया जाये, इसमे मै कोई दोष नही मानता। लेकिन यदि 'गीतामाता'के ध्यानसे सन्तोष हो तो अन्य किसी चीजकी क्या जरूरत है? 'गीता' का ध्यान दो तरहसे हो सकता है। एक तो उसे मातृरूपा माना गया है, अत: अपनी माताके ही चित्रका—यदि उसके चित्रकी आवश्यकता हो तो (और यदि वह मर गई हो तो)—ध्यान किया जाये और ध्यान करते हुए उसमे कामधेनुका आरोपण किया जाये। अथवा जैसा मन करे वैसा काल्पनिक चित्र मनमें चित्रित किया जाये। उसे गौमाताका रूप दिया जाये तो भी ठीक होगा। यदि दूसरी तरह बन पड़ता हो तो उसे मैं ज्यादा ठीक समझता हूँ। हम जिस अध्यायका पाठ सदा करते हों, उसमें से अथवा किसी भी अध्यायके किसी भी श्लोक अथवा किसी भी शब्दका ध्यान करनेका मतलब होता है उसका चिन्तन करना। 'गीता' मे जितने शब्द है वे सब गीतामाताके आभूषण है और जिस तरह किसी प्रियजनके किसी भी आभूषणका विचार मनमे लानेका अर्थ उस प्रियजनका ध्यान धरना है, उसी तरह 'गीता' के किसी भी शब्दका ध्यान करना स्वयं 'गीता' का ध्यान करना है। लेकिन यदि किसी व्यक्तिको इसके अलावा कोई और तरीका उपलब्ध हो तो वह उस तरहसे ध्यान कर सकता है। जितने दिमाग, उतनी ही विविधता होती है। कोई भी दो व्यक्ति एक ही वस्तुके बारेमे एक जैसा नही सोचते। दोनोके वर्णन और कल्पनामें कुछ-न-कुछ भेद तो अवश्य होगा ही।

छठे अध्यायके अनुसार की गई थोड़ी-सी भी साधना निरर्थक नही जाती और जहाँसे छूट गई हो वहाँसे दूसरे जन्ममे अग्रसर होती है। इसी तरह जिस व्यक्तिके मनमें कल्याण मार्गकी ओर प्रवृत्त होनेकी इच्छा तो है लेकिन उसे आचरणमे उतारनेकी शक्ति नही, उसकी वह इच्छा दूसरे जन्ममे और भी दृढ़ हो इसका अवसर उसे अवश्य प्राप्त होगा। इसके बारेमे मेरे मनमें तो कोई शंका नही है, लेकिन इसका अर्थ यह नही किया जा सकता कि हम इस जन्ममें शिथिल—प्रयत्न हों तो भी हर्ज नही। ऐसी इच्छाको मै इच्छा ही नही मानता, अथवा वह इच्छा बौद्धिक है, हार्दिक नहीं, और बौद्धिक इच्छाका तो कोई स्थान ही नही है, क्योंकि

यह इच्छा मृत्युके बाद नही रहती। लेकिन जो इच्छा हृदयमें घर कर गई है, उसके पीछे प्रयत्न तो होना ही चाहिए, लेकिन हो सकता है कि अनेक सयोगोके कारण, शारीरिक दुर्बलताके कारण, वह इच्छा इस जन्ममें पूरी न की जा सके—और ऐसा अनुभव हम रोज करते हैं। लेकिन इस इच्छाको लेकर यदि जीव अपना देह-त्याग करता है तो दूसरे जन्ममे इस जन्मकी चिन्ताएँ कम हो जाती हैं तथा उसकी इच्छा फलवती होती है, अथवा वह इच्छा और भी दृढ तो होती ही है। और इस तरह कल्याणकृत व्यक्ति तो उत्तरोत्तर आगे बढ़ता ही चला जाता है।

ज्ञानेश्वर महाराजने निवृत्तिनाथके[1] जीवनकालमें ही उनका ध्यान किया हो तो उन्होने भले ही ऐसा किया हो, लेकिन यह हमारे लिए अनुकरणीय नही है, ऐसा मेरा दृढ़ अभिप्राय है। जिसका हम ध्यान करें वह पूर्णताको प्राप्त व्यक्ति होना चाहिए। जीवित व्यक्तिके लिए पूर्णताका आरोपण करना बिल्कुल ठीक नही है और न यह आवश्यक ही है। लेकिन हो सकता है कि ज्ञानेश्वर महाराजने शरीरधारी व्यक्ति निवृत्तिनाथका ध्यान न किया हो अपितु अपनी कल्पनानुसार पूर्णताको प्राप्त निवृत्तिनाथका ध्यान किया हो। लेकिन इस प्रपचमें हम क्यो पड़ें? और जब जीवित मूर्तिका ध्यान धरनेका प्रश्न उठता है उस समय काल्पनिक मूर्तिका कोई स्थान नही रह जाता और इसके उल्लेखसे हम जिस निर्णयपर पहुँचेंगे वह मतिभ्रम पैदा करनेवाला होगा।

पहले अध्यायमे जो नाम दिये गये हैं वे मेरे मतानुसार खास नामोकी अपेक्षा गुणवाचक अधिक हैं तथा दैवी और आसुरी वृत्तियोके बीच सग्रामका वर्णन करते हुए कविने इन वृत्तियोंको मूर्तिमान रूप दे दिया है। पांडवों और कौरवोंके बीच हस्तिनापुर के निकट सचमुच युद्ध हुआ होगा, इस कल्पनामें इस बातका कोई निषेध नही है। उस युगकी वैसी किसी महान घटनाका दृष्टान्त लेकर कविने एक महान ग्रन्थकी रचना की है, ऐसी मेरी कल्पना है। इसमें भूल हो सकती है अथवा ये सब सचमुच ऐतिहासिक नाम हो तो ऐतिहासिक आरम्भके लिए इन नामोंका उल्लेख करना अनुचित नही होगा तथा विषय-वस्तुके विवेचनकी दृष्टिसे पहला अध्याय आवश्यक है इसलिए 'गीता' पाठ करते समय इसे पढ जाना भी जरूरी है।

किसीकी बनाई हुई पूनीसे कातना अपूर्ण यज्ञ अवश्य ही है। यह सम्भव है कि अपंग हो जानेके कारण मेरे जैसे लोग पूनी न बना सके, लेकिन जिनमे पर्याप्त शक्ति है उन लोगोंको तो अपनी पूनी स्वयं बनानी ही चाहिए।

तकली पूरी तरहसे सीख लेनेकी बातको मैं एक आवश्यकता मानता हूँ। मैं जानता हूँ कि विनोबाकी यह मान्यता है कि कताई-यज्ञके लिए यह अधिक सरल साधन है, मैंने इस सम्बन्धमें कोई निर्णय नही किया है और विनोबाके साथ बैठे विना मुझे निश्चय करना

१. ज्ञानेश्वर महाराजके बड़े भाई।

भी नही है। इसीसे इस सम्बन्धमें उदासीन हूँ। लेकिन तुम इस सुझावके बारेमे नारणदाससे चर्चा करना। मै भी कर रहा हूँ।

बापू

[पुनश्च :]

अपने कब्जके बारेमें लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३१) से। सी० डब्ल्यू० ४४७४ से भी; सौजन्य : भाउ पानसे

४१. पत्र: मनु गांधीको

१५ जून, १९३२

चि० मनु[1],

तेरा पत्र मिला। जमनादासको[2] लिखे पत्रके साथका पत्र तुझे क्यो नही मिला सो समझमें नही आता। तेरी बहादुरीकी खूब परीक्षा हो रही है। घबरानेका तनिक भी कारण नही है। तू साफ-साफ कह देना कि ठीक बचपनसे ही तू बा और बलीके साथ रही है और हरिलालके साथ रहनेका तेरा कतई कोई इरादा नही है। समझदार बच्चो पर माँ-बाप बलात् अपना अधिकार नही जमा सकते। इसलिए कहाँ रहना है, यह बात केवल तेरी इच्छा पर निर्भर करती है। तेरी इच्छाके बिना तेरा कोई विवाह कर दे यह तो हो ही नही सकता। इसलिए याद रख कि तेरा उद्धार तेरे अपने ही हाथमे है। मै तुझे इस तरह पत्र लिख कर हिम्मत प्रदान कर सकता हूँ, लेकिन एक कैदीके रूपमे समाचारपत्रोमे कुछ प्रकाशित नही कर सकता; और इसी तरह मेरे पत्र अदालतोमे नही चल सकते। लेकिन इन सबकी कोई जरूरत ही नही है, इतना तू निश्चित रूपसे समझ लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५१४) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला

१. हरिलाल गांधीकी पुत्री।

२. जमनादास गांधी, मगनलाल गांधीके छोटे भाई और राजकोट राष्ट्रीय शालाके मुख्याध्यापक।

४२. एक पत्र

१५ जून, १९३२

तुम्हारे समान अन्य लोगोंका भी यह विचार है कि चूंकि मैं स्वयं संयम और ब्रह्मचर्यका जीवन बिताता हूँ, इसलिए मुझे तो दीर्घायु होना ही चाहिए। वस्तुतः मेरे बारेमे यह मान्यता ठीक नही है अथवा दूसरोके साथ तुलना की जाये तो कुछ हद तक ठीक मानी जा सकती है। लगभग ३० वर्षकी आयु तक तो मैंने विषय सेवन किया ही था। मैं खाद्यपदार्थमें संयमका पालन करता था, यह दावा भी नही किया जा सकता। केवल स्वादकी खातिर मैं अनेक वस्तुएँ खाया करता था। बादमे धीरे-धीरे जीवन-प्रवाह संयमकी ओर प्रवृत्त हुआ। इसका भी अर्थ यह तो नही किया जा सकता कि मैं जितेन्द्रिय बन गया। केवल इतना ही दावा किया जा सकता है कि मैंने इन्द्रियोंपर अंकुश रखना सीखा। इस तरह विषयादिका मेरे शरीरपर जो असर होना था वह तो हो ही चुका था। उसमें जिस हद तक संयम आ जुडा उस हदतक उसका प्रभाव कम हो गया। पर मेरे अन्य समकालीन लोग, जो इतने सयमका भी पालन नही करते, मेरे इस थोडेसे सयमसे भ्रममें पड़ सकते हैं, और हो सकता है कि इसके परिणामस्वरूप मुझमें जो दुर्बलताएँ हैं वे उन्हें दिखाई ही नही दें। . . .[1]।

मैं कैदीके रूपमें जिन सुविधाओका उपभोग करता हूँ सो किसी वर्गीकरण विशेष को लेकर नही। मैं तो अपराधी वर्गमें नही आता। मेरे जैसे कैदियोको[2] पहलेसे ही अनेक सुविधाएँ प्राप्त हैं, इससे मेरे कार्यका बचाव नही होता। मेरे जैसे कैदियोको तो सरकार अमुक सुविधाएँ देती ही है, लेकिन उन सुविधाओका उपभोग करना न करना तो कैदी पर ही निर्भर करता है। अतएव जैसा कि तुम लिखते हो, उसके अनुसार गलतफहमी होना बिल्कुल स्वाभाविक है। इस गलतफहमीकी जोखिम उठाकर भी मैं जिन सुविधाओका उपभोग कर रहा हूँ उन सुविधाओका उपभोग करना मुझे सार्वजनिक दृष्टिसे उचित ही जान पडा है। लेकिन मुझे अपने इस दृष्टिकोणका बचाव करनेकी कोई जरूरत नही है। इसका औचित्य स्वयंसिद्ध होना चाहिए। लेकिन उचित न लगे तो भी जबतक मैं इसे ठीक समझता हूँ तबतक मुझे इस पर दृढ रहना चाहिए। यह बात जहाजके कप्तान पर भी लागू होती है। जहाजके कप्तानको अमुक मार्ग क्यो उचित जान पड़ता है, उसका कारण वह हमेशा ही नही बता सकता। लेकिन जो मार्ग उसे उचित प्रतीत होता है यदि किसीके कहनेसे वह उसका त्याग कर देता है तो ऐसा व्यक्ति कप्तानके पदके योग्य नही है। ऐसे कप्तानोंने अपने

१. अगले अनुच्छेदका परिचय देते हुए यहाँ महादेव देसाईने टिप्पणी लिखी है, लेकिन टिप्पणीमें यहाँ कुछ छूट जानेका उल्लेख नहीं किया गया है।

२. जिन्हें १८२९ के नियम २५ के अन्तर्गत राजबन्दियोंके रूपमें नजरबन्द रखा गया था।

जहाज चट्टानोसे टकरा दिये है। अतएव तुम्हारे जैसे लोगोंके मनमें मुझ जैसे व्यक्तियों को लेकर जहाँ-जहाँ शंका उठे वहाँ-वहाँ सावधान तो कर ही देना चाहिए। लेकिन सावधान करनेके बावजूद भी यदि वे अपने मार्गका त्याग नही करते तो वही उचित मार्ग है ऐसा तुम लोगोंको श्रद्धापूर्वक मान लेना चाहिए। ऐसा करते हुए अनेक बार यह श्रद्धा झूठी होती है, लेकिन समाज-व्यवस्थाको चलानेका जीवनमे अन्य कोई मार्ग नही है। मुझे जब लगेगा कि मुझे अमुक सुविधाका उपभोग नही करना चाहिए तब उसका त्याग करनेकी शक्ति मुझमे है, ऐसा मुझे कमसे-कम अभी तो लगता है। एक सामान्य कैदीके रूपमे मैंने दक्षिण आफ्रिकामे काफी समय बिताया है।

कृष्णदास[1] के बारेमे तुमने जो सुना है वह कहाँसे सुना है? यह बात तो बिल्कुल गलत है। कृष्णदासको निस्सन्देह निकाला नही गया है। कुछेक कारणोको लेकर उसने ही जानेकी अनुमति चाही। लेकिन छुट्टी लेनेके बाद भी उससे सम्बन्ध तो बना ही हुआ है। किसीके कहनेसे ऐसा कदम उठाना मेरे स्वभावके विरुद्ध है। कृष्णदासके बारेमे मुझे किसीने ऐसी प्रेरणा नही दी। लेकिन मै इस बातका मूल स्रोत जाननेके लिए उत्सुक हूँ। इसलिए यदि वह बता सकने लायक हो तो मुझे बताना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४३. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

[१६ जून, १९३२ से पूर्व][2]

चि० परसराम,

तुम्हारे पत्रोंके अनुसार बालकोंने अच्छी प्रगति कर ली जान पड़ती है। तकली पर तुम्हारी गति भी अच्छी है। रोज कमसे-कम आधा घंटा तो अवश्य देना और इतने समयमें यदि १६० तार तक पहुँचा जा सके तब तो इसके जैसी और कोई बात ही नही है। 'कूलेकी हड्डी' इसका तात्पर्य क्या है? 'कूला' शब्द हिन्दी शब्दकोषमे नही मिलता, और हड्डी सूजनेका क्या कारण है? अब सूजन ठीक हुई है अथवा नही? यदि ठीक न हुई हो तो उसे दूर करनेके तुरन्त उपाय करने चाहिए।

अब ये रहे महादेवसे पूछे गये प्रश्नोके उत्तर :

(१) मै तुम्हारे और अन्य सबके लिए सवेरे और शामको कमसे-कम आधा घंटा सैर करना अनिवार्य समझता हूँ। एक आसनमे एक घंटेसे ज्यादा बैठे रहनेकी जरूरत नही है। एक मिनटके लिए भी आसनको छोड़कर तनिक खड़े हो जाना चाहिए अथवा आसनको बदल लेना चाहिए।

१. १९२१-२२ में गांधीजीके सेक्रेटरी।

२. तिथिका निर्धारण पत्रके पाठमें आये कूल्हेकी हड्डीकी सूजनके आधारपर किया गया है; देखिए "पत्र : परशुराम मेहरोत्राको", १६-६-१९३२।

(२) माता अपने पुत्रसे मिलना चाहे यह बात स्वाभाविक ही है, लेकिन इस इच्छाके प्रति माताको संयमसे काम लेना चाहिए और यदि उसका पुत्र किसी सेवा-कार्यमें लगा हुआ है तो उसे चाहिए कि वह अपनी माँके मोहको दूर करे।

(३) पुत्र यदि हिन्दुस्तानसे बाहर जाये और दस वर्षके लिए वहाँ रहे तो उसका वियोग माताको सहन करना पड़ता है। हिन्दुस्तानमे असख्य ऐसी माताये है जो शायद जीविकोपार्जनके लिए बाहर जानेवाले पुत्रोंका फिर कभी मुँह भी न देख पाती हो। माताको पत्र द्वारा आश्वासन प्रदान करना उचित है। उदाहरणों द्वारा और दलीलोसे जितना मनोरंजन हो सके उतना करना चाहिए।

(४) इस बार मेरा हृदय इतना पत्थर हो गया है कि अदृश्य रूपसे बम्बईकी घटनाओंका यदि उस पर कोई असर हुआ हो तो हो। मुझे स्वय इसकी कोई जानकारी नही। थोडी देर तक विश्वास-भर करके ही शान्त हो गया हूँ, ऐसा लगता है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४८१) से। सी० डब्ल्यू० ४९५६ से भी; सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा

४४. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

१६ जून, १९३२

प्रिय चार्ली,

मुझे तुम्हारा पत्र और अगाथाके पत्रके नीचे तुमने जो चन्द लाइनें घसीटी है, वे मिले। यहाँ अखबारोंमें जो-कुछ छपता है उससे तुम्हारी गतिविधियोका पता मुझे चलता रहता है, लेकिन तुम क्या कर रहे हो इसकी कल्पना मै अखबारोकी सहायताके बिना भी कर सकता हूँ।[1] मै हृदयसे आशा करता हूँ कि चीनमे तुम्हारा अनुष्ठान[2] सफल होगा। कैंटरबरीके नेक डीनको जब चिट्ठी लिखो तब हमारा सप्रेम अभिवादन लिख देना। मुझे पता नही कि वह कितने समय तक वहाँ रहेंगे। क्या उनके साथ कोई है? यह कैसी बात है कि तुम्हारी सबसे नई पुस्तक[3] हमे अभी तक नही मिली? मै देखता हूँ कि उसका पहला सस्करण हाथों-हाथ बिक गया।

हम सबोंके सप्रेम अभिवादन सहित,

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९७४) से।

१. एन्ड्रयूज कांग्रेस नेताओं और ब्रिटिश सरकारके बीच समझौता करानेके उद्देश्यसे लॉर्ड इर्विन, लॉर्ड सैंकी, सर सैमुअल होर और रैमसे मैक्डॉनल्डके साथ व्यक्तिगत तौरपर भेंट कर रहे थे।

२. चीनके बाढ-ग्रस्त क्षेत्रोंमें कैंटरबरीके डीनके साथ सहायता-कार्यके उद्देश्यसे।

३. व्हाट आई ओ टु क्राइस्ट।

४५. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

१६ जून, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र[1] आज ही आया।

मुझे खुशी है कि तुमने दामोदरदासका घर छोड़ दिया है। अभीतक उसका कोई पत्र न लिखना अनिष्ट-सूचक है। हमे आशा करनी चाहिए कि उसने कोई गलत कार्य नही किया है, और न करेगा। उसके बारेमे मेरी राय हमेशा बहुत अच्छी रही है। लेकिन यदि वह वैसा नही है तो इस बातका मुझे दु:ख रहेगा।

मुझे कोई सन्देह नही है कि तुम्हे रखनेमे शान्ताबाईको कोई परेशानी नही होने पाये, इसका इतमीनान तुमने कर लिया है।

हाँ, रविवारसे मैंने नमक छोड़ दिया है। चूँकि डाक्टरोंने पट्टी खोल दी है और मालूम हुआ कि उसके लगानेसे कोई आराम नही हुआ, इसलिए मुझे तुरन्त तुम्हारा खयाल आया और भान हुआ कि मै नमक छोड़ दूँ तो तुम्हे ज्यादा इतमीनान होगा। मेरे लिए यह कोई त्याग नही था और इसलिए मैंने उसे लेना तुरन्त बन्द कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि डबल रोटी छोड़कर मैंने फुलके लेना शुरू कर दिया। पता नही कारण फुलका था या नमक का अभाव, लेकिन दस्त ज्यादा ही ढीला होने लगा। इसलिए कलसे मै अंगूर, आम और एक सब्जीपर हूँ। इससे बिल्कुल तो नही मगर अँतड़ियाँ फौरन ठीक काम करने लगी। इसलिए मै कुछ दिन और फुलके और बादाम नही लूँगा और देखूँगा कि इसका क्या

१. अपने इस १४ जून, १९३२ के पत्रमें मीराबहनने लिखा था: "मेरी गतिविधियोंके बारेमें जहाँतक सरकार द्वारा आपको लिखे गये पत्रका सवाल है. . .। (आन्दोलनका मैं संचालन कर रही हूँ जरा इसकी कल्पना तो कीजिए — मैं इतनी महत्त्वपूर्ण हूँ यह जानकर मुझे बहुत हँसी आई।) लेकिन अब मैं आपको बता दूँ कि मैं क्या कर रही थी, क्योंकि कुछ ऐसी बातें शायद रही हों जिनकी वजहसे वे शंकालु हो उठे हों। आपने जो काम मेरे जिम्मे छोड़ा था, उसे करनेमें मैं सारे समय व्यस्त थी, लेकिन प्रति सप्ताह अपनी रिपोर्ट आदि तैयार करनेके सिलसिलेमें स्वभावत: मैं अपने मित्रोंसे मुक्त रूपसे मिलती-जुलती थी, जिनमें से कई लोग आन्दोलनके निर्देशनमें सक्रिय भाग ले रहे थे। एक बार मुझे याद है कि मैंने कांग्रेसके तत्कालीन कार्यवाहक अध्यक्षको अपने एक मित्रके बारेमें पत्र लिखा था। यह मित्र उन्हें व्यक्तिगत रूपसे नहीं जानते थे। और कभी-कभी लोग सत्य और अहिंसा सम्बन्धी आपके सिद्धान्तोंको लागू करनेके बारेमें मेरी सलाह लेते थे। विभिन्न 'युद्ध परिषदों' के साथ सम्पर्क रखनेकी बात तो दूर, मै उनके नाम तक नहीं जानती। १५ मईको अपनी रिहाईके बाद से . . . मै फिर आपके बताये कामको करनेमें लगी रही हूँ। यह है सारी बात — और जैसा कि आप कहते हैं, हमें ईश्वरकी इच्छामें ही प्रसन्न रहना चाहिए।" गांधीजीने इस पत्रको १८ जून, १९३२ को ई० ई० डॉयलको भेज दिया था।

परिणाम होता है। कल मेरा वजन लिया गया था; १½ पौंड घटा। इसमें शिकायत की कोई बात नहीं। ताकत उतनी ही बनी हुई है। नमक न लेनेकी शर्तका यह अर्थ नही कि दूध फिरसे लेने लगूँ। अगर दूध फिरसे लेने लगूँ और कुहनीका दर्द जाता रहे, तो उसका कारण दूधको समझना ठीक ही होगा। अगर दूधके बावजूद कुहनीका दर्द नही मिटता है और नमक छोड़ देनेसे मिट जाता है, तो यह दावा किया जा सकता है कि प्रयोग सफल हुआ। डा० मेहताको विश्वास है कि भीतरी कोई खराबी नही है और जरूरत इतनी ही है कि दर्दवाले अंगको आराम दिया जाये। जहाँतक चरखेका सम्बन्ध है, यह आराम मैं दे रहा हूँ। बहरहाल, नमक खाना बन्द कर ही दिया है। इसलिए मैं उसके दूसरे परिणामों पर निगाह रखूँगा और जरूरत हुई तो दूध लेने लगूँगा। मैं अपने शरीर पर ध्यान दे रहा हूँ। इसलिए चिन्ताका जरा भी कारण नही है। और सब बातोंमें शरीर बिल्कुल ठीक है। वल्लभभाई ठीक ही कहते हैं कि अगर कोई भीतरी खराबी होती तो वह शरीरके अन्य भागोंमें फैल जानी चाहिए थी। मैं यह सब ब्योरा आश्रमके पत्रमे नही दे रहा हूँ, क्योंकि मैं तुम्हे जो-कुछ लिखता हूँ वह तुम उन्हें दिखा ही देती हो।

अपने कार्यके सम्बन्धमे तुम जो कहती हो उसे मैं समझता हूँ। देखूँगा इस जानकारीका क्या उपयोग किया जा सकता है।

मेरे खयालसे तुम्हें मालूम ही है कि देवदास बुखारमे पड़ा है। जो तार मिला है उसमे लिखा है कि कोई गम्भीर बात नहीं है। मैंने अधिक ब्यौरेके लिए तार दिया है। और मणिलाल, सुशीला, उनकी लड़की और प्रागजी सब भयंकर मलेरियाके शिकार हो गये थे। परन्तु अत्यन्त दुर्बल होकर भी अन्ततः उन्होंने मलेरियासे पिण्ड छुड़ा लिया दीखता है। सर जेम्स जीनकी पुस्तकमे एक बढ़िया वाक्य है: 'जीवन मृत्युकी ओर गतिशील है।' यों भी कहा जा सकता है कि जिन्दगी मौतकी तैयारी है। पता नहीं क्यों हम उस अनिवार्य और महान घटनाके विचारसे ही कांपने लगते हैं। उसे पहलेसे बेहतर जिन्दगीकी तैयारी समझे तो भी वह महान है। और जो ईश्वरसे डरकर जीनेकी कोशिश करता है, उसके लिए ऐसा ही होना चाहिए।

शान्ताबाईको मेरी याद दिला देना। बेशक तुम दामोदरदाससे अकसर मिलती रहोगी और अपनी सलाहसे उसकी मदद करना। क्या केशव[1] वहाँ है? वह क्या कहता है? उससे कहना कि मुझे सविस्तार लिखे।

हम सबकी तरफसे प्यार।

बापू

[पुनश्च:]

लिफाफा देखकर तुम वल्लभभाईकी कारीगरीकी प्रशंसा करोगी।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९१ से भी।

१. मगनलाल गांधीका पुत्र।

४६. पत्र : नारायणप्पाको

१६ जून, १९३२

हमारे रोजमर्राके काम कितने ही छोटे हो मगर उनसे हम पूरा सन्तोष मानें, तो इसके बराबर और कोई अच्छी बात नही है। जो राह देखते हैं, जाग्रत रहते है और प्रार्थना करते हैं, उनके लिए ईश्वर बड़े काम और बड़ी जिम्मेदारियाँ जुटा देता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४७. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१६ जून, १९३२

चि० परसराम,

तुम्हारी पुस्तिका अभी मुझे नही मिली। अखबारकी कतरन महादेव पढ़ लेगा। सूजनका[1] उपचार करना और उसे दूर करना।

विमलके[2] बड़े भाईके लिए तुम दौड़े हुए नही गये, यह ठीक किया लेकिन तुम्हे स्वयंको भी ऐसा ही लगना चाहिए। वह भाईकी देखरेखमे है और वह उनकी सार-सँभाल कर रहा है, इतनी जानकारी तुम्हारे लिए पर्याप्त होनी चाहिए। तुम्हारे पास उसे ठीक करनेकी यदि कोई जड़ी-बूटी हो अथवा तुम्हारी उपस्थिति उसके लिए जड़ी-बूटीका काम करे तो वहाँ जाना तुम्हारा कर्तव्य है। तात्पर्य यह कि यदि अपने वर्तमान कार्यसे मुक्त हो सको तो ऐसे समय जाना उचित होगा। लेकिन यह बात केवल विमलके भाई पर ही लागू नही होती, अपितु ऐसी स्थितिमे चाहे जो कोई भी रोगी हो उसके लिए यदि तुम्हारी उपस्थिति जड़ी-बूटीका काम दे तो तुम्हें जाना चाहिए। ऐसे अनुभवोको प्राप्त करके ही मनुष्य अपने हृदयकी दुर्बलताको दूर कर सकता है।

यदि हो सके तो कामके बारेमें ज्यादासे-ज्यादा घंटे निश्चित करने चाहिए, यह मेरी मान्यता है। लेकिन मुझे लगता है कि यह मर्यादा प्रत्येक व्यक्तिके लिए भिन्न-भिन्न होगी। जहाँ कौटुम्बिक भावना है और जहाँ मनुष्य दूसरे लोगोके समान ही अपनेको जिम्मेवार मानता है वहाँ सबके लिए ज्यादासे-ज्यादा मर्यादा बाँधना असम्भव

१. फूल्हेकी; देखिए "पत्र : परशुराम मेहरोत्राको," १६-६-१९३२ से पूर्व।

२. परशुराम मेहरोत्राका पुत्र।

तो है ही, कदाचित् अनुचित भी हो। जिसका शरीर काम करता है, जिसका मन तैयार है, जिसके पास सेवाका और कोई ज्यादा काम भी नही है वह अपना समय सस्थाकी सेवामे नही लगा सकता, ऐसा नियम कैसे बनाया जा सकता है? अतएव मै तो केवल इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि यदि हम अपने सारे कार्य विवेकपूर्वक करे, सात्विक वृत्तिसे करे, और उसमे कोई गडबड न हो तो किसीको बोझ लग ही नही सकता। बोझ तो हमें तब प्रतीत होता है जब हम कोई काम बाहरी दबावमें आकर करते हैं। स्वेच्छासे और आनन्दपूर्वक किये गये कामका बोझ प्रतीत नही होता। लेकिन जिसकी प्रवृत्ति आसुरी है, जो स्वार्थके वशीभूत होकर अपने शरीरसे अनेक प्रकारके काम लेता है और बादमे उसे तोड़ डालता है — ऐसे व्यक्ति स्वस्थचित्त तो कदापि नहीं होते और इसलिए एक आदर्शके रूपमे हम उन्हें स्वीकार नही करते।

स्त्रियोके सम्बन्धमे तुमने जो पक्ति उद्धृत की है, उसका मैने जो अर्थ बताया वही है।[1] यह पक्ति विषयी व्यक्तिपर ही लागू होती है। व्यभिचारीके लिए स्त्री अवगुणकी खान ही है, ऐसा कहनेमे कोई दोष नही है — ठीक उसी तरह जिस तरह, धनके लोभीके लिए सोनेकी खान नरककी खान है। लेकिन जगतके लिए वह नरककी खान नही है। स्वर्णके तो अनेक सदुपयोग है।

बापू

[पुनश्च :]

बालककी कुशलताके समाचार आये, यह सुनकर प्रसन्नता हुई।[2]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५०२) से। सी० डब्ल्यू० ४९७९ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

४८. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

१६ जून, १९३२

भाईश्री विट्ठलदास,

तुम्हारे दो पत्र मिले। तुम पर एक्स-रे का आश्चर्यजनक प्रभाव हुआ है। अब तो तुम्हारी सेहतमे तीव्र गतिसे सुधार होना चाहिए। लेकिन चूँकि एक रोग विशेष मे ये किरणे कारगर सिद्ध हुई हैं, इसलिए मुझ जैसे रोगियोके लिए भी ये उतनी ही कारगर होगी, ऐसा माननेमे भूल हो सकती है। हो अथवा न हो, लेकिन यहाँ तो शरीर दारोगाके हाथमें है, उसे जो सूझे सो करे। इन लोगोको डरकी कोई बात

१. देखिए "पत्र : परशुराम मेहरोत्राको", १-६-१९३२।

२. मूल पत्रमें इसके बाद महादेव देसाईके हस्ताक्षरोंमें यह टिप्पणी दी गई है: "तकली वाला लेख पढ़ गया। उसमें खास विशेषता नहीं मालूम हुई, बल्कि आर्थिक दृष्टि उसमें दी ही नहीं गई है। बच्चोंके लिए इसी विषयपर दिलचस्प वार्ता लिखनी चाहिए।"

दिखाई नही देती और वे मानते है कि इस कुहनीको केवल आरामकी जरूरत है। मुझे दर्द लगातार नही होता। कुहनीसे अमुक काम करनेसे दर्द होता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७८२) से।

४९. पत्र : देवदास गाँधीको

१६ जून, १९३२

चि० देवदास,

मुझे पहलेसे ही आशंका थी। कल मुझे कुछ ऐसा आभास भी हुआ था कि कही-न-कहीसे ऐसा समाचार अवश्य मिलेगा। इतनेमे ही कल तार आया। तुरन्त वल्लभभाईसे कहा "यह तार किस सम्बन्धमे है?" तो वह तेरी बीमारी का निकला। तू गोरखपुरमे है और तुझे बुखार न हो, ऐसा हो ही नही सकता था। लेकिन मै माने लेता हूँ कि इस पत्रके मिलने तक तू बुखारसे मुक्त हो गया होगा। मेरा खयाल है, और जैसा कि तेरा स्वभाव है, ऐसे समय यदि सगे-सम्बन्धी, मित्र लोग तेरे आसपास रहें तो तुझे अच्छा लगेगा। तू इसके योग्य भी है, क्योंकि तूने अनेक लोगोंकी सेवा की है। लेकिन मै तो ठहरा पाषाण-हृदय! इसलिए मै किसीसे देशके पश्चिमी भागसे गोरखपुर जानेके लिए नही कहूँगा। मनमे यदि ऐसी इच्छा हुई भी तो उसे दबा दूंगा। तत्वज्ञानका प्रयोग मै यदि तुझ पर न करूँ तो और किस पर करूँ? इस बातको तू समझे, सहन करे और प्रफुल्ल रहे, ऐसी मेरी इच्छा है। तेरे सगे-सम्बन्धी, मित्र, माता-पिता, सब-कुछ ईश्वर है, दूसरे तो नाम-भरके है। वे तो स्वयं अपंग है, उनका सोचा हुआ थोड़ा ही होता है? इन व्यर्थके नाते-रिश्तोका सहारा न लेकर सर्वव्यापक शक्तिका आश्रय लेना। उसके मनमे जो आयेगा वैसी मदद वह तुझे भेज देगा। मेरा विश्वास तो यह है कि तू जहाँ भी रहेगा वहाँ अपने पड़ोसीको अपनी ओर आकर्षित कर लेगा। जेलमे इससे भिन्न अनुभव होनेका कोई कारण नही है।

इतना लिखनेके बाद कहूँगा कि यदि तू आश्रमसे किसी व्यक्तिको अपने पास बुलाना चाहे तो इस आशयका तार वहाँ देना। लेकिन मुझे तो ऐसी उम्मीद है कि जबतक तुझे यह पत्र मिलेगा तबतक तेरी बीमारीकी बात भूतकालकी बात हो जायेगी। हम सबका आशीर्वाद तो तेरी जेबमें है ही।[1]

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. वल्लभभाई पटेलने गांधीजीको संयुक्त प्रान्तके गवर्नरसे यह कहनेके लिए राजी किया कि वे उनसे निवेदन करें कि वे देवदास गांधीकी बदली किसी ऐसी जेलमें करें जहाँका मौसम बहुत विषम न हो। देखिए "तार: सर मैल्कम हेलीको", १८-६-१९३२।

५०. एक पत्र[1]

१६ जून, १९३२

साँपकी बात ठीक है और ठीक नहीं भी। साप मेरे शरीर परसे चला जा रहा था। ऐसे मौके पर चुपचाप पडे रहनेके सिवा और मैं या तो दूसरा कोई क्या कर सकता था? इसलिये इसमे कोई स्तुतिका कारण नही देखता, जैसी स्तुति लेखकने की है। और वह जहरीला था, या नही, यह तो कैसे कहा जा सकता है? मृत्यु कोई भयंकर घटना नही है। ऐसे ख्याल बहुत वर्षोसे रहनेके कारण मेरेपर किसीकी मृत्यु ज्यादह समय असर नही कर सकती है।

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

५१. पत्र : अमतुस्सलामको

१७ जून, १९३२

प्यारी अमतुल,

तुम्हारा खत मिला। मुझे खुशी है कि तुम अपने लोगोके साथ रहती हो। डा० शर्माको[2] अबतक मैं लिख नही सका हूँ। लेकिन जल्दी ही लिखूंगा।[3] अगर मुलाकातोके लिए फिरसे द्वार खुल जाये, तो तुम जरूर आना और मुझसे मिलना। तुम कुछ पढ़ती हो क्या? तुम अपनी दिनचर्या मुझे अवश्य लिखो। कुछ-न-कुछ उर्दूमें हमेशा लिखा करो।

प्यार,

बापू

श्रीमती अमतुस्सलाम
४२, घोड बन्दर रोड
सान्ता क्रूज
बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५१) से।

१. क्या यह कथा सच है कि गांधीजीने एक जहरीले साँपको अपने शरीर परसे गुजर जाने दिया था? यह पत्र इस प्रश्नके उत्तरमें भेजा गया था।

२. डा० हीरालाल शर्मा, दिल्लीके एक प्राकृतिक चिकित्सा-शास्त्री।

३. देखिए "पत्र : डा० हीरालाल शर्माको", १८-६-१९३२।

५२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१७ जून, १९३२

चि० प्रेमा,

तुझे मूर्ख न मानूँ तो और क्या मानूँ? प्रश्न पूछनेमे बच्चोंको कोई दिलचस्पी न हो, लेकिन फिर भी वे लिखते है तो यह समयका अपव्यय है। लिखनेकी खातिर भी दिलचस्पीके साथ लिखे, वह तो अर्थपूर्ण है। बच्चे माता-पिताके पत्रकी उम्मीद न करते हों फिर भी यदि उनका पत्र आ जाये तो वे अवश्य खुश हो उठेगे। इसमे स्वार्थकी तनिक भी गन्ध नही होती। इससे हिस्टीरिया होनेकी बात तो सिद्ध नही होती। हिस्टीरियाके लक्षण तो मैंने अपने एक पत्रमे बताये थे।[1]

प्रार्थनामे साकार मूर्तिका मैंने निषेध नही किया है, लेकिन निराकारको उच्च स्थान दिया है। कदाचित इस तरहका भेद करना उचित न हो। किसी को कोई चीज, तो किसीको कोई चीज पसन्द आती है। इसमे तुलनाको कोई स्थान नही है। मुझे निराकार अधिक अच्छा लगता है। शकर, रामानुज आदिका तूने जो पृथक्करण किया है वह मुझे तो ठीक नही जँचा है।[2] परिस्थितियोकी अपेक्षा अनुभवका अधिक प्रभाव होता है। सत्यके पुजारी पर परिस्थितियोंका कोई प्रभाव नही होना चाहिए। उसे उन परिस्थितियोंको भेदकर निकल जाना चाहिए। परिस्थितियोके आधार पर स्थिर की गई राय बहुधा गलत होती है, ऐसा हम देखते है। प्रसिद्ध उदाहरण आत्मा और देहका है। इस समय आत्माका देहके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है इसीसे देहसे भिन्न आत्मा झट ही दृष्टिगोचर नही होता। इस परिस्थितिको भेदकर जिसने सर्वप्रथम – 'नेति' शब्दका उच्चारण किया उसकी शक्तिको अभी तक कोई प्राप्त नही कर सका है। ऐसे अन्य अनेक उदाहरण तुझे सहज ही मिल जायेंगे। तुकाराम आदि सन्तोंके वचनो का शब्दार्थ करना उचित ही नही है। उनका एक वचन अभी-अभी पढ़नेमे आया है। उसे मै तेरे लिए लिख रहा हूँ।

केला मातीचा पशुपति। परि मातीसि काय म्हणती॥
शिवपूजा शिवासी पावे। माती मातीमाजी समावे॥
केला पाषाणाचा विष्णु। परी पाषाण नव्हे विष्णु॥
विष्णुपूजा विष्णुसि अर्पे। पाषाण राहे पाषाणरूपें॥

१. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ २५४-५ और ३१४-५।

२. महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१ के अनुसार प्रेमाबहनने अपने पत्रमें लिखा था कि सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ बदलनेके साथ ईश्वरके प्रति हमारा दृष्टिकोण भी बदल गया है। शंकराचार्य उस कालमें हुए थे जब लोग ईश्वरके साथ समानताकी बात करते थे। वह स्वतंत्रताका काल था। रामानुजाचार्य गुलामीके युगमें हुए जब लोग अपनेको ईश्वरका दासानुदास कहते थे।

इस पदसे मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि ऐसे सन्तोकी भाषाके पीछे जो कल्पना निहित है, हमे उसे देखना चाहिए। वे साकार भगवानका चित्रण करते हुए भी, सम्भव है, निराकारकी पूजा करते हो। हम प्राकृत मनुष्य ऐसा नही कर पाते, इसीसे उनके भेदको समझ कर नही चलते और फिर दुःखको प्राप्त होते है।

जो व्यक्ति उर्दू पढ़ सकता है वह यदि इमाम साहबके यहाँ चला जाये तो पुस्तक तुरन्त हाथ आ जायेगी। वहाँ मीराबहनका उर्दू-अग्रेजी शब्दकोष है और अंग्रेजी-उर्दू शब्दकोष भी साथ ही भेजना। इमाम साहबके घरकी कभी-कभी सफाई होती है या नही? प्रत्येक खाली मकानकी सप्ताह या पखवाड़ेमे सफाई होनी चाहिए।

जबतक आदत नही पड़ जाती तभी तक समयका हिसाब रखनेकी मुश्किल पड़ती है। तत्पश्चात् उसमें तनिक भी समय नही जाना चाहिए। यह सब-कुछ विवेकपूर्ण ढगसे किया जाये तभी सुशोभित होता है और फल भी देता है।

मै दक्षिण आफ्रिकाके बच्चोका जो उदाहरण देता हूँ वह यहाँके बच्चोंकी निन्दा करनेके लिए नही अपितु उन्हे प्रोत्साहन देनेके लिए देता हूँ। यहाँके बच्चे भी उद्यमशील हैं, यदि किसीको उनसे काम लेना आता हो तो काम कर सकते है। तू ऐसी है न?

कमरके दर्दके लिए तुझे गर्म पानीमें बैठना चाहिए। ऐसा पन्द्रह-बीस मिनट तक करना चाहिए। इस बीच कमरको हाथसे रगड़ना चाहिए। इससे दर्द दूर होगा और इसका मासिक धर्म पर भी [अच्छा] असर होगा। डाक्टर क्या कहता है सो लिखना। ऐसे दर्दके उठने पर ही उसके शमनका उपाय करना चाहिए।

तेरा कार्यक्रम मै अच्छी तरहसे देख गया। यह बहुत ज्यादा है। उसमे आसानीसे कटौती की जा सकती है। १२-३० से ५-४० तक उद्योग वर्ग है अर्थात् ५ घंटे और १० मिनट हुए। इसमे से एक घंटा निकाल देनेसे आवश्यक फुरसत पाई जा सकती है। इस समयमें एकान्त पाकर सोना चाहे तो सो, लेट अथवा ऐसा कोई काम कर जो थकानेवाला न हो। लेकिन यह समय बातो अथवा अन्य कामोमे न बिता। इस घंटेका यदि उसी समय उपयोग न कर पाये तो अन्य कार्य आगे खिसका कर रातके समय एक घंटा ज्यादा ले। जो अपने काममे मग्न है उसे कामका बोझ नही लगता अथवा वह समयका अपव्यय नही करता। जिसे काममे दिलचस्पी नही होती उसे थोड़ा काम भी ज्यादा लगता है, ठीक उसी तरह जिस तरह कैदीको एक दिन भी वर्षके समान प्रतीत होता है। भोगी मनुष्यको एक वर्ष एक दिन लगता है।

पहले जब मै पाश्चात्य संगीत सुना करता था तब उकता जाता था। लेकिन अब कुछ-कुछ समझमें आता है, और उसमें आनन्द भी आता [है]।

'यहाँ पढ़नेका लोभ नही रखा जा सकता' तेरा ऐसा लिखना ठीक नही है। ज्यादा पढ़नेको नही मिलेगा, यह बिल्कुल सच है; और यह गौण है, यह बात भी सही है। तथापि आश्रममें रहनेवाले अनेक लोग बहुत कुछ पढ़ सके हैं। तेरे निराशापूर्ण वचन मुझे अच्छे नही लगते। जहाँ अपूर्णता लगे वहाँ उसे पूर्ण करनेका

प्रयत्न कर। लेकिन जहाँ कुल मिलाकर अपूर्णता ही दिखाई दे अर्थात् कुल जमा जोड़ करनेके बाद भी दोष ज्यादा दिखाई दे तो उसका त्याग ही करना चाहिए। ऐसा करते हुए व्यक्ति अपने प्रति और समाजके प्रति न्याय करता है।

तुझे अपने लम्बे पत्रके लिए मुझसे माफी माँगनेकी कोई जरूरत नही। मैं उससे नही उकताता, अपितु वह मुझे अच्छा लगता है। उससे मैं ग्रहण करता हूँ, क्योंकि उसमें तेरा हृदय प्रतिबिम्बित होता है अर्थात् पत्र लिखते समय तेरे हृदय के क्या भाव थे, सो पता चलता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९०) से। सी० डब्ल्यू० ६७३८ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५३. पत्र : मोहन एन० परीखको

१७ जून, १९३२

चि० मोहन[1],

तेरा पत्र अच्छा लिखा है। अभी और ज्यादा साफ लिखना। तू सफाई करता है और पीजता है, यह बहुत अच्छी बात है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१८०) से।

५४. एक पत्र

१७ जून, १९३२

तुम आत्मविश्वास खो बैठो यह ठीक नही है। बुरे विचार मनुष्यको अक्सर आते हैं। मगर जैसे घरमें कूड़ा-करकट भर जाने पर जो व्यक्ति उसे समय-समय पर निकालता रहता है उसके लिए कहा जाता है कि वह साफ है और अपना घर साफ रखता है, उसी तरह कुविचारोंके आते ही जो उन्हें निकालता रहे उसकी सदा जय ही है। वह कभी दम्भी नही कहलाता। इस दम्भसे बचनेका मैंने स्वर्ण उपाय यह बताया है कि हमें इन विचारोंको कभी नही छिपाना चाहिए, बल्कि जाहिर कर देना चाहिए। उनकी डौंडी पीटनेकी भी जरूरत नही है। किसी-न-किसी मित्रको जरूर कह देना चाहिए। और मनकी यह स्थिति होनी चाहिए कि सारी दुनिया जान ले तो भी हर्ज नही। विनोबाके वचनोंपर श्रद्धा रखना और निराश न होना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. नरहरि परीखका पुत्र।

५५. पत्र : छगनलाल जोशीको[1]

१७ जून, १९३२

प्रकृति जीवमात्रके लिए पल-पलकी आवश्यकताकी वस्तु उपलब्ध कर देती है, इससे तनिक भी अधिक पैदा नही करती, इस सत्यका मै रोज अनुभव कर रहा हूँ; और मै यह भी देख रहा हूँ कि इस महान नियमको हम इच्छा या अनिच्छासे, जाने-अनजाने प्रतिक्षण भंग कर रहे है। इसके परिणामस्वरूप एक ओर बहुत सारे व्यक्ति विषयोसे ग्रस्त है, तो दूसरी ओर अनेक लोग क्षुधा-पीडित है, यह बात तो हम सब देख सकते है। मतलब यह कि एक ओर तो भुखमरी है तथा दूसरी ओर अमेरिकाके धनवान लोग अर्थशास्त्रकी गलत व्याख्या करते है और अनाजका नाश कर रहे है। हमारा प्रयत्न इसी आपत्तिसे उबरनेकी दिशामे है। हाँ, प्रकृतिके इस कानूनका पूर्ण रूपेण पालन करना इस समय तो नितान्त ही असम्भव है। लेकिन उससे हमारे लिए घबरा जानेका कारण नही है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

५६. एक पत्र[2]

१७ जून, १९३२

कैदियोके बर्तावके बारेमे यहाँसे प्रकाशित किये जानेके योग्य कुछ लिखा ही नही जा सकता। तुम लिखते हो कि इसका ज्यादा स्पष्टीकरण होना चाहिए सो तो ठीक है, लेकिन वह तो अब मौका मिलने पर ही होगा। बेडीके बारेमे तुम्हारी दलील समझ ली है मगर मेरी राय अभी वही है, क्योकि मेरे खयालसे राजनीतिक और दूसरे कैदियोमें फर्क नही है। तात्पर्य यह कि सारे जेलकी पद्धतिमे सुधार की जरूरत है। यह माना जाना चाहिए कि जेल सजाकी जगह नही, परन्तु सुधारकी जगह है। और यदि यह मान लिया जाये तो उस आदमीके लिए, जिसने झूठा दस्तावेज बनाया हो और जिसके कारण वह कैदमे हो, बेडीकी क्या जरूरत है? बेड़ीसे तो वह सुधरनेका नही। जिसके भाग जानेका डर नही हो, झगड़ा करनेकी जिसमे शक्ति नही हो, इच्छा भी नही हो, ऐसे व्यक्तिको बेडी पहनाना मुझे असह्य लगता है। मगर एक राजनीतिक कैदी, जो शरीरसे तुम्हारे जैसा पहलवान हो, जो रोज जेल

१. छगनलाल जोशीने गांधीजीसे अपरिग्रह-व्रतकी व्याख्या करनेका अनुरोध किया था।

२. पत्र-लेखकने कामके लिए जेलसे बाहर ले जाते समय राजनीतिक कैदियोंको बेड़ियाँ और हथकड़ी पहनाये जानेके विरुद्ध सत्याग्रह करनेका सुझाव दिया था।

तोड़नेके मनसूबे गढ़ता हो, जिसके हाथ चलते हों और जिसे अपनी जबान पर नियन्त्रण न हो तो उसे बेड़ी पहनाना मैं धर्म मानूंगा। मेरे इतना सब कहनेका मतलब सिर्फ इतना ही है कि राजनीतिक और अराजनीतिक का भेद गलत है। और हम सुधारकोंका धर्म यह है कि जो भी सुविधा हम माँगें, वह सिर्फ नीतिके आधार पर होनी चाहिए और इस प्रकारके सभी कैदियोके लिए लागू होनी चाहिए। राजनीतिक कैदीके लिए गेहूँ और अराजनीतिकके लिए मक्का, यह मेरे लिए तो असह्य होना चाहिए। लेकिन जिस कैदीको मक्का हजम न हो तो उसे भी गेहूँ मिलना चाहिए, फिर चाहे वह खूनी ही क्यो न हो; और मक्केको आसानीसे हजम कर सके ऐसी अच्छी पाचन शक्तिवाला राजनीतिक कैदी हो तो उसे चाहिए कि वह खुद गेहूँ छोड़कर मक्का माँग ले और ऐसा करके दूसरोकी भी लाज रख ले। मगर ये तो मेरे विचार हुए। इनपर इस जगहसे मैं हरगिज आग्रह नही कर सकता। सब कोई अपने-अपने अन्तर्नाद पर चलें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

५७. तार: सर मैलकम हेलीको[1]

१८ जून, १९३२

हिज एक्सेलेंसी गवर्नर
संयुक्त प्रान्त

तीन महीनेसे ऊपर हुए मेरे पुत्र देवदासपर सविनय अवज्ञा सत्याग्रहीके नाते दिल्ली और मेरठमे मुकदमा चलाया गया था और सजा होनेके कुछ दिन बाद उसका तबादला गोरखपुर जेलमे किया गया था। गोरखपुरकी जलवायुमे मलेरिया बहुत होता है। बिना किसी साथीके उसका इतनी दूर-दराजके जेलमे ले जाये जानेका कारण अज्ञात है। वह इसी छः तारीखसे आन्त्र-ज्वरसें पीड़ित है हालांकि

१. इसके बारेमें महादेव देसाईने इस प्रकार लिखा है: "देवदासका एक तार . . . कल मिला: 'उच्चतम तापमान १०२ था और अब १०० से नीचे पहुँच गया है। गोरखपुरकी जलवायु बहुत खराब है। . . .' बापूने कहा कि देवदासने जलवायुका जिक्र इस आशासे किया है कि हम उसका गोरखपुरसे तबादला करानेकी कोशिश करें। सरदारने सुझाव दिया कि निश्चय ही उसका तबादला किसी बेहतर जगह कर दिया जाना चाहिए। बापूने कहा, 'हाँ, लेकिन यदि हम चाहते है तो तबादलेकी अर्जी हमें देनी चाहिए, और मेरा ऐसा करनेका कोई विचार नहीं है। हरिलाल दक्षिण आफ्रिकाकी सबसे खराब जेलमें था, लेकिन उसने अपना तबादला खुद करवाया था, मेरे जरिये नहीं।' सरदारने कहा, 'लेकिन हम लोग यहाँ कैदी नहीं हं। भारतकी परिस्थितियाँ भिन्न है। हमें अर्जी देनी चाहिए।' बापू अन्ततः मान गये और उन्होंने हेलीको तार दिया। . . ." (द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१)

उसकी हालत सुधरती प्रतीत होती है। अनुरोध है कि उसे अधिक स्वास्थ्यकर और निकटतर स्थानपर भेज दिया जाये, हो सके तो देहरादूनमें पण्डित जवाहरलालके पास रख दिया जाये जिनके साथ उसकी घनिष्ठ मैत्री है या यदि यहाँ तबादला सम्भव हो तो मेरे पास यरवडामें भेज दिया जाये।

मो० क० गांधी
कैदी, यरवडा सेंट्रल जेल

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग १, पृष्ठ २८३।

५८. पत्र: ई० ई० डॉयलको

१८ जून, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

श्रीमती मीराबाई (स्लेड) के विषयमें अपने इसी ९ तारीखके पत्रके सन्दर्भमें अब मैं उनका दिनांक बम्बई, १४ जून, १९३२ का मूल पत्र[1] (साथ दिया हुआ) यहाँ संलग्न कर रहा हूँ जो मेरी पूछ-ताछके[2] जवाबमें अभी-अभी प्राप्त हुआ है। मेरी रायमें इस विस्तृत पत्रकी सुस्पष्ट भाषा इस कथनका मुँहतोड़ उत्तर है कि वह "सविनय अवज्ञा आन्दोलनको प्रोत्साहन देनेमें सक्रिय रूपसे लगी हुई थीं।" जेलमें बन्द किये जानेसे पहले उनकी कार्रवाइयोंके विषयमें सरकारके पास जो जानकारी है उसका यह जोरदार खण्डन भी सरकारके पास होना चाहिए, ऐसा मैं मानता हूँ। समय बचानेके खयालसे मैंने पत्रसे सम्बन्धित अंशों पर चिह्न लगा दिया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (२) भाग १, पृष्ठ ११५।

१. देखिए "पत्र: मीराबहनको", १६-६-१९३२ की पाद-टिप्पणी।
२. देखिए "पत्र: मीराबहनको", ८-६-१९३२।

५९. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

१८ जून, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी)[1],

मुझे तेरे दोनों पत्र मिले। जबतक मीराबहन परसे प्रतिबन्ध नही हटता तब-तक मुझसे मिलनेके लिए नही आया जा सकता। त्यागका मूल्य इसीमे है न?

यदि हम हरिलालकी ओरसे तुझे लिखे गये पत्रोंका प्रकाशन नही करते तो हम हरिलालके साथ न्याय नही करेंगे। यदि तू उनके आदर्शको प्राप्त नही कर सकी तो इसमे हरिलालका क्या दोष? अब उस आदर्शको प्राप्त कर। तेरी अपूर्णताको छिपानेके लिए इन पत्रोके प्रकाशनको रोका नही जा सकता। लेकिन तू ऐसी निराश और पस्त-हिम्मत क्यों होती है? तू स्वयं तो ऐसा नही मानती कि तू बहुत बड़ी हो गई है? चौवीस अथवा पचीस वर्षकी आयुमे ही तू कैसे आशा छोड़ बैठी है? तेरे सामने आगे बढ़नेका सच्चा समय यही है। सावधान!!

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४०) से।

६०. पत्र : सुशीलाबहन गांधीको

१८ जून, १९३२

चि० सुशीला,

तुझे मैंने जो पत्र लिखा था वह मिल गया होगा। यह पत्र तो मैंने यह सोचकर लिखा था कि मणिलाल रवाना हो चुका होगा। तुम लोगोंको बहुत कष्ट सहना पड़ा। इसीमे हमारी कसौटी है। अब तो बीमारीका कोई असर नही रह गया होगा? डाक्टरको बुलाना पड़ा कि सामान्य उपचारसे ही काम चल गया? प्रेसमें तू क्या मदद करती है?

मैं समझता हूँ कि अब तो मणिलाल भी वही रहेगा। इसका शोक न करना। ईश्वर जैसा रखे वैसा हमे रहना है। हमारा सोचा हमेशा फलित नही होता।

सीता अब तो बड़ी हो गई होगी। उसे कुछ सिखाती है। क्या ते कान कुछ खुले?

१. आश्रमवासी हरिलाल माणेकलाल देसाई की विधवा'

प्रागजी[1] और पार्वतीसे कहना कि मुझे पत्र लिखें। उनके पत्रसे हम तीनोंको ही प्रसन्नता होगी। प्रागजी क्या अभी वही रहेंगे? पत्र लिखनेमे तू तनिक भी आलस्य न करना और उसे खबरोसे भर दे तो और भी अच्छा होगा। बाकी तो तू बड़े आदमीकी बेटी है इसलिए तुझे ज्यादा थोड़े ही कहा जा सकता है? और फिर जमनालालजी सम्बन्ध करवानेवाले पुरोहित ठहरे। जो कहीं सामान्य घरकी होती तो कान पकड़कर मैं तुझसे लम्बे ब्यौरेवार पत्र लिखवाता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७८९) से।

६१. पत्र : मणिलाल गांधीको

१८ जून, १९३२

चि० मणिलाल,

मेढ़[2] के साथ तेरा पत्र मिला। मेढ़से मिलना तो नही हो सकता। एक तो मुझे जबसे मीराबहनसे मिलनेकी मनाही हुई है तबसे मैंने सबसे मिलना बन्द कर दिया है; और दूसरे जिससे मिलना होता है उसका नाम सरकारको भेजना पड़ता है। मेढ़को कदाचित् इजाजत भी नही मिलेगी और यदि (सरकार) देगी भी तो दक्षिण आफ्रिकाकी बात नही करने देगी, ऐसा मुझे लगा है। उन्हें सरकारको यही कारण बताते हुए मुझसे मिलनेकी अनुमति माँगनी चाहिए। इसलिए उनसे मिलनेके बाद तुझे तार देनेकी कोई जरूरत नही रह जाती। मेढ़का मुझे पत्र भी नही मिला है। वे पत्र तो अवश्य लिख सकते हैं।

तुम सब लोग जहरीले बुखारकी चपेटमे आ गये। और चूँकि तारसे मुझे तुम्हारी और कोई खबर नही मिली है इसीसे मान लेता हूँ कि तुम सब सकुशल होगे। सुशीला और सीताका स्वास्थ्य वहाँ अच्छा रहेगा, इसी विचारसे मैंने उन दोनोंका वहाँ रह जाना पसन्द किया, पर ईश्वरने मुझे कहला भेजा, 'तू मूर्ख है, कौन कहाँ स्वस्थ-अस्वस्थ रह सकता है, इसका विचार करनेवाला तू कौन है? मुझे स्वस्थ-अस्वस्थ रखना है, उसे मैं रखता हूँ। इतनी सीधी बात तेरी समझमें क्यो नही आती?' इतने ज्ञानकी प्रतीति होनेके बावजूद यदि वे दोनो वहाँ रहे तो यही कदाचित् ठीक होगा। लेकिन अब तो तुझे भी वही रहना होगा, क्यो ठीक है न? यह तो मैं भी मानता हूँ कि प्रागजी यदि जिम्मेदारी लेनेके लिए तैयार न हों अथवा यह उनकी

१. प्रागजी खण्डुभाई देसाई, दक्षिण आफ्रिकी समयके पुराने सहयोगी, जो नियमित रूपसे इंडियन ओपिनियन के गुजराती भागमें लिखते रहे।

२. सुरेन्द्र मेढ़, दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाईके प्रमुख सत्याग्रही।

शक्तिके वाहर हो और तू अन्य कोई वन्दोवस्त न कर सके तो तू नही आ पायेगा। अभी अखवार[1] बन्द करना उचित न होगा। यहाँका काम तो चलता ही रहेगा। तू निश्चिन्त होकर वहाँ रहना और रहनेका दुःख न मानना। वहाँ भी सेवा ही करनी है, स्वार्थके लिए नही रहना है। मुझे नियमित रूपसे पत्र लिखते रहना।

हम तीनों आनन्दसे हैं। कताई तो खूब जोर-शोरसे चलती ही है। मैं अव चरखेका चक्र पाँवसे चलाता हूँ और तार दाये हाथसे खीचता हूँ। प्रभुदासकी खातिर इस चरखेका अनुभव तो लेना ही था। लेकिन अब बडी बात तो यह है कि मेरे वाये हाथकी कुहनी आराम माँगती है। महादेव ४० अंकका सूत कातता है। सरदार रद्दी कागजोसे लिफाफे वनाते है। ऐसे ही एक लिफाफेमें मै यह पत्र भेजनेवाला हूँ।

रामदास इसी जेलमें है। कभी-कभार मिलता है। उसका स्वास्थ्य अच्छा है। विद्याभ्यास कर रहा है। नीमु और वच्चे आश्रममे है।

देवदास तो दूर गोरखपुरमे है। उसे अभी वुखार आता है लेकिन चिन्ताका कोई कारण नही, वुखार कम हो रहा है।

वा साबरमती [जेल] में है, कान्ति[2] विसापुर [जेल] मे; दूसरे तो और भी वहुतसे नाम है लेकिन उन सवको कहाँ घसीटूँ? देवदासकी सगाई राजाजीकी वेटीके[3] साथ होनेके सम्बन्धमे तो मै तुम्हे लिख ही चुका हूँ न? दोनोकी तीव्र इच्छाके कारण ही यह हुआ है। युद्धके कारण ही विवाह अभी मुल्तवी रखा है।

आश्रममें जो सुधार हो रहे है वे ठीक ही है। सुधार अर्थात् अधिक संयम।

लड़ाई कव खत्म होगी इसका विचार मै तो करता ही नही हूँ। जब होनी होगी, हो जायेगी। जो सत्यके लिए सत्य-साधनो द्वारा लड़ता है उसके लिए हार-जीत एक समान है। तात्पर्य यह है कि उसकी जीत ही है, फिर भले ही वह आज मिले अथवा कल।

सरदार और महादेवके आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९०) से।

१. इंडियन ओपिनियन।

२. हरिलाल गांधीका पुत्र।

३. लक्ष्मी।

६२. पत्र : वनमाला एन० परीखको

१८ जून, १९३२

चि० वनमाला,

हिन्दीमे लिखनेका तेरा प्रथम प्रयास सुन्दर कहा जा सकता है। यह क्या तूने अपने-आप लिखा है? लिखावट अभी और सुधारी जा सकती है? आश्रमकी सफाई खूब सावधानीके साथ करना। हमेशा सर्वत्र शान्ति नही होती। सर्दी-गर्मी तो जगतका नियम है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७४) से। सी० डब्ल्यू० २९९७ से भी; सौजन्य : वनमाला एम० देसाई

६३. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

१८ जून, १९३२

बालको और बालाओ,

भगवान कभी बुरा करता ही नही, क्योकि वह सत्य है। इसलिए बुरा करनेकी जिम्मेदारी स्वयं मनुष्यकी है और अच्छा सब उसीकी प्रेरणासे होता है, इसीसे सब-कुछ वही करता है, यह बात हुई।

संस्कृतकी जानकारी होनेकी परिसीमा यह है कि अच्छी तरहसे 'गीता' समझमे आ सके। इसमे व्याकरणका भी समावेश हो गया।

यदि तुम्हारा काम इतना ज्यादा बढ़ गया है कि तुम्हें आधे घंटेका भी समय न मिल पाये और वह समय तुम अभ्यासके समयसे ले लो तो यह मत समझो कि विद्याभ्यासमे कमी आ गई है। इतना आराम करनेसे ग्रहण-शक्तिमे वृद्धि हो जाती है, अतः कुल मिलाकर लाभ ही होता है। ऐसा शास्त्रियोंने प्रयोग द्वारा सिद्ध कर दिखाया है।

धार्मिक पुस्तकोंके उपरान्त हमारे यहाँ और बहुत-सा साहित्य है। उसमे से जिसे जो अच्छा लगे वह पढ़ सकता है और वह भी मात्र गुजरातीमे ही नही, बल्कि उर्दूमें, हिन्दीमे, और संस्कृतमे भी मिलता है; अंग्रेजीमे तो है ही।

नये निर्वाचनमे सब लोग अपने-अपने कर्तव्यका पालन करोगे, ऐसा मैं माने लेता हूँ।

मैं देखता हूँ कि बालक और बालाएँ लापरवाहीके साथ कागजोंका इस्तेमाल करते हैं। ऐसा नही होना चाहिए। और फिर नोटबुकके पृष्ठोंका तो कदापि इस्तेमाल नही किया जाना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

६४. पत्र : विद्या आर० पटेलको

१८ जून, १९३२

चि० विद्या,

स्वप्नमे हम जो देखे उससे डरें नही। दुःख भी न माने। बिल्लीके बच्चे मेरी गोदमें बैठते हैं। उसी तरह बालक भी बैठते हैं।[1] बिल्लीमे बुद्धि नही है, हममे बुद्धि है। इसलिए बिल्लीका जन्म वांछनीय तो नही कहा जा सकता।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३५) से; सौजन्य : रवीन्द्र आर० पटेल

६५. पत्र : भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्याको

१८ जून, १९३२

चि० भगवानजी,

तुम्हें आश्चर्य होगा कि फिलहाल अध्ययनमे रायचन्दभाई और 'गीता'[2] को भी छोड़ देनेकी मेरी सलाह है। प्रार्थनाके समय जो 'गीता' के अंश और भजन आये उन्हीको समझना और मनन करना। यह संयम कठिन है लेकिन इसका तुम चमत्कारी प्रभाव देखोगे। इस समय अपना वाचन ही, तुम्हारा काम है। फुरसत हो तव जो अच्छा लगे वह उपयोगी काम हाथमे ले लेना। तर्क-मात्र छोड़ देना। "मेरे लिए एक पग ही पर्याप्त है" "मने एक डगलुं बस थाय" इसका यही अर्थ है। जो साधन बन्धन-रूप हो जाये उसे छोड़ देना चाहिए।

बापू

१. विद्या पटेलने लिखा था: "आप बिल्लीके बच्चोंके संग बहुत खेलते है और उन्हें अपनी गोदीमें भी बैठने देते है। काश, मैं भी एक बिल्लीका ही जन्म ले लेती!" (महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१)

२. भगवानजी बहुत ज्यादा धार्मिक पुस्तकें पढ़ते और उनपर मनन किया करते थे।

[पुनश्च :]

अखबार पढ़ना चाहो तो भले ही पढ़ो।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३४८) से; सौजन्य : भगवानजी पुरुषोत्तम पण्डया

६६. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१८ जून, १९३२

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे लगता है कि लोथियन रिपोर्टके[1] बारेमें कुछ न लिखना अच्छा होगा, हालाँकि मुझे इसमें तात्विक दृष्टिसे कोई दोष नहीं दिखाई देता। जहाँ तक मेरा सवाल है, मेरा तो इस बारेमें कुछ लिखनेका मन ही नहीं करता। मुझे तो लगता है कि इस विषय पर विचार करनेके लिए मेरे पास पूरी सामग्री ही नहीं है। और यदि यह बात है तो विचारोंका और समयका अपव्यय क्यों करना?

देवदास बीमार पड़ गया है। अब बुखार उतरनेपर है। चिन्ताका कोई कारण नहीं। मणिलाल, सुशीला और सीता, प्रागजी तथा उनकी पुत्री, ये सब नेटालमें विषैले ज्वरके चँगुलमें आ गये थे, लेकिन अन्तिम समाचार अच्छे थे।

तुम नाटक[2] लिखोगे ऐसा तो मैंने कभी सोचा भी न था। तुम्हारे विचार आधुनिक सुधारोंकी ओर झुक रहे हैं। अमुक मर्यादाके भीतर तलाक लिया जाना चाहिए — ऐसा मैं अवश्य मानता हूँ, लेकिन इसका प्रचार करनेका मेरा तनिक भी मन नहीं होता। हम सामान्यतया अपनी वृत्तियोंके इतने गुलाम हैं कि हमारी आज जो मनःस्थिति है कल भी वही रहेगी, यह बात हम निश्चित रूपसे नहीं कह सकते। इसलिए स्वेच्छासे किया गया विवाह, जबतक बहुत सबल कारण न हो तबतक नहीं टूटना चाहिए, मुझे तो यही उचित जान पड़ता है। अस्पृश्यताके प्रश्नको लेकर मैंने यदि बा से तलाक ले लिया होता तो आज जो सुन्दर स्थिति बन पड़ी है वह नहीं

१. लॉर्ड लोथियनके नेतृत्वमें गठित मताधिकार समितिने अपनी रिपोर्ट ३ जून, १९३२ को प्रकाशित कर दी थी। इसमें प्रान्तीय निर्वाचकोंकी संख्या ७० लाखसे बढ़ाकर ३ करोड़ कर देनेकी सिफारिश की गई थी और सभी वर्गोंके लोगोंको प्रतिनिधित्व देनेकी व्यवस्था थी। महादेव देसाईके अनुसार गांधीजीने इस समितिकी सिफारिशोंके बारेमें कहा था: "समितिने इस हद तक अच्छा काम किया है कि उसने अस्पृश्यताकी परिभाषा कर दी है और तथाकथित 'अस्पृश्यों' की संख्या ७ करोड़के बजाय साढ़े तीन करोड़ मानी है। इसके लिए लोथियन शायद श्रेयके अधिकारी हैं। इस परिभाषाका भला हो, क्योंकि अब इसके चलते हिन्दू लोग यदि चाहें तो एक क्षणमें 'अस्पृश्यों' को हिन्दू समाजमें शामिल कर सकते हैं और प्रकटतः उनकी ओरसे जो माँगें रखी जाती हैं उन सभी माँगोंको कलमकी एक लकीरसे पूरा कर सकते हैं।" (महात्मा, खण्ड-३ इंडिया इन १९३१-३२, और द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१)

२. जिसमें तलाकका समर्थन किया गया था।

होती न? बा कहाँ पड़ी होती और मैं कैसा विवाह कर बैठा होता, सो कौन कह सकता है? लेकिन तलाक नही लिया जा सकता — यह शिक्षा हमे विरासतमे मिली थी। इसीसे वह विषम काल बीत गया और अब तो केवल उसकी याद रह गई है। इसीसे मैं आशा करता हूँ कि तुमने अपनी पुस्तकमे हर किसीको तलाक लेनेकी बिना स्टाम्पकी अनुमति प्रदान नही की होगी।

यदि मनुष्यको विषयोपभोगकी इच्छा हो और उसे सन्तुष्ट करना मनुष्यका धर्म हो तब तो सन्तति-नियमनके कृत्रिम उपायोकी आवश्यकताको मैं समझ सकता हूँ।[1] लेकिन यदि हम सन्ततिकी इच्छा किये बिना विषयोपभोगको पापका मूल मानते है — और मेरे विचारसे मानना चाहिए — तो कृत्रिम उपायोसे सन्तानको पैदा होनेसे रोकना पापका ब्याज चुकानेके समान है। प्रकृतिका यही नियम है कि जो जैसा करे वैसा भरे। मनुष्य विषय-सेवन करे तो भले सन्तानका बोझ उठाये। स्त्री किसलिए यह बोझ उठाये, यह प्रश्न उठता ही नही है, क्योकि हम स्त्रीको सम्पूर्ण रूपेण स्वतन्त्र मानते है। आजकल पश्चिममे कृत्रिम उपायोका जो उपयोग हो रहा है उसका एक परिणाम यह निकला है कि विवाहकी पवित्रता समाप्त हो गई है और जिसे जो समय उपयुक्त जान पड़े उस समय वह निर्मुक्त होकर विषयोपभोग कर सकता है। इस वस्तुका प्रचार हुए अभी कुछ वर्ष भी नही बीते है कि इस बीच जिसे आजतक पवित्र बन्धन माना है वे टूट गये है। आजकल पश्चिमके अच्छे कहे जानेवाले विचारक भी यह मानने लगे है कि विवाह एक भ्रान्ति है और यदि सगे भाई-बहन भी एक दूसरेके प्रति विकारवश हों तो उसे सन्तुष्ट करनेमे कोई दोष नही है, अपितु यह उचित ही है। इन सब विचारोंको मैं एक छोरसे दूसरे छोर तक जानेवाली अतिशयता नही मानता, लेकिन सन्तति-नियमनके पीछे निहित विचारशृंखलाका यह सहज और सीधा परिणाम है। और इससे यह भी हो सकता है कि आज हम विवाह आदिके जिन बन्धनोको आत्माका विकास करनेवाले मानते है वे आत्माका हनन करनेवाले हो। लेकिन मैं तर्ककी खातिर ऐसी वस्तुओकी सम्भावनाको स्वीकार करनेसे आगे नही जा सकता। नीति और शास्त्रके नामपर होनेवाली ये बाते मुझे अत्यन्त भयंकर लगती है। झूठी दयासे, अधीरतासे और अपने क्षणिक अनुभवोसे ये जो नवीन विचार प्रस्फुटित हो रहे है उनसे हम सराबोर न हो जाये, यही मेरी इच्छा है। इसके अतिरिक्त हिन्दुस्तानकी आजकी परिस्थितियोंको देखते हुए इन कृत्रिम उपायोके लिए कोई स्थान नही है। असख्य व्यक्तियोके शरीर नष्ट हो गये है, मन दुर्बल पड़ गये है। उनमे यदि विषयेच्छा जाग्रत हो और वे उसे सन्तुष्ट करनेमे लग जाये तब तो हमारा विकास अवरुद्ध हो जायेगा। इन उपायोका उपयोग करनेवाले कुछेक व्यक्ति तो सचमुच नपुंसक जैसे है। समाचारपत्रोमे जो विज्ञापन प्रकाशित होते है उन्हे देख जाना। यह बात मैं विस्तृत अनुभवोके आधारपर कह रहा हूँ। 'नीतिनाशने मार्गे'[2] मे मैंने जो लेख लिखे है वे शक्तिहीन विद्यार्थियो और अध्यापकोके हर हफ्ते जो पत्र

१. मथुरादास त्रिकमजीने सन्तति-नियमनका समर्थन किया था।
२. "अनीतिकी राहपर"; देखिए खण्ड ३१।

आते थे उनके प्रत्युत्तरमें लिखे गये हैं। हिन्दुस्तानके नवयुवकोंको अभी अपने ऊपर जोर-जबरदस्ती करके भी सयमका पाठ सीखना है। लडकियोकी भी विचित्र स्थिति है। आश्रममे पली-बढी . . .[1] जैसी लडकी, पन्द्रह वर्षकी अल्पायुमें और शरीरसे दुर्बल, विवाहकी माँग करे, यह कैसी विचित्र बात है? पन्द्रह वर्षकी लडकीमें किस लिए विकार पैदा हों? लेकिन हमारा वातावरण ही मलिन है। बचपनसे ही लड़के और लड़कियोंको विकारका प्याला पिलाया जाता है। ऐसे बच्चोंको विकारवश होनेका धर्म सिखानेके लिए मै तो तनिक भी तैयार नही हूँ। लेकिन अब मै इस बातको और ज्यादा नही खीचूँगा। इतने भरसे मेरे विचारोको तुम जान सकोगे।

प्यारेलाल धूलिया [जेल] में है और देवदास गोरखपुर [जेल] में। धूलियामें, कह सकते है, इस समय गीता मडली इकट्ठी हुई है, क्योकि वहाँ विनोबा रोज 'गीता' पर प्रवचन करते है।

तुम्हारी तबीयत अच्छी है इसलिए १७ पौंड वजन जानेका तनिक भी खेद नही है। वजन स्वास्थ्यका अनुमान लगानेमे अमुक सीमा तक ही सहायक है। जमनालाल-जीका वजन २५ पौंड कम हो गया है। तुम्हारी और उनकी स्थितिमें बहुत भेद है। जितनी उदारतासे वे अपना वजन खो सकते है उतनी उदारतासे तुम नही खो सकते।

तारामती और दिलीपके[2] पत्र आते रहते है। उन्हे मैंने अपने पास बुलाया था। और जब ये लोग तैयार हुए तब मुलाकात ही बन्द हो गई। दरवाजे फिर खुलेंगे तो बुलाऊँगा।

साप्ताहिक 'टाइम्स' मे हर महीने आकाशदर्शनका एक चित्र प्रकाशित होता है, इसे तुम सब लोग एक बार देख जाना। मै तो अभी आकाशदर्शनका, तारोको देखनेके आनन्दका रसास्वादन कर रहा हूँ। मुझमे वृद्धावस्थामे जागृति आई है, लेकिन यदि आकाशदर्शनसे आत्मदर्शनकी झाँकी मिलती हो, तो अन्तिम श्वास लेनेके समय भी जाग्रत होनेमें क्या बुराई है? जो तुमसे मिले उसे आशीर्वाद।

[पुनश्च :]

जिस लिफाफेमे मै अपना यह पत्र तुम्हे भेज रहा हूँ वह तुम्हारे पत्रके लिफाफे में से ही सरदारने बनाया है। लिफाफे बनाना उनका रोजका धन्धा हो गया है। देशमे जो नया पैदा होगा उतनी ही देशकी सम्पन्नतामे वृद्धि होगी।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१. नाम नहीं दिया गया है।
२. मथुरादास त्रिकमजीका पुत्र।

६७. पत्र : शारदा सी० शाहको

१८ जून, १९३२

चि० शारदा,

भूल बुरी चीज है, इसलिए उसकी शर्म लगती है। भूलकी माफी माँगना अच्छा काम है, इसलिए उसकी शर्म कैसी? माफी माँगनेका अर्थ है फिरसे भूल न करनेका निश्चय। यह निश्चय हो तो उसमे शर्म किस बातकी? यह समझमे आया?

सत्य और अहिंसाकी तुलना क्या की जाये? मगर करनी ही पड़े तो मैं कहूँगा कि सत्य अहिंसासे भी बढ़कर है, क्योकि असत्य भी हिंसा है। जिसे सत्य प्रिय है, वह तो अहिंसाको किसी दिन अपना ही लेगा।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५०) से; सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

६८. पत्र : डा० हीरालाल शर्माको

१८ जून, १९३२

प्रिय मित्र,

श्रीमती बहन अम्तुस्सलामने कुछ दिन हुए तुम्हारी कुछ पत्रिकाएँ और 'लाइट ऐन्ड कलर इन द मेडिकल वर्ल्ड' नामक तुम्हारी पुस्तकके दो भाग मेरे पास भेजे थे। उन्होंने मुझे बताया है कि तुमने उनकी चिकित्सा बड़ी सावधानी और विशेष ध्यान देकर की है। मैं इसके लिए आभारी हूँ। रही प्रकाश और रंग सम्बन्धी साहित्यकी बात — सो इस विषयपर मैं कोई सम्मति नही दे सकता क्योकि इस चिकित्साका मुझे नाममात्र भी अनुभव नही है।

औषधियोमे मेरा कुछ अधिक विश्वास नही। मैं तो सूर्यकी रोगनाशक शक्तिमें आस्था रखता हूँ इसलिए मुझे तो स्वभावतः यह जान कर खुशी होगी कि जिस चिकित्सा विधिके तुम समर्थक हो, वह ठोस हो और परीक्षामे पूरी उतरे। जिन सीमित परिस्थितियोमे मेरा जीवन चल रहा है उनमे प्रयोग करना यदि मेरे लिए सम्भव हुआ तो मैं करूँगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह

६९. प्रार्थना[1]

१९ जून, १९३२

प्रार्थना आश्रमकी आधारशिला है। इसलिए इसे हमें अच्छी तरहसे समझ लेना चाहिए। यदि यह मनोयोगपूर्वक न की जाये तो सब-कुछ झूठा समझना चाहिए। खाते समय बहुत करके कोई भी व्यक्ति सोया हुआ दिखाई नही देता। प्रार्थना तो खानेसे करोड गुना ज्यादा उपयोगी चीज है। इस समय यदि कोई सोता है तो यह बडी ही दयनीय स्थिति कही जायेगी। प्रार्थना छूट जाये तो मनुष्यको भारी दुख होना चाहिए। खाना छूटे तो छूटे, लेकिन प्रार्थना न छूटे। खाना छोडना कितनी ही बार शरीरके लिए लाभकारी होता है। प्रार्थनाका छूट जाना तो कदापि लाभदायक हो ही नही सकता।

लेकिन जो व्यक्ति प्रार्थनामे सोता है, आलस्य करता है, बाते करता है, ध्यान नही करता, विचारोको अनेक जगहोपर जाने देता है, उसके लिए माना जायेगा कि उसने प्रार्थना छोड़ दी है। वह तो केवल शरीरसे प्रार्थनामें हाजिरी देता है और दम्भ करता है। इस तरह वह दोहरा अपराध करता है। प्रार्थना छोडी और समाजको धोखा दिया। धोखा देना अर्थात् असत्यका आचरण करना अर्थात् सत्यव्रतका भग।

लेकिन किसीको अनिच्छासे नीद आये, आलस्य आये तो क्या करना चाहिए? वस्तुत: ऐसी कोई चीज है ही नही। यदि हम बिस्तरसे उठकर सीधे प्रार्थनामें जाये तब तो नीद आयेगी ही। प्रार्थनामे जानेसे पहले जाग्रत हो जाना चाहिए, दातौन करनी चाहिए और तरो-ताजा रहनेका निश्चय करना चाहिए। प्रार्थनामे एक दूसरेसे सटकर नही बैठना चाहिए। लकडीके समान सीधा बैठना चाहिए, धीरेसे श्वासोच्छ्वास करना चाहिए और यदि पाठ करना आये तो ऊँचे स्वरोमे करना चाहिए। जो श्लोक अथवा भजन हो उन्हे मनमे बोलना चाहिए। यह भी न आये तो रामनाम लेना चाहिए। तिसपर भी यदि शरीर कावूमे न रहे तो खड़े हो जाना चाहिए। बडे हो अथवा छोटे, किसीको भी इसमे शर्म नही करनी चाहिए। शर्म मिटानेके लिए, नीद न आनेके बावजूद, समय-समय पर बड़ोको खड़े रहना चाहिए।

प्रार्थनामे जो पाठ किया जाये वह तुरन्त सबकी समझमे आ जाना चाहिए। संस्कृत न आये तो भी उसके अर्थको जान लेना चाहिए। और उसपर मनन करना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. यह लेख "पत्र : नारणदास गांधीको", १८/१९-६-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

७०. पत्र : नारणदास गांधीको

१६/१९ जून, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक मंगलवारको मिल गई थी। जेठालालके पत्रका मेरा उत्तर[1] पढ़ जाना। उसकी रिपोर्ट नही मिली। वह रजिस्टर करवा कर भेज देना। तुमने हीरालाल शास्त्रीका[2] "जीवन कुटीर" का विवरण भेजा है लेकिन उसके साथ न तो कोई पत्र है और न उसके बारेमे तुम्हारे पत्रमे कोई उल्लेख ही है। तुम कुछ जानते हो तो इस भाईका परिचय देना। सीतलासहायके बारेमे मैं तुम्हे लिख ही चुका हूँ। महावीरके सम्बन्धमे लिखा पोस्टकार्ड भी तुम्हे मिल गया होगा।

मेढका पत्र इसके साथ है। मणिलालकी समस्या बहुत उलझ गई है और अब तो उसके आनेकी आशा छोड़ देनी चाहिए।

प्रार्थनाके बारेमे मैं अलगसे लेख लिखनेका विचार करता हूँ, जिससे कि वह सबके लिए उपयोगी होगा। इसीसे यहाँ कुछ नही लिखता। जो नया नियम[3] बनाया गया है, उसका पालन किया जाये तो पर्याप्त है।

मजदूर खादी पहने। उसके बाल बच्चे हो तो उन्हे आश्रममे पढनेके लिए भेजे, बन सके तो बीड़ीका व्यसन छोडे, दारूका व्यसन तो होना ही नही चाहिए, आश्रमकी भूमिपर रहता हो तो सवेरे-साँझकी प्रार्थनामे शामिल हो। खादी मात्र आश्रममे ही पहने, इतना ही पर्याप्त नही होना चाहिए। उसकी रुचि हो तो काते, नही तो जरूरी नही। मुझे लगता है कि हमे इसके अलावा दूसरे किसी भी नियम-पालनकी और कोई शर्त नही करनी चाहिए। लेकिन हमे इस बातकी प्रतीति रखनी चाहिए कि यदि हम उसके जीवनमे प्रवेश करेगे, उसके सुख-दुःखके साथी बनेगे, उसके बच्चोसे परिचय बढायेगे तो वह स्वेच्छासे और विवेकपूर्वक अन्य नियमोका पालन करेगा। अभी तो उसे इसका ज्ञान देना चाहिए, इसका क्या महत्त्व है सो समझाना चाहिए और हमारा सग यदि सचमुचमे सत्सग होगा तो तुलसीदासकी प्रतिज्ञा[4] झूठी सिद्ध नही होगी। इससे हमारी भी परीक्षा हो जायेगी। आजतक इन्हे हमने अपना स्वजन नही माना है। भाईचारा रखनेका प्रयत्न तो अवश्य किया है, लेकिन उसके पीछे बड़प्पनका भाव रहा है। उनकी अपेक्षा हम कुछ श्रेष्ठ है, उच्च है — यह मान्यता रही है। मैं जैसे-जैसे देखता जाता हूँ वैसे-वैसे मुझे यह विश्वास होता जाता है कि ऊँच-नीच जैसी

१. देखिए "पत्र : जेठालाल गोविन्दजी सम्पतको", १९-६-१९३२।

२. राजस्थानके एक रचनात्मक कार्यकर्ता; वनस्थली विद्यापीठके संस्थापक।

३. प्रार्थनाके समय पाँच मिनट मौन रखनेका नियम।

४. सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई॥ (रामचरितमानस — बालकाण्ड)

कोई बात है ही नहीं। किसका पुण्य ज्यादा होगा इसका अन्दाज हम लगा ही नहीं सकते, इसका हमारे पास साधन ही नहीं है। राई बड़ी है अथवा पर्वत, इसकी तुलना कौन कर सकता है? आकारके अनुसार तो बड़े-छोटे होनेकी बात हम नहीं करते। इसी तरह हम परस्पर एक-दूसरेके बारेमें ऊँच-नीचकी तुलना नहीं कर सकते और इसीसे मैंने आसानसे-आसान नियमका सुझाव दिया है अथवा अपने शास्त्रोंसे मैंने सार निकाला है कि प्रत्येक व्यक्तिको शून्यवत् होकर रहना चाहिए। उसके बाद हमें अपने ऊपर अभिमान करनेका कोई कारण नहीं रह जाता। मजदूरोंके बारेमें मेरे इन विचारोंमें तुम्हें अथवा किसी भी अनुभवींको कोई दोष दिखाई दे तो मुझे लिखना। इसको व्यवहारमें लानेमें तो कठिनाइयाँ अवश्य आयेंगी, लेकिन प्रत्येक अच्छे काममें कठिनाइयाँ तो होनी ही चाहिए।

धीरू और कुसुमने लौट आनेमें बहुत उतावली की है। इतनी उतावलीके साथ वापस आनेके पीछे कोई कारण होना चाहिए। तुम इसे जान सको तो मुझे लिखना। पिछले सप्ताह राणावावसे धीरूका पत्र आया था जिसमें लिखा था कि दोनोंकी तबीयत अच्छी है और वजन भी खूब बढ़ रहा है। इससे मेरा खयाल यह है कि इतनी जल्दी वापस आ जानेके पीछे जो कारण है वह मानसिक क्लेश है। हस्ताक्षर लिखते समय मैं आशीर्वाद नहीं लिखता, उसका कारण तो मैंने तुम्हें बता ही दिया था — आशीर्वाद न लिखनेसे इतना श्रम बचता है और आशीर्वाद तो है ही, ऐसा तुम सबको मानकर चलना चाहिए।

आम खाकर बीमार पड़नेके बारेमें बा का जो उत्तर है वह मेरे विचारानुसार ठीक नहीं है। ऐसे कठिन समयमें आम नहीं खाने चाहिए ऐसा बा का दृष्टिकोण है। और उसके दृष्टिकोणके अनुसार यह विचार ठीक ही है। बा मन ही मन मेरे प्रति भी यही इच्छा रखती है अर्थात् मेरा दृष्टिकोण भी वही होना चाहिए जो बा का है, इसके पीछे बा का मेरे प्रति प्रेमभाव है। मैंने जब भी किसी वस्तुको लेकर संयमका पालन किया है, उसका स्वाद बा ने भी चखा है। पहले मेरे संयमकी बातसे वह उलझनमें पड़ जाती थी, वह समझ भी नहीं पाती थी, लेकिन धीरे-धीरे वह उसकी कीमत समझने लगी। लेकिन इस बार मैंने अपने आहारसे आमोंको नहीं निकाला है। मैं जो प्रयोग कर रहा हूँ उसमें ताजे फलोंकी आवश्यकता है। आम मेरे लिए हमेशा पोषक सिद्ध हुआ है इसीसे अनायास ही जो आम मिल गये तो मैंने उनका परहेज नहीं किया और चूँकि यह बात लोगोंको मालूम हो गई इसीसे ढेरों आम आने लगे हैं। तथापि बा ने भले ही उनसे परहेज किया।

छारा लोगोंमें यदि तुम प्रवेश करो तो उन्हें छोड़ना नहीं। यदि यह कार्य अपनी शक्तिके बाहर जान पड़े तो उसे छोड़ा जा सकता है। अपनी ओरसे कुछ त्याग करके भी हमें उनसे मिलना चाहिए, यह हमारा धर्म है और मेरी मान्यता भी यही है। यदि हम उनसे मिलनेकी, उनके साथ एक होनेकी कोशिश करेंगे तो वे कदाचित् उपद्रव करेंगे। उससे बच निकलनेका लोभ लेकर यदि हम उनके पास जायेंगे तो उनके बीच कभी प्रवेश नहीं किया जा सकेगा और न इस प्रकार बचा ही जा

सकेगा। ईश्वरको बचाना होगा तभी बच सकेंगे। यदि वह नही बचायेगा तो जो कुछ भी होगा उसे उसकी प्रसादी समझकर सहर्ष शिरोधार्य कर लेंगे। वे हमारे पडोसमे रहते हैं, उनसे मिलना, उनमे प्रवेश करना हमारा धर्म है — यह मानकर हमें प्रवेश करना चाहिए। प्रवेश करनेके योग्य तो मैं पण्डितजी[1]को ही मानता हूँ। पहला प्रवेश रामधुनसे होगा। लेकिन पण्डितजीको उसके विषयमें आत्मविश्वास होना चाहिए। आगे चलकर वे अपने साथ बच्चोंकी टोली भी ले जा सकते हैं। छारा लोगोंके बच्चोंको पढ़ानेका काम हम अपने हाथमे ले सकते हैं। उनकी बीमारीमे मदद पहुँचा सकते हैं। यदि यह करे तो इसके लिए एक व्यक्ति मुकर्रर करना होगा। बीमारीमे दो प्रकारसे मदद की जा सकती है। सामान्य बीमारीमे हम उनकी सहायता करें और यदि बीमारी ऐसी हो कि हम कुछ मदद न कर सकें तो उसके लिए हम अपने सम्पर्कमे आनेवाले डाक्टरोंकी मदद ले। यह मदद खुशी-खुशी मिल सकती है।

छक्कड़दाससे कहना कि उसकी पूनी इतनी अच्छी है कि मुझमें और लेनेका लोभ हो आया है। इस तरहकी रुईकी पूनी यहाँ नही है इसलिए जैसा कि उसने लिखा था, यदि वह चाहे तो भले ही और पूनियाँ भेज सकता है। मैं उनका उपयोग नही करूँगा, क्योकि मैं मगन-चरखे पर ४० अंकका सूत नही कात सकता। इस चरखे पर किसीके ४० अंकका सूत कातनेकी बात भी सुननेमे नही आई है। इससे कम अंकवाले सूतके लिए ऐसी बढ़िया पूनीका उपयोग नही किया जाना चाहिए। महादेवके लिए हर महीने कमसे-कम ३० तोला पूनियाँ चाहिए। लेकिन अभी कोई जल्दी नही है। छक्कड़दासकी इतनी पूनियाँ तो पड़ी हैं कि वे करीब तीस दिनों तक चल सकती हैं। इनके समाप्त होनेपर जो पूनियाँ यहाँ बनती हैं उनसे कितने अंकका सूत काता जा सकेगा — इसका प्रयोग महादेव करेगा ही। यह तो छक्कड़दास पर जरूरतसे ज्यादा बोझ न पडे इस खयालसे पहलेसे ही लिख दिया है। और यदि वह सहज ही भेज सके तभी भेजे। उसे इतना परेशान करना चाहिए अथवा नही, इसपर तुम और चिमनलाल स्वतन्त्र रूपसे विचार करना और यदि तुम्हें लगे कि उसने और पूनियाँ भेजनेकी जो बात लिखी थी वह उसकी भलमनसाहत थी और वस्तुतः ऐसा करना उसके लिए कठिन है तो यह सन्देश उसतक न पहुँचाना।

तोतारामजीका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। भणसालीकी[2] दृढ़ता सचमुच बहुत भारी है। लीलाबहन[3] कहाँ हैं, क्या करती है? उसने आश्रमके साथ कोई सम्बन्ध रखा है या नही? रामनारायण चौधरीका[4] पत्र मुझे मिला ही नही और चूँकि आश्रम वर्धा चला गया इससे सम्भव है कि वे गिरफ्तार भी हो गये हों। इस सम्बन्धमे यदि ज्यादा जानकारी हो तो लिखना।

१. नारायण मोरेश्वर खरे।
२. प्रोफेसर जयकृष्णदास प्रभुदास भणसाली।
३. भणसालीजीकी एक रिश्तेदार महिला।
४. राजस्थानके एक प्रसिद्ध काग्रेसी नेता, जो हिन्दी **नवजीवन** के सम्पादनमें सहायता देते थे।

लालजी[1] आजकल कहाँ काम कर रहा है? वीजापुरमें अथवा अमरेलीमें, मुझे कोई खबर नही। विद्यापीठमे सरकारकी ओरसे कोई रहता है क्या? मकानोंका कोई उपयोग करता है क्या? कनैयालाल विल्कुल ठीक हो गया होगा? दामोदरदास बहुत ज्यादा कठिनाईमे है, इसकी तुम्हे खबर पड़ी होगी।

मै तुम्हें यह पत्र लिख ही रहा था कि इतनेमे मुझे तुम्हारा दूसरा पत्र मिला। देवदासके सम्बन्धमें मुझे सीधे तार मिला था, जिसपर मैंने और विवरण लिख भेजनेके लिए तार भी किया था। अभीतक कोई जवाब नही आया है।

बापू

१९ जून, १९३२

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२३४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

७१. पत्र: लॉरी सॉयरको[2]

१९ जून, १९३२

प्रिय लॉरी,

प्रो० होरेस अलेक्जेंडर मुझे तुम्हारी याद दिलाते है और कहते है कि तुम बहुत कमजोर हो। अवश्य ही मुझे तुम्हारी बहुत अच्छी तरह याद है। तुम शरीरसे कमजोर भले होगी, मगर मैंने जब पहली वार तुम्हे देखा था तभी जान लिया था कि तुम्हारा मन बहुत दृढ है। और अगर ईश्वरको तुम्हारे इस शरीरसे और सेवा करानी होगी, तो वह तुम्हे पर्याप्त शारीरिक शक्ति भी देगा। जिन्हे ईश्वर-पर श्रद्धा है, उनके लिए मृत्यु और जीवन एक समान है। हमारा फर्ज तो आखिरी दम तक सेवा करना है। तुम लिख सको तब जरूर लिखना। महादेवकी तरफसे प्यार।

तुम्हारा,
बापू

१. लालजी परमार, पंचमहलके एक हरिजन विद्यार्थी।

२. इस पत्रकी भूमिका देते हुए महादेव देसाईने लिखा है: "इंग्लैंडमें हमारी सहायता करनेवाली अनेक महिलाओंमें लॉरी सॉयर एक थी। वह पहले कैंसरसे पीड़ित हो चुकी थी और उसके बाद क्षय रोगसे, लेकिन मैंने उस जैसी प्रफुल्लचित्त और कुशाग्रबुद्धि लड़की कम ही देखी है। होरेसने लिखा था कि लॉरीके ज्यादा समय तक जीवित रहनेकी आशा नहीं है, इसलिए बापूको उसे एक पत्र लिख देना चाहिए। अतः उन्होंने फौरन उसे पत्र लिखा। . . ."; देखिए "पत्र: होरेस जी० अलेक्जेंडरको", २३-६-१९३२ भी।

[पुनश्च :]

मै अपने लोगोके बारेमे कुछ नही लिख रहा हूँ, क्योकि जानने लायक सब तुम्हे मालूम ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

७२. पत्र : जेठालाल गोविन्दजी सम्पतको[1]

१९ जून, १९३२

तुम्हारे प्रयोगको मै शास्त्रीय कहता हूँ और इसलिए मेरी दृष्टि तुम पर सदा रहती ही है और तुम्हारे कामका आदिसे अन्ततक हाल जाननेकी इच्छा हमेशा बनी रहती है। तुम अनुभवी कार्यकर्ता हो, इसलिए ज्यादा मुश्किलें तो तुम अब अनुभव करोगे। महान कार्योके सम्बन्धमे सदा ऐसा ही होता रहा है। जब यह लगता है कि अब रास्ता साफ हो गया है इसलिए जल्दी प्रगति कर लेगे, और यह मानकर जरा आराम लिया कि तुरन्त खाई नजर आती है। इसलिए तुम्हे वहाँ समाधि लगाकर बैठ जाना चाहिए। पहली चीज तो अटूट धीरज है और ऐसे धीरजके लिए आत्म-विश्वास होना चाहिए। और आत्मविश्वासका अर्थ है अपने काममे अटूट श्रद्धा। इतना हो जाये तो फिर अनजानमे बेशुमार भूलें होती हो तो भी चिन्ताकी कोई बात नही रहती। कही हम भूल तो नही करते, निरन्तर इस भयसे सूखनेकी कोई जरूरत नही। तुम्हारे प्रयोगको मै शास्त्रीय मानता हूँ। इसका अर्थ यह नही है कि मै इसे आज ही पूर्णरूपेण शास्त्रीय समझता हूँ। लेकिन तुम्हारे काममे शास्त्रीय प्रयोगके लक्षण है। और इस तरहके प्रयोगोंमे जो धीरज चाहिए वह भी तुममे है। पहले मुझे तुममे एक दोष दिखाई देता था, लेकिन मुझे लगता है कि तुमने अपने उस दोष को सोच-समझकर दूर कर दिया है, या तुम जानते भी न हो इस ढंगसे तुम्हारी सत्यनिष्ठाके कारण वह दूर हो गया है। वह दोष यह था : अधूरे कामसे सन्तोष मानकर तुम झट निष्कर्षपर पहुँच जाते थे। यह मै अब तुममे नही देखता। शास्त्रीय प्रयोग करनेवाला व्यक्ति अपनेमे अटूट श्रद्धा रखनेके कारण कभी निराश नही होता। मगर उसके साथ-साथ उसमे इतनी ज्यादा नम्रता होती है कि वह अपने कामसे सन्तोष नही कर लेता और तुरन्त ही किसी निष्कर्षपर नही पहुँच जाता। मगर समय-समयपर गहराईसे हिसाब लगानेके बाद निश्चयपूर्वक कहता है कि इसका परिणाम यही आयेगा। ऐसी शास्त्रीय नम्रताकी कमी हम सबमे है। इसलिए तुममे जो यह बात मुझे नजर आई थी, सो कोई आश्चर्यकी बात नही थी। सिर्फ मैंने तुम्हारे सम्बन्धमे यह माना है कि तुममें अन्त तक जानेकी शक्ति है। इसलिए यह दोष भी

१. जेठालाल गोविन्दजी सम्पतने अपने कार्यकी रिपोर्ट भेजी थी। वे पिछले तीन वर्षोंसे मध्यप्रदेशके अनन्तपुर गाँवके गरीबोंके बीच काम कर रहे थे।

तुममें न रहे, इस तीव्र इच्छासे वर्षों पहले बहुत धीरेसे मैंने तुम्हारा ध्यान उस बातकी तरफ खीचा था। कार्य-सिद्धिके लिए तुम्हें सबसे पहले साथियोंकी खोज करनी होगी। तुम्हारी साधना ऐसी है कि धीरे-धीरे साथी मिल ही जायेंगे। साथी जुटानेके लिए हमें एक गुणकी उपासना करनी ही पड़ती है — सहिष्णुता और उससे उत्पन्न उदारता। हम जो-कुछ करते हैं या करना चाहते हैं वह सब साथी उसी तरह नही कर सकते। लेकिन जबतक यह लगे कि वे अच्छी नीयतवाले और उद्यमशील हैं, तबतक हमें उन्हे निभाना चाहिए। ऐसा न करें तो साथी बढ़ते नही। कितनोको तो मिलते ही नही।

अब तुम्हारे कामके सिलसिलेमें एक और बातकी जरूरत समझता हूँ। जो लोग दूसरे ढंगसे काम करते हों, उनसे भी सीख लेनेकी इच्छा होनी चाहिए। शास्त्रीय प्रयोग एक ही ढगसे सफल हो सकता है, ऐसा माननेमें बड़ी भूल होती है। बहुत लोग ऐसा मानते जरूर है, मगर ऐसा मानकर वे खुद बहुत खोते हैं। हमारी वृत्तियाँ ऐसी होनी चाहिए कि हमारे लिए तो वही तरीका ठीक है जिसे हम सच्चा या पूर्ण मानते हैं। मगर दूसरे लोग, जो इसकी पूर्णताको नही देख सकते या इसकी अपूर्णताको जान सकते हों, वे जरूर दूसरी पद्धतिसे बाकी काम कर सकते हैं। ऐसी भावनाका विकास करनेसे हमारी ग्रहणशक्ति बढती है।

तुम इस समय जिस ढगसे काम कर रहे हो, उसके बारेमे मै कुछ नही कह सकता। यानी तुम्हारे कामके प्रति पक्षपात होनेके कारण यहाँसे तो सब अच्छा ही अच्छा लगता है। वहाँ आँखोसे देखूं तो मुमकिन है कि मुझे कई विचार आयें और मै उन्हे तुम्हारे सामने रखूँ। यहाँ बैठे हुए मै तुम्हारे कामका चित्र अच्छी तरह नही खीच सकता। इसलिए कोई भी सुझाव देनेमें अविनय ही मालूम होगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

७३. पत्र : शामल आर० रावलको

१९ जून, १९३२

चि० शामल,

जो खुराक तू खा रहा है वह यदि माफिक आ जाये तो अच्छा ही है। तुझे कब्ज रहता है इसका मतलब कदाचित् यह है कि तुझे उबली हुई सब्जियाँ पर्याप्त मात्रामे लेनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४२) से। सी० डब्ल्यू० २८८१ से भी; सौजन्य : शामल आर० रावल

७४. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

१९ जून, १९३२

भाई नानाभाई,

तुम्हारे पत्र मिले। जितने अंशकी नकल तुमने मुझे भेजी है मणिलालके पत्रका उतना अंश मुझे मिल गया है। दूसरे भागमें से मेरे जानने योग्य कुछ हो तो उसकी नकल भेजना।

प्रागजी 'इंडियन ओपिनियन' की जिम्मेदारी अपने सिर लेनेसे इन्कार करते हैं तो मणिलालको वहाँ [दक्षिण आफ्रिकामें] रुक जाना चाहिए, ऐसा मुझे भी लगता है। 'इंडियन ओपिनियन' चलानेकी उसमें स्वयं हिम्मत हो तबतक उसे नहीं छोड़ना चाहिए। यह उसका पहला कर्तव्य है। हमें तो जहाँ-तहाँ सेवा ही करनी है। वहाँ रहकर वे सब लोग सुखी रहें तो समझो बहुत है। नेटालका बुखार तो प्राणलेवा था। उससे अभी तो ये सब बच गये हैं। सुशीला और सीताके वहाँ रहनेके समाचारसे मैं यह सोचकर खुश था कि वहाँ वे ज्यादा तन्दुरुस्त रहेंगी। इस बातकी किसे क्या खबर है कि किससे प्रसन्न हों और किससे दुखी। हमें दोनोंका त्याग कर देना चाहिए।

दादासाहब महाजनीके परिवारको मेरी ओरसे संवेदना व्यक्त करना।

सरदार और महादेवको यथायोग्य।

तारा[1] अपना समय किस तरह बिताती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२०) से। सी० डब्ल्यू० ४९९६ से भी; सौजन्य: कनुभाई मशरूवाला

१. नानाभाईकी पुत्री।

७५. पत्र : पूँजाभाई एच० शाहको[1]

१९ जून, १९३२

तुम काफी अच्छा लिखते हो। तुमने जन्म सफल कर लिया है। जिसका मन परोपकारमे रमा रहता है और जो अन्त तक ऐसी हालतमे बना रहता है उसका जन्म सफल हुआ है। नारणदास कहता है कि तुम फिर मूर्च्छित हो गये थे। ऐसा करते-करते कभी पूरी नीद आ जायेगी। आये, तब स्वागत कर लेना।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

७६. पत्र : एक बालकको

१९ जून, १९३२

बरतन मलने और पाखाना साफ करनेका काम आम तौर पर अच्छा नही लगता। इसलिए खास जातियोसे कराया जाता है। यह दोष है। अतएव जो परोपकारकी भावनासे यह काम करता है वह सेवा करता है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

७७. एक पत्र[2]

१९ जून, १९३२

किसी भी हालतमें रहकर जो सत्यका आचरण कर सकता है, वही सत्यार्थी माना जायेगा। व्यापारमें किसीको झूठ बोलनेकी मजबूरी नही है और न नौकरीमे। जहाँ मजबूरी दीखे वहाँ नहीं जाना चाहिए, फिर भले भूखों मर जायें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. गांधीजीके एक पुराने सहयोगी; इस समय पूँजाभाई बीमार थे और अक्टूबर, १९३२ में इनकी मृत्यु हो गई। इनके बारेमें गांधीजीके संस्मरणोंके लिए देखिए खण्ड ५१, "चिरंजीवी पूँजाभाई!" २३-१०-१९३२।

२. यह जिसे पत्र भेजा गया था उसने एक वस्त्र-व्यापारीके असिस्टेंट होनेकी नौकरीके विकल्पमें गांधीजीसे राय माँगी थी, क्योंकि उसमें झूठ बोलना पड़ता था।

७८. पत्र : अब्बास तैयबजीको

२० जून, १९३२

प्रिय भुर्रर्र[1],

तुम कोशिश करो तो भी मुझे निराश नही कर सकते।[2] इसलिए ऐसे कोई विचार करके उदास मत हो। जब रेहाना[3] गाये तब तुम नाचो, बस इतना ही है। हम सबको खुशी है कि तुम अब सांसारिक झझटोसे मुक्ति पानेवाले हो।

हामिदअली परिवारको कृपया मेरा सलाम भेजना। मुझे विश्वास है कि वे ऐसा नही मानते कि उस सुन्दर पहाड़ीपर तुमने सुअर्जित आराम लेकर उनकी छुट्टियाँ खराब की है। तुम्हे यह जानकर आश्चर्य होगा कि मै वहाँ कभी नही गया हूँ।

तुम्हे हम लोगोंका प्यार।

तुम्हारा,
भुर्रर्र

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५७८) से।

७९. पत्र : प्रिंसेस एफी एरिस्टार्शीको

२० जून, १९३२

प्यारी बहन,

तुम्हारे प्रेमभरे पत्र मुझे मिलते रहते है। पिछले पत्रमे तुमने अपनी आर्थिक परेशानियोंका जिक्र किया है। मै तुम्हारे लिए जरूर प्रार्थना करता हूँ। जो ईश्वरका डर रखकर चलते है, उन्हें रुपये-पैसेका या और किसी नुकसानका डर रखनेका कारण नही है। भगवानके भक्तोंके लिए अकसर ऐसी मुश्किले छिपे हुए आशीर्वादके समान साबित होती है। तुम्हारी श्रद्धा और तुम्हारे धैर्यसे तुम्हारी वृद्धा माताजीको उत्साह मिलेगा।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

१. गांधीजी और तैयबजी एक दूसरेको 'भुर्रर्र' कहकर ही सम्बोधित करते थे।

२. तैयबजी अपनेको गिरफ्तार करा सकनेमे असमर्थ थे जिसका जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा था: "यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि एक भी क्षण ऐसा नहीं है जब मुझे तुम्हारा और तुम्हारे साथियोंका ध्यान न रहता हो और मुझे लगता है कि मैं तुम्हें कितना निराश कर रहा हूँ।" (महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१)

३. अब्बास तैयबजीकी पुत्री।

[पुनश्चः]

तुमने 'उपनिषद्'[1] के सुन्दर श्लोक[2] का जो चरण उद्धृत किया है उसका उत्तरार्द्ध तुम्हे मालूम ही है। उसका अर्थ है, "ससारका त्याग करके उसका सुख भोगो।" यह कितना उपयुक्त है!

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

८०. पत्र : रेहाना तैयबजीको

२० जून, १९३२

कौन जानता है तन्दुरुस्त रहनेसे अच्छा है या न दुरुस्त रहनेसे। नल दमयन्ती की कथा सुनी है ना? नल बहुत खूबसूरत था, उसे बचानेके लिए खुदाने करकोटक नागको हुक्म दिया। जाओ नलको काटो और उसे बदसूरत बना दो। जब नागने काटा, नल घबडा गया। आखिरमे उसे पता चला कि ये तो खुदाकी नियामत है। ठीक ऐसा ही मैं तुम्हारे बारेमे जानता हूँ। इसलिए दर्दका इलाज करते रहे, लेकिन अच्छे-बुरेकी हरगिज फिकर न करें। तुम्हे हर हालतमे गाना नाचना ही है और अम्माजानकी खिदमतमे रहना है।[3]

मेरा भाषण पूरा हुआ। तुम्हे तो कुछ भी हो हँसते ही रहना है। अगर तुमने अपना सब-कुछ ईश्वरको सौप दिया है तो शरीर उसका है, तुम्हारा नही है। रोग भी उसीको है, तुम्हे नही है। फिर दुख कैसा? जो गजल तुमने गुजरातीमे दी है वह समझनी पड़ेगी। तुम मानती हो कि तुम्हे होशियार शागिर्द मिला है। पर थोड़े ही समयमें तुम्हारी आँखे खुल जायेंगी। जो होशियार होगा, वह शिष्य ही क्यो बनेगा? और वह भी तुम्हारी जैसी उस्तादिनीका? इसलिए कोई हर्ज नही। जैसी तुम वैसा मैं। या जैसा मैं वैसी तुम। यह कौन कह सकता है कि तुमने मुझे शिष्यके रूपमें पसन्द किया या मैंने तुम्हे उस्तादिनीकी गद्दीपर बिठा दिया?

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. ईशोपनिषद्, १।
२. ईशावास्यमिदम् सर्वम् यत् किंचिज्जगत्यांजगत।
तेन त्यक्तेन भुंजीथाः मा गृधः कस्यस्विद् धनम्॥
३. गांधीजीने यह अनुच्छेद उर्दूमें तथा इसके बादका अंश गुजरातीमें लिखा था।

८१. पत्र : रोहिणीबहन देसाईको

२० जून, १९३२

चि० रोहिणी[1],

तेरा और सुरबालाका पत्र मिला। यह कितने आश्चर्यकी वात है कि लगभग हमीदाके पत्रके साथ ही तेरा पत्र भी मिला! अव फिर लिखनेकी प्रवृत्ति जगे तो लिखना कि मन्दिरमे [जेलमे] तू अपना समय कैसे विताया?

मामाकी तबीयत ठीक हो गई होगी। दोनो वहनोको हमारा आशीर्वाद्।

वापू

श्रीमती रोहिणीवहन
मार्फत श्रीयुत् कानजीभाई देसाई
गोपीपुरा, सूरत

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६५७) से।

८२. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दारको

२१ जून, १९३२

किसी व्यक्तिको सामने रखकर तो आध्यात्मिक प्रश्नोका उत्तर देनेमे[2] मुझको सुविधा रहती है। अखवारोके लिये लिखनेमे कष्ट होता है। जब यह ज्ञात हुआ कि जो प्रश्न मुझको पूछे थे वह 'कल्याण' ही के लिये थे, तो ऐसा ही समझो कि मेरी वुद्धि जड़-सी वन गई। इसका यह मतलव नही है कि अखवारोमे कुछ लिखा जाय उससे जनताको लाभ नही होता है। मै तो अपनी प्रकृतिका खयाल दे रहा हूँ। इसी कारण मैंने 'यंग इंडिया'मे वहुत दफे लिखा है। मेरी दृष्टिसे वह कोई अखवार न था। परन्तु मित्रोको मेरा साप्ताहिक पत्र था। और जो कुछ आध्यात्मिक वाते उसमे और 'नवजीवन'मे पाई जाती है, वह करीव-करीव किसी-न-किसी व्यक्तिको सामने रखकर ही लिखी गई है। इसका कारण भी है। मै शास्त्रज्ञ नही हूँ।

१. कनैयालाल देसाईकी पुत्री।

२. अपने पहले पत्रमें हनुमानप्रसाद पोद्दारने गांधीजीसे अपने जीवनकी कुछ उन घटनाओंका उल्लेख करनेके लिए लिखा था जिनके कारण उनका ईश्वरमें विश्वास जागृत हुआ और दृढ हुआ। इसपर गांधीजीने पूछा कि कहीं यह प्रश्न इस दृष्टिसे तो नहीं पूछा गया है कि आप इसका उत्तर अपनी धार्मिक हिन्दी पत्रिका कल्याण में प्रस्तुत कर सकें।

अगर मैं बुद्धिका काफी उपयोग कर लेता हूँ, परन्तु जो कुछ बोलता हूँ और लिखता हूँ वह बुद्धिसे नही पैदा होता है उसका मूल हृदयमें रहता है। और हृदयकी बात निबन्धके रूपमे नही आ सकती है।

'संयममयी श्रद्धा' शब्दप्रयोग[1] मैंने लाचारीसे किया था। वह मेरे सब भाव प्रकट नही करता है। और कोई शब्दरचना इस वक्त मेरे खयालमे नही आती। तात्पर्य यह है कि वह श्रद्धा मूढ़, विवेकहीन, अन्ध होनी ही नही चाहिए, अर्थात् जिस जगह बुद्धि भी चलती है वहाँ कोई कहे, 'बुद्धि कुछ भी कहे, मैं श्रद्धासे वही मानता हूँ और मानूँगा — यह श्रद्धामे सयम नही है। पृथ्वी गोल है या चपटी यह कहना बुद्धिका विषय है। तदपि कोई कहे मेरी श्रद्धा है कि पृथ्वी चपटी है! यह श्रद्धा सयममयी नही है।

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

८३. एक पत्र[2]

२१ जून, १९३२

सुन्दर चीजोंकी लालसा होना बिल्कुल स्वाभाविक है। इतनी ही बात है कि सुन्दरताका कोई सुनिश्चित माप नही है। इसलिए मेरा यह खयाल बना है कि यह लालसा पूरी करने लायक नही है, बल्कि बाहरी चीजोंकी लालसा रखनेके बजाय हमे भीतरी सुन्दरताको देखना सीखना चाहिए। अगर हमे यह आ जाये, तो सौन्दर्यका विशाल क्षेत्र हमारे सामने खुल जाता है और फिर इसपर अधिकार जमानेकी इच्छा मिट जाती है। यह बात मैंने जरा भोंडे ढंगसे रखी है, मगर आशा है कि मेरा मतलब तुम समझ जाओगी। . . .

जीवनका ध्येय बेशक खुद अपनेको — आत्माको — पहचानना है। जबतक हम प्राणीमात्रके साथ एकता महसूस करना न सीख लें, तबतक आत्माको पहचान नही सकते। ऐसे जीवनका समग्र योग ही ईश्वर है। इसीलिए हम सबमे रहनेवाले ईश्वर को जानना जरूरी है। ऐसा ज्ञान असीम और निःस्वार्थ सेवासे ही मिल सकता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. हनुमानप्रसाद पोद्दारने २३ मई, १९३३ के पत्रमें गांधीजी द्वारा प्रयुक्त 'संयममयी श्रद्धा' शब्दका स्पष्टीकरण माँगा था।

२. म्यूरियल लेस्टरकी एक सहकर्मिणी। उसने गांधीजीसे पूछा था कि मनुष्य सुन्दर वस्तुओंको देखने और उनका उपयोग करनेकी लालसा क्यों करता है, और जीवनका उद्देश्य क्या है।

८४. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

२१ जून, १९३२

चि० रामेश्वरदास,

तुम्हारे पत्रका उत्तर इस सप्ताहकी डाकसे भेजना रह गया। अपने मोहके वश होकर तुम श्रीरामके स्वार्थको कभी नही बिगाड़ना। तुम समय-समय पर कांगडी अथवा काशी आते-जाते रहा करना और उससे मिलते रहना। विनोबा तुम्हे और क्या छूट देंगे? याद करो कि कमलनयन कहाँ-कहाँ भटकता है? माँ-बापको अपनी सन्तानके स्वार्थोको बिगाडनेका कतई कोई अधिकार नही है। शिवाजी, दत्तु, शकरराव इत्यादिकी तुम्हे ज्यादा खबर हो तो लिखना। अन्नाहार और फलाहारके बीच जो भेद किया गया है वह मिथ्या है, ऐसा जानना। शारीरिक और आध्यात्मिक दृष्टिसे कुछ अनाज किन्ही विशेष परिस्थितियोमे फलोसे अधिक सात्विक होते है। मूँगफली, यद्यपि फल मानी जाती है तथापि लगभग समस्त रोगोमे त्याज्य है; जबकि चावल अन्न है, फिर भी वे एक निश्चित मात्रामे खाये जा सकते है। जिसे केवल इन्द्रिय-निग्रह करना है वह चावल खाकर जैसे-तैसे गुजारा कर सकता है, लेकिन सम्भव है कि उसके लिए मूँगफली त्याज्य हो। तुम्हारी सेहतके विचारसे पेड़ा जहरके समान है। दाल-भात, रोटी, शाक आदि पूरा भोजन करनेकी अपेक्षा शामको थोड़ा फल अर्थात् मुनक्का, सन्तरा, अनार अथवा ऐसा ही कोई रसीला फल खा लें तो यह जरूर हलका आहार है। बा की खानेकी चीजके रूपमे ये दोनो अन्न ही माने जाने चाहिए। अन्न-फलके भेदकी योजना स्वाद छोडनेमे असमर्थ होनेके कारण प्रभु और अपनेको धोखा देनेवाले वैष्णवोकी जान पड़ती है। वैष्णव परिवारमे जन्म लेनेके कारण मै यह बात अनुभवसे कह रहा हूँ। जिस तरह अलसीकी अथवा गेहूँकी पुल्टिस बनाते है उसी तरह मिट्टीमे पानी डालकर उसे आटेकी तरह गूँधकर (सान कर) कपडेकी एक पट्टीमे लपेटकर पेटपर बाँधना चाहिए। यह भूखे पेट ही बाँधी जानी चाहिए। पेट भरा होने पर यदि इसे बाँधा जाये तो यह नुकसान करती है, और पेट दुखने लगता है। गीता माताका ध्यान करनेका अर्थ है 'गीता' के चाहे किसी भी श्लोक अथवा शब्दके अर्थका चिन्तन करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८२) से।

८५. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२१ जून, १९३२

भाईश्री खम्भाता,

आपका पत्र मिला। आप दोनोके लिए मैंने सरकारसे अनुमति प्राप्त कर ली थी और आपको आनेके लिए लिखनेकी तैयारीमे था, इतनेमे मीराबहनके लिए मनाही का आदेश जारी हुआ। इसलिए मुझे यह उचित लगा कि यदि मीराबहनसे नही मिला जा सकता तो किसीसे भी नही मिलना है। फलतः मुलाकाते बन्द हो गई। मनाहीके आदेशको रद करवानेके सिलसिलेमे मैं अभी थोड़ा बहुत प्रयत्न कर रहा हूँ। इसीसे आपको कुछ नही लिखा। मैंने समझा कि मीराबहनके विरुद्ध आदेशकी बात आप जान गये होगे। पिछली बार नौरोजी बहनोके कारण मुलाकातें बन्द हो गई थी, यह बात आप जानते हैं, ऐसा मेरा खयाल था और मैंने सोचा कि इसीसे आपने स्थितिका सही अन्दाज कर लिया होगा। आपके लिए मैंने जो अनुमति प्राप्त की थी वह हड्डियोंके वैद्यके रूपमे नही अपितु एक सम्बन्धीके रूपमे की थी। आप आते तो हाथकी जाँच तो करते ही और फिर यदि आपको लगातार मालिश करनेकी आवश्यकता महसूस होती तो उसके लिए विशेष अनुमति ले लेता। आपसे ऐसी सेवा न लेनेका सिद्धान्त हो ही कैसे सकता है? आपके स्पर्शसे मेरा हाथ अच्छा हो, यह तो मुझे अच्छा ही लगेगा। लेकिन हाँ, सिद्धान्त रूपमे तो नही परन्तु मैं इतना आग्रह तो अवश्य ही रखूँगा कि बाहरसे किसी हकीमको बुलानेकी जवाबदारी सरकारकी रहे। लेकिन इस हदतक तो यहाँ ऐसा अवसर आया ही नही है। हाथकी स्थिति बिल्कुल ही खराब नही हो गई है। आपकी पुस्तकसे कुछ मदद लेकर महादेव मेरी मालिश तो करता ही है। आजकल मेजर मेहता यहाँ विशेष डाक्टरके रूपमे आये हैं। और फिर यह बिजलीका उपचार करते हैं। इतना सब करनेके बावजूद यदि अन्ततः कुछ लाभ नही हुआ और यहाँके डाक्टर भी हार गये तो स्वाभाविक ही बाहरी सहायताका प्रश्न उठेगा और वैसा होने पर मित्रोसे मुलाकातका सिलसिला बन्द होने पर भी हड्डियोके डाक्टरके रूपमें आप अवश्य आयेगे। मैं आपके स्नेहभावको हमेशासे समझता आया हूँ, अतः आपसे सेवा लेनेमे मुझे तनिक भी संकोच नही होगा। आवश्यकता दीख पड़ने पर माँग ही लूँगा। 'लीड काइंडली लाइट' का भजन कहाँ गवाना है? अथवा आप दोनों प्रत्येक शुक्रवारको घरमे ही गाया करेंगे? यदि घरमे ही गाना हो और कोई अंग्रेज भाई-बहन साथ न हो और इच्छा हो तो उसका गुजराती अनुवाद[1] 'भजनावली' में है, यह तो आप जानते ही होगे, ठीक लगे तो इसे गाना। हम यहाँ इसे ही गाते है। फादर एल्विन आजकल आपके साथ है या अभी आश्रममे ही हैं?

१. नरसिंहराव दिवेटिया द्वारा अनूदित प्रेमळ ज्योति।

मालिशके लिए आपने खास तेल लिखा था। मालिशके अलावा यदि इस तेलका कोई खास असर होता हो तो थोड़ा भेज देना। आप दोनों आनन्दपूर्वक होंगे। हम तीनों सकुशल हैं।

आप दोनोंको बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५४९) से। सी० डब्ल्यू० ५०२४ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

८६. पत्र : मीराबहनको

२२ जून, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र कल आया।

मैं हार गया। मैंने दूध और डबल रोटी ली और इसलिए नमक भी ले लिया है। मेजर भण्डारी मुझे ऐसे प्रयोग करने देनेको तैयार नही हैं जिनसे स्वास्थ्यको खतरा हो। और उनके खयालसे समय आ गया था कि मैं दूध-रोटी लेने लगूं और फल भी। उनकी राय है कि नमकके न होनेसे वजन जरूर घटता है और मेरे लिए वजनका घटना मँहगा पड़ेगा। मैं लाचार हो गया। अब अलोने आहारका प्रयोग मुझे किसी अन्य समयके लिए टाल रखना पड़ेगा। इस थोड़े दिनोंके प्रयोगसे मेरी हालत सुधरी नही तो बिगडी भी नहीं। मैंने कुछ अवलोकन किये हैं। परन्तु उनका कोई महत्त्व नही, क्योंकि वे बहुत थोड़े दिनोके प्रयोग पर आधारित हैं। अगर तुमने कुछ और खोजे की हों, तो अपने प्रयोगका हाल मुझे बताना।

तुम्हारा पिछला पत्र[1] मैंने अपने पत्र[2] के समर्थनमे सरकारके पास भेजा है। देखे क्या होता है।

तुमने पूछा है कि बिजलीका इलाज क्या है। इसे तेज मालिश (हाई फ्रीक्वेन्सी) कहते हैं। इसमे बैंगनी किरणोंसे आवेशित काँचके चकटे लट्टूसे रगड़ते हैं। सिवाय इसके कि ये यान्त्रिक किरणे गरम होती है, प्रातःकालीन सूर्यके तापसे भी वही मतलब हल होना चाहिए।

तुमने आश्रमके इतिहासके बारेमे भी पूछा है। मैं आश्रमकी प्रवृत्तियोके हर पहलूकी चर्चा कर रहा हूँ। लेकिन यह काम बहुत धीरे-धीरे हो रहा है। कोई-न-कोई कारण ऐसा आ जाता है कि मैं इसे रोज थोडा समय नही दे पाता। और अभी तक मुझे ऐसा महसूस नही हुआ कि इससे लिए निश्चयपूर्वक नित्य एक घटा दूं। लेकिन अगर मेरा यहाँ काफी लम्बे अर्से तक रहना हुआ और ईश्वरने चाहा, तो इतिहास अवश्य पूरा हो जायेगा।

१. देखिए "पत्र : मीराबहनको", १६-६-१९३२ की पाद-टिप्पणी।
२. देखिए "पत्र : ई० ई० डॉयलको", १८-६-१९३२।

दामोदरदासका पत्र आ गया है। उसके घरमें रहते हुए उसके साथ तुम्हारी जो आखिरी बातचीत हुई थी उससे उसे ठेस लगी प्रतीत होती है। मैंने उसको लिखा है कि वह तुमसे उसके बारेमें बात करे। लेकिन तुम खुद पूछ लेना कि उसे किस बातसे ठेस लगी थी। मैंने उससे विनती की है कि वह सट्टेबाजी बिल्कुल छोड़ दे और सीधे-सादे जीवनसे ही सन्तुष्ट रहे। देवदासको हलका आन्त्र-ज्वर है। तुम्हे उसे पत्र लिखना चाहिए। उसका पता है: जिला जेल, गोरखपुर, संयुक्त प्रान्त।

मेरे खयालसे तुमने इस बात पर ध्यान नही दिया कि इस कथनमे कि "बहादुरोको मौत एक ही बार आती है" एक गहरा अर्थ है और उसमे मोक्षकी हिन्दू कल्पनाके अनुसार पूर्ण सत्य समाया हुआ है।[1] इसका मतलब है जन्म-मरणके चक्कर से छुटकारा। यदि 'बहादुर' शब्दका अर्थ उन लोगोके लिए लिया जाये, जो ईश्वरकी खोजमे दृढ है, तो वे एक ही बार मरते है, क्योकि उन्हे फिर जन्म लेने और यह नाशवान चोला धारण करनेकी जरूरत नही होती।

इन दिनो यहाँका मौसम सदा ठडा रहता है। हमारे यहाँ भी पानी गिरा।

शान्ताबाईने चरखा कातना फिरसे शुरू कर दिया है इसकी उनको बधाई।

मुझे खुशी है कि तुम तिलकको[2] बच्चे जैसा प्यार दे रही हो। उसे इसकी जरूरत है। अवश्य ही नूरबानूका[3] व्यवहार उसके प्रति बहुत अच्छा है। लेकिन वह इतनी हिन्दी नही जानता कि उसके (नूरबानूके) साथ जी भरकर बाते कर सके। और उसे जो तुम दे सकती हो वह नूरबानू नही दे सकती। तुम नूरबानू और प्यारअलीसे भेट करनेकी कोशिश तो करोगी ही।

हाँ, मैंने नारणदासको लिखकर पाँच मिनटके मौनका सुझाव दिया है। मै इसके बारेमें तुम्हे लिखना भूल गया। मै यहाँ ऐसा नही कर रहा हूँ। यहाँ यह अनावश्यक है, और तुम्हारे लिए अव्यवहार्य है। किसी नई जमातमें द्रुतगतिसे रामनामकी धुन बेशक अच्छी है। बहुत तेजीसे रटनेके लिए अकसर केवल 'राम, राम, राम, राम . . .' बोला जाता है। ठीक लयसे बोला जाये तो बड़ा आनन्द आता है। हाँ, हम ३-४० पर उठते है। प्रार्थना ४ और ७-३० पर होती है।

नरगिस और जालको मेरा प्यार। मुझे खुशी है कि नरगिस इतनी सुधर गई है। मुझे हिल्ला पेटिट नाम याद नही आता। सम्भव है मै उससे मिला होऊँ।

मुझे खुशी है कि गुलाब और मणिलाल तुमसे आकर मिल लिये है। उनसे कहना कि मुझे चिट्ठी लिखे। मुझे अब घीकी जरूरत नही है।

१. द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१ के अनुसार "मीराबहनको बापू द्वारा जीवनकी यह परिभाषा बहुत पसन्द आई कि जीवन तो मृत्युकी तैयारी है। मीराबहनने शेक्सपियरकी वे पंक्तियाँ उद्धृत कीं: 'कायर मौतसे पहले ही कई बार मरते है, लेकिन वीरोंकी मृत्यु तो एक ही बार होती है।' मीराबहनके खयालसे शेक्सपियरकी ये पंक्तियाँ बापूके विचारको व्यक्त नहीं करतीं।"

२. आश्रममें रहनेवाला एक छात्र।

३. बम्बईके एक खोजा सज्जन प्यारअलीकी पत्नी।

आशा है तुम बूतेसे ज्यादा काम नही कर रही हो।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

तुम जानती हो कि क्वेकरो (शान्ति-प्रचारको) के अभ्यासमे मौनके समय आँखे बन्द करनेकी आवश्यकता नही होती। उस सूरतमे समय सम्बन्धी कठिनाई दूर हो जाती है। लेकिन तुम्हारे लिए ये सब बाते बेकार है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९२ से भी।

८७. पत्र : तिलकम्को

२२ जून, १९३२

वह[1] विशुद्ध आत्मा है। उसमे आत्मत्यागकी अपार शक्ति है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

८८. पत्र : शान्ताबहन जी० पटेलको

२२ जून, १९३२

चि० शान्ता,

तुम जुलाईके अन्तमे नरसिंहभाई[2] से मिलनेके लिए आनेवाली हो, ऐसा भक्तिबहन[3] कहती है। जब आओ तब भक्तिबहनसे भी मिल लेना। नरसिंहभाईसे मिलो तो मेरी ओरसे भी बातचीत करना। आजकल मैं उन्हे नही बुलाता हूँ और वे भी दूसरे लोगोंकी खातिर मेरे पास न आनेके संयमका पालन करते है। तुमने जो पुस्तके भेजी है उनमे से अधिकांशको मैं पढ़ गया हूँ। अब बहने पढ़ रही है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती शान्ताबहन नरसिंहभाई
मार्फत श्रीयुत गोर्धनदास पी० पटेल
पूना सिटी[4]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५२२९)से।

१. मीराबहन।
२. शान्ताबहनके पिता।
३. दरबार गोपालदासकी पत्नी।
४. गांधीजीने यह पत्र पाटीदार कार्यालय, आणंदको लिखा था जहाँसे यह उक्त पतेपर भेजा गया था।

८९. पत्र : होरेस जी० अलेक्जेंडरको

२३ जून, १९३२

प्रिय होरेस,

तुम्हारे दो पत्र मिले। लॉरीकी याद दिलाना तुम्हारा ही काम हो सकता था। मुझे उसकी बहुत अच्छी तरह याद है। उसे देखते ही मुझे लगा था कि वह बहुत भली लड़की है। उसके बाद मेरा खयाल है कि चार्ली उसे मेरे पास लाये थे। मैंने उसे तत्काल चिट्ठी लिखी और पत्र[1] को हवाईडाकसे भेज दिया। कमसे-कम मैंने अधिकारियोसे वैसे ही भेजनेको कह दिया था और चिट्ठीको हवाई-डाक निकलनेसे पहले ही लिख दिया था। मै जानता हूँ कि उसे जो बीमारी बदी है उसको और मृत्युको झेलनेका उसमे पर्याप्त साहस है।

हम तीनो स्वस्थ और बिल्कुल ठीक-ठाक हैं। महादेव और मै कताई करते, पढ़ने और लिखनेमे अपना वक्त गुजारते है और सरदार किताबे पढ़ने और हम लोगोके पास कागजके जो टुकड़े इत्तफाकसे आ जाते है उनके लिफाफे बनानेमे। मै इस कार्यको हम सबोके नाम पर और सबोकी खातिर स्वस्थ धन-उत्पादन करना कहता हूँ।

मै तुम्हे इससे पूर्व लिखना चाहता था, लेकिन किसी-न-किसी प्रकार यह छूटता ही रहा। तुम्हे यह जानकर प्रसन्नता होगी कि आश्रममे मौन रखनेका समय बढ़ा कर पाँच मिनट कर दिया गया है। आश्रमसे मुझे जो पत्र मिल रहे थे उनसे मैंने देखा कि आश्रमवासी जो कड़ी मेहनत कर रहे थे उसके कारण उनके मनोमे तनाव पैदा हो गया था और इसलिए मुझे लगा कि जो लोग जम कर मेहनत करनेके अभ्यस्त नही है उनके लिए शायद वाछित शान्त मनसे प्रार्थना कर सकना सम्भव नही होगा। अतः यदि उन्हे अपना मन स्थिर करने और परमात्माके साथ तादात्म्य स्थापित करनेके लिए पाँच मिनट अखण्डित मौनका समय मिल जाये तो प्रार्थना ज्यादा फलदायी होगी। यह नियम लागू हुए अब करीब एक महीना या इससे कुछ ज्यादा ही हुआ। नारणदासने मुझे सूचित किया है कि मौनसे बहुत लाभ हुआ है।

मुझे चार्लीकी किताब अभी तक नही मिली है। हर सप्ताह उसके आनेकी प्रतीक्षा करता हूँ। सेटलमेंट[2] में रहनेवाले आप सब लोगोंकी हम बराबर याद करते है। 'सेली ओक' में आपके साथ जो समय गुजरा वह बड़ा सुखद रहा। शरीरसे कमजोर होनेके बावजूद अगाध भक्ति और सदा उत्फुल्ल रहनेवाली ऑलिव[3] हमारे

१. देखिए "पत्र : लॉरी सॉयरको", १९-६-१९३२।

२. वुडब्रुक सेटलमेंट, बरमिंघमके निकट स्थित क्वेकर सेंटर।

३. होरेस अलेक्जेंडरकी पत्नी।

लिए बहुत बड़ा आदर्श है। महादेव कहता है कि वुडब्रुकमें उनके [ऑलिवके] साथ हुई उसकी बातचीत और अन्य अनेक मधुर बातोंकी उसे याद है। हम दोनोंकी कामना है कि वह अनेक वर्षों तक ऐसी ही प्रेमपूर्ण सेवा करती रहें।

सारे परिवारको हम सबोंकी ओरसे प्यार सहित,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४१३) से।

९०. पत्र : वनमाला एन० परीखको

२३ जून, १९३२

चि० वनमाला,

सबसे पहले तेरा पत्र ही मेरे हाथमें आया है। हिन्दीका चार गुजरातीके चारसे भिन्न लिखा जाता है यथा ४ (हिन्दीमें) और ૪ (गुजरातीमें)। 'गीताजी' के श्लोक कंठस्थ कर रही है, यह अच्छी बात है। उच्चारण ठीक-ठीक करना। अर्थ समझ लेनेका प्रयत्न करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७५) से। सी० डब्ल्यू० २९९८ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

९१. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२३ जून, १९३२

चि० परसराम,

कमलकी तबीयतको लेकर मुझे कोई भय अथवा चिन्ता थी ही नहीं। बच्चोंको बुखार आदि तो अनेक बार होता ही है। इस बारेमें कम जानकारी रखनेवाले डाक्टरों के हाथमें यदि न पड जाये और यदि माता-पिता झूठे प्रेमके वश होकर उनके पेट जरूरतसे ज्यादा न भर दें तो अधिकांश बच्चे चंगे हो जाते हैं। जल्द ठीक होने और पुरानी ताकतको फिरसे हासिल कर लेनेकी शक्ति बच्चोंमें अपेक्षाकृत अधिक होती है। 'रामायण' की क्लासमें जो लोग पहले आया करते थे और अब नहीं आते उनसे कारण पूछ लेना चाहिए — आनेका आग्रह करनेकी खातिर नहीं, अपितु 'रामायण' पाठमें जो दोष दूर किये जा सकते हों, उन्हें दूर करनेकी दृष्टिसे। तुम यदि

सबके साथ 'साकेत',[1] पढ़ना चाहो तो भले पढ़ो, लेकिन मेरा सुझाव यह न था। मेरा सुझाव तो यह था कि हिन्दी सीखनेवालोंमे जो आगे बढ़ गये हों उन्हे उसके कुछ चुने हुए अंश सिखा दो ताकि उनमे अपने-आप उसे पढ़नेकी दिलचस्पी पैदा होने पर वे उसे पढे और जो न समझ पाये वह पूछे।

'अनासक्ति'का अर्थ अवश्य यह है कि अपने प्रति और अपने सम्बन्धियोंके प्रति अनासक्ति; लेकिन 'पर'के प्रति अर्थात् सत्यके प्रति, ईश्वरके प्रति आसक्ति इतनी कि हम तन्मय हो जाये, तद्रूप हो जाये। यह अर्थ हम समझ नही पाते इसीलिए निरुत्साह आदि दोष पैदा हो जाते हैं। तुमने 'निरुत्साह' शब्दका प्रयोग संज्ञाके रूपमे किया है जिससे महादेवने तुरन्त ही यह कहा कि 'निरुत्साह' विशेषण है। मैंने कहा कि परशुरामने उसका प्रयोग संज्ञाके रूपमे किया है और उससे ऐसी भूल नही हो सकती। जिसपर महादेवने कहा कि परशुराम यहाँ भूलते हैं। अतएव हमारे पास यहाँ पर एक छोटा शब्दकोष है उसमे देखा। इसमे यह शब्द विशेषणके रूपमे ही दिया गया है। इस गुत्थीको सुलझाना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५०३) से। सी० डब्ल्यू० ४९८० से भी; सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा

९२. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

२३ जून, १९३२

चि० प्रेमा,

उर्दूकी किताबोंमे नदवी द्वारा रचित दो खण्ड भी हैं क्या? नदवीने शिबलीके बाद कुछ लिखा है। कदाचित् पुस्तकपर मौलाना सुलेमान नदवी लिखा हो।

मछली खानेके बारेमे मैंने कोई तेरे साथ अपवाद नही किया है। कॉड-लिवर ऑयल (मछलीका तेल) निषिद्ध है तथापि मैंने उसे आश्रममे चलने दिया है। मास-मछलीको खाना मैंने आश्रममे वर्जित किया है, उसकी एक मर्यादा रखी है लेकिन यह बात व्यक्तियोके बारेमे लागू नही होती और न हो सकती है। मैंने किसी भी दिन ऐसी मर्यादा नही बाँधी है। इसीसे इमाम साहब बाहर खा सकते थे। तेरे बदले मान लो कि नारणदास ही हो। उसने तो जीवनपर्यन्त मांसादि नही खाया है। लेकिन उसे भयंकर रोग हो जाये और उसकी इच्छा मांस खाकर जीनेकी हो तो मैं उसे अवश्य मांस खानेसे नही रोकूँगा। वह आजके मेरे विचारोसे परिचित है, मेरे धर्मको भी वह पहचानता है। लेकिन मृत्युके समय व्यक्तिकी मन.स्थिति भिन्न हो सकती

१. मैथिलीशरण गुप्त विरचित हिन्दीका एक महाकाव्य।

है। उस समय यदि उसके मनमें इच्छा उत्पन्न हो तो उसे न रोकना मेरा कर्तव्य है। इसके विपरीत यदि उसके स्थान पर कोई बालक हो तो मैं उसे मर जाने दूँगा, लेकिन मास नही दूँगा। एक बार ऐसी परिस्थिति बन पड़ी थी सो तू जानती है? बहुत करके यह किस्सा 'आत्मकथा'[1] मे है। यदि तू इसे न जानती हो और वहाँ भी इससे कोई परिचित न हो तो मुझसे पूछना, लिख भेजूँगा। यह पवित्र प्रसंग दोनोके लिए—था और मेरे लिए—था। अब समझी? मैं तुझसे मछली खानेका आग्रह नही करूँगा। उसके बिना यदि मृत्यु आये और तू मरनेको तैयार हो तो मैं उसके लिए तैयार हूँ। मछली खाकर कदाचित् जीना हो सके, लेकिन वह भी अन्ततः मरनेके लिए ही न? लेकिन यह बात तो उसीके लिए धर्म स्वरूप है जो इसे माने और इसका पालन करे। ऐसा धर्म दूधके सम्बन्धमे मैं अपने ऊपर कहाँ तक लागू करता हूँ? यद्यपि प्राणीमात्रको दूध-त्यागके धर्मका पालन करना चाहिए यह बात मुझे दीपकके प्रकाशके समान स्पष्ट दिखाई देती है, लेकिन इसकी अपेक्षा दूसरोसे नही की जा सकती। यह स्वयं अपने लिए होती है——अस्तु।

तेरी आजकल क्या खुराक है, और किस मात्रामे खाती है, सो फिरसे लिखना। यदि मुझे कुछ रद्दोबदल करवाना हुआ तो सुझाव दूँगा।

स्त्री-पुरुषके सम्बन्धमे तेरे प्रश्न अच्छे है।

बच्चे जिस-जिस विषयको लेकर हमसे प्रश्न करें उस-उस विषयके बारेमे यदि हमें मालूम हो तो बताना चाहिए अथवा उसके प्रति अपने अज्ञानको स्वीकार करना चाहिए। यदि उत्तर देना उचित न हो तो उन्हें पूछनेसे रोकना चाहिए और दूसरोसे भी न पूछनेके लिए कहना चाहिए। उन्हे कभी भी टरकाना नही चाहिए। हम जितना सोचते है बालक उसकी बनिस्बत कही ज्यादा जानते-समझते है। और यदि उन्हें अमुक बात मालूम न हो और हम भी न बतायें तो वे अनुचित ढंगसे उसकी जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। इतना होने पर भी यदि ऐसा विषय हो जिसके बारेमे उन्हे नही बताना चाहिए तो हमे जोखिम उठाकर भी उन्हें नही बताना चाहिए। यदि वे अश्लील बातोकी जानकारी चाहे तो हम कदापि न दे, फिर भले ही वे इस जानकारीको गलत तरीकोसे हासिल कर लें।

पक्षियोमे सम्भोगकी क्रिया बालकोने देखी और उसे जाननेकी इच्छा उनके मनमे हुई तो मैं उनकी जिज्ञासाको अवश्य शान्त करूँगा तथा उससे ब्रह्मचर्यका पाठ सिखाऊँगा। पक्षी, पशु और मनुष्यके बीचके भेदको बताऊँगा। जो स्त्री-पुरुष इसी तरहका आचरण करते हैं वे मनुष्य-देह प्राप्त करने पर भी पशुपक्षीके समान ही हैं। इसमे निन्दाकी अथवा भर्त्सनाकी कोई बात नही है, यह तो वस्तुस्थिति है। पशुत्वसे छुटकारा पानेके लिए ही मनुष्यकी देह और बुद्धि हमे मिली है।

मासिक धर्मका सम्पूर्ण ज्ञान उस वयको प्राप्त लड़कीको देना चाहिए। उससे छोटी उम्रकी लड़की भी यदि उसके बारेमे पूछे तो उतना बताया जाये जितना वह समझ सके।

1. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ २४६-९।

लड़के और लड़कियाँ, हम चाहे कितना ही प्रयत्न क्यों न करें, पूर्णतः निर्दोष नहीं रह सकते। यह जानकर अच्छा यही है कि अमुक समय पर हम उन सबको सही जानकारी दें। इस ज्ञानको प्राप्त करनेवाला ब्रह्मचर्यका पालन नहीं कर सकता, यदि ऐसी बात हो और ब्रह्मचर्य ऐसा निर्बल हो तो वह ब्रह्मचर्य हमारे किसी कामका नहीं। इस ज्ञानको प्राप्त करते हुए ब्रह्मचर्य अधिक सशक्त होना चाहिए। मेरे अपने साथ तो यही बात हुई है।

ज्ञान प्रदान करने और प्राप्त करनेमें बहुत भेद है। एक व्यक्ति अपने विकारों के प्रसारके लिए ज्ञान प्राप्त करता है तो दूसरेको वह अनायास ही प्राप्त हो जाता है और तीसरा व्यक्ति विकारका शमन करनेके लिए तथा औरोंकी मदद करनेके लिए उस ज्ञानको प्राप्त करता है।

यह ज्ञान तभी दिया जा सकता है और वही व्यक्ति इसे दे सकता है जिसमें इसकी योग्यता हो। तुझमें यह कला होनी चाहिए। तुझमें आत्मविश्वास होना चाहिए कि तेरे ज्ञान देनेसे लड़कियोंमें विकार उत्पन्न नहीं होंगे। विकारका शमन करनेके लिए ही तू उन्हें यह ज्ञान दे रही है, इस बातकी उन्हें प्रतीति होनी चाहिए। यदि तुझमें विकारोंके उत्पन्न होनेकी सम्भावना है तो इस बातका ध्यान रखना कि विषयवासना-सम्बन्धी जानकारी देते समय तेरे मनमें विकार उत्पन्न न हों।

स्त्री-पुरुष, पत्नी-पतिके रूपमें जो सांसारिक जीवन व्यतीत करते हैं उसके मूलमें भोगवृत्ति ही है। उसमें से हिन्दू-धर्मने अथवा यों कहें कि समस्त धर्मोंने न्याय का—संयमका—विकास करनेका प्रयास किया है।

पति अगर ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर है तो पत्नी भी वही है। पत्नी दासी नहीं, समानाधिकारवाली मित्र है, सहचारिणी है। दोनों परस्पर एक दूसरेके गुरु हैं।

लड़कीका हिस्सा लड़के जितना ही होना चाहिए।

पति-पत्नीमें से जो कोई भी धन कमाता है उस धनके दोनों समान रूपसे अधिकारी हैं। पति, पत्नीकी मददसे ही कमाता है, फिर भले पत्नी केवल रसोई सँभालती हो। वह दासी नहीं, हकदार है।

जिस पत्नीके प्रति पति अन्यायपूर्ण आचरण करता हो उसे अपने पतिसे मुक्त होनेका अधिकार है।

बच्चों पर दोनोंका समान अधिकार है। बड़े होने पर किसीका भी नहीं। पत्नी नालायक हो तो उसका अधिकार खत्म हो जाता है। यही बात पतिके सम्बन्ध में भी है।

संक्षेपमें स्त्री-पुरुषके बीच जो प्रकृतिने भेद किया है और जो इन आंखोंसे स्पष्ट ही देखा जा सकता है उसके अलावा मुझे, और कोई भेद मान्य नहीं है। अब इस विषय पर तेरा एक भी प्रश्न रह गया है, ऐसा मुझे नहीं लगता।

नारणदासके सम्बन्धमें मुझे पूर्ण विश्वास है। यदि वह कहे कि 'मुझे शान्ति है' तो मैं अशान्ति माननेको तैयार नहीं हूँ। मैंने उसे अनेक बार चेताया है। दूर बैठा हुआ मैं अब परेशान नहीं करूँगा। नारणदासमें अनासक्त होकर काम करनेकी

भारी क्षमता है। अनासक्त व्यक्ति आसक्तसे कही ज्यादा काम कर सकता है, फिर भी निठल्ला लग सकता है। वह सबसे अन्तमे थकता है। सच पूछो तो उसे कभी भी थकना नही चाहिए। लेकिन यह तो आदर्शकी बात हुई। तू इस समय वहाँ उपस्थित है, यदि ऐसा जान पड़े कि अशान्ति है, नारणदास अपनेको छल रहा है तो तेरा कर्तव्य मुझसे भिन्न होगा। तुझे तो नारणदासको चेताना ही चाहिए। मैं भी यदि वहाँ होऊँ और जैसे वह कहता है उससे भिन्न बात देखूँ तो मैं भी यही करूँगा। तेरे सावधान करनेके बावजूद यदि वह तेरा विरोध करता है तो तुझे उसका कहना मानना चाहिए, तबतक जबतक तू उसे सत्यवादी समझे। बहुधा हमारी अपनी आँखें हमे धोखा देती है। यदि तू मुझे खिन्न दिखाई पड़े, लेकिन तू अस्वीकार करे तो मुझे तेरी बातको ही मानना चाहिए। तू मुझसे कुछ छिपा रही है, ऐसा मुझे भय अथवा सन्देह हो तो यह दूसरी बात है। फिर मुझे तुझसे पूछनेके लिए कुछ नही रह जायेगा। मुझे जाननेके लिए अन्य उपाय खोज निकालने होंगे। लेकिन आश्रमजीवन इस तरह नही चल सकता। उसके मूलमे सत्यकी भावना निहित है। वहाँ उद्देश्य शुभ होने पर भी किसीको धोखा नही दिया जा सकता, छला नहीं जा सकता।

खादी-सम्बन्धी मेरे विचार या तो तुझे नारणदासके पत्रमे[1] पढ़नेको मिलेंगे अथवा बच्चोंके पत्रमे।

नारणदास तेलकी मालिश क्यो नही करवाता, सो पूछना।

४ जुलाईकी अवश्य राह देखना।[2] लेकिन किस वर्षकी ४ जुलाई, सो विचार करना होगा। वर्ष भले ही कोई हो। गनीमत यही है कि महीनेकी तारीखका ही निश्चय हो जाता है। तब किसी और महीनेकी अथवा तारीखकी राह नही देखनी होगी। ४ जुलाईके बीतने पर हमे १९३३ के जुलाई महीने तक शान्त होकर बैठना होगा।

बापू

[पुनश्च :]

ऐसा लगता है कि विद्याके ऊपर ध्यान देना होगा। वह मूर्ख जान पड़ती है। उसे प्रश्न पूछना भी नही आता — देखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९१) से। सी० डब्ल्यू० ६७३९ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", २२/२६-६-१९३२।

२. उस समय किसी व्यक्ति द्वारा की गई यह भविष्यवाणी प्रकाशित हुई थी कि गांधीजी ४ जुलाईको रिहा कर दिये जायेंगे।

९३. पत्र : विद्या आर० पटेलको

२३ जून, १९३२

चि० विद्या,

तुझे पत्र लिखना सीखना चाहिए। तेरे प्रश्न वेतुके हैं। तुझे अपने पत्र प्रेमावहनको दिखाने चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३१) से; सौजन्य : रवीन्द्र आर० पटेल

९४. पत्र : देवदास गांधीको

२३ जून, १९३२

हरिलालकी लाल प्याली रोज भरी रहती है। पीकर इधर-उधर भटकता है, और भीख माँगता है। वली और मनुको धमकाता है। इसमे भी नीयत रुपया ऐंठनेकी दिखती है। मुझे भी वडी उद्धत धमकियोके पत्र लिखे हैं। मनु पर अधिकार करनेके लिए वलीपर नालिश करनेकी धमकी दी है। मुझे दुख नही होता, दया आती है। हँसी भी आती है। ऐसे और वहुत लोग है, उनका क्या होगा? उनके लिए भी मुझे उतना ही खयाल होना चाहिए न? वे सव भी स्वभाव-नियत कर्म करते हैं। क्या करे? हमारा वरताव सीधा होगा, तो वह अन्तमे ठिकाने आ जायेगा। हरिलाल आज जैसा है वैसा वननेमे मै अपना हाथ कम नही मानता। जव उसका वीज वोया, तव मै मूढ़ दगामे था। जव उसका पालन हुआ, वह समय श्रृंगारका कहा जा सकता है। मै शरावका नशा नही करता था; सो यह कमी हरिलालने पूरी कर दी। मै एक ही स्त्रीके साथ खेल खेलता था, तो हरिलाल अनेकके साथ खेलता है। फर्क सिर्फ मात्राका है, प्रकारका नही। इसलिए मुझे प्रायश्चित्त करना चाहिए। प्रायश्चित्तका अर्थ है आत्मशुद्धि। प्रगति चीटीकी चालसे हो रही है। . . .[1]

यहाँ वैठे-वैठे आश्रममें फेरवदल कराया करता हूँ। नारणदासकी अनन्य श्रद्धा, उसकी पवित्रता, दृढ़ता, उसका उद्यम और कार्यदक्षता, इन सवका लाभ ले रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. देवदासको लिखे जानेवाले इस पत्रका मुख्य उद्देश्य संयुक्त प्रान्तके गवर्नरको दिये गये तारके वारेमें सूचना देना था; देखिए "तार: सर मैल्कम हेलीको", १८-६-१९३२।

९५. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२४ जून, १९३२

बालको और बालाओ,

तुम सब अथवा तुममें से अधिकांश बच्चे नोटबुकके पृष्ठो पर पत्र लिखते है, यह ठीक नही है। इसमे नुकसान है और यह कूहडपनकी निशानी है। लिखनेके लिए जो दूसरे कागज हों तुम्हे उनपर लिखना चाहिए।

प्रेमाबहन यदि मछली खाना चाहे तो उसे खानेकी अनुमति देनेमे भी अहिंसा-की दृष्टि निहित है। इसके बारेमे मैंने प्रेमाबहनको लिखे पत्र[1] मे ज्यादा विचार किया है। उसे वहाँ पढ जाना। प्रेमाबहनका मन यदि स्वतन्त्र भावसे सोचे तभी उसमे मछलीके प्रति अहिंसाके भावका स्फुरण हो सकता है। मैंने अपने सम्पर्कमे आनेवाले अनेक व्यक्तियोको लेकर इस बातका अनुभव किया है। इसको ध्यानमे रखते हुए और प्रेमाबहनको मैंने जो पत्र लिखा है उसे पढ़ लेनेके बाद भी यदि तुम्हारे मनमे कोई शंका रह गई हो तो मुझे फिर लिखना।

प्रार्थनामे जिसे अभी भी नीद आती हो उसे निस्सकोच भावसे खडा हो जाना चाहिए। बैठे-बैठे भी वह यदि एक-दो प्राणायाम कर ले तो उसकी नीद दूर हो जायेगी। क्योकि सोता हुआ व्यक्ति प्राणायाम नही कर सकता।

'मधपूडो'के[2] बारेमे यहाँसे लिखकर कुछ नही भेजा जा सकता। यह बात मै पहले ही लिख चुका हूँ।

बडे होने पर आश्रमके बालकोका सेवाका आदर्श क्या होगा, इसकी कल्पना मैंने अपने मनमे सँजो रखी है। उनका सेवा-क्षेत्र, यदि उन्हे ईश्वर पर विश्वास हुआ तो वही चुनेगा और इसकी शक्ति भी देगा कि जिस क्षेत्रमे उन्हे रखेगा वही वे शोभायमान हो सकेंगे। भक्तके योगक्षेत्रका दायित्व ईश्वर अपने ऊपर ले लेता है। ('गीता', ९/२२; १०/१०)। तुम लोगोका अक्षरज्ञान धीरे-धीरे, किन्तु बढ रहा है। जिसकी इसमे रुचि है वह इस ज्ञानमे और भी वृद्धि करेगा। जिस हदतक तुम मेहनत करोगे, प्रत्येक कामको सोच-समझकर करोगे, तुम्हारी बुद्धि उसी हदतक विकसित और तेजस्वी होगी। अक्षरज्ञान होनेके बावजूद व्यक्ति मूढ बना रह सकता है। यह बात यदि ठीकसे समझमे न आई हो तो मुझे फिर लिखना। इस समय जैसा चल रहा है उससे मनमे भी असन्तोष न रखना। इतना करना कि प्रत्येक कार्य जो तुम्हारे सुपुर्द हो उसे विवेकपूर्वक करना। पाखाना साफ

१. २३-६-१९३२ का।
२. आश्रमके बच्चों द्वारा प्रकाशित हस्तलिखित पत्रिका।

करनेमें भी बुद्धिकी बहुत आवश्यकता है। सो कैसे, अगर यह न जानते हो तो लिखना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

९६. पत्र : महेन्द्र वी० देसाईको

२४ जून, १९३२

चि० मनु[1],

तेरा पत्र मिला। तेरी लिखावट सुधर गई जान पड़ती है। वजन बढ़ानेके लिए खुली हवामें कसरत और दूध-घीवाली खुराक। तुझे दूध कितना मिलता है? छोटे पत्रमें यदि सब-कुछ समा जाये तो लम्बा पत्र लिखकर क्या करूँ?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७५९) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई

९७. पत्र : शारदा सी० शाहको

२४ जून, १९३२

चि० शारदा,

जो बात मोर पर लागू होती है वही हम मनुष्यों पर भी होती है।[2] रूपवान स्त्री-पुरुषको भी हम लोग मृत्युके पश्चात् देखना पसन्द नहीं करते और उन्हें तुरन्त जला डालते हैं। इसीसे शरीरके प्रति मोह नहीं करना चाहिए।

सहधर्मचारिणी[3] का मूल अर्थ तो वही है जो तूने किया है। लेकिन व्यवहारमें इसका प्रयोग पत्नीके लिए ही किया जाता है। विवाह होने पर बहन भाईके साथ नहीं रहती। 'चारिणी' शब्दमें जीवनपर्यन्त साथ रहनेकी गन्ध आती है। और फिर

१. वालजी गोविन्दजी देसाईका पुत्र।

२. शारदाने आश्रमके एक मोरकी मृत्युका जिक्र करते हुए अपने पत्रमें लिखा था कि जीवितावस्थामें वह जितना सुन्दर लगता था उतना ही मृत्युमें भयंकर दिखाई देता था।

३. शारदाने अपने पत्रमें यह जिज्ञासा प्रगट की थी कि कोई बहन अपने भाईकी सहधर्मचारिणी क्यों नहीं कही जा सकती जबकि वह फलकी आशा किये बिना समान धर्मका पालन करती हो?

शब्दका यह एक अर्थ रूढ़ हो गया है, इसलिए उसे बदलना मुश्किल है; जरूरत भी नही है। तू आरामसे अकेली रह रही है। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना।

बापू

[गुजरातीसे]

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५०) से; सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

९८. एक पत्र[1]

२४ जून, १९३२

चि० . . .,

तेरी लम्बी चिट्ठी मिली। किसीके शरीरमे भूत आदिके प्रवेश करनेकी बातको मै तो वहम ही मानता हूँ। करोड़ों व्यक्तियोको ऐसा कुछ नही होता। संसारमे सब जगह ऐसा देखनेमे नही आता। लेकिन ऐसा होता हो अथवा न होता हो, तो भी ईश्वर पर ही भरोसा करना। यही जंतर है, यही मंतर है; हमारे लिए तो यही सब-कुछ है। अतएव तू निरन्तर रामनाम जपा कर। तेरे भाग्यमे जो बदा है सो होगा। तू उसको सहन करनेकी शक्ति हासिल कर ले; बादमे जो होना है सो हो।

बापू

[गुजरातीसे]
भावनगर समाचार, १७-१२-१९५५

९९. अहिंसाका पालन कैसे किया जाये[2]

२५ जून, १९३२

साँपको मारना चाहिए अथवा नही? स्त्रीके साथ बलात्कार हो तब उस दुष्टकी हत्या की जानी चाहिए अथवा नही? खेतमे हल चलानेसे छोटे-मोटे जीव मर जाते है, यह जानने पर भी हल चलाना चाहिए अथवा नही? अहिंसाका उपासक ऐसी समस्याओको सुलझानेके चक्करमे नही पड़ता। इन समस्याओको जब सुलझना होगा तब अपने-आप सुलझ जायेगी। इस भूलभुलैयामें पड़ना अहिंसाको भूलने के समान है।

जिस व्यक्तिके मनमें अहिंसाका पालन करनेका उत्साह है उसे चाहिए कि वह अपने हृदयमे झाँके और अपने पड़ोसीकी ओर देखे। यदि उसके मनमे द्वेष भरा हो तो वह समझ ले कि वह अहिंसाकी प्रथम सीढ़ी ही नही चढ़ पाया है। और जो

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र प्राणजीवन मेहताके परिवारके एक सदस्यको लिखा गया था।
२. यह लेख "पत्र : नारणदास गांधीको", २२/२६-६-१९३२के साथ भेजा गया था।

अपने पड़ोसीके प्रति, साथीके प्रति अहिंसाका व्यवहार नही करता वह अहिंसासे हजारों योजन दूर है।

फलतः वह रोज रातको सोते समय अपने-आपसे पूछे: "आज मैंने अपने साथी का तिरस्कार किया; उसे खराब खादी देकर स्वयं अच्छी खादी ली; उसे कच्ची रोटी देकर मैंने अच्छी सिकी रोटी ली; अपने कामसे जी चुराकर अपने साथी पर बोझ डाला; आज पड़ोसी बीमार था उसकी तीमारदारीके लिए उसके पास नहीं गया; प्यासे राहगीरने मुझसे पानी माँगा, मैंने उसे नही दिया; मेहमानोंके आने पर मैंने उन्हें नमस्कार तक न किया; मजदूरोंको कटुवचन कहे, उनपर बिना विचार ज्यादा काम लादता गया, बैलोंको छड़ी मारता रहा; रसोईमे चावल कच्चे थे इससे रुष्ट हुआ।" इन सबमे भारी हिंसा है। इस तरह नित्यके व्यवहारमें यदि हम स्वाभाविक रूपसे अहिंसाधर्मका पालन नही करते तो अन्य चीजोके सम्बन्धमे पालन करने लायक नही बनते अथवा यदि अन्य चीजोके बारेमें हम अहिंसाका पालन करते हैं तो उसकी कीमत बहुत कम है अथवा कोई कीमत नही। अहिंसा प्रतिपल कार्य करनेवाली प्रचण्ड शक्ति है। उसकी कसौटी हमारे प्रतिक्षणके कार्यमे, प्रतिपलके विचारमे होती है। जो कौडीकी चिन्ता करेगा उसका रुपया भी सलामत रहेगा। लेकिन जिसे कौड़ीकी परवाह नही उसने कौड़ी तो खो ही दी, उसका रुपया भी कभी उसका नही रहा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१००. पत्र: नथुराम त्रिकमदासको

२५ जून, १९३२

भाई नथुराम,

मन्दिरों और चौपालोंका उपयोग तो प्रसिद्ध है। इनके द्वारा लोग एक स्थानपर इकट्ठे होते हैं, भजनादि करते हैं, सभाओंका आयोजन करते हैं, आदि-आदि। और इनकी स्थापना किये जानेका उद्देश्य भी यही था।

मूर्तिपूजाकी आवश्यकता है अथवा नही, यह प्रश्न ही नही उठता, क्योंकि वह अनादिकालसे चली आ रही है, और चलती रहेगी। प्रत्येक मनुष्य मूर्तिपूजक नही होता।

वैष्णव धर्मकी पूजाविधिमें परिवर्तन किया जाना अभीष्ट हो सकता है।

ईश्वर चूंकि सर्वव्यापक है इसीसे मूर्तिमें भी विद्यमान है। मूर्तिपूजाके नाशको मैं असम्भव मानता हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१०१. पत्र : भाऊ पानसेको

२५ जून, १९३२

चि० भाउ,

आधे घंटेमें १९८ तार निकालना, बहुत तेज रफ्तार कही जायेगी। यह दृश्य देखने लायक होगा।

सेवाके लिए सत्य, नम्रता, ब्रह्मचर्य, एकनिष्ठा आदिका होना तो आवश्यक ही है, लेकिन यदि प्रश्न उठे कि ऐसे व्यक्तिको कौनसे काम करने चाहिए तो उसका उत्तर देना मुश्किल है। जितना जानते हैं वह कम ही कहा जायेगा। नियम तो यही हो सकता है कि जो काम अपने जिम्मे आये उसमें तल्लीन हो जाना चाहिए अथवा हम जो क्षेत्र चुनें उसमें हमें निपुणता प्राप्त करनी चाहिए। इससे आगे जाना मुश्किल है। और यदि प्रश्न यह हो कि देशकी आजकी परिस्थितियोंको देखते हुए कौन-सी सेवा उत्तम होगी तो उसका उत्तर सरल है और वह दिया जा चुका है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७२८) से। सी० डब्ल्यू० ४४७१ से भी; सौजन्य: भाऊ पानसे

१०२. पत्र : निर्मलाबहन गांधीको[1]

२५ जून, १९३२

बाबू[2] के कानमें तेलकी बूंद डालती हो, उसमें यदि लहसुनकी कली डाल कर कड़कड़ा लो तो शायद ज्यादा फायदा देगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. रामदास गांधीकी पत्नी।

२. रामदास गांधीका पुत्र।

१०३. पत्र : लक्ष्मीनारायण गाडोदियाको

२५ जून, १९३२

भाई लक्ष्मीनारायणजी,

आपका पत्र पाकर मुझे वहोत आनन्द हुआ।

इस समय तो मुलाकात वंद है। रुकावट दूर होनेकी आशा कम है।

आप दोनों आनंदमें होंगे। आपका प्रेम वहोत वार याद आता है।

हम तीनों अच्छे रहते हैं। वाचनमे और कातनेमें समय व्यतीत होता है।

बापु

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६२३) से।

१०४. पत्र : नारणदास गांधीको

२२/२६ जून, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पुलिन्दा मिला। तुम्हारी खातावही मैं देख गया। मुझे लगता है कि यह पर्याप्त है। मात्र इसमें किस काममें कितने घंटे दिये गये, यह वात नहीं आती। इसका हिसाव रखनेका विचार तो है न? प्रत्येक व्यक्तिसे जो परचियाँ आयेंगी उनमें तो इसका उल्लेख अवश्य होगा। यदि तुम इन सवको एक जगह चिपका दोगे तो जिस समय हमें जो हिसाव निकालना हो वह हमें मिल जायेगा। एक ही व्यक्ति यदि यह सारा हिसाव रखेगा तो मुझे लगता है कि इसमें एक घंटा अवश्य जायेगा। सव-कुछ सरल हो जाये तो भी एक व्यक्ति वोले और दूसरा लिखे तो समय वचेगा और दोनोंको लगनेवाला समय भी कुल मिलाकर कम ही आयेगा, यह मैं समझ सकता हूँ। लेकिन जितना भी समय जाता है वह निरर्थक नही जाता, यह तो मैं तीन दिनोंके हिसाव पर से भी देख सकता हूँ। कतरनमें जिसके नौ घंटेसे कम समय हो वह यदि उसका कारण भी स्पष्ट करे तो अच्छा होगा। कतरनसे हमें सूचनाका बहुत भण्डार मिलेगा। इस वार इस सम्वन्धमें तो मैं इतना ही लिखूँगा।

गिरि परिवारके वारेमें मुझे ऐसा लगता है कि इसका वोझ हमारे परिवार पर अनायास ही आ पड़ा है। दलवहादुर गिरिका त्याग वहुत ही सुन्दर था। मरते

समय वे कृष्णमैयादेवीको आश्रममे जानेके लिए कह गये, उन्होने इतनी श्रद्धा रखी हम पर। उसका और कोई पोषण नही करता। वहाँकी कांग्रेसने कुछ नही किया, अथवा नही कर सकी। उसके लिए यदि मैं भिक्षा भी माँगता तो मुझे इतनी मिल जाती। लेकिन उसकी जरूरत नही जान पड़ी और फिर आश्रमकी स्थापना इस आधारपर की गई है कि यदि कोई व्यक्ति दिनमें नौ घंटे काम कर लेता है तो वह अपने खाने-पहनने लायक कमा लेता है। इससे यदि वह आश्रममे रहती है तो उसके लिए खास तौरसे माँगना नही पड़ेगा। हमारा कर्तव्य तो यह है कि वह जबतक आश्रममे रहती है तबतक ही उसका भरण-पोषण हम करें। लेकिन इतने वर्षोंके बाद उसने जानेकी इच्छा व्यक्त की। कृष्णमैयादेवी, महावीर, धर्मकुमार, ये सब बीमार तो थे ही, मैत्रीकी सेहत भी कुछ-कुछ खराब चल रही थी इसलिए उसकी इस इच्छामे कुछ वजन था। इस परिवारपर खर्च करते समय इसके गुण-दोषों पर विचार करना अप्रासंगिक और अनुचित होगा। यदि लोग ऐसे दोषयुक्त है तो वे आश्रममें न रहे, और न रह ही सकते है। यदि वे आश्रममे रहते है तो इसे हम भले ही आश्रमवासियोंकी सहनशीलता माने, लेकिन उनकी सहनशीलता भी कम नही है। हमें ऐसे अनेक लोग मिलेंगे जो भूखे मर जाना पसन्द करेंगे, लेकिन आश्रमके कठोर जीवनको सहन नही कर सकेंगे। लेकिन इस परिवारने भिन्न भाषा, भिन्न रहन-सहन, मासाहारका निषेध, उसकी दृष्टिमें परदेश, यह सब सहन किया। मुझे लगता है कि हम यह सब भुला नही सकते। तात्पर्य यह कि कृष्णमैयादेवीका जाना उचित ही था। और यदि यह उचित है तो हमे उसका खर्च उठाना चाहिए। दार्जिलिंगमें यदि वह अलग मकान लेती तो प्रति व्यक्ति १५ रुपया खर्च अवश्य आता। चूंकि वे लोग अपने चाचाके साथ रहते हैं इसलिए उनके चाचा इसमेसे अवश्य कुछ बचा लेते होगे। लेकिन यदि वह आग्रहपूर्वक मुझसे कहें कि नही बचा सकते तो मै उनकी बातको अवश्य सच मान लूँगा। इन लोगोंके लिए वह [चाचा] कुछ-न-कुछ अतिरिक्त खर्च भी करते ही होंगे। मैंने हिसाब और दिनचर्या माँगी थी। हिसाबके बारेमे उसने लिखा था कि चूंकि वह चाचाके साथ रहती है इसलिए वह प्रति व्यक्तिके हिसाबसे उन्हें इतना पैसा-भर देती है। और इनके साथ रहकर अलगसे हिसाब नही रखा जा सकता, यह बात समझमे आती है। छोटे-मोटे खर्चके लिए कुछ पास रखती होगी, इसके बारेमे मैंने कुछ नही पूछा। मेरा खयाल था कि तुम्हें उसके ब्यौरेवार पत्र आते होगे। मुझे जो हालमे पत्र मिला है वह २०-२५ दिनों बाद आया है और सो भी उसमे पैसा न मिलनेकी शिकायत-भर लिखी है। मैंने दिनचर्या माँगी थी लेकिन वह तो मुझे अभी तक नही मिली है। वह रखती है, अथवा नहीं, भेजती है अथवा नही, अभी तो हमे पैसा देना ही चाहिए। वह दार्जिलिंगमें रहती है। इसमें उसकी भी कसौटी हो जायेगी। जहाँतक रहनेकी बात आती है मुझे लगता है कि वह वहाँ दो-तीन महीनेसे ज्यादा नही रहना चाहेगी। और इस बारेमें मैंने अपने मनमे भी कोई निश्चित अवधि नियत नही की है। मेरी इच्छा तो केवल यही है कि वह जी भर कर वहाँ रह। उसकी वहाँ स्थायी रूपसे बस जानेकी भी इच्छा हो सकती है और

मैंने इस बारेमें उससे पूछा भी था। उसका तो महावीरने तड़ाकसे उत्तर दिया था, "हम तो आश्रमके ही अंग हैं। और वही हमें रहना भी है; यहाँ हम कोई धन्धा करनेके लिए नही आये है। आप कहें तो आज ही लौट आयें। बात सिर्फ इतनी ही है कि बहुत दिनोंके बाद यहाँ आना हुआ है और तबीयत भी कुछ सुधर गई है, इसीसे थोड़ा समय और रहनेका मन होता है। मुझे अपनी जिम्मेवारीका पूरा-पूरा ध्यान है। हम ऐसा कोई काम नही करेंगे जिससे आश्रमकी बदनामी हो।" यह उसके पत्रका भावार्थ था। अबसे यदि उसके इस तरहके पत्र और आयेंगे तो साव-धानीपूर्वक उन्हे तुम्हे भेज दूंगा। विवाहके सम्बन्धमे मैत्रीका पत्र भी बिल्कुल खरा और स्पष्ट था, "अभी आपने मुझसे ऐसा प्रश्न पूछा ही क्यो कर? ऐसे समय विवाह का प्रश्न ही कहाँ उठता है? मुझे तनिक भी इच्छा नही है, और अगर हुई भी तो आप ही को मेरा विवाह करना होगा?"[1] अन्तमें, जबतक हम राधापर होनेवाला १०० रुपयेके खर्चका भार वहन करते हैं तबतक हमें इन ९० रुपयोके खर्चका भार भी वहन करना चाहिए। राधा आश्रमके प्राणरूप मगनलालकी पुत्री है, यह विचार यहाँ नही किया जा सकता। यदि हम इस तरह विचार करने बैठेंगे तो भेद-भावके कुएँमें डूब जायेंगे अथवा इसका विचार करते हैं तो बेहतर यह होगा कि हम राधासे और सहनशीलताकी अपेक्षा रखें। लेकिन राधासे अथवा सन्तोक[2] से इस तरह सहन करनेको कहनेकी मेरी हिम्मत नही होती। माँ-बेटी जिस बातमें अपना कर्तव्य मानती हैं सो कर रही हैं — इस विचारसे ही मैं अपने मनको सन्तोष देता हूँ। मेरे इस दृष्टिकोणमे यदि तुम्हें कहने लायक कोई बात दिखाई दे तो तुम मजेसे कह डालना। तुम यह सब अच्छी तरहसे समझ सको, इसीलिए इतने विस्तारसे लिखा है।

इसी जगह मैं दूधीबहन[3] और नीमूके बारेमें भी लिखे डालता हूँ। दूधीबहन तो अपना खाना खुद बना लेती होगी; यदि ऐसा है तो वह सब खर्च कर डालती होगी। वालजीका रहन-सहन अत्यन्त सादा है। बीमार आदि पड़नेपर भी किसीको कोई तकलीफ नही देते — ऐसे वातावरणमें दूधीबहन रही है। इसलिए उसे कुछ भी कहनेकी मेरी इच्छा नही होती। नीमूका मामला भिन्न है और उससे तुम पूछ भी सकते हो। तुम चाहो तो मैं भी लिखूँ। लेकिन यदि यहाँसे लिखता हूँ तो उसे कदाचित् आघात पहुँचेगा। रामदास सादगीके साथ रहनेके मन्सूबे तो बहुत बाँधता है लेकिन उसका भरण-पोषण दक्षिण आफ्रिकामे हुआ है, मुक्तभावसे खर्च किया है, उसमें कितनी सादगी हो सकती है! और फिर नीमू बच्ची ठहरी, माता-पिताके यहाँ भी खुले हाथ खर्च करती रही है, वह अवश्य अपेक्षाकृत ज्यादा खर्च लेती होगी। महादेवका कहना है कि वह संयुक्त रसोईमें खाती है, इसका अर्थ तो इतना ही हुआ कि वह मात्र छः-सात रुपयेका खाना खाती है — दूध-दहीके पैसे वह इन साठ रुपयोमें से देती होगी। दो बच्चोंका भोजन तो रसोईमें से नही निकलता, उनके

१. इस विषयपर गांधीजीके उत्तरके लिए देखिए "पत्र: मैत्री गिरिको", १४-६-१९३२।

२. मगनलाल गांधीकी विधवा।

३. वालजी गोविन्दजी देसाईकी पत्नी।

दूध-दहीका खर्च भी वह उन ६० रुपयोंमें से निकालती होगी। यदि यह बात है तो ६० रुपयेकी रकम कोई बहुत चौंकानेवाली रकम नही है। लेकिन इसका निर्णय तो वही कर सकता है जिसे इस बातकी जानकारी हो कि यह साठ रुपया किस तरह खर्च किया जाता है। और यह तुम जान लेना।

यह पत्र इतनेपर ही अधूरा रह गया था और मैं खाने आदिके कार्यमे लग गया था। इतनेमें तुम्हारा दूसरा पत्र मिला। उसमे मैंने विभिन्न कार्योंके घंटोका जो हिसाब पूछा था उसका उत्तर मिल गया। इससे मुझे बहुत सारी चीजे स्पष्ट हो जाती हैं। "प्रयोग" नामक शीर्षकसे जो टिप्पणी लिखी मिलती है उसमे कदाचित् केशूके प्रयोग होगे। मैं देखता हूँ कि यज्ञमे सबसे ज्यादा घंटे हैं जो बहुत शोभनीय बात है और इससे यह प्रकट होता है कि जहाँ सब व्यक्ति एक ही काम करते हो वहाँ सबसे ज्यादा समय उसीको मिला होगा और फिर भी वह कार्य किसीके लिए कष्टकर न होगा। तात्पर्य यह कि यदि सब कोई अपना जीवन यज्ञकी दृष्टिसे व्यतीत करेंगे तो समस्त जीवन सरल हो उठेगा। सामूहिक यज्ञके इस महत्त्वको मैं अपने अन्तर्मनमे समझता तो अवश्य था, लेकिन किसी दिन आँकड़े निकाल कर मैंने उसे देखा नही था।

दफ्तरका काम छठी अँगुलीके समान है। अभी तो अगर यह छठी अँगुली न हो तो सब काम अटक जायेगा। लेकिन जहाँ सब लोग मन, वचन और कर्मसे सत्यका पालन करनेवाले हो वहाँ दफ्तरकी जरूरत ही नही होती और अगर होती भी है तो इसमे कमसे-कम समय लगता है।

१४वें खानेमे "बीमार" लिखा है और २०वेंमे "बीमारकी सेवा" है। "बीमार" का क्या अर्थ है? शारदा अब किसके साथ रहती है? तात्पर्य यह कि उसकी विशेष जिम्मेदारी किस पर है?

यज्ञ बाहरके दालानमें होता है यह तो उत्तम है और यह निभ रहा है, यह बहुत अच्छी बात है। इससे लोगोको अच्छी आदते पड़ जायेंगी, इस बारेमे मुझे तनिक भी सन्देह नही है। तुम दो घंटे दे सकते हो, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगती है और मैं यह भी अच्छी तरहसे समझता हूँ कि तुम्हारे लिए तो यह आराम है। जिस तरह प्रार्थना मनुष्यके लिए विश्राम-स्वरूप होती है उसी तरह यह यज्ञ-कार्य भी है। जिसे यह बोझरूप जान पड़ेगी वही व्यक्ति इससे निकलनेके लिए छटपटायेगा अथवा जैसे-तैसे इसे पूरा करेगा। यज्ञका एक घंटा निश्चित करनेका सुझाव देनेके पीछे मेरे मनमें केवल एक ही विचार था कि तुम अन्य कार्योंको भी इतनी कठोरतासे करो और सोनेको भी कम समय मिले तो इस हालतमे यज्ञको विश्राम नही कहा जा सकता। लेकिन तुम शान्तिका उपभोग कर रहे हो और तुम्हे यह भाररूप भी नहीं जान पड़ता, इसलिए मेरे कुछ कहनेकी जरूरत नही है।

भाऊका सुझाव है कि जिस तरह वर्धामे यज्ञका सूत तकलीसे काता जाता है उसी तरह साबरमतीमे भी काता जाना चाहिए। उसे मैंने लिखा था कि मैं तुम्हे यह बात लिखूंगा, लेकिन पिछले पत्रमे लिखना भूल गया। इस बारेमे मैं निरपेक्ष

हूँ। मैंने इसके गुणदोषका विश्लेषण नही किया है। लेकिन तुम भाऊकी पूरी बात सुनना और सुननेके बाद जो ठीक लगे सो करना।

हाथकी हालत खराब नही है लेकिन उसमे सुधार हुआ है, ऐसा भी नही कहा जा सकता। आज फिर हार कर दूध लिया है। इस बारेमें मैंने मीराबहनको विस्तारसे पत्र[1] लिखा है। वह पत्र उसे इस पत्रसे पूर्व मिल जायेगा। वह तुम्हे तो अवश्य मिलेगा, इसलिए यहाँ ज्यादा नही लिखता। अलोना भोजन ग्यारह दिन तक चला। इसका परिणाम अच्छा ही निकला, ऐसा तो नही कहा जा सकता, दूध लेनेसे यह बात स्पष्ट हो जाती है। लेकिन जो कुपरिणाम निकला उसका कारण नमक न लेना था, यह भी नही कहा जा सकता। मै तो अन्य अनेक कारण देख सकता हूँ, लेकिन जिन प्रयोगोमे जरा भी जोखिम हो वे यहाँ नही किये जा सकते। हमारे ऐसा करनेसे अधिकारियोकी स्थिति भी विषम हो जाती है, क्योकि इस सम्बन्धमे वे मुझ पर कुछ अंकुश भी नही रखना चाहते और विपरीत परिणाम निकलनेपर वे धर्मसंकटमे भी पड़ जाते हैं। इसी कारण मैंने आज दूध लिया और कल रोटी लूंगा। तात्पर्य यह कि अलोना व्रत टूट गया। लेकिन अलोनाके प्रभावको यदि कोई आजमाना चाहे तो अवश्य आजमा सकता है। अलोनी सब्जी मेरे लिए तो रेचक सिद्ध हुई है इसलिए जिन लोगोको कब्ज रहती हो उनके लिए अलोना भोजन कदाचित उपयोगी सिद्ध हो। दक्षिण आफ्रिकामे तो यह आहार लिया ही जाता था। सयमकी दृष्टिसे भी अलोना भोजन बहुत अच्छा होता है, इस बारेमें तो तनिक भी शंका नही होनी चाहिए। पारनेरकरका उद्देश्य तो निश्चय ही पूरा नही हुआ। वह अब कुछ शान्त है अथवा नही?

सावित्रीबहनका जो पत्र मैंने तुम्हें भेजा था क्या वह तुमने भेज दिया है?

मुस्लिम भजन अमुक दिवसपर ही गाना चाहिए, इसका विरोध महादेवने तो किया ही था, अब छगनलालका भी आया है। तर्क यह है कि 'भजनावली' में मुस्लिम भजन है ही और यदि वे समय-समय पर गाये जाते हैं तो यह पर्याप्त होगा। अमुक दिवसपर एक ही भजन गाया जाना उचित नही है, यह दलील मेरी समझमें आती है। लेकिन मुझे मन ही मन लगा करता है कि यदि एक दिन खास मुस्लिम भजन गाया जाये तो इसमें बहुत तथ्य निहित है। अमुक कार्यको इच्छा होनेपर किसी-किसी दिन करनेमे और उसके लिए निश्चित किसी एक दिन करनेमे बहुत फर्क है। हम नित्य अमुक श्लोकोंका पाठ क्यों करते हैं?- जिस भावनासे प्रेरित होकर हम उन श्लोकोका पाठ करते हैं, मुस्लिम भजन एक निश्चित दिन गाये जानेके पीछे भी वही भावना है। इसके द्वारा हम मुसलमानोके साथ ऐक्य स्थापित करेंगे। यह भावना मुझे तो एकदम त्याज्य नही जान पड़ती। अब तुम सबको वहाँ जैसा ठीक लगे वैसा करना। मैंने तो तुमसे अपने मनकी बात कह दी है लेकिन मुझे कोई आग्रह नही है; और यदि तुम्हे मेरी यह बात पसन्द आये तो "है बहारे बाग"[2] निश्चय ही

१. २२-६-१९३२ को।
२. देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ४४७।

उत्तम भजन है क्योंकि यह मगनलालको प्रिय था; इतना ही नही, वरन् यह ठीक दक्षिण आफ्रिकासे आया है। यह एक अत्यन्त निर्मल-हृदय मुसलमान नवयुवकके सुझाव पर दक्षिण आफ्रिकामे शामिल किया गया था।[1] यह नवयुवक अब नही रहा। इस तरह इस भजनके पीछे तो अनेक बातोंका समावेश है। यह भजन उस नवयुवकको इतना ज्यादा प्रिय था कि "याद कर तू ऐ नजीर कब्रोके रोज" मे वह नजीरके स्थानपर अपना नाम 'हुसन' गाया करता था। वह फीनिक्समें अनेक बार आया-जाया करता था। मेरे लिए तो वह बेटेके समान ही था और यह भजन एक बार नही, अनेक बार फीनिक्समे गाया जाता था। उस नवयुवकको पियानो बजाना भी आता था और कई बार वह पियानोपर अकेला ही इसे सुनाता था। इसलिए इस भजनकी पसन्दगी तो उत्तम ही है। साथ ही इसका मर्म भी बहुत सुन्दर है।

फादर एल्विनकी देखभाल बराबर की जाती है न? उनकी तबीयत बहुत नाजुक रहती है इसीसे यह विचार मनमें आ जाता है। आलूविहारीको सूटकेसके बारेमें लिखनेकी कोई जरूरत नही। वह जब चाहेंगे तब उसे भेजेंगे। मेरे पास उनका पता मौजूद था, लेकिन मैंने उसे सँभालकर नहीं रखा।

पुरातन भावनगरमे है। "दक्षिणामूर्ति"के पतेपर इस तक पहुँचना सम्भव है।

आश्रमके लिफाफेके एक कोनेमे जो लिखा है उसकी ओर वल्लभभाई मेरा ध्यान आकर्षित करते हैं। वहाँ लिखा है "सत्याग्रहाश्रम, उद्योग मन्दिर, साबरमती"। 'सत्य' और 'उद्योग,' दोनो किसलिए। जब मैं इसे पढ़ने बैठा तब मेरा ध्यान नीचे अंग्रेजीमे 'बी० बी० सी० आई०' की ओर गया। यह अंग्रेजीमे क्यो है? और इसकी जरूरत भी क्या है? लेकिन यदि हो भी तो हम हिन्दीमें 'बी० बी० सी० आई० रेलवे' क्यों नही लिख सकते? फिलहाल तो हमारे पास जितने लिफाफे हैं उनके लिए यह टीका व्यर्थ है, लेकिन भविष्यमे इसका ध्यान रखना।

२४ जून, १९३२

दूध बाहर देनेके लिए जाते समय जो कठिनाई होती है, उसका नारायणप्पाने जिक्र किया है। इस विषयपर मैंने उसको पत्र लिखा है कि वह इस प्रश्नकी चर्चा तुम्हारे साथ करे। वह पत्र देख जाना।

२६ जून, १९३२

यदि कोई व्यक्ति स्वयं काता हुआ सूत अपने लिए नही बुनवा सकता तो खादी महँगी पड़ेगी, आदि-आदि प्रश्न पूछे गये है। इन प्रश्नोंके उत्तरमे मै केवल यही कहना चाहूँगा :

१. उत्तम तो यही है कि हम जितना सूत कातें वह सारा-का-सारा सूत आश्रमको दे दे और आश्रममे जो खादी प्राप्य हो उसमेंसे जो जिसके हिस्सेमे आये उसीसे सन्तोष माने।

२. जो लोग ऐसा करनेके लिए तैयार न हों वे यज्ञके समय काता गया सूत आश्रमको दे। इसके उपरान्त जो सूत काता हो उसे यदि वे अपने पास रखना चाहे तो भले रखे।

१ देखिए खण्ड १२, पृष्ठ २२४-७।

३. जो खादी आश्रमवासियोंको दी जाये उसके कमसे-कम जितने दाम लिये जा सकें सो लें।

४. आश्रममें ऐसी खादी तैयार रखी जाये जो सबको अनुकूल पड़े।

५. आश्रममें कते अच्छेसे-अच्छे सूतकी बुनी खादी तो बाहर जानी ही चाहिए।

६. आश्रमवासी जितनी मोटी खादीसे अपना काम चला सकें, चलायें और उसीमें प्रसन्न रहे। इसके पीछे यह भावना निहित है कि वह केवल शरीर-रक्षाके लिए ही वस्त्र पहनते हैं। इस तरह हम सबसे घटिया किस्मकी और कमसे-कम खादी पहनेंगे।

७. इस तरह काता हुआ सारा सूत यज्ञार्थ अर्पित कर देनेसे यदि अच्छा सूत कातनेका उत्साह भंग होनेका भय हो तो हमें वह जोखिम उठानी चाहिए। क्योंकि इसका अर्थ यह होगा कि याज्ञिक यज्ञके लिए जो सूत कातते हैं वह गोया बेगार है। यह एक भयंकर बात होगी, जबकि धर्म यह कहता है कि अपने लिए हम भले ही कैसा भी क्यों न खाना बनायें अथवा सूत कातें, लेकिन परोपकारार्थ काता गया सूत अथवा पकाया गया खाना उत्तमोत्तम होना चाहिए। जो ऐसा नहीं करते वे वस्तुतः यज्ञ करते ही नहीं, वे तो सचमुच बेगार ही कातते हैं। उनका यज्ञ व्यर्थ होता है और यह उनके दम्भका परिचायक है। अतएव यज्ञार्थ काता गया सूत पहलेकी अपेक्षा अधिक उम्दा न हो अथवा कमसे-कम पहले जैसा ही न हो तो हम कसौटीपर खरे नहीं उतरेंगे।

यह सब समझ लेनेके बाद हर किसीको अपनी राय व्यक्त करनी चाहिए और अपनी इच्छानुसार आचरण करना चाहिए। धर्म तो मैंने जो बताया है, वही है, इसके बारेमें सन्देहकी कोई गुंजाइश नहीं है। इसे जान लेनेके बाद उसका पालन करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। लेकिन तिसपर भी यदि कोई व्यक्ति उसके अनुरूप आचरण नहीं करता, क्योंकि आज तक वह इसके विपरीत चलता रहा है, तो वह जैसा चाहे वैसा करनेके लिए स्वतन्त्र है। मैं तुम्हारे लिए नई मुश्किलें पैदा करना नहीं चाहता। मुझे लगता है कि मेरी ओरसे समझानेके लिए अब कुछ बाकी नहीं रह जाता।

मेरा हाथ ठीक ही है। दूध, रोटी चालू हैं। उनके प्रभावके बारेमें अभी कुछ नहीं कहा जा सकता। चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं।

ये पत्र तो गाजरकी पोंगीके समान हैं, यह बात तो तुम समझ ही गये होगे। मुलाकातकी ही तरह ये भी जब चाहे तब बन्द हो जायें तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। हमें इसके लिए भी निश्चित मनसे तैयार रहना चाहिए। अभी तो ऐसी कोई बात नहीं है, लेकिन कब ऐसी स्थिति आ पड़े, सो नहीं कहा जा सकता।

इस बार तो मैंने खूब लम्बा पत्र लिखा है।

बापू[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२३५ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. इस पत्रके साथ भेजे गये "अहिंसा का पालन कैसे किया जाये" नामक लेखके लिए देखिए पृष्ठ ९३।

१०५. पत्र : कृष्णाबहन माधवदास कापड़ियाको

२८ जून, १९३२

चि० कृष्णा,

तुम्हारा तथा माधवदासका पत्र मिला। तुम्हारी तबीयत अब अच्छी रहती होगी। आजकल माधवदासकी आर्थिक स्थिति कैसी है, जरा यह भी लिखा होता तो अच्छा होता। अब लिखना। मैं अपने हाथको अभी आराम ही देता हूँ। चिन्ता करनेका कोई कारण नही है। मणिलाल, सुशीला और सीता तीनों नेटालके जहरी बुखारकी चपेटमें आ गये थे, सो तो तुम्हें मालूम ही होगा। लेकिन उनका जो पत्र था ठीक होनेके बादका था, अतः अब तो वे सब बिल्कुल ठीक हो गये होंगे। रामदास ठीक है, ऐसे समाचार मिलते रहते हैं।

माधवदास व्यग्र-चित्त क्यों रहते हैं? धन तो आज है और कल नहीं। उसका तनिक भी हर्ष-शोक नहीं करना चाहिए। गरीब होनेमें और रहनेमें कोई शरम नही होनी चाहिए। वस्तुतः देखा जाये तो मनुष्यकी सामान्य स्थिति यही है। धनवान तो इस जगतमें बहुत कम लोग होते हैं।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत माधवदास गोकलदास कापड़िया
मनोरदास स्ट्रीट
फोर्ट, बम्बई

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

१०६. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२८ जून, १९३२

भाईश्री खम्भाता,

आपका पत्र मिला। दवाकी बोतल आनेकी खबर मुझे दी गई है, लेकिन मुझे इसका उपयोग करने देनेमें मेजर भण्डारी संकोच कर रहे हैं। उनका कहना है कि यह तो ब्रिटिश फार्माकोपियाका 'कैम्फर लिनिमेंट' है और इसकी गन्ध बहुत तीव्र है, यह कदाचित चमड़ीको नुकसान पहुँचाये। कोई नुकसान हो जाये तो जिम्मेवारी उनकी होगी, इसलिए यदि उन्हें मालूम हो जाये कि इसमें कौन-सी दवा किस परिमाणमें डाली गई है और यदि उन्हें परिमाण अपेक्षाकृत कम जान पड़े तो वह उसका उपयोग करने दे सकते हैं। चूंकि परिस्थिति यह है इसलिए यदि आप स्वयं ही इस

तेलको तैयार करते हैं तो आप उन्हें परिमाण लिख भेजें और इसके उपयोगके सम्बन्धमे अपना अनुभव भी उन्हें लिखें तो सम्भव है वह इसका उपयोग करने दें। मैंने तो इस्तेमाल करने देनेका आग्रह किया था, लेकिन उनकी जवाबदेहीकी बात आनेपर मैं चुप रह गया। हाथके दर्दमे कोई वृद्धि नही हुई है। आराम तो उसे पूरा मिलता ही है।

आप दोनोंको बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५५०) से। सी० डब्ल्यू० ५०२५ से भी; सौजन्य: तहमीना खम्भाता

१०७. पत्र: रेहाना तैयबजीको

२८ जून, १९३२

चिरंजीवी रेहाना,

तुम्हारा लम्बा खत मिला है। गजल बहुत अच्छी है। दोबारा पढ़नेके लिए मैंने तुम्हारे सब खत रखे हैं। उसमेंसे एक डिक्शनरी बनाना चाहता हूं। ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूटमे तुमको जो काम मिल गया है वह तो बहुत अच्छा है। अब तो रेहाना स्कालर कहलायेगी। अब आसमानमें उड़ेगी और हम सब देखते रहेंगे। पशाभाईसे कहो हम सबको उनके दुखसे दुख हुआ। अब तो लड़की अच्छी हो गई होगी। सरदार, और काका, अमीर अलीकी किताब खूब दिलचस्पीसे पढ़ रहे हैं। अब्बाजान और अम्माजानसे हम सबकी तरफसे बहुत आदाब और बन्देमातरम।[1]

पुरोहित भाई अब अच्छे होंगे। सरदारकी तरफसे खबर पूछो। डा० सुमंत वजन बढ़ा रहे हैं। यह खबर शारदाबहनने भी दी थी।[2]

आज अब और ज्यादा गुजराती नही लिखूंगा। बहुत कुछ तो ऊपर आ ही गया है। हमीदाके पत्रकी राह देख रहा हूँ। सरदार और महादेवके यथायोग्य बन्देमातरम् आदि आदि।

बापूके आशीर्वाद और चपत

उर्दू/गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४६) से।

१ और २. ये अनुच्छेद उर्दूमें हैं।

१०८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको[1]

२८ जून, १९३२

भाई घनश्यामदास,

मुझे खद्दर मिल गया, लेकिन कोई चिट्ठी नही मिली है। कृपया बहनजीसे कह दीजिएगा कि मै इस खद्दरका बहुत प्रेमसे उपयोग करूँगा। पिछला पत्र लिखनेके बादसे[2] मै अर्थशास्त्रकी पुस्तके पढ़ता रहा हूँ। मैंने तुम्हारी दो पुस्तिकाएँ पढ़ी। मै (विषयको) पहलेसे ज्यादा ठीक समझ सकता हूँ। लेकिन अभी सब चीजोकी तस्वीर मेरे सामने नही आती। लेकिन मै बराबर कोशिश कर रहा हूँ और आशा है कि विषयका मुझे पर्याप्त परिचय हो जायेगा। अभी तक मै बैंकिंग और एक्सचेंज पर (प्रोफेसर) शाहकी किताब पढता रहा हूँ। इस सम्बन्धमे जो भी पढ़ने लायक किताबे हों वे भेज दी जाये। हर्शेल कमेटी, फाउलर कमेटी, बेबिंगटन स्मिथ, चैम्बरलेन और हिल्टन यग कमेटियोकी रिपोर्टें पुस्तक रूपमे प्रकाशित की जाये तो बहुत अच्छा होगा। यदि वे पुस्तक रूपमे छपी हुई न हो तो जैसी मिलती हो वैसी ही भेजी जा सकती है। विसम्मत टिप्पणियाँ भी उनके साथ होनी चाहिए। आपके ध्यानमे जो पुस्तके है उनके अलावा ये रिपोर्टें भी मै खुद चाहता हूँ। हमारे विशेषज्ञोने जो पुस्तकें लिखी है, यदि आप उन्हे भी भेज दे तो, मेरी इस विषयकी जानकारी पर्याप्त हो जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग १, पृष्ठ ३१९।

१. बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्ससे उद्धृत यह पत्र तथा कुछ और पत्र मूल हिन्दी या गुजराती पत्रोंकि सरकारी अनुवाद है। मूल पत्र उपलब्ध नहीं है।

२. देखिए "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको," ७-६-१९३२।

१०९. पत्र : मीराबहनको

२९ जून, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र अभी-अभी पहुँचा। उस पत्रका उद्देश्य दामोदरदास और उसकी पत्नीको लिखे मेरे दो पत्र तुम्हें सौपना है। इन पत्रोंसे शायद उन्हे सान्त्वना मिले।

मैं अच्छा हूँ। दूध, डबलरोटी और फल चल रहे है।

शेष फिर।

सप्रेम,

बा

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२७) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९३ से भी।

११०. पत्र : कन्हैयालालको[1]

२९ जून, १९३२

भाई कन्हैयालाल,

(१) जो "मैं" में विश्वास रखता है।
(२) रागद्वेष आदिसे मुक्त होना।
(३) असत्य
(४) अहिंसा
(५) रागद्वेषादिका सर्वथा अभाव
(६) असत्याचरण
(७) अहिंसा।

बापू

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ६५से भी।

१. कन्हैयालालने निम्नलिखित प्रश्न पूछे थे: (१) बन्धनयुक्त कौन है? (२) मुक्ति क्या है? (३) नरकसे क्या अभिप्राय है? (४) मुक्ति प्राप्त करनेके लिए कौन-सी वस्तु है? (५) मुक्त दशा कौन-सी है? (६) नरकका मुख्य द्वारा कौन-सा है? सातवाँ प्रश्न महादेव देसाईको याद नहीं रहा।

१११. पत्र : देवदास गांधीको

२९ जून, १९३२

हम सब बहुत धैर्यवान हैं, इसलिए [सफलता-प्राप्तिमें] यदि दो-चार वर्ष चले जाते हैं तो कोई परवाह नहीं। हम उसे ब्याज समेत वसूल कर लेंगे।[1] . . .

अमेरिकाके लेखकोंके बारेमें राजाजीको कुछ भ्रम हो गया है।[2] हार्डीका साहित्य मैंने पढ़ा नहीं है। जोलाका भी नही पढा। इसका मुझे हमेशा दुख रहा है। मगर सिंक्लेयरका बिल्कुल तिरस्कार नही किया जा सकता। प्रचारकी दृष्टिसे लिखे हुए उपन्यासोंमे प्रचारका ही दोष मानकर उन्हें हरगिज हलका नही बताया जा सकता। प्रचारकके लिए तो उसकी सारी कला उसीमें चली जाती है। अपने उद्देश्यको वह छिपाता नहीं। और फिर भी कहानीमें रसको आँच नही आने देता। 'अंकिल टॉम्स केबिन' (टॉम काकाकी कुटिया) साफ तौरपर प्रचारके लिए लिखी गई चीज है। मगर उसकी कलाकी बराबरी कौन कर सकता है? सिंक्लेयर एक जबरदस्त सुधारक है और सुधारके प्रचारके लिए उसने अलग-अलग उपन्यास लिखे हैं, और यह कहा जाता है कि वे सब रससे परिपूर्ण हैं। समय मिला तो मैं उन्हें पढ़ूंगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

११२. पत्र : सुमंगल प्रकाशको

२९ जून, १९३२

प्रिय सुमंगल,

तुम्हारा पत्र मिला। बलात्कारके सम्बन्धमें तुम्हारी दलील उचित जान पड़ती है। जिन परिस्थितियोंमें तुमने आत्महत्या करना स्त्रीका धर्म माना है, वैसी ही परिस्थितियोंमें अपने संरक्षणमें निहित सम्पत्तिको यदि कोई लूटनेके लिए आता है तब आत्महत्या करना संरक्षकका धर्म हो सकता है। लेकिन इसकी प्रतीति हर किसीको स्वयमेव होनी चाहिए। यदि कोई स्त्री बलात्कारको रोकनेके लिए आत्महत्या करना पसन्द नही करती तो उसने कोई अधर्म किया है, ऐसा कहनेका तुम्हें या मुझे अधिकार नहीं है। इसके विपरीत यदि कोई संरक्षक अपने संरक्षणमें निहित सम्पत्तिकी

१. ये वाक्य सैमुअल होरके उस भाषणके सम्बन्धमें कहे गये थे जिसमें उन्होंने कहा था कि जबतक कांग्रेस सरकारको चुनौती देना बन्द नहीं करेगी तबतक उसके साथ कोई शान्ति-वार्ता नहीं हो सकती।

२. अमेरिकी लेखक अप्टन सिंक्लेयर लिखित द वेट परेड पढ़नेके बाद राजाजीने देवदासके सम्मुख अपने विचार व्यक्त किये थे।

रक्षामे अपने प्राणोंकी बलि देता है तो उसने धर्मका आचरण किया है, ऐसा मान लेनेका भी तुम्हें अथवा मुझे कोई अधिकार नहीं है। यह तो उस समय मनुष्यकी मनोभावना कैसी थी उसको जाननेके बाद ही कहा जा सकता है। इस तरह न्यायकी दृष्टिसे अपना मत व्यक्त करनेके बावजूद मेरी मान्यता यह है कि यदि स्त्रीमे साहस हुआ तो वह अपने साथ किये जानेवाले बलात्कारको रोकनेके लिए अवश्य ही प्राण-त्याग करनेके लिए तैयार रहेगी। इसीसे स्त्रियोके साथ बातचीत करते हुए मैं प्राण-त्यागकी बातको अवश्य प्रोत्साहन दूंगा और उन्हें समझाऊँगा कि यदि इच्छा हो तो प्राणत्याग करना सहल कार्य है। क्योंकि अनेक स्त्रियोंकी यह मान्यता है कि यदि उनकी रक्षा करनेके लिए कोई अन्य पुरुष न हो अथवा वे स्वयं कटारी अथवा बन्दूक इत्यादिको चलाना नहीं सीखती तो उन्हें अत्याचारीके अत्याचारका शिकार होना ही पड़ेगा। ऐसी स्त्रीसे मैं अवश्य यह कहना चाहूँगा कि उसे दूसरोके अस्त्रोपर निर्भर रहनेकी कोई जरूरत नहीं है। उसका अपना शील ही उसकी रक्षा करेगा। लेकिन यदि यह सम्भव न हो तो कटारी आदिका उपयोग करनेके बदले वह आत्महत्या कर सकती है। स्वयंको दुर्बल अथवा अबला मान लेनेकी कोई जरूरत नहीं।

अब काल्पनिक प्रश्नोंके विषयमें। तुम्हारा इन प्रश्नोंको पूछनेमें क्या उद्देश्य है, इसके बारेमें तुमने जैसा लिखा है वैसा ही मैं समझा भी हूँ और ऐसे प्रश्नोको मैं काल्पनिक कहता हूँ। बेशक ऐसे कोई-कोई प्रश्न पूछे ही जा सकते हैं। लेकिन यदि काल्पनिक प्रश्न बिल्कुल ही न पूछे जाये तो यह ज्यादा अच्छा होगा। ऐसे प्रश्नोकी आदत कभी नहीं डालनी चाहिए। जिसे ऐसी आदत पड़ जाती है वह व्यक्ति ठीक वैसा ही अपराध करता है जैसे ज्यामिति शास्त्रका विद्यार्थी किसी ज्यामिति-विशारदसे अपने सवालोंको हल करवा कर करता है। ऐसा विद्यार्थी कभी भी ज्यामि-तिका ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। इसी तरह अमुक सिद्धान्तके अन्तर्गत उठनेवाले अनेक प्रश्नोका अन्य व्यक्तिसे समाधान करानेवाले व्यक्तिका भी यही हाल होता है। लेकिन जहाँ तक नीतिके सिद्धान्तको लेकर उठाये गये प्रश्नोंका सम्बन्ध है, इसके मूलमे एक बहुत बडा दोष निहित है। तात्पर्य यह कि जो बात हमने उदाहरणके तौरपर कही हो वह बात हू-ब-हू वास्तविक जीवनमें कदापि घटित नहीं हो सकती। काल्पनिक उदाहरणमे और वास्तविक घटनामें यदि रंचमात्र भी भेद हुआ तो उसका हल भी नितान्त भिन्न होगा और इसी कारण मैंने तुम्हें आगाह किया था कि जबतक स्वयं अपने ही अनुभवमे आनेवाली या आई हुई घटनाके सम्बन्धमे प्रश्न न हो तबतक कही कोई ऐसा अवसर न आ पड़े उसके लिए पहले से ही तैयारी कर लेनेकी भावनासे, कल्पित दृष्टान्तोके आधारपर मुझसे प्रश्न पूछनेकी आदत तुम्हे डालनी ही नहीं चाहिए। ऐसा करनेसे ठीक अवसर पडनेपर इन काल्पनिक दृष्टान्तोके उत्तर मददके बजाय बाधा ही उपस्थित करते हैं। ऐसे व्यक्तिकी बुद्धि मौलिक कार्य करनेके लिए अयोग्य सिद्ध होती है। इसकी अपेक्षा बेहतर यह है कि मूल सिद्धान्तको अच्छी तरह समझ लिया जाये, उसे आत्मसात् कर लिया जाये तथा उसे अपने अथवा अपने सगे-सम्बन्धियोके जीवनपर लागू करनेमें यदि भूलें होती हों तो होने दी जायें।

ऐसी भूलोंसे तुम सीख सकोगे। लेकिन इस सिद्धान्तकी अपनेसे अधिक जानकारी रखनेवाले व्यक्तिके पास, इस बातको ध्यानमें रखकर कि समय आनेपर मुश्किलोंका सामना कैसे किया जाना चाहिए, काल्पनिक समस्याओंको लेकर नहीं जाना चाहिए। इस तरह आत्मविश्वासको क्षति पहुँचती है। लगता है, ऐसा अनुभव होनेके कारण ही गीताकारने १०वें अध्यायके १०वें श्लोककी रचना की है। उसमें तो भगवानने यही कहा है न कि जो व्यक्ति प्रीतिपूर्वक निरन्तर उसका भजन करते हैं उन्हें समय आनेपर मैं सुबुद्धि प्रदान करता हूँ। यहाँ भगवानके स्थानपर सत्य शब्दका प्रयोग करोगे तो अर्थ बिल्कुल स्पष्ट हो जायेगा। अब तुम मेरे कहनेका अभिप्राय समझ गये होगे। तुम्हारे काल्पनिक प्रश्नोंका मैं बुरा नहीं मानता, लेकिन यदि मैं तुम्हें इसमें प्रोत्साहन देता हूँ तो इसमें तुम्हारा अहित होनेका भय है। लाभ तो नहीं ही है, ऐसी मेरी मान्यता है। उदाहरण स्वरूप तुम्हारे बलात्कार सम्बन्धी प्रश्नको ही लें। इस काल्पनिक प्रश्नका एक उत्तर देनेके बावजूद यदि सचमुच ऐसी कोई घटना घटे तो [सम्भव है] मैं उसका सर्वथा भिन्न उत्तर दूँगा, और निश्चयात्मक स्वरमें उसका समर्थन करूँगा। और यह भी सम्भव है कि काल्पनिक प्रश्न और वास्तविक घटनाके भेदको भी मैं तुम्हें समझा सकूँ। मैं अपने साथियोंके साथ हुए अपने अनुभवके आधारपर ही तुमसे यह सब कह रहा हूँ। अब मैं समाप्त करता हूँ।

मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि तुम्हारा स्वास्थ्य पहलेसे अच्छा हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेन्ट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ७५–९ से भी।

११३. एक पत्र

२९ जून, १९३२

तुम्हें आत्महत्या करनेकी इच्छा क्यों होती है? तुमने कोई चोरी तो नहीं की, ऐसा मैं समझा हूँ। उसमें भी सट्टा फिर न करनेका तुमने निश्चय किया है। इस तरह यह अध्याय पूरा हुआ। और यदि चोरी की भी हो तो भी आत्महत्या करनेका कारण नहीं। चोरी करनेके बाद भी जो व्यक्ति अपने अपराधको स्वीकार कर लेता है वह व्यक्ति उसकी अपेक्षा कहीं अधिक अच्छा है जो चोरी करते हुए पकड़ा न गया हो अथवा जिसे कभी चोरी करनेका लोभ न हुआ हो। इसलिए तुम्हें आत्महत्या करनेका तो कोई कारण ही नहीं है। और अब रहा कर्ज। तुम्हारे पास जो है उसे तुम लेनदारको सौंप दो, इस तरह तुम्हारी जिम्मेदारी पूरी हो जाती है। लेनदार तुम्हें दिवालिया घोषित करना चाहे तो भले करे। उसमें कोई शर्मकी बात नहीं है। जो हो उसे सहनेमें पुरुषार्थ है। भविष्यके लिए तो मैंने तुम्हें लिखा ही है।

तुम दोनों आश्रममें जाकर रहो। वहाँ जाते हुए तनिक भी संकोच न करना। जहाँ धनवान होकर गये थे वहाँ रंक बनकर कैसे जाया जाये, ऐसे मिथ्या विचारको अपने मनमे न लाना। यह आश्रम साधु-वृत्तिके लोगोंके लिए ही है। मुझे लिखते रहना। मीराबहनकी ओरसे जो सहानुभूति मिले सो लेना। सत्सग पारसमणि है, ऐसा समझकर उसकी संगतिमे रहना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

११४. पत्र : मीराबहनको

३० जून, १९३२

चि० मीरा,

दामोदरदास और उसकी पत्नीको एक सान्त्वनादायक पत्र भेजनेकी उत्सुकताके कारण मैंने कल तत्काल चिट्ठी लिख डाली थी ताकि उसी डाकसे निकल जाये। मुझे आशा है कि तुम्हें वे दोनों पत्र मिल गये थे और उन्हे तुमने उन मित्रोको दे दिया होगा। सम्पत्तिकी हानिका लोगोंपर इतना ज्यादा असर पड़े यह दुःखकी बात है।

तुम्हारे उर्दू-अंग्रेजी और अंग्रेजी-उर्दू कोष कहाँ है? मुझे उनकी सख्त जरूरत है। मेरा उर्दू अध्ययन बढ़ रहा है। मै काफी पढ़ता हूँ। इसलिए मुझे अपना उर्दू पुस्तकोंका संग्रह बढ़ाना होगा। आश्रममे कई किताबे है। मेरा विचार उन्हे मँगानेका है।

अभी तो मेरे स्वास्थ्यके बारेमे कोई देने लायक खबर नही है।

तुम्हें अपने शरीरमें जो सुधार दिखाई देता है, वह बेशक बहुत उत्साहवर्धक है। दूध और फलोकी मात्रा बढ़ाना आवश्यक था।

मुझे खुशी है कि वेरियर अन्ततः इंग्लैंड जा सकें। वहाँ जाकर उनका जर्जर शरीर फिरसे स्वस्थ हो जायेगा और उनकी माँ तथा बहन उन्हें अपने बीच पाकर अत्यन्त हर्षित होंगी।

तुम्हारे बारेमें लिखे मेरे पत्र[1] का कोई उत्तर नही मिला है। शायद कोई जवाब न मिले।

शान्ताबाई कताईमे नियमित रूपसे कुछ समय दे रही है, यह अच्छी बात है।

तिलकको जितने आरामकी जरूरत हो, उसे लेना चाहिए। उसे अपना शरीर पुष्ट बनाना चाहिए।

नूरबानू काफी व्यायाम नही करती। उन्हें दूर तक टहलनेके लिए किसी तरह जरूर राजी करो। और अगर तुम उन्हें एक महीन तक नमक और घी न लेनेके लिए मना सको, तो उनकी काफी चर्वी छँट जायेगी।

१. सम्भवतः १८-६-१९३२ को ई० ई० डॉयलको लिखा पत्र।

रामनामकी धुनके लिए तुम्हे पण्डितजी जब बम्बईसे गुजरें तब उन्हे पकड़ना चाहिए। मेरे खयालसे तुम उन्हें लिखो तो वे गान्धर्व महाविद्यालयके अपने शिक्षक साथियोमे से किसीसे सिफारिश कर सकते है। तुम आध घंटेमे ही सीख लोगी।

इन्टरनेशनल फेलोशिप (अन्तर्राष्ट्रीय भ्रातृमण्डल)के मुख्य सदस्य आजकल कौन-कौन है?

यूरोपके सब मित्रोंको और ऑक्सफोर्डवाले चाचा और उनकी पत्नीको मेरा और महादेवका भी सस्नेह वन्दे लिखना, तथा उनके प्यारे बच्चेको प्यार। मै उस यात्राको, उस शान्त घरको और उससे लगे हुए उस अत्यन्त सुन्दर गिरजेको कभी नही भूल सकता।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२८) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९४ से भी।

११५. पत्र : श्रीमती लिण्डसेको[1]

३० जून, १९३२

तुमने मुझे हरा दिया। पिछले चार हफ्तेसे मैं तुम्हें लिखनेकी सोच रहा था, मगर लिख न सका। अन्तमे कुटुम्बके सारे समाचार लिए हुये तुम्हारा अत्यन्त सुखद पत्र आ पहुँचा। उसके लिए धन्यवाद। मै तुमसे यह कहना चाहता था कि मैंने जो-कुछ किया है उसमे मै स्वयंसे यह प्रश्न करता रहा हूँ कि वह तुम्हे पसन्द आयेगा या नहीं। जब तुमने प्रो० थॉम्पसनके घर पर मुझसे बात की थी तब तुम्हारी आकर्षक आँखोने मुझपर इतना ज्यादा असर डाला था। और फिर जब मै तुम्हारे घर गया और तुमने परिवारके ही आदमीकी तरह मेरा सत्कार किया था, उस वक्तकी बातचीत तो भुलाई ही नही जा सकती। महादेव यहाँ मेरे साथ है। ऑक्सफोर्डमे मिले मित्रोके बारेमे हम अकसर बाते करते है। तुम सबको हमारा प्यार।

[अंग्रेजीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. बैलिओल कालेज, ऑक्सफोर्डके डा० ए० डी० लिण्डसेकी पत्नी

११६. पत्र : एडमंड प्रिवा और उनकी पत्नीको[1]

३० जून, १९३२

प्रिय भक्ति और आनन्द,

तुम दोनोंका पत्र पाकर और यह जानकर कि तुम लोग इतने मजेमें हो, बड़ी खुशी हुई। तुम लोग जब यात्रा कर रहे थे उस समय मुझे आनन्दका एक पोस्ट-कार्ड मिला था। इसके सिवा कुछ नहीं। तुम्हें सरदार वल्लभभाईकी याद अवश्य होगी। वह और महादेव मेरे साथ हैं। हम सब मजेमें हैं और कुछ उपयोगी काम करनेकी कोशिश कर रहे हैं। महादेव और मैं कताई और अध्ययनमें काफी समय देते हैं। सरदार रद्दी भूरे कागज आदिसे लिफाफे बना कर धन-उत्पादन करते हैं। यह पत्र ऐसे ही एक लिफाफेमें रखा जायेगा।

मैं हृदयसे आशा करता हूँ कि भारतीय मौसम तुम्हें बहुत कष्टदायक नहीं लगा।

मुझे पता नहीं कि रोलाँ परिवारसे तुम्हारी भेंट अकसर होती है या नहीं। मिलने पर उन्हें हमारा प्रेमाभिवादन कहना। तुम्हें भी हम लोगोंका प्यार।

तुम्हारा,
बापू

प्रोफेसर ई० प्रिवा
ला शामीर ऐवेन्यू
स्विट्जरलैंड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७९२) से।

१. स्विट्जरलैंड निवासी एक दम्पति; गांधीजी प्रिवाको आनन्द और उनकी पत्नीको भक्ति कहते थे।

११७. पत्र : भाऊ पानसेको

३० जून, १९३२

चि० भाऊ,

विनोबा विरचित 'गीताई'[1] की तीन प्रतियाँ जमनालालजीने मुझे यहाँ भेज दी है। कब्जकी शिकायत दूर होनी ही चाहिए। इसके बारेमें जरूरत जान पड़े तो डा० तलवलकरकी सलाह लेना। इस समय यह शिकायत भले ही थोडी जान पड़ती हो, लेकिन आगे जाने पर इससे बहुत खराबी हुए विना नही रहेगी। मैं एक उपाय बताता हूँ जो मेरे सम्बन्धमे कारगर सिद्ध हुआ था। यह उपाय दो या तीन दिनके लिए करना और यदि लाभ न हो तो इसे छोड़ देना। चौलाई अथवा पालककी सब्जी पकाकर दिनमे दो-तीन बार खाना — अन्य कुछ नही लेना। इससे लाभ होनेकी सम्भावना है। जब दस्त आने शुरू हो जायें तब तुरन्त सामान्य आहार पर आ जाना। आधे सिरके दर्दका तात्कालिक और अचूक इलाज मिट्टीकी पुलटिस तो है ही। रातको माथे पर बाँध कर सो जाना। तथापि यदि दर्द दिनमे भी हो तो तुरन्त पुलटिस बाँधो और जबतक यह रखी हो तब तक लेटे रहो।

शेषशायी भगवानके चित्रके पीछे निश्चय ही गूढ़ अर्थ है, ऐसी मेरी मान्यता है, लेकिन उनके शेषशायी होनेसे अतंद्रित कर्मरत रहनेमे कोई बाधा नही आती। उपर्युक्त श्लोकके अतन्द्रित शब्द[2] का अर्थ इतना ही हो सकता है कि प्रत्येक काम करते समय वे सर्वथा और सतत जागरूक रहते हैं। काम करते हुए आलस्य नही होता। लेकिन इसका अर्थ यह नही है कि वह लगातार चौबीस घंटे काम करते हैं। इसके पीछे भगवानकी तुलना प्राकृत मनुष्यके साथ करनेका भाव है और इस श्लोकका उद्देश्य भी यही है। बाकी तो भगवान न सोते हैं न जागते हैं और न कोई काम ही करते हैं; और कुछ भी न करते हों सो भी नही। इसलिए उनकी तुलना किसी बातमे किसीसे भी नही की जा सकती। इतना कहनेके बाद शेषशायीका मैं स्वयं जो अर्थ करता हूँ वह यह है: भगवान इतने निर्भय हैं कि सर्पकी गोदमे भी वह निश्चिन्त होकर सो सकते हैं। यह अर्थ तो केवल मेरे सन्तोषके लिए है और मुझे इससे बल मिलता है। तात्पर्य यह कि यदि हममे सम्पूर्ण अहिंसा प्रकट हो तो सर्पके निकट रहकर भी हमे तनिक भी भय न हो और विशेष रूपसे यह कि सर्प भी हमसे भयभीत न रहे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३२) से। सी० डब्ल्यू० ४४७५ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

१. अर्थात् *गीतामाता*, विनोबा भावे द्वारा किया गया *गीता* का मराठी अनुवाद।

२. सम्भवतः गीता, ३, २३।

११८. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

३० जून, १९३२

चि० परसराम,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम लडकियोको हिन्दीमें पत्र लिखनेके लिए प्रोत्साहित करते हो और उनकी भाषाको सुधार देते हो, इसमे मुझे कोई दोष नही दिखाई देता। मात्र इतना ध्यान रखना, ऐसा न हो कि जो तुम बोलो लड़कियाँ वही लिखती चली जायें और अपने-आप वाक्य रचना न करें। प्रथम प्रयास उनकी ओरसे होना चाहिए। ऐसा नही होगा तो केवल उनकी लिखावट ही सुधरेगी, भाषामें कोई सुधार नही होगा। प्रश्न भी उनकी ओरसे ही होने चाहिए। प्रश्न पूछने ही चाहिए, ऐसा कोई निश्चित नियम तो नही है। सप्ताहमें जो-कुछ नया सीखा हो अथवा जो घटनाएँ हुई हों अथवा जिनका उनपर प्रभाव पडा हो वह सब कुछ अपने पत्रमें वे लिख सकती हैं। इसमे तुम्हे ज्यादा मेहनत करनी होगी, लेकिन यह तुम उन्हे हिन्दीका पाठ पढ़ाते समय सिखा सकते हो। मै भी देख रहा हूँ कि पुष्पा अपने काममें दिलचस्पी लेने लगी है और उसके मनमें आगे बढ़नेकी उमंग है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५०४)से। सी० डब्ल्यू० ४९८१ से भी; सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा

११९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३० जून, १९३२

चि० प्रेमा,

तू तीन वर्षकी हुई है, ऐसा मै मानता हूँ।[1] जो तू कहती है वह सच है। जब तुझे बम्बईसे मैंने अपने साथ लिया था तब तू यहाँ टिक सकेगी इस बारेमे मुझे शका थी — लेकिन जितना तू सोचती है उतनी शका तो नही थी, क्योकि तू अपने वचन पर दृढ़ रही और जो अपने वचन पर दृढ रहता है उसके बारेमें मुझे कोई शंका नही होती। मेरे कथनमे व्यग्यका भाव था ऐसा मै नही समझता। लेकिन तू इतनी दृढ़ रहेगी, इसका मुझे विश्वास न था। मुझे याद है कि उस समय मेरी मनःस्थिति ऐसी थी। मै तो अवश्य यह चाहता हूँ कि जैसे

१. प्रेमाबहन अपने आपको तीन वर्षकी आयुवाली मानना चाहती थीं, क्योंकि वह आश्रम जीवनको, जहाँ वह तीन वर्ष पूर्व आई थीं, अपना नया जन्म मानती थीं।

तूने यहाँ तीन वर्ष विताये है वैसे सारा जीवन विता और वह भी निश्चिंतताके साथ, अनायास ही नही अपितु निश्चयपूर्वक; तू आश्रमकी है और आश्रम तेरा है ऐसा अपने हृदयमे दृढ़तापूर्वक मानकर और जानकर। लेकिन इसका मेरी ओरसे आग्रह नही, यह तो केवल मेरी इच्छा ही हो सकती है। तुझे जबतक यह आश्रम सहज ही अपना नही लगता तबतक तू निश्चय नही कर सकती। यह तो मैंने तेरे आगे अपनी इच्छा व्यक्त की है।

यह तो हुई तेरे आश्रमके जन्मकी बात। तेरा दूसरा जन्मदिन १३ जुलाईको है और यह पत्र तुझे आठ तारीखके आसपास अवश्य मिलना चाहिए। मेरा तुझे आशीर्वाद तो है ही। भगवान करे तेरी बड़ी-से-बड़ी अभिलाषा पूर्ण हो। तू उस दिशामे प्रयत्न कर रही है, इस विषयमे मुझे तनिक भी शंका नही है। लेकिन इसके लिए उतनी बड़ी उम्र और अच्छा स्वास्थ्य भी होना चाहिए। वह भी होगा ऐसा मै मानता हूँ। लेकिन अन्ततः इन तीनोंका आधार तुझपर अथवा मुझपर नही है। [मैंने]तो सब-कुछ उस [भगवान]को सौप दिया है। उसे जो अच्छा लगे सो वह करे। और वह जो करेगा सो अच्छा ही होगा।

१३ तारीखका हिसाब-किताब लिख भेजना। उस दिन तूने क्या निश्चय किया सो लिखना। यह तो तू जानती है न, कि जन्मदिनके अवसर पर कोई-न-कोई निश्चय करनेका सुझाव मै हर किसीको देता हूँ?

ज्योतिष पर तनिक भी विश्वास न कर। उसका विचारमात्र छोड दे। ज्योतिषकी बातें यदि सच हो तो भी उन्हें जाननेसे कोई लाभ नही। हानि स्पष्ट है।

तुझे वहाँ गर्मी लगती है। यहाँ अच्छी ठंड है। बरसातकी कमी है।

उर्दूकी किताबोंमे पैगम्बरके जितने जीवनचरित्र देखनेमे आये वे सब, 'अस्वा-ए-सहाबा' के दो भाग और 'खुलफाए राशदीन' तथा अंग्रेजी-उर्दू और उर्दू-अंग्रेजी शब्दकोष जल्दी भेजना। ये सब यदि बम्बईमे डाह्याभाईको भेज दिये जाये तो वे शनिवारको यहाँ ले आयेंगे।

सारे मकान नियमित रूपसे अमुक दिवस पर साफ होने ही चाहिए, सामान उठाया जाना चाहिए। इसके लिए समय निकालना ही होगा।

जिस अंगमे—व्यक्ति, समाज अथवा संस्थामे—हमे अपूर्णता दिखाई दे वहाँ पूर्णता लानेका प्रयत्न करना हमारा कर्त्तव्य है। यदि गुणकी अपेक्षा दोष बढ़ते जाये तो उसका त्याग—असहयोग—करना धर्म है। यह शाश्वत नियम है जो मैंने तुझे लिखा था। इस वाक्यसे मैंने तुझे आश्रम छोड़ने अथवा कोई चीज छोडनेकी सलाह नही दी थी। मैंने तो तुझे अमुक स्थितिमे मनुष्य-मात्रका जो धर्म माना गया है सो बताया था।

बंगालमे, कलकत्तामे तो रोज दिन-दहाडेमे बकरे और भेड़े काटकर माताको चढाते है। मै भगवानसे इस बातकी याचना कर रहा हूँ कि वह मुझे इसे रोकनेकी सामर्थ्य दे। क्या तू यह बात नही जानती थी?[1]

१. प्रेमाबहनने गांधीजीसे पूछा था कि वे रोज विशेष प्रार्थना क्या करते हैं।

मनुष्य स्वयको गोपीकी उपमा देता है, यह मुझे मालूम है। यदि ऐसा केवल भक्तिभावसे प्रेरित होकर किया जाता है तो मुझे इसमे कोई बुराई नही दिखाई देती। ईश्वरके समक्ष सभी अबला ही हैं।

स्वराज्यमे लोग हिमालयकी चोटी पर चढ़ने और उत्तरी ध्रुवकी खोजके लिए अवश्य निकल पड़ेंगे। सामान्य भौतिकशास्त्रके ज्ञानको मैं लाभदायक समझता हूँ।

मेरे खुराकके प्रयोगोसे मुझे कोई नुकसान नही हुआ। मेरे ये प्रयोग आठ वर्ष तक भी चले है और सात दिन भी चले हैं।

धुरंधर नासिक गया।

'मोनोडायट' में अवश्य लाभ है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९२) से। सी० डब्ल्यू० ६७४० से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

१२०. पत्र: शामल आर० रावलको

१ जुलाई, १९३२

चि० शामल,

अनसूयाबहन सबसे मिलती हैं। वह तुम्हें सलाह देंगी और तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करेंगी। तुम मुझसे पूछते हो, यह ठीक ही है। कौन मजाक करता है? परमेश्वरका ध्यान उसका नाम लेकर ही किया जा सकता है। परमेश्वरको भजनेका उत्तम मार्ग यह है कि सबमे उसके दर्शन किये जाये और सबकी प्रेम-भावसे सेवा की जाये। आश्रममें तुम्हे क्या कष्ट होता है? जो हो सो नारणदासभाईसे कहना। मुझे तो सब-कुछ ब्यौरेवार अवश्य लिखना।

बापू

एस० आर० रावल

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४३) से। सी० डब्ल्यू० २८७८ से भी; सौजन्य: शामल आर० रावल

१२१. पत्र : कुसुम देसाईको

१ जुलाई, १९३२

चि० कुसुम (बडी),

तेरे पत्रोंमें कुछ तो बिल्कुल व्यर्थके होते हैं। जैसे कि इस बारका पत्र है। यदि लिखनेको कोई बात न सूझे तो न लिखना ही बेहतर है। लिखनेको कुछ न मिले यह दोष है, लेकिन कोरा पत्रसा लिख भेजनेसे यह दोष धुल नहीं जाता वरन् उससे यह दोष और भी पक्का हो जाता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४१)से।

१२२. पत्र : वनमाला एन० परीखको

१ जुलाई, १९३२

चि० वनमाला,

इस बारकी तेरी लिखावट खराब है। हमेशा ऐसी लिखावट होनी चाहिए मानो अक्षर छपे हुए हों।

जमीनकी पसन्दगीके बारेमें मंगलाके अथवा शारदाके पत्रमें मैंने लिखा था, उसे देख जाना और बादमें पूछने लायक कुछ हो तो पूछना।

मोहन नियमपूर्वक क्यों नहीं लिखता?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७६)से। सी० डब्ल्यू० २९९९से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

१२३. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

१ जुलाई, १९३२

बालको और बालाओ,

प्रेमाबहन सुझाये और तुम प्रश्न पूछो, यह उचित नही। प्रश्न उपयोगी होने चाहिए। तुममे उनके उत्तर जाननेकी उत्सुकता होनी चाहिए। और प्रश्न ऐसे होने चाहिए जिनके उत्तर तुम्हें वहाँ न मिल सकते हो। प्रश्न केवल पूछनेकी खातिर ही नही पूछे जाने चाहिए। तुम्हारे पत्रमें तुम्हारे कार्यका साप्ताहिक विवरण होना चाहिए। कार्यमें पढ़ाई भी आ जाती है।

अब रहे तुम्हारे प्रश्न :

मेरा जीवन अनेक वर्ष हुए नितान्त सार्वजनिक बन गया है।

शुद्ध आहार वह है जिसमें कमसे-कम हिंसा हो और जो केवल शरीरके पोषणके लिए ही लिया जाता हो।

तीर्थयात्रामे हमेशा धार्मिक वृत्ति ही होनी चाहिए। लेकिन धर्ममें व्यवहारका भी पालन हो ही जाता है। वस्तुतः धर्म शुद्ध व्यवहारका विरोधी नही होना चाहिए—न होता ही है।

सदाचारका मुख्य लक्षण सत् अर्थात् सत्य है।

तुम्हारे पत्रका व्याकरण और शब्दावली शुद्ध होनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१२४. पत्र : बबलभाई मेहताको

१ जुलाई, १९३२

चि० बबलभाई,

भक्ति अर्थात् हृदयमे ईश्वरको रटना। ईश्वर अर्थात् प्राणीमात्रमें व्याप्त एक ही रूप। इसलिए जो व्यक्ति ईश्वरके प्रेमकी खातिर जीवोंकी सेवा करता है वह भक्त है। 'मेरे निमित्त ही कर्म कर'[1] का तुमने ठीक अर्थ लगाया है। दूसरे श्लोकका अर्थ भी ठीक है। चित्तवृत्तिके निरोधमें यमनियमादिका पालन मुख्य वस्तु है। 'मेरे निमित्त कर्म कर' और 'कर्म'फलका त्याग कर' इससे एक ही वस्तुको दो

१. सम्भवतः गीता के १२ वें अध्यायके १० वें श्लोककी ओर संकेत है।

प्रकारसे व्यक्त किया गया है। अमुक प्रकृतिके लोग पहले वाक्यको तुरन्त समझ जायेंगे तथा दूसरी प्रकृतिके लोग दूसरे वाक्य को।

मेरे हाथको जैसा तुम समझते हो वैसा कोई कष्ट नही है। अमुक ढगसे काम करनेमे कष्ट होता है, बस केवल इतनी-सी बात है। काकासाहबकी तबीयत अच्छी होती जाती है। तुम्हे यदि अपना जीवन 'गीता' के प्रत्येक श्लोकके विरुद्ध दिखाई दे तो उसकी चिन्ता न करना अपितु दृढतापूर्वक और धीरजके साथ उन दोषोको दूर करते जाना, फिर भले ही दोषोका पहाड हो। प्रयत्न करते-करते एक समय ऐसा आयेगा जब सब दोष दूर हो जायेंगे। लेकिन पहाड़ देखकर यदि प्रयत्न करना छोड़ दोगे तो पहाड़ बढ़ता ही चला जायेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४५०) से।

१२५. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय पण्डितजी,

योगाका[1] नाम मैंने पहले कभी नही सुना था। योगाकी क्या वय है? वह कितनी पढी हुई है? विद्यापीठकी किताबोंकी देखरेखका भार ठीक समय पर हाथमे आ गया है। अब उसे अच्छी तरहसे सँभालना। महादेव प्रति घंटा ४५ अंकके २०० से भी अधिक तार कातते है। बालकोंकी समस्या हमारी अपनी समस्या है। इसकी मै नारणदासके पत्रमे चर्चा करनेवाला हूँ, वह पढ़ जाना। सवेरेकी प्रार्थनाके मौनके बारेमे मैंने नारणदासको लिखा है।[2] सवेरेका मौन भी यदि विवेकपूर्वक रखा जाये तो अवश्य लाभदायक है। लेकिन मेरे विचारसे तो साँझका मौन ही ज्यादा अच्छा था। लेकिन चूंकि मैंने नारणदासको लिखा है[3] इसलिए यहाँ ज्यादा नही लिखता। उसे देख जाना। मीराबहनको मैंने सुझाव दिया है कि यदि "रघुपति राघव राजा राम" धुनके बदले आरोह-अवरोह स्वरोमे केवल राम-राम ही गाया जाये तो धुनमे अच्छी गति आ जायेगी और यह नये आनेवालोके लिए ज्यादा अच्छी चीज होगी।[4] लेकिन यह उसे कौन सिखायेगा? यदि बम्बईमें कोई व्यक्ति तुम्हारे ध्यानमे हो तो उसे लिखना कि वह जाकर सिखाये। मेरा मतलब तो तुम समझ गये हो न?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२८) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन एन० खरे।

१. ना० मो० खरेकी रिश्तेदार।
२. और ३. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", २८ जून/४ जुलाई, १९३२।
४, देखिए "पत्र : मीराबहनको," २२-६-१९३२।

१२६. पत्र : भगवानजी पुरुषोत्तम पण्डचाको[1]

१ जुलाई, १९३२

. . . मैंने जो उपाय तुम्हें बताया है तुम ज्यों-ज्यों मनसे उसको उपयोगमे लाओगे त्यो-त्यो तुम्हे अधिकाधिक शान्ति मिलेगी। जो तुम पढ़ चुके हो उसका तुम पर अदृष्ट प्रभाव होगा और यह आश्चर्यजनक होगा। कौन जाने तुमने कभी कुछ पढ़ा ही न हो, इस भावसे तुम रहना। जितना तुमने पचाया और आत्मसात किया होगा वह स्वयमेव कार्य-रूपमे प्रस्फुटित हो उठेगा।

बापू

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५७ से भी।

१२७. पत्र : स्वामी आनन्दको

१ जुलाई, १९३२

भाई आनन्दानन्द,[2]

इस बार तुमने बहुत लम्बी प्रतीक्षा करवाई। सरदारने मुझसे कई बार पूछा कि तुम्हारा पत्र अभी तक क्यों नही मिला। हम जानते थे कि वह नही मिला है। लेकिन इसमे तुम क्या कर सकते हो? यदि कारण मालूम हो तब भी मनुष्यके मनमे उस वस्तुकी उम्मीद बनी रहती है जिसे प्राप्त करनेकी उसे उत्कट इच्छा होती है। मेरा यह पत्र तुम्हें मिलेगा अथवा लौटकर मेरे पास आ जायेगा।[3] समीप रहते हुए भी वियोगका तुम्हे जो अनुभव हुआ है ऐसा अनुभव मेरे सम्पर्कमें आनेवाले अनेक लोगोको हुआ है।[4] इससे जो सन्तोष मिल सके सो प्राप्त करना चाहिए। इस बारेमे कैलेनबैकने[5] एक सुन्दर प्रमाण निश्चित किया था।

१. देखिए "पत्र : भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्याको", १८-६-१९३२ भी।

२. स्वामी आनन्दानन्द; नवजीवन प्रेसके प्रबन्धक।

३. उपर्युक्त पंक्तियाँ बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्ससे ली गई हैं।

४. आनन्दानन्दने लिखा था कि गांधीजीका समय लेना मैं अपराध मानता हूँ। जब मेरे पास समय था और गांधीजी जेलमें थे तब मुझे गांधीजीके समीप रहनेका सौभाग्य नहीं मिला। इसलिए मैं समझता हूँ कि मैं कभी भी गांधीजीके साथ न तो रह पाऊँगा और न विचार-विमर्श कर सकूँगा।

५. हरमन कैलेनबैक; जर्मन वास्तुकला शास्त्री; दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके सहयोगी और घनिष्ठ मित्र।

उन्हें स्वयं यह अनुभव हुआ था कि वे जब पहले-पहल मेरे सम्पर्कमे आये तब वे मुझसे रोज मिल सकते थे और जब मन हो तब और जितना समय चाहे ले सकते थे। जब वे मेरे अत्यन्त निकट आ गये और हम परस्पर साथ रहने लगे तब एक साथ सोने, खाने और बैठनेके बावजूद बातचीत करनेका समय कदाचित ही मिल पाता था; आफिससे घर जाते समय भी कोई न-कोई बात करनेवाला होता ही था। इसलिए यह हमारा नित्यका झगड़ा हो गया। उससे उन्होने त्रैराशिक हिसाब बनाया कि जो व्यक्ति जैसे-जैसे तुम्हारे पास आता जाता है वैसे-वैसे वह तुमसे दूर होता जाता है, ऐसा मुझे अनभव होता गया है। मैंने उनके गणितको स्वीकार किया और साथ ही कहा: "चूंकि तुमने मुझे समझा है इसीसे तो इतने निकट आ पाये हो। मतलब यह कि मेरा समय लेनेका तुम्हें अब कोई अधिकार नही रहा और अन्य लोगोंको, जो मुझे [निकटसे] जानना चाहते है, छोड़कर तुम्हें समय देनेका मुझे अधिकार नही रहा।" इस समझौतेके बादसे ही हमारी गाड़ी आगे चलने लगी। ऐसे अनुभवके मूलमे एक सत्य तो निहित है न? एक दूसरेमें जो ओतप्रोत हो चुके है ऐसे साथियोंको एक दूसरेसे पूछने जैसा कुछ रहा? और यदि वे ऐसा करते है तो यही कहा जायेगा न कि वे उस हद तक अपने सामान्य कर्तव्यमें चूक गये? और यदि यह बात सच है तो तुम्हारे जैसे साथियोंको, जो पास रहते हुए भी मुझसे दूर हैं, दुख माननेका कोई कारण नही।[1] मुझे यह मालूम हो गया था कि तुम्हारा वजन कम हो गया है, लेकिन तुम्हारे स्वास्थ्यको लेकर मै निरापद हूँ। मगन-चरखा गांडीव चरखेका संशोधित अथवा परिवर्धित रूप नही है। यह तो प्रभुदास गांधी[2] द्वारा की गई एक विशिष्ट, उपयोगी और उत्तम खोज है। इसका चक्र हाथके बजाय पाँवके द्वारा घुमाया जा सकता है और इस तरह दोनों हाथोंके मुक्त रहनेके कारण एक साथ दो तकुओ पर सूत काता जा सकता है। इसे चलानेमे दक्ष व्यक्ति तकुए पर जितना काता जा सकता है उससे यदि दो गुणा नही तो निश्चय ही डेढ़ गुणा ज्यादा कात सकता है। प्रभुदासके सन्तोषके लिए मै मगन-चरखा चलाना तो चाहता ही था कि इस बीच डाक्टरोने मुझे बायें हाथसे धागा खीचने अथवा चक्र घुमानेसे मना कर दिया और इस तरह प्रभुदासके चरखेको चलानेके लिए मेरे पास दो कारण थे। और चूंकि मगनलाल[3]ने इस चरखेके बनानेमे प्रोत्साहन दिया था तथा उसके शास्त्रीय पक्षको सुधारनेमे काफी मदद भी की थी इसलिए इसका नाम 'मगन चरखा' रखा गया है। मै आजकल इस पर कात रहा हूँ। मेरी गति १४० तार तक पहुँच गई है। इसमे अभी और वृद्धि होगी। मैंने ऊपर जो लिखा है उसपर से, मेरा खयाल है, तुम यह समझ ही गये होगे कि मै केवल एक ही तकुए पर काम कर रहा हूँ, बायें हाथको पूरा आराम देनेकी खातिर मैं दायें हाथसे ही तार खीचता हूँ।

१. इसके बादका अंश बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें उपलब्ध पत्रमें से लिया गया है।
२. प्रभुदास गांधी; छगनलाल गांधीके बड़े पुत्र।
३. मगनलाल गांधी।

सूत १९ अंकका है। हाथके विषयमे चिन्ता करनेकी कोई बात नही। जब किसी विशेष प्रकारके कार्यमें मै इसका उपयोग करता हूँ तब कुहनीमे दर्द होता है और डाक्टरोंका यह दृढ विश्वास है कि बाँहका यह दर्द किसी आन्तरिक वजहसे नही है वरन् इसका कारण बाह्य है अर्थात् रोज बहुत ज्यादा सूत निकालनेके कारण ऐसा हुआ है। इसलिए उनका खयाल है कि मांस-पेशियोंको आराम देनेसे यह शिकायत अपने-आप दूर हो जायेगी। इसके अतिरिक्त उस भागका [अल्ट्रा] वायलेट रेजके जरिये उपचार किया जा रहा है। अतएव चिन्ताकी कोई बात नही है। मेरा वजन ११२ पौड नहीं हो पाया है। यह १०६½ से ज्यादा नही जा सका है। जेल अधीक्षकके दबावमे आकर मै पिछले पन्द्रह दिनोसे दूध ले रहा हूँ। मै अभी यह कहनेमे असमर्थ हूँ कि इससे मुझे कुछ लाभ हुआ है। इस समय मेरा वजन १०४ पौड है। सरदार अच्छी तरह है। उनका वजन लगभग उतना ही है जितना उस समय था जबकि वे [यहाँ] आये थे। उनकी नाककी तकलीफ को भी कुछ आराम है। महादेवका वजन भी अच्छा है। महादेव परसों तक ४५ से ५० अंकका ८४० गज सूत रोज कातता था। वह रोज करीब पाँच घंटे तक काता करता था। लेकिन चूँकि उसे भी थकावट महसूस होने लगी थी इसलिए पिछले दो दिनोंसे वह इससे आधा सूत कातता है और धुनाईका काम भी करता है। बेशक, यह उसका अतिरिक्त काम है। मै २०० गज सूत कातता हूँ। मै उर्दू, खगोल-विज्ञान और मुद्रा-शास्त्र पर पुस्तकें पढ़ता हूँ तथा समय मिलने पर आश्रमका इतिहास लिखता हूँ। महादेव छुटपुट विषयों पर अध्ययन कर रहा है। बेशक इसके अलावा उसे मेरी ओरसे लिखना भी होता है। और अब चूँकि कातना कम हो गया है इसलिए कदाचित वह कुछ लिखना भी शुरू कर दे। सरदार धूलसे धन पैदा कर रहे हैं। अन्य शब्दोंमे वे बादामी और दूसरे रंगके बेकार कागजोंके लिफाफे बनाते है। यदि मै तुम्हे उन कागजोंके बारेमे बताऊँ तो तुम बहुत हँसोगे। हमे जिस किसीको भी पत्र लिखना होता है तो हम इन लिफाफोको उपयोगमें लाते है। चूँकि हम सरकारके और अपने पैसेमे कोई भेद नही करते, इसलिए जहाँ सम्भव हो वहाँ कौड़ी-कौड़ी तक बचाते है। लिफाफोके बनानेसे भारतके अथवा संसारके धनमे निश्चय ही अभिवृद्धि होती है फिर चाहे वह राशि कितनी ही अल्प क्यों न हो। इस बातको ध्यानमें रखते हुए कि सरकारकी सम्पत्ति हमारी सम्पत्ति है, हम इसका उपयोग करते है। सरदार इसके अलावा कुछ समय पढनेमें भी बिताते हैं और उनका विचार संस्कृतका आवश्यक ज्ञान प्राप्त करनेका है। उन्होने सातवलेकर[1] द्वारा लिखित 'संस्कृत पाठमाला' भी मँगवाई है और इसके साथ-साथ उनका इरादा हिन्दी सीखनेका भी है। यह है हमारे कामका लेखा-जोखा। हमारे परिवारमें एक बिल्ली और उसके दो बच्चे भी है। हालाँकि उनका नाम कैदियोंकी सूचीमे दर्ज नही है फिर भी वे हमारा थोड़ा दूध भी पी जाते है, वगैरह वगैरह।[2]

१. १८६६-१९६८; प्रसिद्ध विद्वान और संस्कृतकी अनेक पुस्तकोंके लेखक।
२. इसके बादका अनुच्छेद महादेवभाईनी डायरी से लिया गया है।

रामकृष्ण और विवेकानन्द-सम्बन्धी रोलाँकी पुस्तकोको मैंने ध्यानपूर्वक और दिलचस्पीके साथ पढा। रामकृष्णके प्रति मेरे हृदयमे हमेशासे पूज्यभाव तो रहा ही है। उनके बारेमे मैंने पढा तो बहुत कम है लेकिन उनके भक्तोंसे अनेक ऐसी बातें सुनी हैं जिनसे उनके प्रति मनमे आदरभाव उत्पन्न हुआ। रोलाँकी पुस्तक पढ़नेसे इसमे कुछ इजाफा हुआ हो सो नही कहा जा सकता। रोलाँकी दोनो पुस्तके, वस्तुतः देखा जाये तो पश्चिमके लिए लिखी गई हैं। हमारे लिए उसमे कुछ भी नही मिलेगा, ऐसा तो मै नही कहूँगा। लेकिन मुझे बहुत कम मिला है। मुझपर जिन वस्तुओका प्रभाव पडा था रोलाँकी पुस्तकमे उनका समावेश भी है। इनके अलावा जो नई बाते कही गई है उनके कारण मुझ पर पडे प्रभावमे कोई वृद्धि नही हुई है। जिस हद तक रामकृष्ण भक्त थे उस हद तक विवेकानन्द भी थे, ऐसा मुझे नही लगा। विवेकानन्दका प्रेम महान था, भावनापूर्ण था और वे भावनासे प्रेरित भी हो जाते थे। उनकी भावना उनके ज्ञानके लिए हिरण्य पात्र थी।[1] धर्म और राजनीतिमे उन्होंने जो भेद किया था वह उचित न था। लेकिन ऐसे महान व्यक्तिकी टीका करना व्यर्थ है। और यदि हम टीका करने बैठ जाये तो चाहे जिस किसीकी भी टीका की जा सकती है। हमारा कर्तव्य तो ऐसी विभूतियोसे जो ग्रहण किया जा सके सो ग्रहण करना है। तुलसीदासका जड़ चेतन-सम्बन्धी दोहा[2] मेरे जीवनमे पूरी तरहसे घटित हो गया है, इसलिए मुझे आलोचना करना अच्छा नहीं लगता। लेकिन मै जानता हूँ कि मेरे मनमें यदि टीका करने जैसी कोई चीज रह गई हो तो तुम उसे भी जानना चाहोगे, इसीसे मैंने इतना सब लिख डाला है। विवेकानन्द महान सेवक थे, इस बारेमे मेरे मनमे तनिक भी शंका नही है। जिसे उन्होंने सत्य माना उसके लिए उन्होंने अपना देह-विसर्जन कर दिया, यह तो हमने प्रत्यक्ष रूपसे देखा है। १९०१ मे जब मै बेलूर मठ देखने गया था तब विवेकानन्दके दर्शन करनेकी मनमे बडी अभिलाषा थी, लेकिन मठमे रहनेवाले स्वामीने समाचार दिया कि वे तो बीमार है, शहरमे है और उनसे कोई नही मिल सकता, इससे मै निराश हुआ। मुझमे जो पूज्यभाव निहित है उससे मै अनेक विपत्तियोंसे उबर पाया हूँ। उस समय ऐसा कोई भी प्रसिद्ध व्यक्ति न था जिसे मै भावसे दौडकर मिलने न जाऊँ और बहुत स्थानोपर तो कलकत्ताकी लम्बी सड़कोपर भी पैदल ही चला जाता था। इसके पीछे भक्तिभाव हुआ करता था, पैसा बचानेकी वृत्ति न थी, हालाँकि सदासे मेरे स्वभावकी यह एक विशेषता तो रही है।[3]

१. ईशोपनिषद्, १५।
२. जड़ चेतन गुन दोसमय बिस्व कीन्ह करतार।
३. निम्न अनुच्छेद बॉम्बे सीक्रेट ऐब्सट्रैक्ट्समें से लिया गया है।

अब्दुल्ला सेठ, जबीर अली, सोमान, गोकुलभाई, विश्वनाथ और अन्य सब लोगोको हम तीनोंका यथायोग्य। आशा है, अब तुम स्वीकार करोगे कि जितनी तुम्हे अपेक्षा थी उससे मैंने कही अधिक लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी खण्ड १। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्सट्रैक्ट्स; होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १३३-४१ से भी।

१२८. पत्र : किशोरलाल जी० मशरूवालाको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय किशोरलाल,

मै तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा ही कर रहा था। जब तुम्हारे लिए किसी अन्य व्यक्तिको पत्र लिखना जरूरी हो, तो उस समयका उपयोग तुम मुझे चिट्ठी लिखनेके लिए करो, यह मै नही चाहता। लेकिन आसानीसे लिख सको, तब जरूर लिखो। देवदासको मामूली मियादी बुखार हो गया था। लेकिन अब वह बिल्कुल ठीक है। मुझे उसकी चिट्ठियाँ मिलती रहती है। उसकी देखभाल अच्छी तरह की गई थी। उसे पढ़नेके लिए किताबे मिल जाती है। रामदास यहाँ है और अच्छी तरह है। छगनलाल, सुरेन्द्रजी, दरबारी और अन्य अनेक लोग उसके साथ है। कुरेशी भी वही है। रमणीकलाल, कान्ति, सुरेन्द्र, विट्ठल, फूलचन्द, दीवान मास्टर और अन्य अनेक लोग वीसापुर जेलमें हैं। जमनालाल, प्यारेलाल, विनोबा आदि धूलिया जेलमें है। वहाँ 'गीता' का अध्ययन बड़े उत्साहपूर्वक किया जा रहा है। नेटालमे जो संक्रामक बुखार फैला था उसका आक्रमण मणिलाल, सीता, प्रागजी, इन सभीपर हुआ था। लेकिन सभी बच गये है। प्रागजी जिम्मेवारी लेनेको तैयार नही है[1], अतः मणिलाल व्यस्त है और लगता है कि वह नही आयेगा। गंगाबहन, तारा, महालक्ष्मी, रमा, गंगाबहन झवेरी, नानीबहन, भक्तिबहन, शान्ता, लीलावती आसर आदि यही है। चूँकि डाक्टरोके विचारसे मेरे हाथकी शिकायत मेहनतके कारण है, इसलिए मै उसे आराम देता रहा हूँ। यह शिकायत बराबर नही रहती। जब एक खास प्रकारका काम किया जाता है तब यह होने लगती है। प्रयोगके तौरपर इसे बिजलीकी सेंक दी जाती है; लेकिन यहाँके डाक्टरो का विश्वास है कि हाथके उस हिस्सेका एकमात्र इलाज उसे आराम देना है। उसके बारेमें तनिक भी सोचना आवश्यक नही है। मै पिछले करीब दस दिनोसे दूध लेता रहा हूँ। मेरा वजन १०४ पौड है। दूध लेनेका कारण यह है कि यहाँके सुपरिटेंडेंट उसके लिए आग्रह करते है। मेरी रायमें वह जरूरी नही था, लेकिन चूँकि वजन घटता जा रहा था इसलिए मैने अपना संकल्प तोड़ दिया। मै प्रभुदासका चरखा पैरसे चलाता हूँ और दाहिने हाथसे सूत निकालता हूँ। चरखा ठीक चल रहा है।

१. प्रेसकी जिम्मेदारी; देखिए "पत्र: मणिलाल गांधीको", १८-६-१९३२।

सरदार और महादेव ठीक-ठाक हैं। सरदारकी नाकमे जो शिकायत थी वह फिलहाल दबी हुई है। महादेवके पैरकी हड्डीमे जो तकलीफ थी वह यहाँ आनेके कुछ दिनके अन्दर ही बिल्कुल ठीक हो गई। महादेव ४०/५० अकका सूत कातता है। उसे मेरे लिए जो-कुछ लिखना पड़ता है उसके अलावा वह कुछ रुईकी धुनाईका काम और अध्ययन भी करता है। सरदार पुस्तकाध्ययन करते हैं और रद्दी बादामी कागजके लिफाफे तैयार करके संसारकी सम्पदामें वृद्धि कर रहे हैं। चूंकि हम सरकारी सम्पत्ति तथा अन्य सम्पत्तिमे कोई भेद नही करते, अतः हम सरकारी सम्पत्तिको अपनी ही सम्पत्ति मानते हैं और हर चीजका सावधानीके साथ उपयोग करते हैं। गाण्डीव चरखा चलानेमे वैसी कोई तकलीफ नही होनी चाहिए जैसा तुम बताते हो। उसका चक्का तनिक भी झंझटके बिना चलना चाहिए। उसे हलका-सा धक्का देनेकी जरूरत है। लेकिन यदि तुम ऐसा मानते हो कि जो गाण्डीव चरखा तुम चलाते हो वह बहुत हलका चलता है, और इसके बावजूद तुम्हारी कलाई दर्द करती है, तो अपने मनका शक दूर करनेके लिए ही सही, तुम्हें खड़े चक्केवाला चरखा इस्तेमाल करना चाहिए। तुम्हारा वजन बढ़ रहा है यह सचमुच अच्छी खबर है। दमेके बारेमें डाक्टर का निदान सही हो सकता है और यदि प्रतिदिन दो ग्रेन कुनीन लेनेसे तकलीफ ठीक हो जाये तो इसे बहुत ही अच्छा समझना चाहिए।

मैंने प्रार्थना[1] पर तथा सत्याग्रहीको किन नियमोंका पालन करना चाहिए, इस विषय पर लिखा था;[2] लेकिन इस विषय पर नही। तथापि मेरे पास उसकी कोई प्रति नही है। लेकिन चूंकि तुमने उसका जिक्र किया है, मै उसे मँगाऊँगा और उसकी भूलोंको सुधारकर यदि सम्भव हुआ तो तुम्हें भेजूंगा। मुझे यकीन है कि उसे पत्रकी कोटिमें नही रखा जायेगा। आश्रममे वस्तुतः कामका दबाव बहुत है। शंकरभाई[3] अवकाश पाने पर आश्रमकी चिट्ठी लिखते हैं। उसमे अनेक जरूरी चीजे छूट जाती हैं। मेरे मनमे तुम्हारी पुस्तकको ध्यानपूर्वक पढ़नेकी बात बनी हुई है, लेकिन ऐसा मानकर कि मेरे पास काफी समय है, मै इस समय जो-कुछ पढ़ रहा हूँ, उसे छोड़कर तुम्हारी किताब शुरू नही करता। 'गीता'का एक बार फिर पारायण करके तुमने अच्छा किया। अगर तुम उसे यहाँ भेज दो तो वह मुझे मिल जायेगी।[4] मैं तुमसे कोई विशेष चीज पढ़नेको नही कहना चाहता।[5] मै ऐसा नही मानता कि तुमने कम पढ़ा है। मेरी अपनी पढ़ाई जिस ढंगकी है, वह काफी-कुछ विचित्र-सी मानी जा सकती है। मैं फिलहाल उर्दू पढ़ता रहा हूँ। मुद्राके विषयमे मेरा अज्ञान चूंकि अक्षम्य है, अतः इस विषयका भी कुछ अध्ययन मैंने किया है। इन दोनोंके पीछे सेवा-भावना है, और हालाँकि ऐसा माना जा सकता है कि मेरे पैर कब्रमें लटके

१. देखिए "प्रार्थना", १९-६-१९३२।

२. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ३७२-४।

३. शंकरभाई भीखाभाई पटेल।

४. इसके आगेका अंश महादेवभाईनी डायरी में प्रकाशित गुजराती अंशसे मिला लिया गया है।

५. किशोरलालने गांधीजीसे सलाह माँगी थी कि जो-कुछ वह पढ़ चुके है उसके आगे क्या पढ़ें।

हुए हैं, इसी सेवा-भावना-वश मेरी कामना तमिलका अच्छा ज्ञान प्राप्त करनेकी है जो अभी अधूरी ही छूट गई है। इसी दृष्टिसे मैंने बंगला और मराठी पढ़ना शुरू किया था, और अगर यहाँ वक्त अच्छा गुजरा तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा कि मैं उनका गम्भीरतापूर्वक अध्ययन शुरू कर दूँ। यदि तुम्हारा दिमाग इस दिशामें कुछ चल रहा हो और यदि तुम कोई नई भाषा जानना चाहते हो तो फिर इसमें चूकना मत। जब आश्रमकी स्थापना हुई थी तब भाषाओंके बारेमें हमारी ऐसी इच्छा थी। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, यह इच्छा तनिक भी मन्द नहीं हुई है। लेकिन मैं तुम्हें इस प्रलोभनमें नहीं डालना चाहता। जिस एक चीजकी आवश्यकता मुझे हम सबोंके लिए दिखाई पड़ती है वह यह है कि हमने जो-कुछ पढ़ा है उसपर मनन करें, उसको पचायें और उसे जीवनका एक अंग बना लें। इसी दृष्टिसे मैंने भगवानजीको यह सलाह तक दे डाली है[1] कि वह 'गीता' और रायचन्दभाईकी कृतियोंको पढ़ना छोड़ दे और अपने कार्यमें ही लगा रहे और केवल उसीके बारेमें सोचे। कारण, मैंने देखा कि उसने 'अनासक्तियोग' और रायचन्दभाईकी रचनाओंमें से बहुत कुछ रट डाला है लेकिन इस सबका सही उपयोग नहीं कर पाता। उसका हृदय मेरी रायमें स्वच्छ है, लेकिन उसकी बुद्धि उसके आड़े आती है। वह तरह-तरहके विचारोंमें उलझता है और अन्ततः जहाँ था वहीं रह जाता है। मेरे लेखोंका उसपर गहरा असर पड़ा दीखता है और अब वह सन्तुष्ट है। इस सलाहका जो भी नतीजा हो, लेकिन अनेक अनुभवोंसे मेरे सामने यह स्पष्ट हो गया है कि इसके पीछे जो विचार है वह बिल्कुल सही है। अतः तुम्हारे जैसे व्यक्तियोंको धार्मिक पुस्तकें पढ़नेकी सलाह देनेकी बात मैं नहीं सोच सकता।[2] तुमने अपने जिन दोषोंको पहचाना है, उसमें मैं तुम्हारे साथ कुछ हद तक सहमत हूँ। तथापि मैंने कई बार देखा है कि तुम्हारी आदत बहस में पड़नेकी है। अपने इस पत्रमें भी तुमने अपने इस दोषको बहुत बढ़ा-चढ़ा कर बताया है। मुझे इसका कोई कारण नहीं दिखता। लेकिन मैं यह अवश्य मानता हूँ कि बहसमें काफी कुछ कमी की जा सकती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई तुमसे कुछ पूछे तो उसका जवाब मत दो। यदि तुम्हारे सदृश व्यक्तिसे कोई नहीं पूछेगा, तो फिर पूछेगा किससे? किसी जिज्ञासुको अपने पास जो ज्ञान है उसमेंसे कुछ देना एक बात है, और बहस-मुबाहिसेमें पड़ना दूसरी बात है। मैं जो-कुछ कह रहा हूँ इसका अन्यथा अर्थ निकाल कर परेशान मत होना। सूक्ष्म आत्म-निरीक्षण करनेके बाद अपने-आपको वृथा ही ताड़ना भी मत दो। मेरे समर्थनका उद्देश्य, तुमने जो दोष देखे हैं उन्हें बड़ा करके बताना नहीं बल्कि यह है कि उनका अनुपात स्पष्ट करूँ। विचित्र प्रकृतिके लोगोंके साथ आसानीसे रहनेके लिए वस्तुतः मौन अत्यन्त आवश्यक है। यह बात हमें समझ लेनी चाहिए कि यदि हम समाजमें रहते हुए भी शान्तचित्त नहीं रह सकते तो हमने धर्मको जाना ही नहीं।

१. देखिए "पत्र: भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्याको", १८-६-१९३२ और १-७-१९३२।

२. इसके बादका अंश बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें उपलब्ध पत्रके अंग्रेजी अनुवादसे लिया गया है।

[टॉमस ए० केम्पिस लिखित] 'इमिटेशन ऑफ क्राइस्ट' एक वास्तविक मनुष्यके अनुभवोंका खजाना है। इसलिए उसका प्रभाव पड़े बिना रह नही सकता। मै तुम्हे बताता हूँ कि मेरे मनमे तारोंका अध्ययन करनेकी इच्छा कैसे पैदा हुई। जब मैंने अकस्मात देखा कि तारोका अध्ययन मेरे लिए ईश्वरको देखनेका एक साधन बन गया है तो मै फौरन वैसा करने लगा। काका मेरे साथ थे। उन्होने मुझे वैसा करने के लिए काफी प्रोत्साहित किया। लेकिन मेरी बुद्धि मुझे उसकी ओरसे विरत करती थी। मै सोचता था कि 'जब मुझे फुर्सत होगी तब वैसा करूँगा।' १९२२ मे जब मै यहाँ था तब मैंने इस विषय पर पुस्तके इकट्ठा की थी। उस समय भी मै किसी-न-किसी कारणसे आकाश-अध्ययनको टालता रहा। शकरलालने धीरे-धीरे इस विषयका स्वयं अध्ययन कर डाला। मुझसे कई बार कैसीओपिया नामक तारा देखनेका आग्रह किया गया, लेकिन थोड़ा बहुत देखनेके बाद मै फिर अपने काममे लग गया।[1] लेकिन इसी समय मेरे मनमे सहसा यह विचार आया कि आकाश-दर्शन एक मूल्यवान धार्मिक सम्पर्क स्थापित करनेके समान है। तारागण मौनकी भाषामे हमारे साथ बाते करते थे। मै इन विचारोंको लेकर बहुत विस्तारसे नही लिखूंगा। सक्षेपमे, मै कहना चाहता हूँ कि जब सभी चीजोंमे मुझे धर्मका पाठ मिलने लगे तभी मै अपने आपको धर्ममे उतरा मानूंगा, और अब हाल यह है कि मै उससे बाहर ही नही निकल सकता।

चूँकि बहुत समय हो चुका है इसलिए मै पत्रको और लम्बा नही कर रहा हूँ। यदि यह पत्र तुम्हारे पास सही-सलामत पहुँच गया तो मै तुम्हे आगे और लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १२३-३१ तथा **महादेवभाईनी डायरी**, खण्ड – १।

१२९. पत्र : मंगला एस० पटेलको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय मंगला,

नोट-बुकसे फाड़े गये कागज पर पत्र नही लिखना चाहिए।[2]

शून्यवत् होकर रहनेका अर्थ है अच्छी वस्तुको पानेके लिए सबसे अन्तमे रहना, सबकी सेवा करना, उपकारके प्रतिफलकी आशा नही रखना, कष्ट सहन करनेमे पहल करनी। जो व्यक्ति इस तरह शून्यवत् रहता है वह निश्चय ही अपने कर्तव्यमे लीन रहता है।

१. अगले दो वाक्य **महादेवभाईनी डायरी** में उपलब्ध गुजराती विवरणसे मिला लिये गये हैं।
२. निम्न अनुच्छेद **महादेवभाईनी डायरी** लिया गया है।

हमारे परस्परके व्यवहारमे प्रेमभाव होना चाहिए। यह एक अच्छी बात है कि तुमने अपने सिर पर जिम्मेदारी ली है। उसे पूरी तरहसे निभाना। कमुके साथ कौन रहता है? क्या वह कभी पत्र लिखती है? (मुझे) उसका पता भेजना।

बापू

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड १। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच फाइल नं० (८००) पृष्ठ ५० से भी।

१३०. पत्र : शारदा सी० शाहको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय शारदा,

मंगलाको लिखे पत्रमें शून्यवत्का अर्थ देख जाना।[1] यहाँ बारिश नही हुई है। मेरा खयाल है मै किसीसे पक्षपात नही करता। बाबा मूलदासने यदि सचमुच ही वैसा कहा हो जैसा कि उनके बारेमें कहा जाता है, तो निश्चय ही उन्होने गलत काम किया।[2] उससे विधवाका भी अहित हुआ। किसीके दुखको मिटानेके लिए भी झूठ नही बोलना चाहिए। इस तरह दुख मिट ही नही सकता।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५२) से; सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

१३१. पत्र : जेकोरको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय जेकोर,

जो रिहा कर दिये जाते हैं वे वापस लौट जाते है। यह एक व्यर्थ प्रश्न है। जब कोई विशेष बात पूछनेको न हो तो कुछ नही पूछना चाहिए। लेकिन अपने कामका विवरण हर हफ्ते लिखो। (तुम्हारी) लिखावट अच्छी है, लेकिन उसमें सुधारकी अभी भी बहुत गुंजाइश है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल न० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ५३।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. शारदाने पूछा था: "मूल्दासने विधवाको अपनी विवाहिता स्त्री कहकर बचाया, क्या यह उचित था? विधवाको बचानेके लिए भी क्या झूठ बोला जा सकता है?"

१३२. पत्र : पुष्पा एस० पटेलको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय पुष्पा,

तुम्हारा पत्र मिला। सुलतानका अर्थ है राजा। वह बहुत-कुछ कर सकता है। लेकिन वह सारी उम्र ईश्वरकी आराधना न करे और बुढापेमे करने लगे, तो ऐसा नही हो सकता। कोई वजह नही है कि तुम हिन्दीमे पत्र क्यों [न] लिखो। यह उचित होगा कि तुम लिखो। लेकिन मेरी हिन्दी शायद शुद्ध न हो, और इसलिए यदि मै हिन्दीमे लिखूं तो वह गलत सबक होगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५३।

१३३. पत्र : आनन्दीको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय आनन्दी,

तुम अपनी लिखावट खराब करते रहे हो। यह ठीक नही है। क्या तुम बाईको पत्र लिखते हो? तुम अपना सारा दिन किस प्रकार व्यतीत करते हो?

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५३।

१३४. पत्र : इन्दु एन० पारेखको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय इन्दु,

तुम्हारे वजनके बारेमें कहना पड़ेगा कि वह काफी कम हो गया है। फिलहाल तुम प्रार्थनामें जाना छोड़ दो। प्रातःकाल जितनी देर सो सको, सोओ। दूधकी मात्रा बढा दो और जिस किसी एक चीजकी मात्रा चाहो, उसी अनुपातसे कम कर दो, और तब देखो कि वजन बढता है या नही। इतना ही काफी है कि तुम जो-कुछ कर सकती हो उसे मनोयोगसे और रुचिपूर्वक करो। फिलहाल (काम) कम बन पडे तो उसकी चिन्ता मत करो।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५५।

१३५. पत्र : माधवलालको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय माधवलाल,

मै तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा कर रहा था। तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा चल रहा है, यह अच्छी खबर है। कताई सम्बन्धी व्रत भंग करनेके लिए उपवास मत करो। इसका पूरा ध्यान रखो कि पुनः व्रत-भंग न हो और इसीलिए चरखेके साथ तकली का भी प्रयोग चलता रहे। आश्रममे तकली चलानेका जो नया तरीका अपनाया गया है उससे कुछ लोग प्रति घटे ३०० गज सूत कात रहे है। प्रार्थनामे कोई व्याघात नही होना चाहिए। (प्रार्थना देरसे की जाये) इसकी चिन्ता नही। देरसे न की जाये तो ज्यादा अच्छा होगा। पर देर भी हो जाये तो ऐसा नही होना चाहिए कि प्रार्थना की ही न जाये। खाना छोड़ा जा सकता है लेकिन प्रार्थना नही। इन परिस्थितियोमें दैनन्दिनीका (न होना) मै क्षम्य मानता हूँ। अहिंसा कड़े अध्यवसाय द्वारा ही प्राप्त हो सकती है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५५।

१३६. पत्र : पूँजाभाई एच० शाहको

१ जुलाई, १९३२

प्रिय पूँजाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। शरीरका मोह छोडते जाओ ताकि जब उसके छूटनेका अवसर आये तो तुम्हारे मनमें पूर्ण शान्ति रहे।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५९।

१३७. पत्र : श्रीपाद दा० सातवलेकरको

१ जुलाई, १९३२

भाईश्री सातवलेकरजी,

आप शायद जानते होंगे कि मेरे साथ यहाँ सरदार वल्लभभाई और महादेव हैं। सरदारकी इच्छा संस्कृतका परिचय कर लेनेकी है। महादेव उनकी मदद करेंगे। कृपया आप अपनी संस्कृत पाठावलि (१-२४) भेज दीजिए। आप कुशल होंगे। हम तीनों कुशल हैं।

आपका,
मोहनदास

श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर
स्वाध्याय-मण्डल
औंध
जिला सतारा

मूलकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७६२)से; सौजन्य: श्री० दा० सातवलेकर

१३८. पत्र : दूधीबहन वी० देसाईको

२ जुलाई, १९३२

चि० दूधीबहन,

तुमसे मैं यह अपेक्षा रखता हूँ कि तुम्हारी पसन्द यह हो कि तुम्हारे हाथ बना अच्छेसे-अच्छे सूतका कपडा अन्य लोग पहने और तुम स्वयं खराबसे-खराब खादीका कपडा पहनकर निर्वाह करो। लेकिन तुममें यदि इतना साहस न हो तो तुमसे जितना बन सके उतना करना। मेरे दबावमे आकर अथवा मेरा लिहाज करके कुछ नही करना चाहिए। मुझे तो जो कर्त्तव्य दिखाई दिया सो मैंने बताया, लेकिन उसका पालन तो सामर्थ्यानुसार ही हो सकता है और फिर यदि मैं जो चाहूँ वह न हो पाता हो तो उससे दुःखी भी न होना। तुम दुःखी होगी तो मुझे धर्मका निरूपण करनेमे संकोच होगा। वालजीका समाचार मुझे मिलता रहता है। ईश्वर उनकी रक्षा करता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३२) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई

१३९. पत्र : मणिबहन पटेलको

२ जुलाई, १९३२

चि० मणि,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा सन्देश मिला होगा। तुमने पूनी भेजनेका विचार करके पूनी भेजनेका पुण्य प्राप्त कर लिया। नही भेजी सो ठीक ही किया। अब यहाँ कोई खराब पूनी नही रह गई है। अभी हमारे पास जो पूनियाँ पडी है वह काफी है। सबकी सब महादेवने ही बनाई है। लगभग दो माससे इकट्ठी हो रही है। महादेव ज्यादातर छक्कड़दासकी भेजी हुई पूनीका इस्तेमाल करता है, क्योकि उसकी रुई उत्तम है और वह बहुत यत्नसे बनाई गई है। मै मगन-चरखे पर महादेवके समान महीन सूत कभी नही कात सकता। मेरा सदैवसे यह विचार रहा है कि यज्ञके सूतका उपयोग अपने लिए नही करना चाहिए और यह ठीक भी है। यदि यज्ञके निमित्त कातनेवाला व्यक्ति कातनेमें लापरवाही करता है तो समझो कि उसकी परीक्षा हो गई और वह असफल रहा। यज्ञका सूत सबसे ज्यादा सावधानीके साथ काता जाना

१. वल्लभभाई पटेलकी पुत्री।

चाहिए। यदि व्यक्ति जितना काते उतना देकर अपने लिए अच्छा-बुरा जो मिले उसका उपयोग करे तो यह बहुत अच्छी चीज है। लेकिन यदि वैसा करनेका मनमें साहस न हो तो अन्तमें यज्ञके लिए एक घंटा अथवा आधा घंटा रखकर सूतके १६० तारको अवश्यमेव कृष्णार्पण कर देना चाहिए।

तुम सामूहिक प्रार्थनाको पसन्द करती हो यह बात बिल्कुल समझमे आती है, क्योंकि तुम्हारी प्रार्थना इसी रूपमे शुरू हुई थी। लेकिन तुम्हें अकेले प्रार्थना अवश्य करनी चाहिए, फिर भले ही वह एक मिनटके लिए हो। अन्तमें हृदयमें निरन्तर ईश्वरकी रटना होनी चाहिए और यह तबतक सम्भव नही हो सकता जबतक अकेले प्रार्थना करनेकी आदत न हो। अकेले प्रार्थना तो सोते, स्नान करते और खाते, चाहे कोई भी क्रिया करते समय की जाती है। इसलिए उसका कोई बोझ नही होता। इसके विपरीत उससे मन हलका हो जाता है—होना चाहिए। ऐसा अनुभव न हो तो प्रार्थना कृत्रिम समझनी चाहिए।

डाह्याभाई[1] की समस्या जरा कठिन है। लेकिन वह बहुत समझदार है, इसलिए अपने-आप स्थिर हो जायेगा। इसमे उसका कोई मार्गदर्शन नही कर सकता। यदि उसकी फिरसे विवाह करनेकी इच्छा हुई तो उसे कोई रोक नही सकता। और यदि वह विवाह न चाहे तो कोई उसे इसके लिए प्रलोभन नही दे सकता। जात-बिरादरीके लोग तो इसके लिए उसे परेशान करते ही रहेंगे। लेकिन डाह्याभाई उनसे निपट लेगा और तुम तो निश्चय ही निपट लोगी। मेरा लोगोंसे मिलना बन्द हो गया है। यह बात उस समय बहुत खटकती है जब इस तरहके प्रसंग उठ खडे होते हैं। लेकिन यह सब सहन करनेमें ही हमारा धर्म है। बायें हाथकी कुहनी विशेष ढगसे हिलाने पर दर्द होता है। अभी लगभग एक माससे मेरे कपड़े नौकर धोता है। मेरे बर्तन जेलके ही हैं। वे चमकते तो नही हैं लेकिन साफ अवश्य रहते हैं। तुम अपनी सेहतका ध्यान रखना। बराबर लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल
मार्फत डा० बलवन्तराय कानूगा
एलिस ब्रिज, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

१. मणिबहन पटेलके भाई।

१४०. पत्र : एक मित्रको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय . . .[१],

तुम्हारा पत्र और दैनन्दिनी प्राप्त हुए। यह दैनन्दिनी वापस करनी है या मैं इसे फाड कर फेंक दूं? तुम्हारी बीमारी पुरानी है। लेकिन दिल मत छोटा करो। पवित्र होनेके लिए प्रतिदिन ईश्वरसे प्रार्थना करो और इससे तुम्हारी विषय-लिप्सा शान्त हो जायेगी।

. . .[२] ने (तुमको) आम भेजे, इसमें उसकी कोई गलती नही है। यदि तुम उन्हें नही चाहते थे तो तुम्हे चाहिए था कि किसी औरको, किसी मजदूरको दे डालते। तब . . .[३] दुबारा नही भेजती। स्त्री अपने पतिकी कमजोरीको निश्चय ही जानती है और मिथ्या स्नेहके वश उस (कमजोरी)को पोषण देती है। यदि पति (अपने प्रति) सच्चा रहे तो वह उस कमजोरीको छोड़ देता है और तब स्त्री उसको प्रलोभन नही दे पायेगी।

और फिर, . . .[४] का क्या कसूर है? . . .[५] जो कहती है उसपर मुझे विश्वास है। उसके मनमे शरीर-भोगकी कोई इच्छा नही है। उसके मनमें किसी पुरुषके प्रति विषयासक्ति नही उत्पन्न होती। अतः उसपर सन्देह करनेका कोई कारण नही है। लेकिन मान ले कि वह झूठ बोलती है; तो भी उसपर सन्देह करनेका हेतु क्या है? एक पत्नी अपने पति पर सन्देह नही कर सकती। पति विषय-भोगका आनन्द लेता है तो पत्नी उसे सहन करती है। फिर पुरुष पत्नी पर क्यों नजर रखे और क्रोध करे? स्त्री जैसा चाहे वैसा करे। यदि स्त्री साध्वी नही रहना चाहती तो पति उसे बलपूर्वक साध्वी बना कर नही रख सकता। जो शुद्ध रहना चाहते हैं, वे ही शुद्ध रह सकते हैं। इसलिए यह उचित लगता है कि तुम . . .[६] का दोष निकालनेका विचार अपने मनसे भी निकाल बाहर करो। एक-दूसरेका दोष ढूंढ़नेसे तुम दोनोका ही अहित होता है। इसके अलावा, किसी व्यक्तिपर सन्देहवश दोषारोपण करना पापपूर्ण और अनुचित भी है। यह तो सर्वथा दुर्बलताका लक्षण है। इस कमजोरीको मनसे निकाल फेको। तुमने ऐसी चीजोको दैनन्दिनीमे लिखकर अच्छा किया है।

ईश्वर तुम्हें शान्ति और पवित्रता प्रदान करे। विट्ठलदास मजेमें होगा।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४९।

१, २, ३, ४, ५, और ६. नाम नहीं दिये गये है।

१४१. पत्र : सिद्धिमतीको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय सिद्धिमती,

तुम्हारा पत्र मिला। हिन्दी भलीभाँति सीख लो। पहले तुम्हारा वजन कितना था? क्या तुम हिन्दी अच्छी तरह समझ लेती हो?

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ट ६१।

१४२. पत्र : धीरूको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय धीरू,

मैं ड्राइंगके बारेमें गजानन[1]को लिख रहा हूँ। इसमें दूसरोंकी कुछ मददकी जरूरत है। अभ्यास और ज्यादा होना चाहिए।

मैं उर्दूकी कापी धीरे-धीरे लिख रहा हूँ। तुम्हें कापी चाहिए या तुम यह देखना चाहते हो कि मैं कापी पर किस प्रकार लिख रहा हूँ? यदि तुम यह देखना चाहते हो, तो मैं जिन पृष्ठों पर लिख चुका हूँ उन्हे फाड़कर तुम्हे भेज दूँ। और यदि तुम एक कापी ही चाहते हो तो वह तो वहाँ भी मिल सकती है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेट, स्पेशल ब्राच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ६१।

१. ना० मो० खरेका रिश्तेदार; देखिए अगला शीर्षक।

१४३. पत्र : गजानन वी० खरेको

२ जुलाई, १९३२

चि० गजानन,

अब तो गुजराती पढ़ना आ गया होगा? धीरूकी ड्राइंग सीखनेकी तीव्र इच्छा है। अन्य लोग भी तैयार हो सकते हैं। यदि हो सके तो ऐसे लोगोके लिए थोड़ा समय निकाल लेना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३०७) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन एन० खरे

१४४. पत्र : शान्तिको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय शान्ति,

इस बार तुम्हारी लिखावट अच्छी है। इसी प्रकार लिखो। यह अच्छी बात है कि मौन (प्रार्थना) के समय तुम्हे नीद नही आती।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ६३।

१४५. पत्र : लक्ष्मी जेराजाणीको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय लक्ष्मी,[1]

कोई काम करते वक्त मेरा हाथ दर्द करता है। यह लकवा नही है। चिन्ता का कोई कारण नही है। आराम ही सबसे बड़ा उपचार है।

विट्ठलदासने मुझे एक्जिमाके बारेमें लिखा था। यह मानना पड़ेगा कि रेडियम प्रभावोत्पादक सिद्ध हुआ।

१. विट्ठलदास जेराजाणीकी भतीजी।

अपने दैनिक कामकी सूचना मुझे अवश्य भेजो।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ६३।

१४६. पत्र : लीलाधरको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय लीलाधर,

लड़कियाँ शौचघरके बारेमें जानती हैं। मैंने तो यों ही मजाक किया था। नारणदासने शान्तिके बारेमें लिखा था। फिलहाल उसे अपने साथ रहने दो। उसकी मूर्खताओंको प्रेमसे दूर करो; गुस्सा मत होओ।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ६३।

१४७. पत्र : त्रिवेणी जे० मेहताको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय त्रिवेणी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने अच्छा विवरण दिया है। अस्पतालोंमें बहुत दुर्व्यवस्था है और इसीलिए यह आवश्यक है कि वहाँ साध्वी स्त्रियाँ काम करने लगें। हाँ, अनुभव प्राप्त करनेकी दृष्टिसे तो यह ठीक ही है। यदि मन काममें लग जाये तो यह काम निश्चय ही ऐसा है कि इसमें पूरा जीवन लगाया जा सकता है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ६३।

१४८. पत्र : विद्याको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय विद्या,[1]

मुझे बहुत सन्तोष है कि तुम क्वेटा पहुँच गईं। वहाँकी आबहवाका पूरा-पूरा फायदा उठाना और जितनी दूर पैदल चल सको, चलना। वहाँकी दृश्यावलि और मौसमका विवरण लिखना। वहाँ रहनेवाले लोग कौन हैं?

तुमने जो लिखा है वह वस्तुतः सही है। यदि मशा अच्छा हो तो मनको सुख मिलता है। ईश्वर करे तुम्हारा सुख निरन्तर बढ़े और चिरस्थायी हो।

यदि तुम्हे आनन्दकी कोई सूचना है तो कृपया लिखना। तुम वहाँ अपना समय कैसे व्यतीत करती हो?

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०), (३) भाग २, पृष्ठ ७३।

१४९. पत्र : मंजुलाबहन एम० मेहताको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय मंजुला,[2]

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे पता चला है कि तुम फिलहाल आश्रम नही जा रही हो। जब जाना मुमकिन हो, तब जाना। अपना दैनिक कार्यक्रम लिखो। देवदास अब स्वास्थ्यलाभ कर रहा है। तुम्हे अब मगनलालके पत्र मिल रहे होगे।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मंजुलाबहन
सेठ नौतमलाल भगवान मेहताका मकान
जैतपुर, काठियावाड़

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १०७।

१. सम्भवतः विद्या हिंगोरानी, आनन्द हिंगोरानीकी पत्नी।
२. प्राणजीवन मेहताके लड़के मगनलाल मेहताकी पत्नी।

१५०. पत्र : राधा गांधीको

२ जुलाई, १९३२

प्रिय राधिका,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। चूँकि प्रेमकुँवर बहुत कठिनाईमे है, इसलिए उसका वहाँ जाना सम्भव नही है। क्या केवल तुम माँ-बेटी ही वहाँ हो? सौदा-सुलफ आदि कौन करता है? ऐसा नही लगता कि परिवारका कोई पुरुष वहाँ हो। उस स्थानकी सुविधाओको देखते हुए उनकी कोई जरूरत भी शायद न हो। तुम कितना खर्च करती हो? क्या तुमने कोई हिसाव रखा है? क्या वहाँ नलका पानी है? क्या रूपी[2] का फिर कोई हाल मिला? ऐसा लगता है कि तुमने अच्छी प्रगति की है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती राधाबहन गांधी
भाटिया सेनिटोरियम
देवलाली

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग, २, पृष्ठ १११।

१५१. पत्र : छगनलाल जोशीको

[३ जुलाई, १९३२ से पूर्व][3]

जो भोजन पच जाता है वह सबका-सब रुधिर आदिमे परिर्वातत नही हो पाता और जब वह शरीरमें अच्छी तरह आत्मसात् हो जाता है तो वह शरीरको वनाने वाले अनेक तत्वोमे परिर्वातत हो जाता है। इसी तरह हम जो पढ़े उसे अच्छी तरह आत्मसात् कर लें, ठीक उसी तरह जैसे खाद वृक्षमे रम जाती है और परिणाममे फल पैदा होते है।

[गुजरातीसे[
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. मगनलाल गांधीकी पुत्री।
२. अभिप्राय शायद रूखीसे है जो राधाकी वहन थी।
३. साधन-सूत्रमें पत्रपर ३-७-१९३२ तारीख दी गई है।

१५२. पत्र : मगनभाई पटेलको

२/३ जुलाई, १९३२

भाई मगनभाई,

रावजीभाई द्वारा अपनी जमीनके बारेमें भेजा पत्र मिला। उसमे उन्होंने लिखा है कि तुम जमीन बेचना जरूरी समझते हो, और तुम ऐसा भी मानते हो कि रावजीभाईकी उपस्थितिमे जितने दाम मिल सकते है उतने उनकी अनुपस्थितिमें नही मिल सकते। इस मसले पर स्वयं कोई निर्णय करनेके वजाय रावजीभाईने फैसला मुझपर और सरदार (वल्लभभाई पटेल) पर छोड़ दिया है। आपसमे सलाह करके हम इस नतीजे पर पहुँचे है कि इस मामलेमें तुम्ही ज्यादा जानते हो। रावजीभाई या हम लोगोके सामने पर्याप्त जानकारी न होनेके कारण हम कोई निर्णय नही कर सकते। कोशिश करके अगर तुम सभी जरूरी जानकारी हमे भेज भी दो, तब भी वह अपर्याप्त ही मानी जायेगी। ऐसे मामलोमें जबतक आदमी खुद मौके पर न हो तबतक कोई निर्णय नही किया जा सकता और न किया ही जाना चाहिए। इसलिए हम इस निर्णय पर पहुँचे है कि परिस्थितियोका खयाल करते हुए जो ठीक हो, वैसा तुम्हें करना चाहिए। अगर तुम्हे लगे कि जमीन बेचनी चाहिए तो तुम बिना किसी हिचकके उसे बेच दो। और यदि तुम्हे लगे कि उसे रखा जा सकता है — और रखना जरूरी है — तो रावजीभाईके रिहा होने तक इन्तजार करो। जिस चीजमे ज्यादा फायदा हो, वह निर्भय होकर करो। हम दोनों ही जानते है कि रावजीभाईकी तीव्र इच्छा है कि धारालाओके लिए एक आश्रम बनाने भरकी जमीन अलग रख दी जाये। लेकिन यदि ऐसा करनेसे जमीनके कम दाम मिलते हो या कोई कर्ज फिर भी बच रहता हो तो उस पर आग्रह करनेकी कोई जरूरत नही है। यदि आश्रम बनानेकी कोई आवश्यकता हुई तो उसे रावजीभाईके छूटनेके बाद पूरा किया जायेगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४७।

१५३. सत्यका पालन कैसे करें[1]

रविवार, ३ जुलाई, १९३२[2]

जो बात अहिंसा[3] पर लागू होती है वही सत्य पर भी होती है। गायको बचानेके लिए असत्य बोलना चाहिए अथवा नही, ऐसी समस्यामे उलझकर हमारी दृष्टिके आगे रोज-बरोज जो बाते होती है यदि हम उन्हे भूल जाये तो सत्यकी साधना नही हो सकती। इस तरहकी गहन समस्याओमे उलझना तो सत्य पर आवरण डालना है। आज हमारे सामने जो प्रतिदिनकी समस्याएँ आ खड़ी होती है उनके मामलेमे यदि हम सत्यका पालन करते है तो कठिन समयमे हमे क्या करना चाहिए, यह बात हमे स्वयं ही स्पष्ट हो जायेगी।

इस बातको ध्यानमे रखते हुए हममेसे प्रत्येक व्यक्तिको अपनी तरफ ही देखना चाहिए। अपनी समझसे मै क्या किसीको छलता हूँ? मै यदि 'ब'को खराब मानता हूँ और वैसा न कहकर यदि यह कहता हूँ कि वह अच्छा है तो मै उससे छल करता हूँ। क्या मै अच्छा अथवा बड़ा कहलानेकी इच्छासे प्रेरित होकर अपनेमे उन गुणोको बतानेकी चेष्टा करता हूँ जो मुझमे नही है? क्या मै बातचीतमे अतिशयोक्तिसे काम लेता हूँ? अपने दोषोको जिसे बताना चाहिए क्या मै उससे उन्हे छिपाता हूँ? मुझसे मेरा साथी अथवा मुझसे वरिष्ठ व्यक्ति यदि कुछ पूछे तो उसके उत्तरमे मै क्या उसे झाँसा देनेका प्रयत्न करता हूँ? कहने लायक किसी बातको क्या मै छिपाता हूँ? इनमे से यदि मै कुछ भी करता हूँ तो मै असत्यका आचरण करता हूँ। इस तरह प्रत्येक व्यक्तिको नित्य अपने कार्योका लेखा-जोखा करके अपने-आपको सुधारना चाहिए। जो व्यक्ति इस स्थितिको पहुँच गया है कि उसे सत्यकी ही आदत पड़ गई है, और जो अपने मुखसे असत्य वचन बोल ही नही सकता, ऐसा व्यक्ति भले ही नित्य अपनेसे हिसाब न माँगे, लेकिन जिसमे लेशमात्र भी असत्य हो अथवा जो प्रयत्न करके ही सत्याचरण कर सकता है उसे तो उपर्युक्त ढंगसे ऐसे अथवा इसी तरहके अन्य प्रश्नोका उत्तर अपने-आपको अवश्य देना चाहिए। जो व्यक्ति एक माह तक ऐसा करेगा उसे अपने अन्दर हुए परिवर्तनका स्पष्ट दर्शन होगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से।

१. यह लेख "पत्र: नारणदास गांधीको", २८ जून/४ जुलाई, १९३२ के साथ ही भेजा गया था।

२. बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्ससे।

३. देखिए "अहिंसाका पालन कैसे किया जाये", २५-६-१९३२।

१५४. पत्र : फूलचन्द बापूजी शाहको

३ जुलाई, १९३२

भाईश्री फूलचन्द,

आपका ३१-४-१९३२ का पत्र आज ही मिला; और रावजीभाईका १०-६-१९३२ का पत्र भी आज ही आया। इससे हम सबको प्रसन्नता हुई। इस बारके आपके पत्रकी १५ पक्तियाँ पूरी तरहसे काट दी गई है। यदि सम्भव हो तो जिस व्यक्तिके हाथमें [सेन्सरके लिए] यह सारे पत्र आते है उससे अथवा जेल-अधीक्षकसे आप जाकर कहे कि उन्हे जो अश निकाल देने लायक लगे वह आपको बताये और आप दुबारा फिरसे पत्र लिखे। यदि ऐसा हो तो पत्रमें जो तारतम्य टूट जाता है वह न टूटे। वहाँ जितने लोग है उन सबसे कहना कि वे मेरी ओरसे स्वतन्त्र रूपसे पत्रकी आशा या इच्छा न रखे। हालाँकि मुझ पर पत्र-सख्याका प्रतिबंध नही है फिर भी मुझे स्वय ही मर्यादाका ध्यान रखना चाहिए, इसलिए जहाँ तक बन सके मै कम ही पत्र लिखता हूँ। लेकिन जब जेलमे से कोई साथी मुझे पत्र लिखता है तो मै उसको उत्तर अवश्य देता हूँ अथवा यदि किसी जेलमे बहुत सारे साथी हो गये हो तो उनमे से किसी एकको लिख देता हूँ जो सबके लिए होता है। लेकिन यदि कोई मुझे विशेष रूपसे लिखना चाहे, जैसाकि रावजीभाईने किया है, तो जरूर लिखे।

आत्मनिरीक्षण अथवा अध्ययन करनेका जो अपूर्व अवसर हमे आज मिला है वह कोई हमेशा नही मिलता। इसलिए प्रत्येक व्यक्तिको चाहिए कि वह अपने समय को इस तरह व्यतीत करे और उसका व्यवहार ऐसा हो कि वह पल-पलका हिसाब दे सकनेकी स्थितिमे हो; यह स्पृहणीय है।[1] पानीकी एक बूँद भी व्यर्थ नही जानी चाहिए। हमें देशकी हर चीजको, चाहे वह किसीके भी पास क्यो न हो, अपना समझना चाहिए। और अपना समझकर ही हमे उसकी देखभाल तथा उसका उपयोग करना चाहिए। इसमे बहुत-सी बाते आ जाती है। यह बात तो दियेके प्रकाशके समान स्पष्ट है। वहाँ जितने बच्चे हैं उन्हे यदि पत्र लिखनेकी अनुमति मिल जाये और यदि वे किसी अन्य व्यक्तिको पत्र न लिखना चाहे तो उनसे कहिएगा कि वे मुझे पत्र लिखे। यह आश्चर्यकी बात है कि यहाँ अभीतक बरसात शुरू नही हुई है। बहुत करके इस समय तक तो काफी बारिश हो चुकनी चाहिए। किसान चिन्तित है। साथका पत्र रावजीभाईको देना, क्योकि नीचेका अश उनसे सम्बन्धित है।

मैंने सरदारके साथ बातचीत कर ली है और हम दोनों इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि मै अथवा वह यहाँसे कोई सलाह नही दे सकते। स्वयं उपस्थित हुए बिना अनेक तथ्योकी सही जानकारी मिल ही नही सकती। इसीसे हमने मगनभाईको लिख

१. इसके बादकी दो पक्तियां बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें से ली गई है।

भेजा है[1] कि आसपासके समस्त हालातको देखते हुए उन्हे जो उचित जान पड़े सो वे करे। इस आशयका एक विस्तृत पत्र आज ही उन्हे लिखा है। आपका पत्र आज ही मिला है और मैंने उत्तर भी आज ही लिखवाया है। तात्पर्य यह कि यहाँसे एक क्षणकी भी देरी नही की है। रावजीभाईको इस सम्बन्धमे तनिक भी चिन्ता नही करनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४४५-बी) से; सौजन्य : चन्द्रकान्त एफ० शाह

१५५. पत्र : दिनकरको

३ जुलाई, १९३२

भाई दिनकर,

तुम्हारा पत्र मिला। चूंकि मीराबहनसे मुलाकात रोक दी गई है, इसलिए मैंने सभीसे मिलना बन्द कर दिया है। वजनको देखते हुए यह कहा जा सकता है कि तुम्हारे स्वास्थ्यमे काफी सुधार हुआ है। आरोग्यालयके लिए यहाँसे तो कुछ नही किया जा सकता है। 'विश्व-शान्ति' नामक एक पुस्तक मुझे यहाँ मिली है। महादेव और मैंने उसे सरसरी तौर पर देख लिया है। उसकी अच्छाई या बुराईके बारेमे मै कुछ नही जान सकता, क्योंकि कविताका मूल्याकन करना मेरी क्षमताके बाहर है। मै उस रुचिको विकसित ही नही कर पाया। डाक्टरोंका विश्वास है कि केवल मेरे हाथमे थकान बैठ गई है, और कुछ नही। इसीलिए मै उसे आराम दे रहा हूँ। मैंने गलतीसे लिख दिया कि महादेवने भी 'विश्व-शान्ति' को पढ़ लिया है। उसने पढ़ा नही है।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १०९।

[1] देखिए "पत्र : मगनभाई पटेलको", २/३-७-१९३२।

१५६. पत्र : नारणदास गांधीको[1]

२८ जून/४ जुलाई, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक आज ही मिली है। दूध और फल लेते हुए आज सात दिन हो गये है। लेकिन हाथ (के दर्द) पर इसका कोई असर नही हुआ है, कदाचित् होगा भी नही। दूध और फल मुझे अनुकूल ही बैठे है, ऐसा मैं निश्चयपूर्वक नही कह सकता। वस्तुतः देखा जाये तो बादाम, रोटी और सब्जियोका प्रयोग अनुकूल बैठा है, लेकिन फिलहाल तो दूधको चलने दूंगा। कब्जकी थोड़ी बहुत आशंका बनी रहती है। आवश्यकता जान पड़ी तो कदाचित् थोड़ी सब्जियाँ लेना शुरू करूँ। इस बारेमे चिन्ता करने जैसी कोई बात नही।

सीतलासहायके बारेमे तुम जो लिखते हो वह ठीक है। उसका पत्र नासमझी-भरा है और क्रोधमे लिखा गया है। यदि उसका खर्च ज्यादा पड़ता हो तो उसे तुम्हे पूरा-पूरा हिसाब लिख भेजना चाहिए और यदि हिसाब सही हो तो ज्यादा पैसे देनेमे कोई हर्ज नही। इसलिए ज्यादासे-ज्यादा ६० रुपयेकी सीमा निर्धारित करनेकी अपेक्षा ज्यादा पैसे भेजनेसे पहले हिसाब माँगना मुझे विशेष उचित जान पड़ता है। शेष तो मैंने अपनी पिछली डाकमे विस्तारसे लिखा ही है इसलिए यहाँ ज्यादा नही लिखता। गिरि-परिवारके सम्बन्धमे भी यहाँ ज्यादा लिखनेको कुछ नही है।

धीरू और कुसुम यदि शारीरिक श्रम करें और दूध बराबर ले तो वजन बढ़ सकता है।

निर्मला जोशीका कोई पत्र आता है क्या? लीलाबहनकी कदाचित् उसे खबर हो। उसका पता तुम्हे मालूम है?

टाइटस[2]के सम्बन्धमे तुम्हे जो उचित लगे सो करना। यदि तुम्हे उसके कार्यसे सन्तोष हो और उसकी माँग उसकी आवश्यकताओंके अनुरूप हो तो उतना देना कदाचित् उचित ही होगा। [दांडी कूचकी] टुकड़ीमे[3] शामिल होनेके बावजूद जो व्यक्ति टुकडीमें न होकर इस समय अन्य काम पर लगा हुआ है उसके आश्रित यदि उसपर आशा रखते हैं तो यह स्वाभाविक ही है; इसलिए यदि हम टुकड़ी-वालोंकी प्रतिज्ञाके अक्षरशः पालन पर आग्रह करें तो कदाचित् अन्याय होगा।

१. यह पत्र "सत्यका पालन कैसे करें", ३-७-१९३२ के साथ भेजा गया था।

२. हिगिनबॉटम एग्रीकल्चर कालेजका एक स्नातक तथा आश्रममें पारनेरकर द्वारा प्रशिक्षित एक अन्तेवासी।

३. देखिए खण्ड ४३।

पारनेरकरका कार्य तो बहुत बेहूदा माना जायेगा। बिना अनुमति प्राप्त किये चले जाना और बादमें सन्देश भेजना, यह निश्चय ही ठीक नही है। तिस पर भी उसका उद्देश्य अच्छा है, पर मन अत्यन्त दुर्बल हो गया है, इसलिए उसका दोष बतानेकी इच्छा नही होती। उसका त्याग तो अवश्य ही सुन्दर है। इसलिए यदि उसकी माँको कुछ पैसा भेजना उचित जान पड़े तो भेजना। न्यायकी रूसे तो ऐसा नही किया जा सकता, यह मैं समझ सकता हूँ। अनेक बार शुष्क न्याय अन्यायका रूप धारण कर लेता है। मनुष्यके हृदयमें पैठना अत्यन्त कठिन है। अतएव जहाँ पैसेका सवाल आता है वहाँ मेरा झुकाव इस बातकी ओर होता है कि यदि हम कुछ दे सकनेकी स्थितिमें है तो हमें देना चाहिए।

रामराव और प्रताप फिलहाल कहाँ है? फादर एल्विनको सन्तोष हो गया, इतना ही काफी है। वे हमसे मीराबहनके जैसी सार-सँभालकी आशा भी नही करते होगे और हमसे उतना किया भी नही जा सकता। मीराबहन जिसे चाहती है उसकी सार-सँभाल वह इतने प्रेमभावसे और सूक्ष्म रूपसे करती है जितनी कदाचित् और कोई व्यक्ति नही कर सकता। इसलिए उसके साथ होड़ नही की जा सकती। इमाम साहबकी कब्रका काम हाथोहाथ पूरा हो गया, यह अच्छा हुआ।

अन्नपूर्णाके विषयमें मैंने जीवरामको जो लिखा है वह तुमने देखा होगा। शरतचन्द्र पटनायक, तुम्हारे लिखनेके मुताबिक तो योग्य पुरुष लगता है। यदि वह अन्नपूर्णासे विवाह करता है तो इसके पीछे परोपकारकी भावना ही होनी चाहिए। तथापि इसमें भाई जीवरामकी भी सहमति होनी चाहिए और अन्नपूर्णाकी भी राजी होनी चाहिए। अन्नपूर्णाकी सारी कहानीको जाननेके बावजूद यदि शरतचन्द्र उससे विवाह करता है तो उसे मेरा आशीर्वाद तो है ही, साथ ही वह बधाईका पात्र भी है।

'आत्मकथा' के तुम्हें जो भिन्न-भिन्न अनुवाद प्राप्त हुए है उनकी प्राप्तिकी सूचना तो तुम देते ही होगे। केशु ५० अंकका सूत ३५० की गतिसे' कातता है, इसे मैं एक अच्छी रफ्तार मानता हूँ। किस प्रकारके चरखे पर कातता है?

जिन कमरोमें सामान भरा हुआ हो उन्हें भी अमुक समय पर खोला जाना चाहिए। ऐसे बड़े विभागोंमें सामान्यतः यह नियम होता है कि अमुक मकान पिछली बार कब साफ किया गया था और आगे किस दिन किया जायेगा, इन दोनो बातोकी तारीख उसी मकान पर लिखी रहती है। इसलिए भविष्यके कामोकी सूचीमें इस बातका उल्लेख हो अथवा न हो, लेकिन चूँकि उन मकानों पर तो लिखा ही होता है अतः इसे देखनेकी आदत पड़ गई हो तो स्मरणशक्ति पर दबाव डाले बिना उस कार्यके लिए नियुक्त व्यक्ति अपना काम करते ही रहेंगे।

बारीक अंकके लिए पूनीके अलावा तकुआ, माल और चमरखका भी अच्छा होना जरूरी है। मगन-चरखे पर जो तकुआ और पेटी लगी हुई है उससे अच्छीसे-अच्छी पूनीसे भी ५० अंकसे ज्यादा सूत नही काता जा सकता। आन्ध्रकी स्त्रियाँ जिस चरखे पर ८० अंकका सूत निकालती है उसका तकुआ अत्यन्त नाजुक होता

है, छातेकी तीलियोके समान पतला और छोटा होता है। माल भी बहुत पतला होता है। इसीसे वे स्त्रियाँ अत्यन्त महीन सूत कात सकती है। इस दृष्टिसे तुम अपने तकुए और पेटीकी जाँच कर जाना। मेरा निजी अनुभव तो यह है कि गाडीव चरखे पर आसानीसे जितना महीन काता जा सकता है उतना महीन सूत उतनी आसानी से अन्य किसी चरखे पर नही काता जा सकता और इसका मुख्य कारण यह है कि गाडीवकी माल अत्यन्त महीन होती है। अपनी आँखोसे देखनेके बाद मुझे लगता है कि ऐसी महीन माल खड़े चरखे पर नही चल सकती। इसके अतिरिक्त हम गाडीव चक्र पर जो नियन्त्रण प्राप्त कर सकते है वैसा नियन्त्रण हम खड़े चरखे पर कदापि प्राप्त नही कर सकते। और यही कारण है कि गांडीवका मोढ़िया भी हम जितना नाजुक रख सकते है उतना किसी और चरखेका नही रख सकते। महीनसे-महीन सूत कातनेकी कला हमे सीख लेनी चाहिए। और इस दृष्टिसे मेरी अपेक्षा जिन लोगोको बहुत ज्यादा अनुभव है ऐसे लोगोको भिन्न-भिन्न चरखो पर प्रयोग करके इसकी जाँच करनी चाहिए।

तुमने जो सक्षिप्त विवरण लिख भेजा है वह मै पढ गया हूँ। और चूँकि पिछले पत्रो[1] मे इस सम्बन्धमे मै बहुत कुछ लिख चुका हूँ इसलिए इस समय विशेष लिखनेको नही है। अब प्रति सप्ताह इसे भेजनेकी कोई जरूरत नही है। आँकडोका अभ्यास करनेके बाद यदि कोई फेर-बदल करो तो वह मुझे लिखना। यदि तुम्हे कोई नई जानकारी प्राप्त हो और यदि तुम अपनी ओरसे कुछ लिखना चाहो तो लिखना। तुम्हारे भेजे हुए रजिस्टरको मै सँभाल कर रखूँगा ताकि इसका उल्लेख करते हुए यदि तुम कुछ लिखोगे तो उसमे से देखकर समझ लूँगा। मै स्वयं इसमेसे बहुत जानकारी हासिल कर रहा हूँ और इनसे सोचनेको भी बहुत मिलता है। प्रत्येक व्यक्तिका परिचय देकर तुमने ठीक किया है।

पडितजीके पत्र परसे देखता हूँ कि तुम सवेरे भी पाँच मिनटका मौन रखते हो। यदि तुम्हे इसका अच्छा परिणाम दिखाई दिया हो तो इन पाँच मिनटोको भले ही रहने दो, लेकिन मेरा अपना सुझाव तो साँझकी प्रार्थनाके सम्बन्धमे था। सारा दिन काम करनेके बाद जब लोग आते है तब उन्हे ध्यान-मग्न होनेमे समय लगता है। पाँच मिनटकी भी शान्ति हो तो ध्यान-मग्न होनेमे बहुत मदद मिलती है। सवेरेकी प्रार्थनामे इससे विपरीत होता है। इसलिए इस दृष्टिसे मौनकी जरूरत नही होती। पडितजी मानते है कि अनेक लोग तो इन पाँच मिनटोका उपयोग नीदका झोका लेनेमें करते है। यह तो मैने इन पाँच मिनटोका बाह्य दृष्टिसे विश्लेषण किया। अन्तर्दृष्टिसे विचार करे तो प्रार्थनामे जितना मौन रखा जाये उतना अच्छा है। लेकिन यह केवल उन्ही लोगोके लिए है जो इससे लाभ उठा सके। इसका अर्थ यह नही करना कि तुम सवेरेका पाँच मिनटका मौन अब बन्द कर दो। एक अच्छी चीजको आरम्भ करनेके बाद स्पष्ट ही उसे तुरन्त हटाया नही जाना चाहिए। लेकिन

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको," ८/१३-६-१९३२ और २२/२६-६-१९३२।

यदि पंडितजी जैसा अनुभव तुम्हे भी हो और पाँचके बदले एक मिनट करनेकी तुम्हारी अपनी मर्जी हो, और मैंने दोनो समय पाँच-पाँच मिनटका मौन रखनेका सुझाव दिया है, — यदि तुम ऐसा ही समझे हो तो सवेरेके पाँच मिनटके लिए तुम अपने लिए फेर-बदल कर सकते हो। इतनी छूटके लिए ही मैंने इतना लिखा है।

३ जुलाई, १९३२

पडितजीके पत्रमे इस बातका संकेत है और महादेवने भी सवाल उठाया है कि बालकोंको पूरी नीद नही मिलती। उन्हे कमसे-कम अविच्छिन्न आठ घंटे मिलने चाहिए। वे तभी मिल सकते है जब वे साढ़े सात बजे सोये। मतलब यह कि यदि उन्हे सवेरे साढ़े तीन बजे उठाना हो तो उन्हे आठ घटे मिलने ही चाहिए, यह तो मैं भी मानता हूँ। बड़े लोगोंको भी यदि उतना ही आराम मिले तो यह अभीष्ट है। इसका एक उपाय तो यह है कि साँझकी प्रार्थना सात बजे शुरू करके साढ़े सात बजे बन्द कर देनी चाहिए। वस्तुतः देखा जाये तो ७.२० पर ही। लेकिन कमसे-कम आधा घंटा प्रार्थना अवश्य की जाये। इस दृष्टिसे प्रार्थना ६.५० पर आरम्भ होनी चाहिए अथवा प्रार्थनाकी घटी सवेरे ४ बजे बजानी चाहिए और प्रार्थना ४.३० पर शुरू करनी चाहिए। दूसरा रास्ता यह है कि बालकोकी प्रार्थना अलगसे रखी जाये और वह भी तब जब बालकोंकी क्लास शुरू हो। उस समय भी प्रार्थना तो होती ही है। इतनेसे ही हमे सन्तोष कर लेना चाहिए। तात्पर्य यह कि एक तो उन्हें प्रार्थना करनेकी आदत पड़नी चाहिए। यह प्रार्थना वे जब उठे तब कर लें। सामान्य रूपसे उठना ४ बजेसे देरसे नही हो सकता। प्रार्थना ४.३०से देरीसे नही होनी चाहिए। बच्चोंको [सोनेके लिए] आठ घटे तो अवश्य मिलने चाहिए। इन दो चीजोंको अनिवार्य समझकर, सब लोग मिलकर, जो परिवर्तन उचित लगे सो करना। बालक किसे माना जाये, इस बातपर विचार कर लेना। जो बच्चे बाल्यावस्था और युवावस्थाके बीच हो यदि वे अपने-आपको बच्चे कहलाना चाहे तो उन्हे बच्चे मानना। ऐसे बालकोके लिए यह नियम होना चाहिए कि उन्हे इस तरह ज्यादासे-ज्यादा एक वर्ष तक बालक समझा जाये। जो बीमार हो वे बच्चे सवेरेकी प्रार्थनासे मुक्त रह सकते है। इन्दु जैसे बच्चोको, उनकी इच्छा हो अथवा न हो तो भी, इससे मुक्त रखना चाहिए। मतलब यह कि जिनका वजन हमेशा कम होता रहता है उनपर जल्दी उठनेका बोझ नहीं होना चाहिए। इन्दुको दस बजे तक नीद ही नही आती, यह तो अच्छी बात नही है। यदि उसकी खाट खुलेमे तुम्हारे समीप ही बिछाई जाये तो उसे नीद आये बिना न रहेगी। सवेरेकी प्रार्थनासे भले ही वह मुक्त रहे, फिर भी जल्दी सोनेकी आदत उसे पड़नी ही चाहिए। इन सब पर सोच-विचार कर जो फेरबदल करना ठीक लगे सो करना।

शामल परेशान दिखाई देता है। मैंने उसे तुमसे बात करनेको लिखा है[1] लेकिन उसके आनेकी प्रतीक्षा न करके तुम ही उसे बुलाकर पूछना।

१. देखिए "पत्र : शामल आर० रावलको", १-७-१९३२।

मंजुलाका पत्र आया है। उसमें वह लिखती है कि फिलहाल आश्रम जाना मुल्तवी हो गया है। कदाचित् उसने तुम्हें भी पत्र लिखा होगा। उसने न आनेका कारण नही दिया है।

मेरा बायाँ हाथ वैसा ही है। ऐसा लगता है कि समय आनेपर केवल आराम करनेसे ही वह ठीक होगा। इसकी चिन्ता करनेका कोई कारण नही। जेल-अधीक्षकके आग्रहसे दूध लेता तो अवश्य हूँ, लेकिन उसमे मुझे अभी कोई विशेष लाभ नही दिखाई देता। तथापि फिलहाल दूध लेता रहूँगा। साथमें डबलरोटी नही, अपितु चपाती लेता हूँ और एक जून शाक भी लेता हूँ। आजकल कराचीमे अंगूरोका मौसम है, अतः लालवा[1] भेजते रहते है। वह भी लेता हूँ। वजन १०४ पौंड हो गया है।

सूतके सम्बन्धमें यदि तुम शारदाबहन[2] से मिलो तो कदाचित् बहनोंसे यज्ञका सूत मिल सकता है। सूतकी भूखकी पूर्तिके लिए कुछ-न-कुछ उपाय खोजे जाने चाहिए —यदि सम्भव हो तो।

जमना और पुरुषोत्तम राणावावमे किस तरह दिन बिताते हैं? उनकी दैनन्दिनी तुम्हे मालूम हो तो लिखना।

बा से कहना कि उसका एक ही पत्र मुझे मिला था। उसे मेरे पत्र मिलते है कि नही।

बापू

४ जुलाई, १९३२

आश्रमके लिए थोड़े नियमों[3] और प्रार्थनाके[4] बारेमे मैंने लिखा था वह तुमने लगता है, सबको नही भेजा है। उसकी एक प्रति मुझे भेजना। महादेवकी बड़ी फ्रेंच डिक्शनरी उसकी आलमारीमें है। उसे और उर्दू 'आत्मकथा'—ये दोनों पुस्तकें—मैंने प्रेमाको जो उर्दू पुस्तके भेजनेके लिए लिखा है, उनके साथ भेजना। निर्मला[5] लिखनेसे क्यों हार गई है? महादेव पूछता है कि दुर्गाने पैसेके बारेमें और अपनी तबीयतके बारेमें नही लिखा है, वह महादेवके पत्रमे यह सब लिखे। मै जो रोटी लेता हूँ उसे महादेव बनाता है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२३६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. छबीलदास रोछीराम लालवाणी; जे० बी० कृपालानीके बहनोई।

२. शारदाबहन मेहता।

३. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ३७३।

४. देखिए "प्रार्थना", १९-६-१९३२।

५. महादेव देसाईकी सौतेली बहन।

१५७. पत्र : मंगला एस० पटेलको

४ जुलाई, १९३२

प्रिय मंगला,

तुम्हारी छाती और कमरमें दर्द कबसे होने लगा और कितने वर्षोंसे इसे भोग रही हो? अब कैसा लगता है?

सच्चा निष्काम भाव तभी है जब हम यह विश्वास करने लगें कि जो-कुछ हम करते हैं उसका असली कर्ता ईश्वर है। सत्य-सेवीका सबसे बड़ा कर्तव्य यह है कि कैसी भी परिस्थिति क्यों न हो, वह सत्य पर अडिग रहे।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १९७।

१५८. तार : पापाको

[५ जुलाई, १९३२][1]

पापा[2]
गांधी आश्रम, तिरुचेङ्गोडु

तुम्हारे पतिकी[3] मृत्युका समाचार देवदासने तारसे दिया है। हम सभी अत्यधिक दुखी हैं, किन्तु तुम मृत्युपर शोक न करना। यह तो मानवमात्रकी नियति है। याद रहे तुम एक बहादुर बापकी बेटी हो। ईश्वर तुम्हें शान्ति प्रदान करे। हम सबका प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ११।

१. देखिए "पत्र : देवदास गांधीको", ५-७-१९३२।
२. च० राजगोपालाचारीकी पुत्री।
३. वरदाचारी।

१५९. तार : च० राजगोपालाचारीको

[५ जुलाई, १९३२][1]

च० राजगोपालाचारी
बन्दी, डिस्ट्रिक्ट जेल
वेल्लोर

देवदासके तारसे पापाके शोकका समाचार पाकर हम सब अत्यन्त दुःखी है। लेकिन तुम्हे हमारी सान्त्वनाकी जरूरत नही है। तुम्हारा तो ईश्वर पर अटल विश्वास है। हम सबका स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल न० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ११।

१६०. पत्र : देवदास गांधीको

५ जुलाई, १९३२

प्रिय देवदास,

अभी-अभी तुम्हारा तार मिला। वरदाचारी नही रहे, यह कौन मान सकता है! इस बातका कुछ भय था कि पापा चल बसेगी, लेकिन वरदाचारी चल बसे। ईश्वरकी लीला अपरम्पार है। यह अच्छी बात है कि यमराज किसीके भी साथ अपनी मैत्री नही छोडते। देर-सबेर वे सभीके प्रति अपना स्नेह प्रदर्शित करते हैं। मैंने पापाको निम्नलिखित तार भेजा है: (तार अंग्रेजीमे है)।[2] यह तार राजाको भेजा है: (तार अंग्रेजीमे है)।[3]

मैंने ऊपर बताये तार दिये है।[4]

राजाको आघात लगेगा, लेकिन उनकी सहनशक्ति मजबूत है, अतः चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नही है। मृत्युका मृत्युके रूपमे मुझपर कोई असर नही

१. देखिए अगला शीर्षक।

२ और ३. यहाँ नहीं दिये गये; देखिए पिछले दो शीर्षक।

४. इसके आगेका अनुच्छेद महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१, के गुजराती अंशसे मिला लिया गया है।

पड़ता। सम्बन्धियोको जो दुख उठाने पड़ते है, उससे मै अवश्य प्रभावित होता हूँ। मृत्युका दुख माननेसे बडा अज्ञान और क्या हो सकता है?

मैने जो पत्र भेजे है वे तुम्हे मिल गये होगे। जो पत्र खोया हुआ माना जाता था वह तुम्हे दे दिया गया है। यह सूचना तुम्हारे सुपरिंटेडेंटने यहाँके सुपरिंटेडेटको भेजी है। अत: मेरे पत्रोकी तुम्हारी भूख शान्त हो गई होगी।

हम तीनो खुश है। कोई नई बात लिखनेकी नही है। मै तुम्हें पहले ही लिख चुका हूँ कि मैने रोटी और दूध लेना शुरू कर दिया है।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेट, स्पेशल ब्रांच, फाइल न० ८००, पृष्ठ १६९ तथा महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१।

१६१. पत्र : सरलादेवी चौधरानीको[1]

५ जुलाई, १९३२

प्रिय बहन,

समाचारपत्रोसे यह खबर पाकर बहुत दुख हुआ कि तुम्हारी माताजी अब नही रही। तुम्हारे इस शोकमे मेरी तुम्हारे और दीपक[2] के प्रति हार्दिक सहानुभूति है। सरदार और महादेव भी यह संवेदना-सन्देश भेजनेमे मेरे साथी है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्रीमती सरलादेवी चौधरानी
कलकत्ता

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १५९।

१. पण्डित रामभज दत्त चौधरीकी पत्नी।
२. श्रीमती सरलादेवी चौधरानीके पुत्र।

१६२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

५ जुलाई, १९३२

भाई घनश्यामदास,

आपका २७ जूनका खत आज मिला।[1] मैंने २९ जूनको[2] आपको खत लिखा है उसमे खादी मिल जानेका लिखा है और आपके पुस्तक पढ़ने पर जिन पुस्तकोकी आवश्यकता प्रतीत हुई वे भी मंगवाये है। जो साहित्य मै पढ रहा हूँ उसपरसे प्रश्न तो काफी उठते है। परंतु जो अभ्यास मै कर रहा हूँ वह करने 'की' वाद ही पूछनेका कुछ बाकी रहे तो इरादा रक्खा है। अब तो हमेशा कुछ न कुछ पढ ही लेता हूँ इसलिए मेरी समजमे थोडीसी भी वृद्धि अवश्य होती है। अब भी शाहका पुस्तक चलता है। इसके बाद आयरकी फॉरिन एक्सचेज[3] पर जो पुस्तक है जो उसने मुझे भेजी है शुरू करूँगा।

खादीके साथ साथ आज तो मिल चलती ही है और कई अरसे तक तो अवश्य चलेगी। अंतमें तो दोनोके बीचमे विरोध है ही क्योकी हमारा आदर्श तो यह है कि हरेक देहातमें खद्दर पैदा हो। और इस तरह हरेक देहातमे होगा तब हिंदुस्थानके लिए मिलकी आवश्यकता नही रहेगी। लेकिन आज आप जैसे दोनो बात साथ साथ अवश्य कर सकते है। और सत्य प्रदर्शित करनेके लिए आदर्शको भी लोगोके सामने रखा जाय। टीका करनेवाले टीका करते ही रहेगें। उसके लिये तो कोई चारा ही नही है।

गुडके बारेमे मुझको पूरा ज्ञान नही है परंतु मेरा ख्याल कुछ ऐसा रहा है सही कि खांड बनानेके लिए मिलकी आवश्यकता हमेशा रहेगी। देहातोमे खाड आसानीसे नही बन सकती है। न उख हर देहातमे पैदा हो सकती है। इस कारण गुड़ बनानेका धंधा सर्वव्यापक नही हो सकता है। संभव है कि इसमे मेरी कुछ गलती है। कैसे भी हो। अगर मिल और खादीकी बात एक ही मनुष्य कर सकता है तो गुड़ और मिलकी बात तो अवश्य कर सकता है।

पैसा शास्त्र (?)का जितना अभ्यास मै करता हूँ उतना मेरा विश्वास दृढ़ होता चला कि लोगोंकी कंगालीअत दूर करनेके लिये इन किताबोंमें जो कुछ लिखा है वह उपाय हरगीज नही है। वह उपाय उत्पन्न और व्यय अपने आप साथ साथ चले ऐसी योजना करनेमे ही है और वह योजना देहाती धंधोका पुनरुद्धार ही है।

१. घनश्यामदास बिड़लाने, जो सूती मिलों तथा चीनीके कारखानोंके मालिक होते हुए भी स्वयं खादी और गुड़के प्रेमी हैं, खादी तथा मिलके कपड़े और गुड़ तथा चीनीके बीच प्रतिद्वन्द्विताका उल्लेख किया था।

२. यहाँ २८ जून होना चाहिए; देखिए "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको", २८-६-१९३२।

३. मूलमें यह अंग्रेजी लिपिमें है।

यहांके मुखीके आग्रहसे मैंने दूध लेना शुरू कर दिया है। साथमें चपाटी और भाजी। भाजी एक वक्त और चपाटी दो वक्त। जो शरीरशुद्धि रोटी और बादाम और भाजीमें थी वह आज नही है ऐसा तो मै देख रहा हूँ। परंतु अब दूध शुरू कर दिया है उसे शीघ्रतासे नही छोडुगा। देखूंगा क्या परिणाम आता है। आजकल करांचीकी द्राक्ष कृपालानीजीके बहनोई भेज रहे हैं वह भी साथ साथ लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९०१ से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१६३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

६ जुलाई, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तूने लिफाफेको सजानेका प्रयत्न करनेकी कोशिशमें उसे बिगाड़ दिया है। निरुपयोगी सजावटके विषयमे ऐसा ही समझना चाहिए। सरदार लिफाफे पर जो सजावट करते हैं वह सजावटकी खातिर नही होती अपितु उनकी इस सजावटके पीछे उपयोगिताकी भावना निहित है, इसीसे वह सुन्दर लगती है। लिखे हुए लिफाफेका यदि हम फिरसे उपयोग करना चाहते हैं तो उस पर लिखा हुआ [पता] मिटा होना चाहिए। इसीलिए सरदारने उस पतेको ढँक सकने जितनी कतरने काटकर लिफाफे पर चिपका दी और इस तरह उसे सुन्दर रूप प्रदान किया। लेकिन इतनेसे ही उन्हें सन्तोष नही हुआ। इसलिए अब वे वहाँसे आये हुए लिफाफे को उल्टा देते हैं जिससे उन्हें अलगसे कतरन नही चितकानी पडती और कवर भी नया जैसा लगता है। इसे यदि तू ध्यानसे देखेगी तो तुझे मालूम हो जायेगा। तेरी कँगूरेवाली कतरने आधी उखड़ गई थी इससे बहुत खराब लगती थी और उनका कुछ उपयोग तो था नही। उसपर की गई मेहनत व्यर्थ गई और समय तथा उतने कागजकी भी बरबादी हुई। उतना ही जनताका नुकसान हुआ। इससे दो निष्कर्ष निकलते हैं: समझे बिना किसीका अनुसरण नही करना चाहिए और सजावटकी खातिर सजावट नही होनी चाहिए। यूरोपके बडे-बड़े गिरजाघरोके बारेमे कहा जाता है कि उनमे जो सजावट की गई है उसके पीछे उपयोगिताकी भावना निहित है। यह बात सच हो या न हो, लेकिन मैंने जिस नियमकी चर्चा की है उसमे शंकाको अवकाश नही।

तेरे इस बारके पत्रमे प्रधानकी आलोचनाके अतिरिक्त और बाते बहुत कम हैं। मुझे तो लगता है कि यह आलोचना व्यर्थ है इसलिए उसके औचित्यके बारेमे विचार करना व्यर्थ है। "जज नॉट लेस्ट यी बि जज्ड" (अर्थात्, किसीकी आलोचना

न करो, क्योंकि कही कोई तुम्हारी न कर बैठे) यह वाक्य हृदयंगम करना चाहिए। इसके अनुरूप कोई गुजराती कहावत तो मुझे याद नही आती। मराठीमे यदि कोई हो तो भेजना।

मुझे उर्दू पुस्तकोंकी तालिका चाहिए। शिवलीकी पुस्तक तो भेज ही देना और [वहाँ] खलीफाका जीवन-वृत्तान्त भी है।

तुझे मरना स्वीकार है परन्तु मछली खाना नही, यह बात मुझे तो निश्चय ही अच्छी लगेगी। इसका अर्थ क्या यह भी है कि तू कॉडलिवर ऑयल [मछलीका तेल] भी नही लेगी? मैं क्या चाहता हूँ इसका विचार नही करना। मैंने तो तेरी मानसिक स्थिति जाननेके लिए यह प्रश्न पूछा है। तेरी खुराकमे दूध अथवा दही अथवा घीका अनुपात बढ़ना चाहिए। हरी सब्जीके स्थान पर कभी-कभी तो पका फल होना ही चाहिए। क्या [वहाँ] पपीता पकता ही नही? टमाटर नही होते? किसी प्रकारका शाक नही होता? तू स्वयं थोड़ेसे टमाटर क्यो नही वो देती? उसी तरह लेटीसकी खेती तुरन्त होती है। कच्चा पपीता बहुत ज्यादा नही खाया जाना चाहिए। और न रोज ही खाया जाना चाहिए। खर्चका विचार किये विना इतना फेरबदल अवश्य करना। गर्म पानीमें कटिस्नान करती रहना। जहाँ दर्द होता हो वहाँ मालिश करवाई जानी चाहिए। कोई भी लडकी प्रसन्नतापूर्वक यह काम करनेको तैयार होगी।

विद्याकी[1] मूढ़ता प्रेमसे दूर होगी। रामभाऊका मामला जरा कठिन है, लेकिन इसका एक ही उपाय है। उसपर तीन शक्तियाँ काम करती हैं। इसलिए यदि वे परस्पर एकमत न हों तो मुसीवत होगी। वे तीन शक्तियाँ हैं पण्डितजी, लक्ष्मीवहन और तू, अथवा वह व्यक्ति जिसपर उसकी देखरेखकी जिम्मेदारी हो। तेरे लिए इसमेंसे भी वच निकलना और कोई रास्ता निकालना केवल प्रेम द्वारा ही सम्भव है। तुझमें यह प्रेम जितना विशाल होगा उतना ही तुझमें इन वालकोको सुधारनेकी शक्तिका विकास होगा।

आश्रमकी बडी लड़कियोके सम्वन्धमे उदारतासे काम लेना। वे आलसी होकर घर नही वैठती अपितु अपंग होनेकी वजहसे ऐसा करती है। उनकी अपंगताके बारेमे तू या मैं कोई निर्णय नही दे सकते। यह निर्णय तो वे लड़कियाँ ही दे सकती हैं। वह गलत भी हो सकता है। इतना ही पर्याप्त है कि उनके मनमे खोट नही होनी चाहिए। वडी लडकियोंमे आनन्दी, कुसुम[2] और नीमु। ये सव क्या करती है? आनन्दी कामसे जी नही चुराती, कुसुमका सवाल ही नही उठता। नीमु पर दो वच्चोका भार है। वच्चोंका लालन-पालन कैसे किया जाता है, यह उसे कदाचित् ही मालूम हो, तिसपर माँ वन वैठी है। अव उससे कितने कामकी आशा की जा सकती है? कदाचित ऐसी और लड़कियाँ तेरे ध्यानमे हों। इन सवको हम सोना-मोती तोलनेकी तुलासे नही तोल सकते और तू अनुभवसे देखेगी कि तुझमे जैसे-जैसे

१. विद्या रावजीभाई पटेल।

२. कुसुम गांधी; नारणदास गांधी उसे अपनी पुत्रीके समान मानते थे।

उदारताका विकास होगा वैसे-वसे लोगोसे काम लेनेकी तेरी शक्ति भी बढ़ेगी। यह वात सच है अथवा झूठ सो तो भगवान ही जाने, लेकिन मेरे वारेमें यह कहा जाता है कि मनुष्योसे मैं बहुत ज्यादा काम ले सकता हूँ। यदि यह वात सच है तो इसका कारण यह है कि मुझे इस वातका सन्देह ही नही होता कि कोई व्यक्ति कामसे जी चुराता है। वह जितना कर देता है उतनेसे ही मैं सन्तोष कर लेता हूँ और फिर और ज्यादाकी माँग करता हूँ तो वह उसे भी कर देता है। कुछ-एक लोगोंका यह भी कहना है कि मुझे आजतक लोगोंने जितना धोखा दिया है उतना किसीने किसीको कदाचित् ही दिया हो। यह कसौटी यदि खरी भी उतरे तो भी मुझे पश्चात्ताप नही होगा। मैंने जगतमें किसीको नही छला, लोग यदि मुझे इस बातका प्रमाणपत्र दे तो मेरे लिए यथेष्ट होगा। और यदि कोई मुझे वह प्रमाणपत्र नही देता तो मैं स्वयं ही देता हूँ।

मुझे झूठ सबसे ज्यादा खराब लगता है।

'ज्यादासे-ज्यादा लोगोका ज्यादासे-ज्यादा भला' और 'वलीके दो भाग' के नियमको मैं नही मानता। सबका भला, सर्वोदय और 'कमजोर लोग पहले' ये नियम मनुष्य मात्रके लिए है। हम द्विपद मनुष्य कहलाते है लेकिन चौपद पशुके स्वभावको अभी तक नही त्याग सके हैं। इसका त्याग करना हमारा धर्म है।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९३)से। सी० डब्ल्यू० ६७४१से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१६४. पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको

६ जुलाई, १९३२

चि० मथुरादास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जिस याज्ञिक सिलाईकी शोध की थी उसे तुम अब कम महत्त्व देते हो, यह बात ठीक नही है। इसका सच्चा मूल्य वस्तुतः खराव से-खराव खादीको भी उपयोगी वनानेमे निहित है। सिलाईका खर्च हम नही उठा सकते। लेकिन यदि कोई व्यक्ति परोपकारार्थ सिलाई करनेको तैयार हो तो वह खरावसे-खराव खादीको भी वही मूल्य प्रदान कर सकता है जो भक्त हरसिंगारकी फूलमालाएँ वनाकर फूलोंको प्रदान करता है। उदाहरणके तौर पर याज्ञिक ऐसी खराव खादीके पहननेके वस्त्र न वनाये, लेकिन वह उसकी गद्दी वना सकता है, थैली वना सकता है या तकिया बना सकता है। हम ऐसी अनेक वस्तुओकी कल्पना कर सकते है जिनके वनानेसे इस खादीको धोना नही पडे और उसे एक लम्बे अरसे तक वैसेका वैसा रखा जा सकता है। मेरे पास हाथका कता और वुना हुआ

कम्बल था जो मुझे उपहार-स्वरूप मिला था। इस्तेमाल करते-करते वह इतना जीर्ण-शीर्ण हो गया था कि वह जिस हालतमें था उसी हालतमें अधिक इस्तेमाल करने पर फट जाता। लेकिन मैं ठहरा फितरती आदमी और मुझे मिली जानकीबहन[1] जैसी परोपकारी देवी। मैंने वह कम्बल उन्हें दे दिया और पुराने कम्बलको नया कम्बल कैसे बनाया जा सकता है, सो उन्हें बताया। यह कम्बल अभी भी मेरे पास पड़ा हुआ है। इंग्लैंडमें जब मैं सम्राटके प्रासादमें गया था[2] तब मैं जानबूझकर इसे भी साथ ले गया था। इसका जीर्णोद्धार कैसे हुआ सो भी मैं बताये देता हूँ। उसके नीचे मोटी खादीका चँदोवा सी दिया और सारे कम्बल पर आड़ा और सीधा बखिया कर दिया गया, जिसके फलस्वरूप वह जर्जर कम्बल खादीकी चादरके लग जानेसे नया जैसा हो गया और वह मुझे पहलेकी अपेक्षा ज्यादा गर्म लगने लगा। लेकिन उसका यह अर्थ न करना कि तुम सूतकी किस्मको सुधारनेके जो प्रयत्न कर रहे हो वे निरर्थक हैं। इसकी जरूरत मैं पल-पल महसूस करता हूँ। लेकिन यह खोज याज्ञिक-सिलाईके महत्त्वको कम नहीं कर सकती और न उसे अनुपयोगी ही सिद्ध कर सकती है। हिन्दुस्तानमें अभी खादी-प्रेम व्यापक नहीं हो पाया है। दूसरे शब्दोंमें कहें तो दरिद्रनारायणके प्रति भक्ति भावना अभी सर्वव्यापक नहीं हुई है अथवा जहाँ यह भक्ति विद्यमान है वहाँ अज्ञानवश भक्तजन इस बातको सिद्ध नहीं कर सके हैं कि इस भक्ति का सरल और सीधा मार्ग खादी है। यदि यह बात सिद्ध हो जाये तो तुम्हारी खोजका बहुत बड़ा उपयोग हो सकता है। इसलिए मेरे मनसे यह चीज बिल्कुल भी दूर नहीं हुई है। सूतकी किस्ममें सुधार सम्बन्धी पुस्तक तुम अवश्य लिखना। लेकिन उसमें एक भी वाक्य ऐसा न लिखना जो तुम्हारा अनुभव-सिद्ध न हो। और फिर अकेले अपने अनुभवके आधार पर सिद्धान्त न बनाना। अन्य लोगोंका भी यही अनुभव होना चाहिए। और यदि तुम ऐसा नहीं कर पाये हो तो पुस्तकको रोके रखना। मैं तो यह बात अच्छी तरहसे देख रहा हूँ कि जो पुस्तकें अनुभवके बल पर नहीं लिखी जाती वे लगभग मूल्यहीन होती हैं, ठीक ऐसे जैसे आज यदि कोई व्यक्ति 'चरक'[3] का अनुवाद हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है तो उसका कोई मूल्य नहीं होगा, क्योंकि उसमें वर्णित अधिकांश जड़ी-बूटियाँ आज हमें उपलब्ध नहीं हैं और यदि उपलब्ध हैं भी तो उनके गुणोंको हम सिद्ध नहीं कर सकते। इसलिए सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण बात यह होगी कि तुम स्वयं अनेक अंकका अच्छेसे-अच्छा सूत कातो और उसमें तकुएका, चरखेका, कपासकी किस्मका, पिंजाईका और खुद अपना अर्थात् कारीगरका कितना-कितना योगदान था, इस सबका वर्गीकरण करो, इसका ब्यौरा रखो; और अपने अनुभवोंको दूसरोंके अनुभवोंसे मिलाओ। इन सबके आधारपर जो पुस्तक तैयार होगी वह पुस्तक घर्मकाँटे पर परखी हुई सोनेकी छड़के समान होगी। तुमने मुझसे पूछा है कि सूतके अंककी मैंने क्या सीमा रखी

१. जमनालाल बजाजकी पत्नी।
२. १९३१में गोलमेज सम्मेलनके समय।
३. चरक संहिता।

है। एक समय मैंने २० तककी सीमा रखी थी, फिर यह संख्या बढ़कर ४० पर पहुँची। अब तो मै कोई सीमा नही आँकता। यदि हमे ऐसी कपास मिले अथवा हम ऐसा कपास पैदा करे जिससे ४०० अंक तकका सूत काता जा सके और हम ऐसी पिंजाई कर सके जिससे ऐसा महीन सूत कातना सम्भव हो तथा ऐसा कातनेवाला या कातनेवाली हमे मिल जाये जो धैर्यपूर्वक ऐसा कात सके तो मै अवश्य चाहूँगा कि हमे इस अक तक पहुँच सकना चाहिए। तात्पर्य यह कि हमारा अनुभव, हमारा उत्साह और हमारी लगन हमे जहाँतक ले जाये वहाँतक पहुँच जाना मै बहुत अर्थपूर्ण मानता हूँ। क्योकि इससे हाथ-कताईकी कलाका महत्त्व एकदम बढ जानेकी पूरी सम्भावना है। डेढ सौ अंक तक तो सतीश बाबूके एक मित्र पहुँच गये थे, यह बात तुम जानते ही होगे। उससे तैयार हुई खादी सतीश बाबूके सग्रहमे आज भी मौजूद है, लेकिन इसके साथ ही मेरा यह आग्रह भी है कि हम जिस-जिस अकका सूत काते वह मजबूत और एकतार होना चाहिए। लेकिन इस परीक्षामे सफल होनेके लिए कितने अंक मिलने चाहिए, सो मै नही जानता। यह तो तुम और अन्य अनुभवी कातनेवाले ही बता सकते है। मेरे पास इसके लिए एक बड़ी कसौटी तो है ही और वह यह कि यह सूत ऐसा होना चाहिए जिसे कोई भी बुनकर — कारीगर आसानीसे बुन सके। जिसे बुनकर पास नही करता वह यदि अपने काँटेमे पास हो भी जाये तो मै उसे पास नही मानूँगा। पानीका प्याला आ जानेके बाद जो प्रयोग तुमने बताया है वह प्रयोग करके मै अपने सूतके कसकी जाँच करके देखूँगा। जाँच किये बिना भी मेरा अपना सूत मुझे सन्तोष प्रदान नही करता। हाथमें कष्ट होनेके कारण [सूत पर] हाथ घुमानेका काम खटाईमे पड़ गया है। गांडीव चरखे पर मेरा हाथ बहुत अच्छा बैठ गया था। इस पर मै अपना मनचाहा सूत अच्छी तरहसे कात सकता था, हालाँकि गति बहुत कम थी। लेकिन अब चूँकि मुझे दाये हाथसे धागा खीचना पडता है, और फिर मगन चरखेको हाथमे लेना पडा तो अब जाकर मै उस पर कुछ काबू पा सका हूँ। इसके अतिरिक्त खराबसे-खराब पूनी कातना भी धर्म है, यह समझकर उसमे लगा। अब थोड़े दिनोसे ही अच्छी पूनियो पर काम कर रहा हूँ। अतः जब तुम्हारा प्याला आयेगा मै उसकी आजमायश कर सकूँगा। इस बीच कदाचित् मेरा सूत भी परीक्षा लायक हो जायेगा। मेरे सूतका अंक पहले २५के आसपास हुआ करता था। अब मगन चरखा चलानेपर मै १९के आसपास हूँ। अब कदाचित् बढ़ पाऊँगा। मै समझता हूँ कि अब कोई उत्तर देना बाकी नही रह गया है। हिम्मत रखना, दृढ बनना। व्यर्थके विचारोमें न उलझना। मोतीबहन[1] का क्या हाल है?

प्याला मिल गया है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७५५) से।

१. मथुरादास पुरुषोत्तमकी पत्नी।

१६५. पत्र : फिरोजाबाई तलियारखानको

६ जुलाई, १९३२

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। आप तो ठंडे मौसमका सुख प्राप्त कर रही होंगी। देवदासके बिल्कुल अच्छे हो जानेकी सूचना मिली है, अतः चिन्ताकी कोई बात नही है। आप सारी जानकारी रख रही है, यह अच्छा है। बा खुश है। मुझसे मुलाकातकी अनुमति अभी भी नही दी जा रही है। सरदार और महादेवका वन्देमातरम्।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १७३।

१६६. पत्र : परमानन्दको

६ जुलाई, १९३२

भाई,

मुझे समाचार-पत्रमे प्रकाशित खबर पढकर आपकी पत्नीके स्वर्गवासकी सूचना मिली। जब आप अडमानमे बन्दी थे तब मेरा उनसे परिचय हुआ था और उनकी सादगीसे मै बहुत प्रभावित हुआ था। ईश्वर आपको शान्ति व धैर्य प्रदान करे।

आपका,

मोहनदास गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १६३।

१६७. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

६ जुलाई, १९३२

चि० परसराम,

तुम्हारे दोनो पत्र मिले। हिन्दीके किसी शब्दके व्याकरणको लेकर यदि हमारे मनमे शंका उठे तब हम शब्दकोषकी मदद ले, यही तो सही रास्ता कहा जायेगा न? जिस व्यक्तिको सस्कृतका ज्ञान है वह शब्द प्रयोग करनेमे कम भूल करेगा, परन्तु सस्कृतमे अमुक शब्दका जिस रूपमे प्रयोग किया जाता है उसी रूपमे हिन्दीमे भी किया जायेगा ऐसा नियम नही है। इसलिए हमे शब्दकोषको प्रामाणिक मानना चाहिए और जहाँ शब्दकोषकी मदद न मिले वहाँ संस्कृत जाननेवाले व्यक्तिके कथनको प्रामाणिक समझना चाहिए। 'निरुत्साह' शब्द मेरे पास जो हिन्दी शब्दकोष है उसमे मैंने देखा और वहाँ भी वह विशेषणके रूपमे ही आया है। अतएव इसके बारेमे तो संस्कृत जाननेवाले व्यक्ति और शब्दकोष दोनोका एक ही मत ठहरा। मै यह सब जो लिख रहा हूँ वह भाषा-मात्रके प्रति प्रेम होनेके कारण लिख रहा हूँ। अमुक भाषाको जानने वाले लोगोसे मै उस भाषाकी विशेष जानकारी होनेकी अपेक्षा करता हूँ। मै यह भी आशा करता हूँ कि वे हमेशा शुद्ध प्रयोग करेगे। इसीसे मैने 'निरुत्साह' के बारेमे पिछले पत्रमे[1] पूछा था। मैंने हमेशा यह माना है कि तुम्हारा हिन्दीका ज्ञान अच्छा है। और मेरी इच्छा है कि तुम इसके प्रति सतत जागरूक रहो। किसी-न-किसी व्यक्तिके लिए तो निश्चय ही यह जरूरी है कि वह हिन्दीभाषाके ज्ञानके लिए जीवन समर्पित करे। राजनीति तो हमारे पीछे पड़ी हुई है, लेकिन यह तो किसीका कोई खास विषय नही हो सकता और न होना ही चाहिए। हम इच्छा-अनिच्छासे इसमे भाग ले और इस प्रवृत्तिके शान्त होते ही अपने-अपने क्षेत्रोमे पुनः कार्य करने लगे। और फिर सबको हमेशा राजनीतिमे पड़नेकी जरूरत भी नही होती। इसलिए अनेक स्थायी और रचनात्मक प्रवृत्तियोमे से हमे अपनी सामर्थ्यानुसार और [अपनी] इच्छानु-रूप किसी एक प्रवृत्तिका वरण तो करना चाहिए।[2] तुम्हारी, निस्सन्देह, हिन्दीके प्रति अभिरुचि है। अब हिन्दीके इस ज्ञानको जितना बढ़ाया जा सकता है उतना तुम्हें बढाना चाहिए और इस हिन्दीके प्रसार और प्रचारके लिए अपना जीवन समर्पित करनेका विचार तुम कर सको तो मुझे यह बात बहुत अच्छी लगेगी। मेरे कहनेका आशय यह नही है कि ऐसा निश्चय तुम्हे अभी ही करना चाहिए। अभी तो जैसे चल रहा है भले ही वैसे ही चलता रहे। मुख्य समय तो हिन्दी लेती ही

१. २३-६-१९३२ को।

२. इसके बादके दो वाक्य बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्टससे लिये गये है।

है। जीवन-पर्यन्त तुम्हें हिन्दीके कार्यमे लगे रहना चाहिए अथवा नही, यह बात तो ऐसा करते हुए समयके साथ-साथ स्पष्ट होती जायेगी। मैंने तो अभी केवल बीजारोपण किया है।

अब 'रामायण'के सम्बन्धमें इस बारेमे तुमने जो लिखा है वह सही है। राधास्वामी[1] आदि लोगों द्वारा लिखी गई 'रामायण'को मै संस्कारी ग्रन्थ नही मानता हूँ। तुलसीदासजीकी 'रामायण' अत्यन्त सस्कारी ग्रन्थ है। हमारा काम तो उसके प्रति दिलचस्पी पैदा करना है। तुलसीदासकी 'रामायण'से उन्हीकी भाषामें संक्षिप्त 'रामायण'की रचना अवश्य ही की जा सकती है। बालकाण्डको लेकर मैंने यह प्रयत्न किया था।[2] इस पुस्तककी एक प्रति बहुत करके आश्रममे विद्यमान है। इस बातको तो लगभग २० वर्ष हो गये है। आज अगर मै फिरसे इस कार्यको हाथमें लूँ तो कदाचित दूसरी चौपाइयाँ और दूसरे ही दोहे पसन्द करूँ। प्रभुदासने भी इस दिशामे प्रयत्न किया है। और चूँकि तुम वहाँ सिखा ही रहे हो इसलिए इस दिशामें यदि कुछ करोगे तो वह उपयोगी होगा। इसमे तुम्हे बहुत कठिनाई भी नही होनी चाहिए। महादेवका कहना है कि ऐसे दो तीन प्रयत्न संयुक्त प्रान्तमे किये भी गये है। लेकिन उसकी चिन्ता नही। तीनमे यदि चौथा भी सम्मिलित हो जाये तो कोई नुकसान न होगा। भिन्न-भिन्न स्वभावके व्यक्तियो, भिन्न श्रेणीके बालको अथवा मनुष्यो को ध्यानमे रखकर भी भिन्न-भिन्न लोग अलग-अलग चुनाव करना पसन्द कर सकते हैं। साँझकी प्रार्थनाके लिए यदि फिलहाल समय नही मिल पाता तो उसके लिए मेरा तनिक भी आग्रह नही है। और फिर हिन्दी वर्ग तो हैं ही। इन वर्गोमे जहाँ-जहाँ 'रामायण'के प्रति दिलचस्पी उत्पन्न की जा सके वहाँ-वहाँ करना। इसके अतिरिक्त भक्तिके विचारसे भी शायद कुछ लोग 'रामायण'का अध्ययन करना चाहते हो और यदि इसके लिए तुम्हारे पास कोई समय हो तो ऐसा वर्ग भी सप्ताहमे एक बार अथवा दो बार रखा जा सकता है। लेकिन इसके सम्बन्धमे मेरा तनिक भी आग्रह नही है। मै तो केवल अपनी इच्छा ही व्यक्त कर रहा हूँ। इसपर कैसे और किस हद तक अमल किया जा सकता है, यह तो तुम ही बता सकते हो।

मै यह जो सब लिख रहा हूँ उससे तुम्हे जरा भी परेशान हो उठनेकी जरूरत नही है। मुझे लगता है कि तुम्हारा काम अभी बहुत अच्छा चल रहा है। तुम इस समय अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ दिखाई देते हो और इस समय मै तुम्हारे सम्मुख नये विचार अथवा नई योजनाओको प्रस्तुत करके तुम्हारे मनको डाँवाँडोल और तुम्हे अस्वस्थ करना कतई नही चाहता। तुम्हारा पत्र पढ़कर ये विचार मनमे उठे इसलिए उन्हे यहाँ प्रस्तुत किया है। इनमे से जिन्हे तुम पूरी तरह समझ पाये हो, आत्मसात् कर सको और जिन्हे व्यवहारमें ला सकते हो उन्हें स्वीकार करना और शेषको फेक देना। और यदि तुम इन सबको ही फेंक दो तो भी मुझे कोई आघात नही

१. सम्भवतः राधेश्याम कथावाचक, जिनकी हिन्दी रामायण तबतक लोकप्रिय हो चुकी थी।

२. देखिए खण्ड ९, पृष्ठ ९९-१००।

पहुँचेगा।[1] मेरी तो केवल एक ही प्रबल इच्छा है, और वह यह कि तुम्हे पूरी तरह आराम मिले और कतई परेशानी न हो।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९६४३) से; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २१३–१९ से भी।

१६८. पत्र : माताप्रसाद गुप्तको

[६ जुलाई, १९३२][2]

भाई माताप्रसादजी,

आपका पत्र और किताब मिली। कैदियोको किसी किताबके सम्बन्धमे अपनी राय देनेकी मनाही है। इसलिए मुझे क्षमा करें। इसके अलावा मैं पाक-कलाकी पुस्तक पर अपने विचार व्यक्त करनेका अधिकारी भी नही हूँ, और न मैं विचार व्यक्त ही कर सकता हूँ।

आपका,
मोहनदास गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १७१।

१६९. पत्र : एक अमेरिकी मित्रको

७ जुलाई, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रसे मैं बहुत अधिक प्रभावित हुआ। अगर आप इस देशकी जलवायु को और आश्रमकी कठोर जिन्दगीको सह सकें तो एक सदस्यके रूपमे आपको आश्रम मे रखकर मुझे प्रसन्नता होगी। यदि आप सामूहिक रसोईमे भोजन करेगे तो आपको रहने या खानेका कोई शुल्क नही देना होगा। लेकिन यहाँका जीवन कठोर और अत्यन्त सादा है। आश्रममे रहनेवाले सभी लोगोको खेतोमे या उद्योगशालामे कुछ

१. इसके बादका अंश बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्ससे लिया गया है।

२. साधन-सूत्रमे यह पत्र इस तारीखके अन्य पत्रोंके साथ ही रखा हुआ है। "डायरी"में यह ४ जुलाईके अन्तर्गत दिया गया है।

घटे प्रतिदिन काम करना पड़ता है। सभी काम, जिसमे मैलेकी सफाईका काम भी शामिल है, आश्रमवासियोंको स्वय करने पड़ते हैं। जो पोशाक हम पहनते है वह भी बहुत सादा होती है और आश्रममे ही काती, बुनी और सिली होती है। इस पर भी यदि आप बाहर निकलनेका साहस करते है तो, आपके आगमनका स्वागत करते हुए मै आपको यह चेतावनी भी देना चाहूँगा कि जलवायु अथवा आश्रमका जीवन माफिक नही आनेकी स्थितिमे अमेरिका लौटने लायक पैसा यदि आपके पास न हो तो यहाँ न आये। इस पत्रके बावजूद यदि आप भारत आने और आश्रममें रहनेके इच्छुक है तो मै चाहूँगा कि आप श्री रिचर्ड ग्रेगसे मिल ले जो काफी समय आश्रममें रह चुके है और उसके बारेमें सब-कुछ जानते है। यदि वे आपको यहाँ आनेके लिए प्रोत्साहित न करें तो आप यहाँ आनेका विचार न करे। उनका पता है: श्री रिचर्ड हर्स्ट हिल, विशेष सहायक, अध्यक्ष हॉवर्ड विश्वविद्यालय, वाशिंग्टन, स० रा० अ०।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९३१९) से; सौजन्य: नारणदास गांधी

१७०. पत्र: मणिबहन एन० परीखको

७ जुलाई, १९३२

चि० मणिबहन (परीख),

तुमने महादेवको जो पत्र लिखा है उसके बारेमे महादेवने मुझे बताया है। तुम्हारा शरीर साथ नही देता इसमे तुम क्या कर सकती हो? जिनके शरीर नही चलते ऐसे आश्रमवासियोको यदि हम निकाल दे तो हमे अनेकको निकालना पडेगा। तुम्हें लज्जित होनेका तनिक भी कारण नही है। लज्जित तो उन लोगोंको होना चाहिए जो शरीरसे स्वस्थ होते हुए भी कामचोर है और काम नही करते। तुम्हारे जैसे लोगोको यदि आश्रम नही रख सकता तो आश्रमका होना निरर्थक है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९७०)से। सी० डब्ल्यू० ३२८७ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

१७१. पत्र : रेहाना तैयबजीको

७ जुलाई, १९३२

प्यारी बेटी रेहाना,

इस हफ्तामे अब तक तुम्हारा खत नही आया। तुमने जो भजन और गजल भेजे हैं इसे मैंने पेट भरकर पढ़ लीये। दोनो अच्छे लगे और दोनो अब बराबर समझा। भजन समझनेमे आसान हैं। गजलमे नये लफ्ज होनेके कारण समझना दुश्वार था। लेकिन दो-तीन बार पढ़नेसे अच्छी तरह समझ लीया। बहुत अच्छी गजल है। जफर तो बहादुरशाह बादशाहका शायरी नाम है ना? ऐसी गजल और भी भेजती रहो। तुमने एक खतमे लीखा था कि मेरे लायककी कुछ किताब ढूंढ़कर भेज देगी। अगर भूल गई हो तो अब याद करो। और कोई किताब मिले तो भेज दो। आँज-कल मै जामा-मिलियाकी कुछ किताबे पढ़ रहा हूँ। सब अच्छे भावसे लिखी गई है। दो तो ड्रामा थे। अब जो पढ़ रहा हूँ वह किमियागर वगैराह कहानियाँ हैं। तुमने ये किताबे देखी है? अब्बाजान, अम्माजानको हम सबकी तरफसे आदाब। तुम्हारे लिये मेरी तरफसे थोड़ी-बहुत कान-पकड़। यह काम कमालको सुपुर्द किया जाये। हमीदाके खतकी इंतेजारी कर रहा हूँ। सरदार, काका अभीतक अमीर अलीकी किताब पढ़ रहे हैं। यहाँ अब बारीश शुरू हो गया है। किसान लोग फीकरमे थे। हवामे खासी ठडी आ गई है। पशाभाईकी बहन अच्छी होगी।[1]

इसमे तुम्हें न केवल शब्द-सम्बन्धी भूलोमे सुधार करना होगा, बल्कि व्याकरण की भूलोंको भी सुधारना होगा। जो उर्दू किताब मुझे चाहिए उसमे सामान्य शब्द, व्याकरण, वाक्य-रचनाके नियम आदि हो तो अच्छा होगा। ऐसी किताब न हो तो उसे ढूंढ़नेकी मेहनत न करना।

बापूके आशीर्वाद
दुआ आदि, आदि

उर्दू/गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४७) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १५१ से भी।

१. यह अनुच्छेद उर्दूमें है।

१७२. पत्र : जोहराबानू अंसारीको

७ जुलाई, १९३२

मेरी प्यारी बेटी जोहरा,

तुम्हे यह खत पढ़कर हैरत होगी। इस खतको लिखनेकी जरूरत इसलिए हुई कि अब चूंकि पापाको[1] रिहा कर दिया गया है अतः तुम उनकी सेहतके बारेमें खत लिख सकती हो। यह भी लिखना कि उनका वजन कितना कम हुआ है? इन दिनो तुम क्या करती रही? सरदार वल्लभभाई और महादेव देसाई मेरे साथ हैं। हम सबका स्वास्थ्य ठीक है। अपने पिता और माताको हमारा सलाम देना। ईश्वर तुम्हें लम्बी जिन्दगी बख्शे और तुम्हे देशका एक बड़ा खिदमतगार बनाये। मुझे जल्दी लिखना। तुम खुशखत लिखोगी तभी मैं उसे पढ़ पाऊँगा।

मोहनदास गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १५३।

१७३. पत्र : रतिलाल पी० मेहताको

७ जुलाई, १९३२

प्रिय रतिलाल,

क्या तुमने मुझे पूरी तरह भुला नहीं दिया है? शशिको[2] शारदा मन्दिरसे बिल्कुल न हटाना। उसे सही ढंगकी शिक्षा मिल रही है। तुम्हे प्रसन्न होना चाहिए।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १९१।

१. डा० मु० अ० अंसारी।

२. रतिलालका पुत्र।

१७४. पत्र : कुसुमको

७ जुलाई, १९३२

प्रिय कुसुम (छोटी),

तुमने मुझसे जो सवाल पूछा था वह क्या था? मै बिल्कुल भूल गया हूँ। तुम उसे फिर लिख दो तो मै उसका जवाब लिखूंगा। मेरा खयाल था कि मै सारे प्रश्नोके उत्तर पहले ही दे चुका हूँ। नीमके पेड़के नीचे बैठकर धूपका सेवन करना निश्चय ही अच्छी चीज है। तुम्हें कटि-स्नान शुरू करना चाहिए। उससे बुखार अवश्य ही उतर जायेगा। मुख्य चीज तो निश्चय ही आराम है। टहलने जाने पर थकावटका अनुभव तुम्हे बिल्कुल नही होना चाहिए। जब तुम पढ़ती हो और सितार बजाती हो, तो फिर तुम थकावट कैसे अनुभव करती हो? अन्य चीजें तो लेटे-लेटे की जा सकती है। गुजरातीमे तुम 'रायचन्दभाईना लेखो' या रायचन्दभाईके लेख, 'काव्य-दोहन' के सभी भाग, 'नवल ग्रन्थावली', 'अष्टोदय', 'शकुन्तला' का गुजराती अनुवाद, गुजराती पाठमालाके चुने हुए लेख, काका साहबकी रचनाएँ, किशोरलालभाई लिखित पुस्तकें आदि पढ़ सकती हो। ये सब काफी होंगे। और भी बहुत-सी चीजे गिनाई जा सकती है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १९१।

१७५. पत्र : सीतला सहायको

७ जुलाई, १९३२

भाई सीतला सहाय,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने उसे ध्यानपूर्वक पढ़ा। तुम प्रभुदाससे होड़ करो यह तुम्हारे लिए उचित नही। सम्भव है कि प्रभुदासका खर्च कुछ कम हो, क्योंकि उसे कुछ और सुविधाएँ भी मिलती हैं। प्रभुदास जो खर्च करता है उससे कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। लेकिन तथ्य तो यह है कि केवल उन्ही खर्चोंको ध्यानमें रखना होगा जिन्हे टाला नही जा सकता। रसिकके[1] ऊपर अचानक ही काफी खर्च करना पड़ गया। मगनलाल बीमार होकर पटनामे ऐसी जगह मरा कि कुछ खर्च नहीं हुआ। किसी समय कृष्णदासका भी कोई खर्च नही था। मगर ज्यो ही उसे

१. हरिलाल गांधीका पुत्र, जिसकी मृत्यु १९२९ में हो गई थी।

देहरादून ले जाया गया, खर्च एकदम बढ़ गया। इसलिए अन्ततोगत्वा प्रत्येक मामले पर अलगसे विचार किया जाना चाहिए। हम केवल यही आशा रख सकते हैं और माँग कर सकते हैं कि जो-कुछ वे खर्च करें सोच-विचार कर करें और खर्चका हिसाब रखें। आश्रम तो उतना ही खर्च कर सकता है जितना खर्च करना उसकी सामर्थ्यमें है। जब आश्रमकी सामर्थ्य न रहे तो हम सबको आश्रममें इकट्ठे होकर उसका परिणाम भुगतना चाहिए और ऐसा करते हुए हमें हँसना चाहिए और सुख मानना चाहिए। मैंने नारणदासको यही बात सुझाई है। पद्माका[1] बिल देखकर यदि कुछ लिखनेकी जरूरत पड़ी तो तुम्हारे वहाँ रहनेपर तुम्हें अथवा पद्माको सूचित किया जाना चाहिए। क्या यह ठीक नहीं है?

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ २११।

१७६. पत्र : लक्ष्मीको

७ जुलाई, १९३२

बेटी लक्ष्मी,[2]

अगर देवदासने मुझे तार न दिया होता तो मुझे पापाकी स्थितिके बारेमें जानकारी कहाँसे मिलती? मैं आशा करता हूँ कि तुम इस समय एक बहादुर स्त्रीकी तरह काम कर रही हो। पापाके बारेमें पूरी जानकारी मुझे भेजती रहना। मैंने पापाके लिए भी एक पत्र लिखा है जिसे इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। अण्णा अब आश्रममें आ गये होंगे। उनसे कहना कि वे मुझे पत्र लिखें।

चिन्ता करके अपना स्वास्थ्य न बिगाड़ लेना। मृत्युका भय और शोक तो बिल्कुल छोड़ देना चाहिए। जो बात मानवमात्रके लिए अवश्यम्भावी है उसके लिए कष्ट या भय कैसा? मृत्युको ईश्वरीय दण्ड मानना भूल है। मृत्यु तो मानवके लिए ईश्वरका प्रसाद है।

मैं तुम्हारे विस्तृत पत्रकी प्रतीक्षामें हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ १४९।

१. सीतला सहायकी पुत्री।

२. राजगोपालाचारीकी पुत्री, जिनका बादमें देवदास गांधीसे विवाह हुआ।

१७७. पत्र : शामल आर० रावलको

८ जुलाई, १९३२

चि० शामल,

मिलमें काम करनेवाले ऐसे अनेक मजदूर हैं जो शराबको हाथ तक नहीं लगाते। यदि भाई तुम्हारी बात न माने तो उसका साथ छोड़ देना और ईश्वरसे प्रार्थना करना कि वह उसे सन्मति दे। पहले तो उसे विनयपूर्वक खूब समझाना। जो व्यक्ति बीमार हो उसके लिए यज्ञकी छूट है। यज्ञके समयका पालन करना अच्छा है। लेकिन यदि उसका पालन न हो सके तो यज्ञ किसी और समय किया जा सकता है।

शराब किसी रोगका निवारण नहीं कर सकती।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४४) से। सी० डब्ल्यू० २८७९ से भी; सौजन्य : शामल आर० रावल

१७८. पत्र : वनमाला एन० परीखको

८ जुलाई, १९३२

चि० वनमाला,

फूल भी हमारी ही तरह है। वह अमुक समय पर ही खिलता है। तभी वह पूर्ण रूपसे विकसित हुआ माना जाता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७७) से। सी० डब्ल्यू० ३००० से भी; सौजन्य : वनमाला एम० देसाई

१७९. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

८ जुलाई, १९३२

बालक और बालाओ,

प्रार्थनाके समय जिसे नीद आती है वह खड़ा हो जाता है, यह एक अच्छी बात है। खड़े होनेसे जिनके पैर दर्द करते हैं उसका कारण यह है कि उन्हें खड़ा होना नही आता। जो लोग अपने पाँवोको जमीन पर अंग्रेजी भाषाके 'वी' शब्दके समान रखते है — और जो बराबर सीधे खड़े होते है वे लोग बिना थके काफी लम्बे समय तक खड़े रह सकते हैं। जिन्हें खड़े रहनेकी आदत न हो उन्हे एक-दो दिन थकावट अवश्य महसूस होगी। लेकिन आदत पड़ जानेपर थकावट महसूस नही होती। हमें गलत मार्ग पर जानेवाले व्यक्तिके प्रति स्नेहभाव रखना चाहिए। उसकी सेवा करनी चाहिए और हमे सही मार्गका ही अनुसरण करना चाहिए। इस तरह गलत रास्ते पर जानेवाला व्यक्ति भी किसी-न-किसी दिन सही रास्ते पर लौट आयेगा। जो मनुष्य घूमते-फिरते भी भक्तिमे लीन रहता है वह अन्य लोगोको भी इसकी ओर प्रेरित करता है। जीवनमे सत्यका आचरण करनेसे सब कार्य सफल होते हैं।

तुम्हारे प्रश्न ऐसे लगते है मानो तुमने केवल प्रश्न करनेके विचारसे ही प्रश्न किये हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१८०. पत्र : नथुराम त्रिकमदासको

८ जुलाई, १९३२

चि० नथुराम,

जो काममे हिस्सा नही लेता उसे भागीदार नही माना जा सकता।

बैलोंको वधिया करवानेमें निश्चय ही हिंसा है।

पहने हुए जनेऊका उपयोग चरखेकी मालके रूपमें नही किया जा सकता।

जो मनुष्य दूसरोसे पूछे बिना उन पर अधिकार जताता है वह निरंकुश शासक है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१८१. पत्र : गोकीबहनको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय बहन,

पिछले एक महीनेसे तुम्हे पत्र लिखनेका मन कर रहा था। इसीसे मैंने तुम्हारा पता मँगवाया था। अभी-अभी मिला है। उम्मीद है, तुम्हारा मन शान्त होगा। तुममें ज्ञान है उसका उपयोग करना। वहाँ तुम्हारे साथ कोई रहता है क्या? पत्र लिखा करना।

मोहनदासके जयश्रीकृष्ण

श्रीमती गोकीबहन[1]
करसनदास धरमसिहका बँगला
कृष्ण-भुवन
बोरीवली

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९८१३) से।

१८२. पत्र : महेन्द्र वी० देसाईको

८ जुलाई, १९३२

चि० मनु,[2]

बालकोंको दूध अच्छा न लगे तो काम कैसे चले? जब भूख लगे तब दूध ही पिया जाये तो अच्छा लगने लगेगा। प्रार्थनाके ५ मिनटके मौनके समय रामनाम जपना चाहिए, जिस बच्चेको खीझनेकी आदत हो उसे नही खिझाना चाहिए। दैनन्दिनी लिखनेसे हमने कब क्या किया, इसकी खबर रहती है और इस तरह आलस्य भी दूर हो जाता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३३) से; सौजन्य: वा० गो० देसाई

१. शान्तिकुमार मोरारजीकी बुआ।
२. वा० गो० देसाईके पुत्र।

१८३. पत्र : पूँजाभाई एच० शाहको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय पूँजाभाई,

निष्पाप व्यक्तिके लिए मृत्यु सुखकी सेजके समान है। यह पाठ हृदयंगम कर लेनेके बाद कि जन्म और मृत्यु एक ही वस्तु है, हम मान सकते हैं कि हम जन्म-मरणके चक्रसे मुक्त हो गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २०१।

१८४. पत्र : पुष्पा एस० पटेलको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय पुष्पा,

तुमने अपनी लिखावट काफी सुधार ली है।

जीवनचरित्र लिखनेका मतलब है किसी व्यक्तिके बारेमें छपने योग्य वे सभी बातें लिखना जो हमें मालूम है। अगर प्रार्थनाके समय किसीको नींद जैसी लगने लगे तो उसे खड़ा हो जाना चाहिए।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १९७।

१८५. पत्र : बलभद्रको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय बलभद्र,[1]

तुम्हारे पत्रसे मुझे संतोष नही है। तुम्हें प्रश्न नही सूझते इसका अर्थ यह है कि तुम प्रश्न पूछना ही नही चाहते। लेकिन इसका यह मतलब नही है कि जिन्हे प्रश्न पूछना है वे पत्र लिखे ही। तुम साफ-साफ अक्षरोमे लिखो कि तुम क्या कर रहे हो, क्या देख रहे हो और क्या सोच रहे हो। अगर तुम मेरे लेख पढ़ो तो तुमने जो प्रश्न पूछे है उनके उत्तर तुम्हे मिल जायेंगे। क्या तुम्हे याद है तुमने क्या पूछा था? अगर कोई गलती करता है तो उसके गुरुजन उसे वैसा करनेसे रोकते है। यज्ञके समय किसीको बोलना नही चाहिए।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ २०१।

१८६. पत्र : शान्तिको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय शान्ति,

वर्षाके दिनोंमे असंख्य कीड़े पैदा हो जाते है। तुम्हें घोंघे नही पकडने चाहिए। इन कीड़ोंको भगवानने बनाया है। हम सभी प्राणियोकी उपादेयताको नही जानते।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १९३।

१. आश्रमकी पाठशालाका एक विद्यार्थी।

१८७. पत्र : जयाको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय जया,

अगर हममें साहस है और उसके प्रति प्रेम है तो जब भी हम किसी चोरसे मिलें, हमें उससे चोरी न करनेका अनुरोध करना चाहिए। अगर वह हमें मारता है तो उसकी मारको सहन करना चाहिए।

सोते समय सपने नहीं आने चाहिए। अगर तुम गलती पर हो और गुरुजन तुम्हें सजा नहीं देते तो यह दया है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १९३।

१८८. पत्र : आनन्दीको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय आनन्द,

देखूँगा कि तुम अपने चिड़चिड़ेपनको कब तक याद रखती हो। यह अच्छी बात है कि तुम नियमित रूपसे दूध पीती हो। सायंकाल घूमने जाते समय मैं लाठी ले जाना कैसे भूल सकता हूँ? तुम्हारी जैसी लड़कियोंको अध्यापकों द्वारा चुनी हुई पुस्तकें पढ़नी चाहिए। तभी तुम भी किताबें चुनना सीख जाओगी।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १९५।

१८९. पत्र : महावीर गिरिको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय महावीर,

तुम्हे अबतक पैसे मिल गये होगे। सभीको अपनी डायरी पूरी तरह लिखनी चाहिए। तुम सब एक या दो दिनका अपना पूरा कार्यक्रम मुझे लिख भेजो। आशा है दुर्गा[1] अब अच्छी होगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल न० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १९९।

१९०. पत्र : इन्दु एन० परीखको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय इन्दु,

यह बहुत अच्छा है कि तुम नारणदास पर विश्वास करती हो। जैसा वह कहता है, सम्भव है कि भोजनमे सयम बरतने और पर्याप्त निद्रा लेने पर तुम्हे लाभ पहुँचेगा। क्या तुम्हे टट्टी साफ हो जाती है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स : होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ २०१।

१. महावीर गिरिकी बहन।

१९१. पत्र : शारदा सी० शाहको

८ जुलाई, १९३२

प्रिय शारदा,

मेरा विश्वास है कि भरतखण्ड नाम कैसे पड़ गया इसकी जानकारी वास्तवमें किसीको नही है। लेकिन कहा जाता है कि यह नाम शकुन्तलाके पुत्र, भरतसे पड़ा है। लेकिन पैरोंको हिलाने आदिसे सम्बन्धित कथाओं पर विश्वास मत करो। पुराने जमानेमें हमे कुछ विषयोंका ज्ञान था, तो कुछ विषयोंका कोई ज्ञान नही था।

अपने भाईके साथ रहनेवाली बहनको 'सहधर्मचारिणी' कहा जा सकता है। लेकिन इस शब्दका प्रयोग केवल पत्नीके लिए ही करनेका चलन है। मैं पत्रोंको फाड़ रहा हूँ

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५३) से; सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

१९२. पत्र : ई० ई० डॉयलको

९ जुलाई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

मेजर भण्डारीसे यह दरयाफ्त करने पर कि मेरी डाकमे इधर हालमें गड़बड़ी क्यो होती रही है, मुझे पता चला है कि अधिकारियोको मेरी आने-जानेवाली सारी डाकको सरकारके पास भेजनेके आदेश है। पत्राचारको मैं एक स्वस्थ मानसिक भोजन मानता हूँ, और यदि इस प्रक्रियाके फलस्वरूप मेरी चिट्ठियोंको रवाना करने और मेरे नाम आई चिट्ठियोंको मुझे देनेमे बहुत ज्यादा विलम्ब होगा, तो पत्राचारमें मुझे कोई रुचि नही रह जायेगी। मैं व्यर्थ ही चिट्ठी नही लिखता, और जहाँ तक मैं जानता हूँ, मैं अपने मित्रोंको पत्र लिखते समय उचित मर्यादाका उल्लंघन नही करता हूँ। अगर सरकार चाहती हो कि अभीतक मैं जिस प्रकार पत्र लिखता रहा हूँ उसी प्रकार लिखता रहूँ तो मैं चाहूँगा कि मेरी चिट्ठियाँ मुझे नियमित रूपसे मिलते रहनेका आश्वासन हो। आश्रमको भेजी जानेवाली और आश्रमसे आनेवाली चिट्ठियाँ नियमित रूपसे लिखी जाती हैं। मैं इस पत्र-व्यवहारको, जिसमें श्रीमती मीराबहन

द्वारा लिखे गये और उनको भेजे गये पत्र शामिल हैं, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। मैं जल्दीसे-जल्दी जानना चाहूँगा कि डाकके मामलेमे मेरी स्थिति क्या है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) भाग १, पृष्ठ २३९।

१९३. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

९ जुलाई, १९३२

प्रिय मैथ्यू,

'गॉड इज ट्रुथ' (ईश्वर ही सत्य है), इस वाक्यमे 'इज' शब्द तुल्यता प्रकट नही करता, और न इसका अर्थ केवल 'इज ट्रुथफुल' (सत्यनिष्ठ है) ही है। सत्य ईश्वरका एक गुणमात्र नही है, बल्कि ईश्वर ही सत्यरूप है। ईश्वर यदि सत्य नही है तो फिर कुछ नही है। 'ट्रुथ' का संस्कृतमे अर्थ होता है 'सत्'। 'सत्' का अर्थ है 'है'। इसलिए 'है' मे सत् अन्तर्निहित है। ईश्वर है, ईश्वरके सिवा कुछ नही है। अतः हम जितना ही सत्यनिष्ठ होगे, ईश्वरके उतना ही निकट होंगे। हम जिस हद तक सत्यनिष्ठ है, केवल उसी हद तक हम हैं।

मुर्गी और उसके चूजोंका दृष्टान्त अच्छा है। लेकिन इससे भी बेहतर दृष्टान्त 'ईश्वर और उसके दासों' का है। ये दोनों एक दूसरेसे बहुत दूर हैं, क्योंकि शारीरिक रूपसे निकट होते हुए भी दोनों मानसिक रूपसे एक दूसरेसे बहुत दूर है। अस्तु मिल्टनकी यह पंक्ति कि 'माइन्ड इज इट्स ओन प्लेस'[1] (मन चाहे तो स्वर्गमें नरक या नरकमें स्वर्गकी रचना कर सकता है) और 'गीता' का यह वचन कि "मनुष्य अपनी मुक्ति या दासताका रचयिता स्वयं है।"[2]

इसी मुक्तिको प्राप्त करनेके लिए तो मैं चाहता हूँ कि हम पर्‌या और मजदूरो-जैसा परिश्रम करें।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५५५) से। महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ से भी।

१. पैरेडाइज़ लॉस्ट से।
२. "मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः", वास्तवमें यह उद्धरण गीता का नहीं अपितु महाबिन्दु उपनिषद् का है।

१९४. पत्र : भाऊ पानसेको

९ जुलाई, १९३२

चि० भाऊ,

हमारी प्रार्थनाका पहला श्लोक मुझे भी खटकता था। लेकिन गम्भीरतापूर्वक सोचने पर यह महसूस हुआ कि विवेकपूर्वक इस श्लोकका पाठ समुचित है। हमारी बुद्धि तो अवश्य यह कहती है कि हम मिट्टीके पुतले नही हैं अपितु इस शरीरमें निवास करनेवाले साक्षी रूप आत्मा है। उपर्युक्त श्लोकमें इसी साक्षी स्वरूप आत्माका वर्णन है और फिर उपासक प्रतिज्ञा करता है कि "मैं वही साक्षी ब्रह्म हूँ।" ऐसी प्रतिज्ञा वही मनुष्य कर सकता है जो वैसा बननेके लिए सतत प्रयत्नशील है और शारीरिक बन्धनोको ढीला करनेमे कृतसंकल्प है। जब-जब मूर्छा, भय, रागद्वेष उत्पन्न हो वह ब्रह्मके गुणोको याद करके रागद्वेषादिसे रहित होनेका प्रयत्न करता है। ऐसा करते-करते जो मनुष्य नित्य ब्रह्मका चिन्तन करता है अन्ततः वह ब्रह्ममय हो जाता है। इसलिए हम विनम्रभावसे लेकिन दृढ़तापूर्वक भले नित्य इस श्लोकका पाठ करे और अपने प्रत्येक कार्यमे उस प्रतिज्ञाको साक्षी रूप मानें।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३३) से। सी० डब्ल्यू० ४४७६ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

१९५. पत्र : जमनाबहन गांधीको

९ जुलाई, १९३२

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि चौमासेमे राणावावमे रहा ही नही जा सकता तो तुम भले ही आश्रममे वापस चली आना। लेकिन यदि तुम्हारी तबीयत वहाँ भी ठीक न रहे तो किसी और जगहकी तलाश करनी होगी। मुझे ऐसी आशंका भी है कि आश्रममें तुम्हारी मानसिक स्थिति वैसी नही रहती जैसी आश्रमसे बाहर रहती है। तुम आश्रमके बाहर जो खुराक जिस प्रकार लेती हो वैसी ही और उसी प्रकार आश्रममे भी लेना। स्वास्थ्यके विचारसे ही यदि उसमे कुछ परिवर्तन करना पड़े तो यह एक अलग बात है। मेरी इच्छा है कि तुम्हे आश्रमकी आबोहवा अनुकूल पड जाये। किसी-न-किसी दिन तो अनुकूल होगी ही।

पुरुषोत्तमसे लिखनेको कहना। उससे कहना कि वह राणावावका चित्रण करे।

अपने पड़ोसियोके साथ तुमने बड़े अच्छे सम्बन्ध बनाये हैं। कुल मिलाकर वहाँ कितने दिन रहीं और कितना खर्च हुआ, सो सब बताना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५६) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

१९६. पत्र : अमतुस्सलामको

९ जुलाई, १९३२

प्रिय अमतुल,

यदि तुम घर्षण-स्नान (सिट्ज बाथ) लेती रही तो मासिक-धर्ममे होनेवाली अनियमितता दूर हो जायेगी। इस उपचारके साथ सादा आहार लेनेसे हजारों स्त्रियो को लाभ पहुँचा है।

डॉ० शर्माको मैंने लिखा[1] तो था, लेकिन उनका कोई जवाब मुझे नही मिला है।

मै यह नही चाहता कि तुम अपनी दैनन्दिनी मुझे भेजो। मै तो सिर्फ तुम्हारी दिनचर्या जानना चाहता था, सो तुमने बहुत अच्छे ढंगसे दे दी है।

तुम्हारी उर्दूकी लिखावट इस बार काफी साफ है। मै हर शब्दको स्पष्ट पढ़ सका हूँ। तुम्हारी अंग्रेजीसे तो यह असंदिग्ध रूपसे बेहतर है। ज्यादासे-ज्यादा उर्दूमें ही लिखनेकी कोशिश करो। और जब तुम इजाजत दे दोगी तो मैं भी तुम्हें उर्दूमें लिखूंगा।

सरकारने मीराबहनको मुझसे मिलनेकी अनुमति अभी तक नही दी है। और यदि यह नही दी जाती तो मुझे भय है कि मुझे अन्य लोगोंसे भेंट करनेके सुखसे भी स्वयंको वंचित करना पड़ेगा।

लेकिन तुम चिन्ता मत करना।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४८) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २०७ से भी।

१. देखिए "पत्र : डा० हीरालाल शर्माको", १८-६-१९३२।

१९७. पत्र : निर्मलाबहन गांधीको

९ जुलाई, १९३२

प्रिय नीमु,

रामदासको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढा। तुम भी कितनी वेवकूफ हो! तुम अपनी कठिनाइयोंके वारेमे मुझे नही लिखती और न ही नारणदासको बताती हो, लेकिन वेचारे रामदासको उनके वारेमे लिखती हो! क्या इसीलिए मैंने तुम्हारा व्याह रामदाससे किया था? और फिर आश्रमकी शिक्षा ही यह है कि स्त्रीको अपने आपको परावलम्बी, निर्बल नही समझना चाहिए, अपने पतिका ही आसरा नही लेना चाहिए वल्कि (जीवनमे) स्वयं अपना पथ-निर्माण करना चाहिए। गंगादेवीका उदाहरण लो। तोतारामजी जव कगाल हो गये तव गंगादेवीने ही उनको हिम्मत बँधाई। तुम्हारी कठिनाई तो कुछ भी नही है। अगर किसी लडकेकी जरूरत है तो नारणदास ढूंढ देगा। तुम्हे नारणदासको पिता-तुल्य समझकर अपनी सारी कठिनाइयाँ उसे बतानी चाहिए। निश्चय ही उसमे तुम्हारा विश्वास है। मेरी इतनी ही सलाह है। आश्रमका काम करनेके लिए किसी लड़केको मत रखो। वच्चोकी उचित देख-भाल करनेको मै आश्रमका ही काम मानता हूँ। बच्चोंकी देखभालकी जिम्मेदारी आश्रमकी है। तुम आश्रमकी ओरसे अपने कर्तव्यका पालन कर रही हो। अत: ऐसा मानो कि तुमने सारा समय आश्रमको दिया है। इसके वावजूद यदि तुम्हे कोई लड़का रखनेकी जरूरत हो तो अलग वात है। तुम मुझे अच्छी तरह लिखा करो, अन्यथा मुझे तुम्हारा इलाज करना पड़ेगा।

वापू

[अंग्रेजीसे]

वॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल व्राच, फाइल न० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ २०५।

१९८. पत्र : छगनलाल जोशीको

९ जुलाई, १९३२

प्रिय छगनलाल,

'ईश्वरने चाहा तो हम २१ तारीखको मिलेंगे। तुम अच्छी तरह जानते हो कि जैसा हमारा इरादा हो या जैसा हम चाहें ठीक वैसा ही हमेशा नही होता। देखो, पापा मृत्यु-शय्या पर पड़ी नजर आती थी, लेकिन वह ठीक हो गई। उसका पति, वरदाचारी, हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ था, लेकिन थोड़ीसी बीमारीके बाद ही वह राजाके जिम्मे एक विधवा पुत्री छोड़ कर चल बसा। पापा उनकी सबसे प्रिय सन्तान है। वह बड़े दृढ़ मनवाली लड़की है और इस धक्केको साहसके साथ सहेगी। यदि मनुष्यके हृदयमें ज्ञान गहरा उतर जाये तो फिर वह उतना ही दुःख अनुभव करता है जितना वह सहन कर सके, क्योंकि ज्ञानी व्यक्ति जन्म और मृत्यु दोनोमें समान रूपसे अप्रभावित रहता है। चूँकि जीवनकी अनिश्चितताका यह उदाहरण मेरे मनमें ताजा था इसलिए मैंने पत्रका आरम्भ 'ईश्वरने चाहा तो' से किया है। यदि २१ तारीखको मिलनेकी हमारी इच्छा ईश्वरकी इच्छाके अनुकूल हुई तो हम उस तारीखको मिलेंगे। और यदि हम नही मिल सके तो भी हम उसके प्रति उतने ही आभारी होंगे।[१]

आश्रमको लिखा पत्र साथ ही संलग्न कर रहा हूँ।

अब जहाँ तक रामदासकी बात है, नीमूका पत्र और पृष्ठके खाली हिस्से पर तुमने जो-कुछ लिखा है वह मुझे मिल गया। तुमने खाली हिस्से पर लिखा, इसमें अशिष्टता जैसा कुछ नही है, बल्कि मेरी रायमें उस हिस्सेका उपयोग न करना अशिष्टता होगी। फिर, जेलमें तो हमें प्रत्येक चीजका लोभ होता है और हमें जीवन भर यह लालच बनाये रखना चाहिए। यह भी एक जेल ही है, क्योंकि शरीर भी तो जेल स्वरूप ही है। अतः यदि हम अपने जीवन-भर इस छोटेसे जेलके सभी अच्छे नियमोंका पालन कर सकें तो अच्छा ही होगा। यदि हम उनका पालन न कर सकें तो उस हद तक हमें अपनी कमजोरीको स्वीकार करना चाहिए और जहाँतक सम्भव हो, उनका पालन करना चाहिए।

मैंने नारणदासको लिखा है कि नीमूसे बात करनेके बाद जो उचित हो सो करे।[२] मैंने हँसी-हँसीमें नीमूको हल्की-सी टकार भी बताई है।[३] वह तुम्हे

१. इस अनुच्छेदको महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१ के गुजराती अंशसे मिला लिया गया है।

२. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ६/१०-७-१९३२।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

तकलीफ क्यों देती है? उसने मुझे सीधे क्यों नही लिखा? उसने नारणदाससे सारी बातें स्पष्ट क्यों नही कर ली? क्या उसकी शादी तुमसे इसलिए हुई है कि वह यहाँ भी तुम्हे तकलीफ दे? फिर, आश्रममें पली हुई कोई लड़की अपनेको निर्बल या पराश्रित नही मानेगी। वह अपना रास्ता निकाल ही लेगी। वह अपने पतिका मुँह देखती बैठी नही रहेगी। गंगादेवीने कितना अच्छा उदाहरण रखा है? तोताराम कंगाल हो गये तो भी उसने उनकी हिम्मत कायम रखी और उनकी कंगालीको महसूस नही होने दिया। यदि वह आगेसे मुझे पत्र नही लिखती तो उसे ठीक करना होगा। मैंने उसे यह बात लिख दी है और अपना यह मत व्यक्त कर दिया है कि आश्रमका काम करनेके लिए उसे कोई लड़का नही रखना चाहिए। जो माता अपने बच्चोंकी उचित देखभाल करती है वह आश्रमका ही काम करती है, क्योंकि नीमू जबतक आश्रममें है तबतक बच्चोंकी देखभालका दायित्व भी आश्रमका है। बच्चोंकी देखभाल करके नीमू आश्रमके प्रति अपने कर्तव्यका निर्वाह करती है, अतः उसका यह काम आश्रमके काम जैसा ही है। तुम्हें इस बारेमें चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। इस चिन्ताका भार मुझपर डालकर तुमने ठीक ही किया है। आजकल मेरे पत्रोंकी जाँच-पड़ताल की जाती है। यों, ऐसा करनेका कोई कारण तो नहीं है। लेकिन क्या हम लोग बन्दी नही हैं? अतः मेरा पत्र आश्रम पहुँचनेमें शायद देर हो। ऐसी स्थितिमें भी चिन्ताकी कोई बात नही है। तुम्हारा वजन बढ़ना चाहिए। डाक्टरका कहना है कि रामदास अपनी रुचिके अनुसार जो चाहे खा सकता है और उसकी माँग कर सकता है। यदि दूध जरूरी हो तो लेना चाहिए। तुम्हें शरीर दुर्बल नही होने देना चाहिए। मैं तुम्हारा स्वभाव जानता हूँ। मैं भी वैसे ही विचार रखता हूँ। लेकिन यदि मुझे विश्वास हो कि मेरे शरीरको अमुक चीजोंकी जरूरत है तो मैं उन चीजोंको भी लेने में नही हिचकूँगा जो मेरे अन्य साथियोंको नही मिलतीं। यह अलग बात है कि हमें यह पता हो कि अन्य साथियोंको भी उन चीजोंकी जरूरत है।

सुरेन्द्रके स्वास्थ्यके बारेमें कुछ विचार करनेकी जरूरत है। क्या वह इस समय गेहूँ लेता है? उसका वजन बढ़ना चाहिए। यदि शक्ति बनी रहे तो वजन बढ़ानेकी कोई जरूरत नही है।

मैंने श्री दरबारीके लिए एक पारसी पुस्तक भेजी है। मैंने उसका मूल्य नहीं दिया है। पढ़ चुकने पर वह उसे वापस कर देंगे। यह किताब बहुत अच्छी है। इसमें जरथुस्ती नीति-शास्त्रका पूरा निचोड़ दिया गया है। अब श्री दरबारी पूरी तरह स्वस्थ होंगे।

देवदास पूर्णतः स्वस्थ हो गया है। उसके तबादलेके बारेमें कुछ भी निश्चित नही है। ऐसा लगता है कि अन्य कैदी जहाँ रखे गये थे वहीं बने हुए हैं।

प्रो० त्रिवेदीने मुझे (स्वामी) विवेकानन्दकी रचनाएँ भेजी हैं। मैंने उन्हें मँगाया नही था। अगर तुम्हारे यहाँसे किसीने इन किताबोंकी माँग की हो तो कृपया मुझे सूचित करना ताकि मैं उन्हें उनके पास भेज दूँ।

हम लोगोंकी गतिविधिका समाचार यह है कि सरदारने संस्कृतका अध्ययन शुरू कर दिया है। उन्होंने सातवलेकर रचित 'गाइड टु संस्कृत' के २४ भाग मँगाये हैं। पहला भाग लगभग तीन दिनमें समाप्त हो जायेगा। वह कताई शुरू करनेकी कोशिश कर रहे हैं। वह लिफाफे बनानेका काम भी कर रहे हैं। यह तो तुम्हें पहले ही पता है कि हम तीनोंका वजन बढ़ गया है।

हमें पढ़ने योग्य कोई नई किताबें नहीं मिली हैं। चन्दूलालने मुझे गोडल रीडिंग सीरीज भेजी है।

यदि रामदास नीमुको पत्र लिखे तो मैंने ऊपर जो-कुछ लिखा है उसका सार-संक्षेप लिख दे ताकि मेरा पत्र यदि उस तक देरसे पहुँचे या बिल्कुल भी न पहुँचे तो भी उसे मेरे विचार मालूम हो जायें।

आश्चर्यकी बात है कि इस बार तुम्हारा कोई पत्र नहीं आया है।

हम तीनों तुम सबोंकी याद करते हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरी डाककी कड़ी जाँच की जाती है। परिणामस्वरूप इस बातकी हर चन्द सम्भावना है कि मगनभाईकी 'मीमांसा' बीच ही में खो जाये। अतः यदि यह पुस्तक डाह्याभाईको भेजी जाये तो वह उसे लेता आये। वह उसे खुद सुपरिंटेंडेंटको दे देगा तो उसके खोनेका कोई डर नहीं रहेगा।

तथापि उसे अपने पास उसकी एक प्रति रखनी चाहिए।

बापू

[पुनश्च :]

मैं तुम्हारे पढ़नेके लिए श्री भणसालीका पत्र साथ भेज रहा हूँ। तुम उसे पसन्द करोगे। इसे वापस भेजना जरूरी नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २७५-८३, तथा महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १।

१९९. पत्र : धीरूको

९ जुलाई, १९३२

प्रिय धीरू,

मुझे तुम्हारा पत्र स्पष्ट नही लगता। तुम कहते हो कि १५ अंकका सूत कातने मे कोई कठिनाई नही होती और ३० अक तक पहुँच कर बस हो जाती है, लेकिन १५ और ३० अकमे तो बहुत अन्तर होता है। क्या तुम कहना चाहते हो कि ३० अंकका सूत कातनेमे कोई कठिनाई नही है? अगर तुम्हारा यही कहना है तो ३० अकका सूत कातनेकी रफ्तार क्या है? एक तोला सूत कातनेमें कितना फुचडा निकलता है? ४० अंकका सूत कातनेकी रफ्तार क्या है? इसके बाद कितना फुचडा निकलता है? इससे ज्यादा बारीक सूत कातनेमे क्या कठिनाई है? प्रभुदासको तुममें बहुत भरोसा है। अगर तुम उसकी आशाओंको फलीभूत करना चाहते हो तो तुम चरखेमे पूरी तरह मन लगाओ और उसमे यदि कोई खराबी हो तो उसका पता चलाओ और उसकी सूत निकालनेकी क्षमताका पता करो। एक ही तकुए पर कातनेसे शायद ज्यादा बारीक सूत निकाला जा सके। यह भी पता चलाओ कि क्या तुम मगन चरखे पर एक तकुएसे उतना ही सूत निकाल सकते हो जितना साधारण चरखे पर एक तकुएसे निकाल सकते हो?

बहुतसे मुसलमान पुनर्जन्ममे विश्वास करते हैं। एक बार मिथ्या भाषण करनेवाले व्यक्तिमे और आदतन झूठ बोलनेवाले व्यक्तिमे बहुत अन्तर है।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २०९।

२००. शिक्षा[1]

१० जुलाई, १९३२

आश्रमका इतिहास लिखते हुए शिक्षाके सम्बन्धमे जो विचार मुख्य रूपसे मेरे मनको आलोड़ित कर रहा है उसका सार मैं यहाँ देता हूँ। आश्रमके कई लोगोंको यहाँ शिक्षाकी, पढ़ने-लिखनेकी कमी खटकती है और मैं भी इस कमीको महसूस कर सकता हूँ। लेकिन कदाचित् यह कमी आश्रमके साथ हमेशा बनी रहेगी। उसके कारणोंमें मैं अभी नही पड़ूँगा।

हमें यह कमी महसूस होती है, क्योंकि हम शिक्षाका अर्थ और उस अर्थके अनुरूप शिक्षा प्राप्त करनेके सही ढंगको नही समझ पाये है, अथवा वर्तमान पद्धति ठीक है, ऐसा अपने मनमें मानकर कार्य कर रहे है। मेरे विचारसे वर्तमान शिक्षा और उसके आदान-प्रदानका ढंग, ये दोनों ही दोषपूर्ण है।

सच्ची शिक्षा तो वह है जिसके द्वारा हम अपनेको, आत्माको, ईश्वरको, सत्य को पहचान सके। इसके लिए किसीको भले ही साहित्यके ज्ञानकी जरूरत होती है, किसीको भौतिक शास्त्रकी, किसीको कलाकी, आदि-आदि। लेकिन शिक्षा मात्रका उद्देश्य आत्मदर्शन होना चाहिए। आश्रममे यही चीज है। इस उद्देश्यको ध्यानमें रखकर हम अनेक प्रवृत्तियोंको चलाते है। ये सब प्रवृत्तियाँ, मेरे विचारानुसार, शुद्ध शिक्षा है। आत्मदर्शनके उद्देश्यके बिना भी यही प्रवृत्तियाँ चल सकती है। जब यह बात हो तब ये प्रवृत्तियाँ भले ही आजीविकाका अथवा किसी और चीजका साधन हों, लेकिन वह शिक्षा कदापि नही है। सच्ची शिक्षाके लिए समझ, कर्तव्यपरायणता, सेवाभाव आवश्यक होते हैं। जहाँ समझ होती है वहाँ बुद्धिका विकास भी होता ही है। छोटे-से-छोटा काम करते हुए हममे शिवसंकल्प होना चाहिए। उसे करते हुए उसका कारण और उसके शास्त्रको समझनेका हमारा प्रयास होना चाहिए। शास्त्र प्रत्येक प्रवृत्तिका होता है — रसोई बनानेका, सफाईका, बढ़ईगिरीका और कताईका होता है। जो व्यक्ति विद्यार्थीकी दृष्टिसे प्रत्येक प्रवृत्तिको चलाता है वह उसके शास्त्रको जानता है अथवा उसकी रचना करता है।

ऐसा यदि प्रत्येक आश्रमवासी समझ ले तो वह जान जायेगा कि आश्रम एक महान पाठशाला है जिसमे अमुक समय ही शिक्षाके लिए निर्धारित है, ऐसी बात नही है, अपितु वहाँ हर समय शिक्षाका समय है। प्रत्येक व्यक्ति जो आत्मदर्शनके — सत्यदर्शन — के भावसे आश्रममे रहता है वह शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही है। जिसमे वह निपुण है उस विषयमें वह शिक्षक है और जो चीज उसे अभी सीखनी है उसके आधार पर वह विद्यार्थी है। जिस विषयका हमे अपने पड़ोसीकी अपेक्षा

१. यह लेख "पत्र: नारणदास गांधीको", ६/१०-७-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

अधिक ज्ञान है वह ज्ञान हम उसे निसंकोच होकर देते हैं और जिस विषयका हमारे पड़ोसीको ज्यादा ज्ञान है उसका लाभ भी निसकोच हो लेते हैं। यदि हम निरन्तर ऐसा ही करे तो हमे शिक्षकका अभाव नही रहेगा और शिक्षा भी सहल और स्वाभाविक हो जायेगी। सबसे बड़ी शिक्षा तो चरित्रका विकास है। हम जैसे-जैसे यम-नियमो आदिका पालन करनेकी दिशामे आगे बढ़ेंगे, वैसे-वैसे हमारी विद्याका — सत्यदर्शनकी शक्तिका — भी विकास होता जायेगा।

अक्षर-ज्ञानका फिर क्या होगा? यह प्रश्न अब उठता ही नही है। जो बात अन्य प्रवृत्ति पर लागू होती है वही अक्षर-ज्ञान पर भी होती है। ऊपर जो बात कही गई है उसके अनुसार एक वहमका — जिसका मतलब यह कि पढ़नेके लिए पाठशालाके रूपमे एक मकान-विशेषकी तथा शिक्षककी आवश्यकता होती है — भी निराकरण हो जाता है। हममे जब अक्षर-ज्ञानकी जिज्ञासा उत्पन्न हो तब हमें जान लेना चाहिए कि अक्षर-ज्ञान हमे अपने प्रयत्नसे प्राप्त करना होगा। उसके लिए आश्रममे अवकाश है ही। मैंने जो ऊपर लिखा है यदि मै उसे अच्छी तरह समझ सका हूँ तो अक्षर-ज्ञान-सम्बन्धी समस्याका समाधान हो जाता है। जिसके पास यह है उसे चाहिए कि वह यथासमय दूसरोको भी अक्षर-ज्ञान देता जाये और दूसरे लोग उसे ग्रहण करते जायें।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२०१. पत्र : नारणदास गांधीको

६/१० जुलाई, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र और अन्य डाक मिली। आजकल तो डाक नियमित रूपसे मिलती है। मैंने अपना पुलिन्दा तो सोमवारकी डाकमे डालनेके लिए दिया था। वह तुम्हे शनिवार तक कैसे नही मिला, मेरी समझमें नही आता। अबसे पुलिन्दे पर डाककी मुहर देखा करना। वहाँसे तुम जो डाक भेजते हो वह पत्र मुझे दूसरे ही दिन मिल जाता है और जो मै भेजता हूँ वह छ: दिनमे मिलता है, यह ऐसी बात है जो समझमे नही बैठती।

समयके हिसाबका रजिस्टर भेजनेकी कोई जरूरत नही। इसमें यदि तुम्हें कुछ विशेष बात दिखाई दे तो भेजना अथवा प्रति माह एक बार भेजा करोगे तो भी यथेष्ट होगा। कुछ तो मै जानता हूँ कि जब सब-कुछ नियमित हो जायेगा तब सब कोई दिल लगाकर अपना-अपना काम करेंगे, और तब किसीको कोई भार महसूस नही होगा। और कुछ हद तक यदि कोई व्यक्ति चिन्तित होगा तो उसकी चिन्ता दूर हो जायेगी; और होनी भी चाहिए। सच्चे मनुष्यके लिए तो एक ही वस्तु

पर्याप्त है। उसे अपनी सामर्थ्यसे बाहर कोई काम हाथमे नही लेना चाहिए और अपनी सामर्थ्यसे कम काम करनेका लोभ मनमे नही रखना चाहिए। जो अपनी सामर्थ्यसे बाहर काम करनेका प्रयत्न करता है वह अभिमानी है, आसक्त है। और जो अपनी सामर्थ्यसे कम काम करता है वह चोरी करता है। समय-रजिस्टर रखकर हम सहज ही इस दोपसे बच सकते हैं। बच जाते हैं, ऐसा नही कहता, क्योकि यदि हम विवेकपूर्वक और उत्साहके साथ समय-रजिस्टर नही रखते तो हम इसका पूरा-पूरा लाभ नही उठा सकते।

सीतला सहायका पत्र तुमने पढ लिया था ना? मुझे यह पत्र निर्दोष लगा है। इसमे मुझे रोप नही दिखाई देता। प्रभुदासके बारेमें जो वह लिखते हैं वह यदि सच है तो उनकी माँग अनुचित नही कही जा सकती। लेकिन इसके बारेमें न्याय उस ढंगसे ही हो सकता है जैसा मै लिख चुका हूँ। अर्थात् उनके खर्चके आँकड़े देखकर। ऐसे मामलोमे एक दूसरेके उदाहरण काम नही आ सकते। हाँ, मार्ग-दर्शकका काम अवश्य दे सकते हैं। लेकिन यदि कोई व्यक्ति हमारे हाथमें हिसाब देता है और यदि हम उसमे कोई भूल नही निकाल सकते तो हमें उसके अनुसार उसे पैसे दे देने चाहिए। और बहुत करके है कि भविष्यमे ऐसे उदाहरण हमें परेशानीमे डाल सकते है। तथापि हम आशा करते हैं कि चूंकि हमारी नीयत साफ है इसलिए हम भविष्यमें ऐसी परेशानियोसे बच जायेंगे।

आजतक जिसने हमे निभाया है वह आगे भी निभा लेगा। जबतक हमारे पास पैसा होगा तबतक हम देते रहेंगे। यदि उसके नामको हमने कलंकित किया होगा तो हमारे पास जो पैसा होगा भी उसे वह छीन लेगा। फिर किसे देंगे? सीतला सहायने लिखा है कि पद्माने तुम्हे हिसाब भेजा है; यह तो ठीक है न? प्रभुदासके खर्चके बारेमे जो वह लिखते हैं वह भी सही है, ऐसा मै माने लेता हूँ। लेकिन सीतला सहायके पत्रमें जो तथ्य दिये गये है वे यदि समुचित न हों तब निश्चय ही इस विषय पर अधिक विचार करना होगा। मैंने जो राय व्यक्त की है उसका आधार सीतला सहायके पत्रमे दी गई हकीकतकी सचाई पर निर्भर करता है। मै जहाँतक राय दे सकता हूँ वहाँ तक राय देता रहूँगा जिससे कि तुम्हारा बोझ हलका हो।

नीमूने रामदासको जो पत्र लिखा है वह रामदासने मुझे भेजा है। उसमें उसने एक लड़केको रखनेकी बात लिखी है। एक लड़केकी आवश्यकता है, ऐसा वह मानती है। उसे सन्देह है कि कदाचित् यह बात तुम्हें पसन्द न आई हो। वह यह भी कहती है कि इस बारेमे तुमने कुछ नही कहा है। रामदासने लिखा है कि मुझे जो ठी.. लगे वह मै करूँ। इस सम्बन्धमे मै कोई स्वतन्त्र निर्णय नही दे सकता। मै नीमूको पत्र लिख रहा हूँ।[1] उसे तुम पढ़ जाना और जो उचित जान पड़े सो करना। नीमूके पूछनेकी राह न देखकर, उससे मिलकर तुम स्वयं ही उसे सन्तोष देना।

..जीको ..ो जहाँ तक तुमसे बन सके, बचा ही लेना। इस सम्बन्धमें रतिलाल को यदि दृढ़ताके साथ कुछ कहना पड़े तो कहना।

१. देखिए "पत्र: निर्मलाबहन गांधीको", ९-७-१९३२।

१० जुलाई, १९३२

मेरी डाकको लेकर खूब झमेला उठ खड़ा हुआ है। इसलिए पिछली डाक तुम्हें कब मिली होगी अथवा मिली होगी भी कि नहीं सो दैव ही जाने। यह डाक भी कब मिलेगी, यह भी नहीं जानता। इस बारेमें मैंने स्पष्टीकरण माँगा है।[1] क्या परिणाम निकलेगा, सो नहीं मालूम। "न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्।"[2]

आजका लेख[3] शिक्षा पर है। उसे खूब अच्छी तरहसे पढ़ना और उसपर विचार करना। यदि तुमने उसे अच्छी तरह समझ लिया हो तो तुम पर और भी जिम्मेदारी आ जाती है। यह जिम्मेदारी मानसिक है। अपने मनमें प्रत्येक व्यक्तिकी अच्छी तरह जाँच कर जाओ। वे सब लोग अपने कार्यको सोच-समझकर करते हैं या नहीं, यह मालूम करो। आश्रमकी समस्त प्रवृत्तियोंके शास्त्रको समझ लो और दूसरोंको समझाओ, और उनमें जो समझ न आये, मुझसे पूछ लो। जिन प्रवृत्तियोंके बारेमें मुझे जानकारी है उनको लेकर यदि तुम मुझसे कुछ पूछोगे तो मैं उत्तर दूँगा। यह देख लेना कि प्रत्येक व्यक्तिको पढ़नेका समय मिलता है या नहीं। इस जिम्मेदारीको उठानेके लिए तुम्हारे मनको थोड़ा अवकाश चाहिए। यों शिक्षकका काम तो तुम सदासे ही करते आये हो, इसलिए तुम्हारे लिए यह नई बात नहीं है। मैंने तो केवल तुम्हारे क्षेत्रका विस्तार किया है। लेकिन शिक्षा देनेका मेरा तरीका सहल है। रटनेकी बात तो इसमें नाममात्रको है। चूँकि हमारी प्रवृत्ति ग्रामीण जीवनसे सम्बद्ध है इसलिए उसका शास्त्र भी हमारी शक्तिसे बाहर नहीं है। जहाँ तक साहित्यका प्रश्न है, हर किसीको अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार लाइब्रेरीसे पुस्तकें लेनी चाहिए और जिसके पास साहित्यिक ज्ञान है वह दूसरोंको भी जितना दिया जा सके दे। मुख्य बात तो बुद्धिके विकासकी है और सत्यदर्शनके हेतुको समझना है। यह समझमें आ जाये तो अन्य सब सहज हो जाता है। फिर तो सन्तोषका पार नहीं रहता। धैर्य तो स्वयमेव आ जाता है। और ज्ञान प्राप्त करनेकी कुंजी हमारे हाथ आती है। तब केवल उतना ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा रह जायेगी जितना आत्मविकास और आत्मदर्शनके लिए आवश्यक होता है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२३८ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. देखिए "पत्र: ई० ई० डॉयलको", ९-७-१९३२।

२. भगवद्गीता, ५, २०।

३. देखिए "शिक्षा", १०-७-१९३२।

२०२. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

१० जुलाई, १९३२

चि० पण्डितजी,

पिछले सप्ताह आपको एक बात लिखना[1] भूल गया अर्थात् प्रार्थनामे जो समय खर्च होता है उसकी बाबत। न तो उसके लिए कोई शिकायत होनी चाहिए और न उससे ऊबना ही चाहिए। इस्लाममे पाँच बार नमाज पढ़नेका विधान है, और प्रत्येक नमाजमें कुछ नही तो पन्द्रह मिनट अवश्य लगते है और पारायण भी वहीका वही होता है। ईसाई-धर्मकी प्रार्थनामे भी एक बात तो स्थायी है। उसमे भी हर बार पन्द्रह मिनट तो अवश्य ही जाते है। रोमन कैथॉलिक सम्प्रदायमे और आजके प्रचलित गिरजाघरोमे भी आधे घटेसे कम नही लगता और वह सवेरे, साँझ और दोपहर इस प्रकार चलती है। भक्तको वह विषम नही जान पडती। और अन्तमें हमको [आश्रमके] क्रम-परिवर्तन करनेका कोई अधिकार नही रहा, क्योकि हम सब लोग अपूर्ण है और क्रम-परिवर्तन पर हम पहले ही बहुत चर्चा कर चुके है। अब उसमे हमे रस पैदा करना है और उसके जरिये ईश्वरका साक्षात्कार करना है। इसीके द्वारा दैनिक जीवनका पाथेय भी प्राप्त करना है। अतएव तब्दीली आदिका विचार छोड़कर हम उसे अलंकृत करें तथा उसमे प्राण उँडेलें। मै तो इस विषयपर जितना विचार करता हूँ उतना ही मुझे ऐसा लगा करता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २२९) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन एन० खरे

२०३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

१० जुलाई, १९३२

पत्रोंमे अव्यवस्था है इससे उनमे देर हो जाती है। और इस तरह हमें समय-समय पर कैदी होनेके अनुभव हुआ करते है, होने भी चाहिए। 'गीताबोध' पर अमल करनेका अवसर भी मिल रहा है। इच्छित वस्तु जब प्राप्त नही होती तब मनको आघात पहुँचता है या नही, यह जाना जा सकता है। और यदि आघात पहुँचता है तो यह माना जायेगा कि हममे उतनी कमी है। यही सोचकर मै आघातकी इस भावनाको आगे नही जाने देता। हमे जो मिल सकता हो उसीकी माँग करनी चाहिए। यदि वह मिल जाये तो अच्छी बात है। सरोजिनी देवी वैद्यराज होगी, इसके लिए उन्हें मेरी ओरसे बधाई देना। उनसे यह भी कहना कि उनकी मिठाइयोंका

१. देखिए "पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको", १-७-१९३२।

उपभोग यहाँ अनेक लोगोंने किया। लेकिन इसका अर्थ वह यह न लगा बैठे कि और मिठाई भेजनी होगी। रसके घूँट नही होते, चन्द कतरे ही होते हैं। मैने तो अपने पहले पत्रमे भी विनोद ही किया था। ऐसी वस्तुएँ हमे यहाँ शोभा नही देती। उन्हे तो सब-कुछ शोभा देता है और यदि मेरे जैसे लोग उनका अनुसरण करने लगे तो पछाड़ खा जाये। यहाँ तो एक सेवक है, एक किसान है और एक मजदूर। ऐसी मूर्तियाँ यदि सुनहले साज धारण करने लगे तो गाँवके छोकरे उन्हे ककड़ मारेगे और यह उचित ही होगा। यह सब सरोजिनी देवीको यदि हँसी-हँसीमे कहा जा सके तो कह देना। अन्यथा अन्य बहनें इससे जो शिक्षा ग्रहण करना चाहें, कर ले। देखा, मैने तो विनोदमे इतनी सीख भी दे डाली है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

२०४. पत्र : कन्हैयालालको

१० जुलाई, १९३२

भाई कन्हैयालाल,

यदि ईश्वरको सत्य रूप माना जाये तो उसका प्रत्यक्ष दर्शन करना सम्भव है। ध्रुव तथा अन्य लोगों द्वारा ईश्वरको देखनेकी कहानियोंको अक्षरशः मानना ठीक नही है। कवियों द्वारा किया गया ईश्वरका वर्णन तो एक प्रकारका रूपक-अलंकार है।[1]

(२) वानर [बन्दर] का अर्थ ऐसे मनुष्यसे लगाना चाहिए जिसका स्वभाव वानरों जैसा हो।

(३) वेदोंका मुख्य ध्येय ब्रह्म-ज्ञान है।

(४) मन, वचन और कर्मसे सत्यका पालन करना ही सर्वश्रेष्ठ यज्ञ है। वर्तमान कालमें परोपकारकी भावनासे चरखा कातना ही उसका व्यावहारिक स्वरूप है।[2]

(५) धर्मका सच्चा पालन यम-नियमके पालनमे ही निहित है।[3]

(६) स्थितप्रज्ञकी विशिष्टताओंको 'गीता' के अध्याय २ मे देखो।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं ८००। **महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १** से भी।

१, २ और ३. इन अनुच्छेदोंको महादेवभाईनी डायरी के गुजराती अंशसे मिला लिया गया है।

२०५. एक पत्र

१० जुलाई, १९३२

एक ऐसा वर्ग है, और जिसमे हममे से अधिकांश व्यक्ति आ जाते है, जो इतना ज्यादा पढ़ लेता है कि विचार करनेकी शक्तिको ही अवरुद्ध कर वैठता है। उनको तो यह सुझाव दिया जाना चाहिए कि वे लोग पढना वन्द कर दे और उन्होंने पहले जो पढ़ा है उसी पर अच्छी तरहसे विचार करें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

२०६. सत्याग्रह आश्रमका इतिहास[1]

[११ जुलाई, १९३२]

प्रारम्भिक

आश्रमका अर्थ यहाँ सामुदायिक धार्मिक जीवन है। आजकी दृष्टिसे भूतकालका अवलोकन करते हुए मुझे ऐसा लगता है कि इस तरहका आश्रम मेरे स्वभावमे ही था। जवसे मैंने अलग घर वसाया, तभीसे मेरा घर ऊपरकी व्याख्याकी दो शर्तोंके अनुसार आश्रम जैसा बन गया था; क्योकि यह कहा जा सकता है कि गृहस्थाश्रम भोगके लिए नही, वल्कि धर्मके लिए वना है। फिर उसमे कुटुम्वियोके सिवा कोई-न-कोई मित्र तो होते ही है। और वह या तो धार्मिक सम्वन्धके कारण आया होता था, या उसके आनेके वाद उस सम्वन्धको मै धार्मिक वनानेकी कोशिश

१. गांधीजीने यह इतिहास ५ अप्रैल, १९३२ को यरवडा सेंट्रल जेलमें गुजरातीमें लिखना आरम्भ किया था। उन्होंने इसपर रुक-रुक कर कार्य किया और अन्तिम उपलब्ध अंश ११ जुलाई, १९३२ को लिखा। जेलसे रिहा होने पर उन्होंने काकासाहव कालेलकरको पाण्डुलिपि दिखाई और कहा : "यह कार्य मै पूरा नहीं कर सका। इसका संशोधन वहुत जरूरी है। मुझे नहीं मालूम, मैं इसे कभी पूरा भी कर पाऊँगा या नहीं। यह जिस रूपमें है, उस रूपमें इसका प्रकाशन उचित नहीं है। इसका संशोधन कर लेनेके वाद ही मैं इसे दूँगा।" काकासाहवने कहा कि जो-कुछ भी लिखा जा चुका है उसकी मे प्रतियाँ वना लूँगा और उन्होंने गांधीजीके हाथोंमें से पाण्डुलिपि लगभग छीन ली। चूँकि मूल उपलब्ध नहीं हो सका, इसलिए नवजीवन प्रकाशन मन्दिरने काकासाहवके पास उपलब्ध प्रतिके आधार पर ही मई, १९४८ में गुजरातीमें **सत्याग्रहाश्रमनो इतिहास** प्रकाशित किया। अंग्रेजीमें इसका अनुवाद वा० गो० देसाईने किया और इसका प्रकाशन नवजीवन प्रकाशन मन्दिर द्वारा १९५५ में **आश्रम ऑब्जर्वेंसेज इन ऐक्शन** शीर्षकसे हुआ। यहाँ अनुवाद मूल गुजरातीसे किया गया है जैसाकि वह नवजीवन प्रकाशन मन्दिरके प्रथम संस्करणमें उपलब्ध है। गुजराती पुस्तकके अन्तमें दिया गया परिशिष्ट यहाँ नही दिया गया है; उसके लिए देखिए खण्ड ३६, पृष्ठ ४३९-४०।

करता था। इस तरह सन् १९०४ तक यह अनजाने ही चलता रहा। १९०४ मे मैंने रस्किनका 'सर्वोदय'[1] पढ़ा और उसका मुझपर बिजलीका-सा असर हुआ। 'इंडियन ओपिनियन' का कारखाना जंगलमे ले जाकर वहाँ मजदूरोके साथ सामुदायिक या कौटुम्बिक जीवन बितानेका मैंने निश्चय किया। मैंने सौ बीघा जमीन ली और आश्रम बसाया। उस वक्त हमारी इस सस्थाको मैंने अपने भीतर या बाहर आश्रमके रूपमें पहचानना नही सीखा था। धर्म इसका अंग जरूर था, लेकिन प्रत्यक्ष हेतु भीतरी और बाहरी स्वच्छता और आर्थिक समानता वगैरह हासिल करना था। उस वक्त ब्रह्मचर्यकी जरूरत न तो मानी ही गई थी और न समझी ही गई थी। इतना ही नही, बल्कि इसके विपरीत यह मान्यता थी कि सब साथी गृहस्थ जीवन बितायेंगे और प्रजाकी वृद्धि होगी। फीनिक्सका यह संक्षिप्त इतिहास 'दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास' मे आ जाता है।[2]

इसे हम पहला कदम समझे।

यह कहा जा सकता है कि दूसरा कदम सन् १९०६ मे उठाया गया। सेवाका जीवन बितानेके लिए ब्रह्मचर्यकी जरूरत अनुभवसे साबित हुई, ऐसा कह सकते है। और तबसे फीनिक्सको मै जानबूझकर धार्मिक सस्थाके रूपमे मानने लगा और मेरे मनमे उसका धार्मिक ढाँचा बनने लगा। राजनीतिक सत्याग्रहकी शुरुआत इसी साल हुई। उसकी जड़मे तो धर्म ही था। सत्यस्वरूप परमात्मा पर अविचल श्रद्धा ही उसका आधार था। यहाँ धर्मका कोई सकीर्ण अर्थ न करे। 'धर्म' का अर्थ है अलग-अलग नामोसे पहचाने जानेवाले सब धर्मोको एक साथ जोड़नेवाला और उन्हे एकरूप देखनेवाला परमधर्म।

१९११ तक इस तरह चलता रहा। इतने बरसोमे फीनिक्स संस्थाकी, उसे आश्रमके रूपमे जाने बिना ही, आश्रमके रूपमे प्रगति हो रही थी, ऐसा मै मानता हूँ।

१९११ मे तीसरा कदम उठाया गया। आज तक फीनिक्समे जो लोग स्थायी रूपसे रह सकते थे, वे वही थे जो छापेखानेके काममे आ सकते थे। मगर अब सत्याग्रहके कामके लिए एक ऐसे आश्रमकी जरूरत जान पडी, जहाँ सत्याग्रही कुटुम्ब रह सके और धार्मिक जीवन बिता सके। इस वक्त मै जर्मन मित्र कैलनबैकके सम्पर्कमे आ चुका था। हम दोनो एक तरहका आश्रम-जीवन बिताते थे। मै वकालत करता था और कैलनबैक अपना स्थापत्यका धंधा करते थे। फिर भी हम एक दूर और बिरली बस्तीमे ऐसा जीवन बिताते थे जिसे तुलनामे बहुत सादा कहा जा सकता था, और यथाशक्ति हमारा मन धर्ममे लगा रहता था। अनजानमे भूले बहुत हुई होगी, मगर हर कामकी ज़ड़ हम धर्ममे ढूंढ़नेकी कोशिश करते थे। बादमे जब सत्याग्रही कुटुम्बोंकी संख्या ज्यादा बढ़ी, तब सबको एक साथ रखनेकी जरूरत जान पडी। इसलिए कैलनबैकने ग्यारह सौ बीघा चौरस जमीन ली और वहाँ सत्याग्रही कुटुम्ब

१. अनटु दिस लास्ट, देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ २२९।

२. देखिए खण्ड २९।

रहने लगे। यहाँ पग-पग पर धार्मिक सवाल खड़े हुए और सारी संस्था धार्मिक दृष्टिसे चलने लगी। इसमे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और पारसी सब रहते थे। इस कारणसे किसी भी दिन क्लेश या झगड़ा हुआ हो, ऐसा मुझे बिल्कुल याद नही आता। इसी तरह यह बात भी न थी कि वहाँ रहनेवाले अपने-अपने धर्मके प्रति शिथिल थे। हममे एक दूसरेके धर्मके प्रति आदर था और हम एक दूसरेको अपने धर्मके अनुसार चलने और आत्म-विकास करनेकी प्रेरणा देते थे।

लेकिन यह संस्था सत्याग्रह आश्रमके रूपमे नही जानी जाती थी। इसका नाम 'टॉल्स्टॉय फार्म' रखा गया था। कैलनबैक और मै टॉल्स्टॉयके पुजारी थे, और उनके बहुतसे विचारोंपर अमल करनेकी खूब कोशिश करते थे। सन १९१२ मे यह संस्था सत्याग्रही निवास न रही और जिन-जिन लोगोको एक साथ रहना था वे सब फीनिक्स चले गये। टॉल्स्टॉय फार्मका इतिहास भी जिन्हे जानना हो वे 'दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास' देख सकते है।[१]

फीनिक्स अब सिर्फ 'इंडियन ओपिनियन' के सिलसिलेमे कायम हुई संस्था न रही। अब वह सत्याग्रहकी संस्था बनने लगी। यह स्वाभाविक ही था, क्योंकि 'इडियन ओपिनियन' की हस्तीके लिए भी वही जिम्मेदार थी। परन्तु वह फेरबदल ऐसा-वैसा नही था। फीनिक्सवासियोंका जीवन अस्थिर बन गया और इस अस्थिरतामे सत्याग्रहियोंकी तरह उन्हें भी स्थिरता खोजनेकी नौबत आई। इससे वे हारे नही। यहाँ भी मैने टॉल्स्टॉय फार्मकी तरह मिलेजुले रसोईघरकी जरूरत महसूस की। कुछ उसमे शरीक हुए, कुछ नही हुए। शामकी सामूहिक प्रार्थनाको दिनोदिन ज्यादा स्थान मिलता गया और सत्याग्रहकी आखिरी लड़ाईकी शुरुआत तो फीनिक्सवासियोके हाथो ही हुई। यह घटना १९१३ मे[२] हुई। १९१४ मे लड़ाई पूरी हुई।[३] मैने जुलाईके महीनेमे दक्षिण आफ्रिका छोड़ा। हिन्दुस्तान जानेकी जिन-जिन लोगोकी इच्छा थी, लगभग उन सभीका हिन्दुस्तान जाना तय हुआ। मुझे विलायत होकर गोखलेसे मिलकर जाना था। हिन्दुस्तानमे अलग संस्था कायम करके सबको साथ रखना था और दक्षिण आफ्रिकामें मैने जिस सामाजिक जीवनकी शुरुआत की थी उसे जारी रखना था। इसलिए आश्रमके नामके बिना आश्रम कायम करनेका निश्चय करके मै १९१४ के अन्तमे[४] हिन्दुस्तान पहुँचा।

हिन्दुस्तानमें एक बरस तक तो मै खूब घूमा; कितनी ही संस्थाएँ[५] देखी, और उनसे बहुत कुछ सीखनेको मिला। कितनी ही जगहोसे वहाँ आश्रम स्थापित करनेके निमन्त्रण मिले और कई तरहकी मददके वचन मिले। अन्तमे अहमदाबादमे आश्रम खोलने

१. देखिए खण्ड २९, पृष्ठ १७६-९५।

२. १५ सितम्बरको; देखिए खण्ड २९, पृष्ठ २०८-११।

३. देखिए खण्ड २९, पृष्ठ २११-१४।

४. यह तिथि गलत है। गांधीजी ९ जनवरी १९१५ को हिन्दुस्तान पहुँचे थे; देखिए खण्ड १३, पृष्ठ १।

५. सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी, शान्तिनिकेतन, गुरुकुल कांगड़ी।

का निश्चय किया। इसे मैं चौथा और आखिरी कदम मानता हूँ। यह कदम आखिरी रहेगा या नही यह तो भविष्यकी बात है।[1] इस संस्थाको क्या नाम दिया जाये, इसके नियम क्या हो, इस बारेमे मैंने मित्रोके साथ अच्छी तरह चर्चा की, पत्र-व्यवहार किया, नियमोका मसविदा मित्रोको भेजा और अन्तमे सस्थाका नाम 'सत्याग्रह आश्रम' रखा गया। उद्देश्यको ध्यानमे रखनेसे ऐसा लगता है कि यह नाम ठीक ही था। मेरा जीवन सत्यकी खोजमें अर्पण किया हुआ है। उसीकी खोजके लिए जीने, और जरूरत पड़ने पर मरनेका मेरा आग्रह है। इस खोजमे जितने साथी मिले उनको साथ लेनेकी मेरी इच्छा है।

२५ मई, १९१५ को कोचरबमे किरायेके मकानमे यह आश्रम खुला। उसके खर्चकी व्यवस्थाका जिम्मा अहमदाबादके कुछ नागरिकोने लिया। जब आश्रम खुला तब लगभग बीस आदमी[2] थे और उनमे से ज्यादातर लोग दक्षिण आफ्रिकासे आये हुए ही थे। उस समय अधिकांश लोग दक्षिणके यानी तमिल या तेलुगु बोलनेवाले हिन्दुस्तानी थे। उन दिनो आश्रममे छोटे-बडे सबके लिए खास काम भाषाएँ सीखने का यानी संस्कृत, हिन्दी और तमिल सीखनेका था। बच्चोके लिए दूसरी साधारण पढाई थी। हाथ-बुनाई मुख्य उद्योग था और उसीके सिलसिलेमे बढ़ईगिरीका काम होता था। नौकर न रखनेका हमारा आग्रह था। इसलिए खाना बनाने, सफाई करने, पानी भरने आदिका सारा काम आश्रमवासी ही करते थे। सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह वगैरह व्रत सारे आश्रमवासियोके लिए अनिवार्य थे।[3] जात-पाँतका भेद बिल्कुल नही माना जाता था। अस्पृश्यताके लिए आश्रममे बिल्कुल गुंजाइश नही थी। इतना ही नही, बल्कि हिन्दू जातिमे से अस्पृश्यता दूर करनेके प्रयत्नको आश्रमकी प्रवृत्तियोमे महत्त्वका स्थान दिया गया था, और अस्पृश्यताकी तरह ही हिन्दू जातिमे से स्त्रियोके कुछ बन्धन तोडनेके बारेमें भी आश्रममे शुरूसे ही आग्रह रखा गया था। इसलिए आश्रममे स्त्रियोको पूरी आजादी रही है। साथ ही हिन्दू, मुसलमान वगैरा अलग-अलग धर्मके लोगोमे जितना भाईचारा आपसमे हो सकता है, उतना ही भाईचारा आश्रममे भी रखनेका नियम हो गया।

लेकिन एक चीजके लिए मैं ही जिम्मेदार हूँ, और इसके लिए मैं पश्चिमका आभारी हूँ। ये है मेरे भोजन-सम्बन्धी प्रयोग। इन प्रयोगोकी शरुआत हुई १८८८ मे, जब मैं विलायत गया था। अपने प्रयोगोमे मैं सदा अपने कुटुम्बियो और दूसरे साथियोको घसीटता रहा हूँ। इसकी जड़मे तीन कारण मुख्य थे: (१) स्वादेन्द्रिय यानी जीभ पर और उसीके जरिये दूसरी इन्द्रियो पर काबू पाना; (२) सादीसे

१. गांधीजीने १९३३ में सत्याग्रह आश्रम भंग कर दिया। जब अप्रैल, १९३६ में गांधीजी सेगाँव गये तो उनका इरादा वहाँ आश्रम स्थापित करनेका नहीं था, फिर भी वह धीरे-धीरे सेवाग्राम आश्रमके रूपमें बदल गया।

२. खण्ड १३, पृष्ठ १०१ पर गांधीजीने यह संख्या ३५ बताई है।

३. आश्रम-संविधानके मसाविदेके पाठके लिए देखिए खण्ड १३, पृष्ठ ९५-१०१; और अन्तिम संविधानके लिए देखिए खण्ड ३६, पृष्ठ ४१९-३१।

सादी और सस्तीसे-सस्ती खुराक ढूंढ़ निकालना, ताकि इस बारेमे गरीबोंके साथ होड़की जा सके; (३) खुराकके साथ तन्दुरुस्तीका गहरा सम्बन्ध है, इस विचारके आधारपर पूर्ण स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए कौन-सी खुराक ठीक है, यह खोज निकालना।

कहनेका मतलब यह नही है कि इन तीन कारणोकी वजहसे मै खुराकके प्रयोग करनेके लिए ललचाया। अगर मै निरामिष भोजन करने की प्रतिज्ञा लेकर विलायत न गया होता, तो शायद खुराकके प्रयोग करनेकी बात मुझे सूझी ही न होती। लेकिन जब मुझे ये प्रयोग करने पड़े, तो ये तीन कारण मुझे बहुत गहरे पानीमें ले गये और मुझे कई तरहके प्रयोग करनेकी प्रेरणा हुई। इस तरह आश्रम भी मेरे खुराकके प्रयोगोमे शामिल हुआ। मगर ये प्रयोग आश्रमके अंग नही है।

इसके आधार पर देखा जा सकता है कि आश्रमने देश और समाज सम्बन्धी जिन-जिन बातोंको दोषपूर्ण माना, उन्हें दूर करनेका प्रयत्न आश्रममे किया जाये यही इच्छा थी। इनमें धार्मिक, आर्थिक या राजनीतिक सभी दोष शामिल है। जैसे-जैसे अनुभव प्राप्त होते गये और प्रसंग आता गया, वैसे-वैसे नई-नई प्रवृत्तियां शुरू होती गईं। आज यह लिखाते वक्त भी मेरे मनमें जितने काम है, उन सबको आश्रममे दाखिल किया जा सका है यह नही कहा जा सकता। शुरूसे ही एक दो निश्चयोका अनुसरण करते हुए आश्रमका कामकाज चला है: (१) 'चादर देखकर ही पाँव पसारे जाये' यानी आश्रमको सहज ही मित्रोसे जितनी आर्थिक मदद मिलती रहे उसीपर गुजर करना; (२) किसी भी कार्यके पीछे न दौड़ना; परन्तु जो योग्य कार्य अपने-आप आ पड़े उसे बिना संकोच और जरूरत हो तो हर खतरा उठाकर भी हाथमे लेना।

मै मानता हूँ कि इन दोनों निश्चयोंके पीछे सिर्फ धार्मिक वृत्ति रही है। धार्मिक वृत्तिका अर्थ है ईश्वर पर श्रद्धा—इसलिए सब-कुछ उसके आधार पर और उसकी प्रेरणासे करना। इस तरह चलनेवाला आदमी ईश्वरके भेजे हुए धन (साधनों) के जरिये उसीका बताया हुआ कार्य करता है। ईश्वर स्वयं कुछ करता है, ऐसा तो वह हमें देखने या जानने नही देता। वह मनुष्यको प्रेरणा देकर उसीके जरिये अपना कार्य कराता है। और जब हमने ख्याल भी न किया हो ऐसी जगहसे मदद आ जाये या बिना माँगे ही हमे मित्रोसे मदद मिल जाये, तब तो मेरी श्रद्धा यह मानेगी कि वह ईश्वर द्वारा ही भेजी गई मदद है। और इसी तरह जो कार्य आ पड़े और जिसे हाथमे न लेनेमें कायरता, आलस्य या ऐसा ही कोई दूषित कारण मालूम हो, उस कार्यको मेरी श्रद्धा ईश्वरका भेजा हुआ कार्य ही मानेगी।

और जो बात रुपये-पैसे और कार्यके बारेमे सच है वही साथियोके बारेमे भी सच है। रुपया हो, कार्य भी आ जाये, परन्तु साथी-रूपी साधन न हो, तो भी वह कार्य हाथमे नही लिया जा सकता। यह साधन भी सहज ही मिलना चाहिए। आश्रम ईश्वरका है जहाँ यह कल्पना ही नही बल्कि विश्वास है, ऐसी समर्पण बुद्धि है, वहाँ जिस-जिस कार्यके लिए ईश्वर आश्रमको साधन बनाना चाहता है, उस कार्यके लिए सारी सामग्री भी वही भेज देता है। पिछले सोलह सालसे ही नहीं,

बल्कि जबसे फीनिक्सकी स्थापना हुई तभीसे जाने-अनजाने, थोड़े या बहुत प्रमाणमें, इन्ही नियमोके अनुसार संस्था चलती जा रही है। जो नियम शुरूमें नरम थे बादमे कड़े होते गये है; और मेरी रायमे अब भी होते जा रहे है।

थोड़े ही दिनोमे आश्रमकी आबादी दुगुनी हो गई। और कोचरबके बँगलेकी रचना आश्रमके अनुकूल तो हो ही नही सकती थी। बंगला तो बगला ही ठहरा। उसमें एक धनिक परिवार पश्चिम और पूर्वके रहन-सहनको मिलाकर रह सकता था। ऐसी जगहमे स्त्री, पुरुष और बच्चे—कुल मिलाकर साठ आदमी—कई प्रवृत्तियाँ चलाते हुए और ब्रह्मचर्यादि व्रतोको पालते हुए मुश्किलसे ही रह सकते थे। लेकिन जो मकान मिला उसीमे गुजर करना था। फिर भी थोड़े ही समयमे कई कारणोसे वहाँ रहना लगभग असम्भव हो गया। इसलिए मानो ईश्वरने हमे वहाँसे निकाल बाहर किया हो इस तरह अचानक नई जमीनकी तलाश करनी पड़ी और बँगला खाली करना पड़ा। इन घटनाओका वर्णन 'आत्मकथा' मे आ जाता है[1], इसलिए उन्हे मैं यहाँ दुहराता नही हूँ। कोचरबमें एक कमी पहलेसे मालूम होती थी। वह साबरमती आने पर दूर हुई। फलोके पेड़, खेती और पशुओके बिना आश्रम अधूरा ही कहा जा सकता है। साबरमतीमे खेती करने जितनी जमीन है, इसलिए वहाँ खेती तुरन्त शुरू हो सकी।

यहाँ तक आश्रमके इतिहासका सिंहावलोकन किया गया। अब व्रतो और प्रवृत्तियोके बारेमे जो-जो प्रयत्न हुए, उनमे से जो मुझे याद है उनका उल्लेख करना चाहता हूँ। मेरी डायरी मेरे पास नही है, और फिर उसमे आश्रमवासियोके जीवनकी नाजुक घटनाओका उल्लेख हमेशा नही किया गया है। इसलिए सिर्फ स्मरण-शक्तिके सहारे ही यह इतिहास लिखा जा रहा है। मेरे लिए यह प्रयोग नया नही है। 'दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास' इस तरह लिखा गया, 'सत्यके प्रयोग' भी इसी तरह लिखे गये। इस इतिहासमे भी पाठकको इस दोषका ध्यान रखना चाहिए।

सत्य

जब-जब आश्रममे झूठ बोला गया, तब-तब उसे महारोग समझकर दूर करनेके कड़े उपाय किये गये। आश्रममें दोष करनेवालेको सजा देनेकी नीति बिल्कुल नही रखी गई—यहाँ तक कि दोष करनेवालेको आश्रममे से अलग कर देनेमे भी संकोच रहता था। दोष न होने देनेके लिए तीन उपाय किये जाते थे और किये जाते है। पहला था मुख्य कार्यकर्ताओकी शुद्धि। इसके पीछे यह मान्यता रही है कि अगर कार्यकर्तामे कही भी दोष न हो, तो आसपासका वायुमण्डल शुद्ध ही रहेगा। जैसे सूर्यके सामने अँधेरा नही टिकता, वैसे ही सत्यके सामने असत्य नही टिकता।

दूसरा उपाय बुराईको प्रकट करना था। कोई असत्य आचरण करता पाया जाता, तो उसे समाजके सामने प्रगट कर दिया जाता। इस उपायको विवेकके साथ

१. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ३००-३ और ३२४-५।

काममें लाया जाये, तो परिणाम बहुत अच्छा होता है। इसमें दो सावधानियाँ रखने की जरूरत रहती है। एक तो भूल करनेवाला खुलेआम दोष स्वीकार करे, उसमें जबरदस्तीकी गंध भी नहीं होनी चाहिए। दूसरे, दोष प्रकट करनेका असर दोष करने-वाले पर ऐसा न होना चाहिए कि फिर उसे शर्म ही न महसूस हो। दोष प्रकट हुआ कि पाप धुल गया, ऐसा खयाल पैदा हो जाये, तो फिर दोषमें रहनेवाली शर्म नहींके बराबर हो जाती है। जरासा असत्य भी महारोग है, इस बातका भान सदा ही रहना चाहिए।

तीसरा उपाय मुख्य कार्यकर्त्ताका और असत्य आचरण करनेवालेका प्रायश्चित्तके रूपमें उपवास करना है। असत्य आचरण करनेवाला उपवास करे या न करे, यह उसकी अपनी इच्छा पर निर्भर है, पर मुख्य कार्यकर्त्ता तो जाने-अनजाने अपनी संस्थामें होनेवाले दोषके लिए जिम्मेदार है ही। असत्य जहरीली हवासे भी ज्यादा जहरीला और ज्यादा सूक्ष्म है। जहाँ मुखियामें आध्यात्मिक दृष्टि है, जहाँ वह जाग्रत है, वहाँ यह सूक्ष्म जहर घुस ही नहीं सकता। इसलिए अगर जहर घुसता नजर आये, तो वह मुखियाके लिए चेतावनी जैसा है। उसे समझना चाहिए कि इस जहरके घुसनेमें कहीं-न-कहीं उसका अपना भी हाथ है। मेरा खयाल है कि जितना स्पष्ट असर रसायन शास्त्रमें अमुक मिश्रणों या क्रियाओंका हम देखते हैं, उतना ही बल्कि उससे भी ज्यादा स्पष्ट असर आध्यात्मिक क्रियाओंका होता है। बात इतनी ही है कि हमारे पास उसे नापनेके यन्त्र नहीं हैं। इसलिए ऐसे असरोंके बारेमें हमें जल्दी विश्वास नहीं होता, या होता है तो वह पक्का नहीं होता। फिर, बहुधा हम अपने साथ बहुत उदारतासे काम लेते हैं। इसका फल यह होता है कि हमारे प्रयोगोंमें कामयाबी हासिल नहीं होती और हम कोल्हूके बैलकी तरह एक ही दायरेमें चक्कर काटा करते हैं। इस तरह असत्यकी गाड़ी चलती रहती है और अन्तमें हम ऐसे निर्णयपर आते हैं कि असत्य अनिवार्य है। और जो अनिवार्य माना जाता है, वह सहज ही जरूरी बन जाता है। यही कारण है कि सत्यके बदले असत्यकी प्रतिष्ठा बढ़ने लगती है।

इसलिए जब-जब आश्रममें असत्य देखनेमें आया है, तब-तब उसमें मैंने अपना दोष तो स्वीकार किया ही है। मतलब यह कि मैं अपनी व्याख्याके सत्य तक नहीं पहुँच पाया हूँ। भले अज्ञानके कारण ही सही, पर मैं सत्यको पूरी तरह समझ नहीं पाया, सोच भी नहीं पाया और न उसका कथन ही कर पाया। फिर आचरण तो कहाँसे करता? मगर इस तरह दोष स्वीकार करनेके बाद क्या पलायन कर जाऊँ, गुफामें जा बसूँ, या मौन ले लूँ? इसे तो मैं कायरता मानता हूँ। गुफामें बैठकर सत्यकी खोज नहीं होती। जहाँ बोलना जरूरी हो वहाँ मौन कैसा? खास परिस्थितियोंमें गुफाका महत्त्व है। मगर सामान्य मनुष्यकी कसौटी तो समाजमें रहते हुए ही हो सकती है।

तो फिर असत्यको निकालनेके लिए मैं क्या उपाय करूँ? यह सोचनेपर मुझे देह-दमनके सिवा दूसरा कोई रास्ता नहीं सूझा। देह-दमनका अर्थ है उपवास आदि। देह-दमनके तीन असर होते हैं: एक अपने पर, दूसरा असत्यका आचरण करनेवाले

पर और तीसरा समाज पर। देह-दमनसे मनुष्य खुद ज्यादा सावधान होता है, दिलकी गहराईमे उतरकर आत्म-निरीक्षण करता है और अपनी कमजोरी पहचान लेनेपर उसे दूर करनेके उपाय करता है। असत्य आचरण करनेवालेमे दयाभाव हो तो उसे अपने दोषका भान होता है, वह खुद शर्माता है और दुबारा दोष न करनेका निश्चय करता है। आसपासका समाज अपनी कमियों और ज्यादतियोकी जाँच करने लग जाता है।

मगर देह-दमन सिर्फ एक साधन मात्र है, साध्य नही। उसमे मनुष्यको सुधारने की शक्ति बिल्कुल नही है। उसके पीछे जो विचारसरणी रहती है वह हो तभी उससे लाभ उठाया जा सकता है। वह विचारसरणी यह है: मनुष्य देहका दास होकर रहता है, देहके भोगके लिए कई धन्धोमे पड़ता है और अनेक पाप करता है। इसलिए जब-जब पाप हो तब-तब देहको दण्ड दिया जाये। देहके भोगोमे फँसे हुए मनुष्य मूर्च्छामे होते है। भोजन रूपी भोगका थोड़ा-बहुत त्याग भी उसकी मूर्च्छाको हल्की करनेमे मददगार हो सकता है। उपवासके इस असरको ध्यानमे रखते हुए उसकी विस्तृत व्याख्या करनेकी जरूरत है। उपवासका अर्थ है अपनी या दूसरेकी आत्माकी शुद्धिके लिए किया हुआ सभी इन्द्रियोका दमन। केवल आहार-त्याग भी उपवास नही माना जाता और रोगके निवारणके लिए किया हुआ आहार-त्याग तो उपवासमे गिना ही नही जा सकता।

मैंने यह भी अनुभव किया है कि उठते-बैठते उपवास हो तो उसका असर कम पड़ता है। इसका कारण यह मालूम होता है कि बार-बार किये जानेवाले उपवास यान्त्रिक क्रिया जैसे हो जाते हैं। उनके पीछे उपरोक्त विचारसरणी नही होती। इसलिए हर उपवासके पीछे चौतरफा जागृतिकी आवश्यकता होती है।

मैंने खुद अपने लिए एक खास परिणामका भी अनुभव किया है; मैंने बहुत बार उपवास किये है, इससे मेरे साथी घबराये हुए रहते है। उन्हे यह डर रहता है कि उपवाससे मेरा शरीर खतरेमे पड़ता है। इसलिए साथियोमे से कुछ इस डरके मारे सयम-नियम पालते दिखाई देते हैं। मै इसे उपवासका उलटा नतीजा मानता हूँ। फिर भी, ऐसे डरसे पाला हुआ संयम हानिकारक है, मै यह नही मानता। यह डर प्रेमका डर है। ऐसे डरके मारे भी मनुष्य अनीति न करे तो वह अच्छा ही है। बुद्धिपूर्वक और स्वेच्छासे जो सुधार होता है वह उत्तम है। मगर बड़ोकी शर्मके कारण या उन्हे दुख होनेके डरसे पाप न करना भी उपेक्षा करने लायक नही है। इसमे पाशविक बलात्कार नही है। ऐसे कई उदाहरण मिलते है जिनमें शुरू-शुरूमे सिर्फ अपने प्रियजनोंको खुश करनेके लिए हुए सुधार बादमे स्थायी हो गये।

उपवास वगैरासे एक दुखदायी परिणाम भी होता है, यह ध्यानमे रखना चाहिए। उपवास आदिके डरसे पाप न करनेके बदले पापके असरमे आये हुए लोग पाप छिपानेकी कोशिश करते पाये जाते हैं।

गुणदोषका विचार करनेके बाद मेरी यह राय बनी है कि कुछ स्थितियोमे उपवास आदि प्रायश्चित्त जरूरी है। मै मानता हूँ कि इससे कुल मिलाकर आश्रमको

लाभ ही हुआ है। मगर इतना याद रखनेकी जरूरत है कि उपवास आदि प्रायश्चित्तके लिए अधिकारकी जरूरत है। हर किसीको किसी भी समय प्रायश्चित्तके तौरपर उपवास करनेका अधिकार हो ही नही सकता। प्रसंग और पात्रको देखकर ही इस अधिकारका निर्णय हो सकता है। आम तौरपर अधिकार-निर्णयकी जो शर्तें पाई गई हैं वे इस प्रकार हैं :

(१) दोष करनेवालेके मनमे प्रायश्चित्त करनेवालेके प्रति प्रेम होना चाहिए। प्रायश्चित्त करनेवालेके मनमे दोषीके प्रति प्रेम हो, पर दोषी इस प्रेमको न पहचाने या खुद दुश्मन बनकर रहे, तो उसके लिए प्रायश्चित्त नही हो सकता। जो अपनेको दुश्मन मानता है, वह प्रायश्चित्त करनेवालेके लिए तिरस्कारका भाव रखता है। इस-लिए उसपर प्रायश्चित्तका उलटा असर पड़ सकता है, या उपवास उस पर पाशविक बलात्कारका रूप धारण कर सकता है और दुराग्रह माना जा सकता है। इसके सिवा, जिसके साथ विशेष और प्रेम-सम्बन्ध न हो और उसके दोषके लिए प्राय-श्चित्तका अधिकार सभीको हो, तो मनुष्यको प्रायश्चित्तसे फुरसत ही न मिले। सारी दुनियाके लिए प्रायश्चित्त किसी महात्माको भले ही शोभा दे, पर यहाँ तो हम साधारण मनुष्योंका ही विचार कर रहे हैं।

(२) दोषका सम्बन्ध प्रायश्चित्त करनेवालेके साथ भी होना चाहिए। यहाँ कहनेका मतलब यह है कि दोषके साथ जिसका कोई सम्बन्ध न हो, वह उसके लिए प्रायश्चित्त न करे। जैसे, 'अ' की 'ब' के साथ मित्रता है। पर 'ब' आश्रमवासी है और 'अ' का आश्रमके साथ कुछ भी सम्बन्ध नही है। 'ब' का दोष आश्रमके प्रति है। यहाँ 'अ' का न तो प्रायश्चित करनेका धर्म है और न अधिकार ही। अगर 'अ' बीचमे पड़ने जाये, तो आश्रमकी विषम स्थिति हो जाये और 'ब' की भी विषम स्थिति हो सकती है। 'अ' के पास 'ब' के दोषका निर्णय करनेका साधन भी नही हो सकता। 'ब' का आश्रममे रहना स्वीकार करके 'ब' की नीतिके लिए और प्रायश्चित्त के लिए अपनी जिम्मेदारी 'अ' ने आश्रमको सौप दी है।

(३) प्रायश्चित्त करनेवाला खुद ऐसे दोषसे मुक्त होना चाहिए। 'कठौता कूंडेको क्या हँसे' वाली व्यावहारिक कहावत यहाँ ठीक लागू होती है।

(४) प्रायश्चित्त करनेवाला और तरहसे भी शुद्ध होना चाहिए, जिससे दोषीके दिलमे उसके लिए आदर हो। प्रायश्चित्तके गर्भमें ही पवित्रता समाई हुई है। और यदि दोषीके मनमें प्रायश्चित करनेवालेके लिए आदर न हो, तो उस पर उपवासका बुरा असर पड़ना स्वाभाविक हो जाता है।

(५) प्रायश्चित्त करनेवालेका निजी स्वार्थ नही होना चाहिए। जैसे, 'अ' ने 'ब' को दस रुपये देनेका वादा किया है। इसे पूरा न करना दोष है। मगर 'अ' पूरा न करे तो इसके लिए 'ब' को प्रायश्चित्त नही करना चाहिए।

(६) प्रायश्चित्त करनेवालेको रोषके वशीभूत न होना चाहिए। लडकेने कोई अपराध किया हो और पिता गुस्सेमे आकर उपवास कर बैठे तो वह प्रायश्चित्त नही है। प्रायश्चित्तमे सिर्फ दया होनी चाहिए, क्योकि उसका हेतु स्वयं शुद्ध होना और दोष करनेवालेको शुद्ध बनाना है।

(७) दोष प्रत्यक्ष, सर्वमान्य और आत्माका हनन करनेवाला होना चाहिए और दोष करनेवालेको उसका भान होना चाहिए। अनुमानसे ही किसीको दोषी मानकर प्रायश्चित्त नही किया जा सकता। ऐसा करनेसे कई बार खतरनाक नतीजे होते है। दोषके बारेमें शका नही होनी चाहिए। साथ ही, अपना माना हुआ दोष प्रायश्चित्तका कारण नही होना चाहिए। ऐसा हो सकता है कि मनुष्य आज जिसे दोषपूर्ण मानता हो वही कल उसे दोषरहित लगे। इसलिए जो बात दोषरूप मानी जाये वह ऐसी होनी चाहिए, जिसे समाज दोषरूप मानता हो। खादी न पहनना मेरे खयालसे बडा भारी दोष भले हो, मगर मेरे साथीको इसमें कोई दोष न लगता हो या उसे महत्त्व न देकर वह खादी पहने या बिना पहने काम चलाता हो और ऐसे बरतावको दोष मानकर मैं उपवास कर बैठूं, तो वह प्रायश्चित्त नही बल्कि अनुचित दबाव माना जायेगा। फिर, दोषीको दोष करनेका भान न हो, तो भी उसके लिए प्रायश्चित्त करना ठीक नही।

जिसे एक संस्था चलानी है, जिसमें दण्ड वगैराकी गुजाइश नही है और जहाँ हर काम धर्मके सहारे करनेकी कोशिश की जाती है, वहाँ ऐसी चर्चा जरूरी है, क्योंकि वहाँ दण्ड वगैराका स्थान संचालकोंका प्रायश्चित्त ले लेता है। अन्य किसी तरहसे सस्थाको सुवासित बनाये रखना असम्भव है। दण्डसे भले ही बाहरी दिखावा कायम रखा जा सके, बाहरी व्यवस्था बनी रहे और संस्थाका काम प्रगति करता दीखे, लेकिन दण्ड इससे आगे नही जा सकता। प्रायश्चित्तसे भीतर और बाहरसे दोनोंकी रक्षा होती है और सस्था दिनोदिन मजबूत होती जाती है। इसलिए ऊपर बताये हुए कुछ नियमोके पालनकी आवश्यकता है।

उपवास वगैरा प्रायश्चित्त होनेपर भी आदर्श सत्यसे आश्रम अभी दूर ही है और इसलिए, जैसा हम आगे देखेंगे, उसे अभी तो हम उद्योगमन्दिरके नामसे ही पहचानते हैं। इतना जरूर कहा जा सकता है कि उसके कार्यकर्ता सावधान है, अपनी अपूर्णताका उन्हे भान है और उनकी यह कोशिश रहती है कि कही भी असत्य न घुस जाये। लेकिन जहाँ समय-समय पर नये आदमी भरती होते रहे, जहाँ बहुतोको विश्वासपर ही दाखिल किया जाता हो, जहाँ सब प्रान्तों और सब देशोसे मनुष्योका आना-जाना होता रहता हो, वहाँ सत्यका सभीमे बना रहना आसान बात नही। वहाँ तो मानो सत्यकी ही परीक्षा होती है। लेकिन यदि कार्यकर्ता सच्चे होंगे तो परीक्षा कितनी ही कठिन होनेपर भी आश्रमको उसमे उत्तीर्ण होना ही चाहिए। सत्यार्थीकी शक्तिका माप भले ही हो किन्तु सत्यकी शक्ति असीम है। लेकिन यदि सत्यार्थी जागरूक साधक हो, तो उसकी शक्तिका भी अन्त नही है।

प्रार्थना

यदि सत्यका आग्रह आश्रमके मूलमें ही है, तो उस मूलका मुख्य निर्वाह प्रार्थनासे होता है। जबसे आश्रम स्थापित हुआ तभीसे रोज प्रार्थनाके साथ ही आश्रमका काम शुरू हुआ है और प्रार्थनासे ही समाप्त हुआ है। मेरी जानकारीमें एक दिन भी प्रार्थनाके बिना खाली नही गया। मुझे ऐसे मौकोकी याद है जब प्रार्थनाके स्थानपर

बरसात या ऐसे ही किसी कारणसे एक ही जिम्मेदार आदमी हाजिर हुआ है। शुरूसे नियम तो ऐसा ही रहा कि जो बीमार न हो या बीमारी जैसा ही दूसरा सबल कारण जिनके पास न हो, ऐसे सभी समझदार व्यक्ति प्रार्थनामे शरीक हों। शामकी प्रार्थनाके समय तो इस नियमका पालन ठीक-ठीक हुआ माना जायेगा। मगर सुबहकी प्रार्थनाके बारेमे ऐसा नही कहा जा सकता।

सुबहकी प्रार्थनाका समय शुरू-शुरूमें अनिश्चित था। उसके बारेमे मैंने प्रयोग किये। क्रमशः चार, पांच, छः और सात बजेकी प्रार्थना रखी गई थी। मगर समय-समय पर किये गये मेरे आग्रहके कारण आखिर ४–१० या ४–२० का समय तय हुआ है। यानी जागनेकी घटी ४ पर बजे तो उसके बाद मुँह-हाथ धोकर और दतौन करके सब लोग ४–२० तक आ जाये।

मैंने माना है कि हिन्दुस्तान जैसे समशीतोष्ण प्रदेशमे मनुष्य जितना जल्दी उठे उतना ही अच्छा है। करोड़ो आदमियोंको जल्दी उठना ही पड़ता है। किसान देरसे उठे तो उसकी खेती बिगड़ जाये। पशुओकी सँभाल बडे सवेरे ही होती है। गाय सवेरे-सवेरे ही दुही जाती है। जिस देशमे यह हालत हो वहाँ सत्यार्थी, मुमुक्षु, सेवक या संन्यासी सुबह दो-तीन बजे उठे, तो यह नही कहा जा सकता कि वह कोई बड़ी बात कर रहा है। हाँ, न उठना ही आश्चर्यकी बात होगी। सभी देशोंमें धार्मिक मनुष्य, प्रभुके भक्त और गरीब किसान जल्दी ही उठते है। भक्त भगवानके ध्यानमे लीन होते है और किसान अपनी खेतीके कामोमे लगकर अपनी और दुनियाकी सेवा करते है। मेरे खयालसे दोनों ही भक्त है। पहले ज्ञानपूर्वक भक्त है। किसान अनजानमे अपनी मेहनतसे प्रभुको भजते है, क्योकि उनपर सारा जगत निर्भर करता है। वे मेहनत करनेके बदले ध्यान लगाकर बैठ जाये तो धर्मभ्रष्ट हो जाये और अपने नाशके साथ-साथ संसारका भी नाश कर दे।

मगर किसानको हम भक्त माने या न मानें? जब किसानको, मजदूरको या दूसरे गरीबोंको इच्छासे या अनिच्छासे बड़ी सुबह उठना पड़ता है, तब जिसने सेवाको धर्म माना है, जो सत्यनारायणका पुजारी है, वह कैसे सोता रह सकता है? फिर आश्रममे तो भक्ति और सेवाके लिए उद्योगका मेल बैठानेकी कोशिश की जाती है। इसलिए कितनी ही अडचने महसूस हों, तो भी आश्रममे सभी सशक्त लोगोंको जल्दी उठना ही चाहिए, यह मुझे हमेशा दीपककी तरह साफ दिखाई दिया है और चार बजेका समय मैंने जल्दीका नही, बल्कि उठनेकी दृष्टिसे देरसे-देरका समय माना है।

कई प्रयोगोंके बाद अब बरसोंसे आश्रममे उठनेका घंटा चार बजे बजता है और प्रार्थना ठीक ४–१० या ४–२० पर शुरू होती है।

प्रार्थना कहाँ की जाये? कोई मन्दिर बनाकर या बाहर आकाशके नीचे? वहाँ भी कोई चबूतरा बनाकर या रेत और धूलपर ही? कोई मूर्ति खड़ी की जाये या नही, वगैरा सवाल भी तय करने थे। अन्तमे आकाशके नीचे, धूल या रेत पर ही बैठकर, मूर्तिके बिना प्रार्थना करनेका निश्चय हुआ। आश्रमका आदर्श गरीबी धारण करना है, भूखों मरते करोड़ोंकी सेवा करना है। आश्रममें कंगालके लिए जगह

है। यह कहा जा सकता है कि जो नियमका पालन करनेको तैयार हैं, वे सभी आश्रममें भरती हो सकते हैं। ऐसे आश्रममें प्रार्थना-मन्दिर ईंट-चूनेका नही हो सकता। उसके लिए आकाशका छप्पर, और दिशाओंके खम्भे तथा दीवारें ही काफी होनी चाहिए। चबूतरा बनवानेका जो विचार था वह भी छोड़ दिया गया। संख्याकी हद जब नही बाँधी जा सकती, तो फिर चबूतरेकी हद कौन बाँधे? बहुत बड़ा चबूतरा बनवानेमे खर्च बहुत होता है। अनुभवसे पाया गया कि मकान या चबूतरा न बनाने का विचार ठीक ही था। आश्रमसे बाहरके लोग भी प्रार्थनामें आ सकते हैं। इससे कई बार लोगोंकी संख्या इतनी ज्यादा हो जाती है कि कितना ही बड़ा चबूतरा बनवाया गया होता तो भी कभी-कभी वह छोटा पड़ जाता।

फिर, आश्रमकी प्रार्थनाका अनुकरण दिन-दिन बढ़ते जानेके कारण भी आकाश-मन्दिर ही ठीक साबित हुआ है। जहाँ कहीं मै जाता हूँ वहाँ सुबह-शाम प्रार्थना होती ही है। खासकर शामको इतनी भीड़ होती है कि प्रार्थना खुले मैदानमें ही हो सकती है। और मुझे मन्दिरमे ही प्रार्थना करनेकी आदत पड़ी हुई होती तो शायद सफरमें सार्वजनिक प्रार्थना करनेका विचार भी नहीं उठता।

इसके सिवा, आश्रममे सब धर्मोके लिए समान आदर है। सब धर्मोंके लोगोंको भरती होनेकी छूट है। उनमें मूर्तिपूजक भी हो सकते हैं और मूर्तिपूजाको न माननेवाले भी हो सकते हैं। किसीको आघात न पहुँचे, इस खयालसे आश्रमकी सामूहिक प्रार्थनामें मूर्ति नहीं रखी जाती। जो अपने कमरेमें मूर्ति रखना चाहें उन्हें कोई मनाही नही है।

प्रार्थनामें क्या होता है?

सुबहकी प्रार्थनामें 'आश्रम-भजनावलि'[1] में छपे हुए श्लोक, एकाध भजन, रामधुन और गीतापाठ होता है। शामको 'गीता' के दूसरे अध्यायके अन्तिम उन्नीस श्लोक, भजन, रामधुन और अक्सर कोई पाठ होता है। आरम्भसे ही ऐसा नही था। श्लोकोंका चुनाव काकासाहब कालेलकरने किया है। काकासाहब आश्रममें शुरूसे ही शरीक हैं। काकासाहबसे जान-पहचान मगनलालने शान्तिनिकेतनमें की। जब मैं विलायतमें था तब मगनलालने बालकोंके साथ शान्तिनिकेतनका आसरा लिया था। दीनबन्धु एन्ड्रयूज और स्व० पियर्सन उस वक्त शान्तिनिकेतनमें थे। मैंने मगनलालको सलाह दी थी कि जहाँ एन्ड्रयूज कहें वहाँ ठहरे। एन्ड्रयूजने शान्तिनिकेतन पसन्द किया। काकासाहब उन दिनों शान्तिनिकेतनमें थे। वहाँ वे शिक्षकका काम करते थे। मगनलाल और काकासाहबके बीच घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। मगनलालको संस्कृत जाननेवाले अध्यापककी कमी महसूस हुआ करती थी, वह काकासाहबने पूरी कर दी। उसमें वहाँके चिन्तामणि शास्त्री भी शरीक हो गये। काकासाहबने प्रार्थनाके श्लोक सिखाये। शान्तिनिकेतनमे जो श्लोक सबने सीखे थे वे आजसे ज्यादा थे। उनमें से कुछ श्लोक काकासाहबसे सलाह करके समय बचानेकी खातिर निकाल दिये

१. देखिए खण्ड ४४।

गये। जो बाकी रहे वे आज चलते हैं। इस तरह प्रातःकाल गाये जानेवाले श्लोक आश्रमके आरम्भ-कालसे आज तक चले आ रहे हैं, और शायद एक दिन भी ऐसा नही गया जब ये श्लोक आश्रममें न गाये गये हों।

इन श्लोकों पर काफी हमले हुए हैं — कई बार समय बचानेके खयालसे, किसी समय इस खयालसे कि कुछ श्लोक ऐसे हैं जिन्हे सत्यका पुजारी नही गा सकता और कभी-कभी इस मान्यतासे कि उन श्लोकोंको हिन्दुओंके अलावा और लोग नही गा सकते। यह तो निर्विवाद है कि ये श्लोक हिन्दू समाजमें ही गाये जाते हैं, लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगा कि इनमे कोई ऐसी बात है जिससे दूसरे धर्मवालोंको इन्हें गानेमे या गाते समय मौजूद रहनेमें कोई चोट पहुँचे। जिन मुसलमान और ईसाई मित्रोने ये श्लोक सुने हैं, उन्होने भी विरोध नही किया। जिनके मनमे दूसरे धर्मके लिए आदर है, उन्हे चोट नहीं लगनी चाहिए, और यहाँ ऐसे लोगोंका ही उल्लेख हो सकता है। इन श्लोकोंमे किसीकी निन्दा या उपेक्षा ऐसी कोई बात है ही नही। आश्रममें हिन्दू धर्मवालोकी बहुत बड़ी संख्या होनेके कारण पसन्दगी तो हिन्दू धर्मके श्लोकोंकी ही हो सकती है। लेकिन दूसरोका कुछ भी गाया या पढ़ा न जाये, ऐसा कोई नियम नही है। बल्कि प्रार्थनामें प्रसंग आनेपर इमाम साहब कुरानकी आयतें पढ़ते थे। मुसलमानी भजन या गजलें तो बार-बार गाई जाती हैं। यही बात ईसाई भजनोंके बारेमे भी है।

मगर बहुत आग्रहके साथ जो विरोध हुआ वह सत्यकी दृष्टिसे हुआ। सरस्वती, गणेश वगैराकी पूजा सत्यका हनन करनेवाली है। कमलके आसन पर बैठी वीणा आदि हाथमे धारण करनेवाली सरस्वती नामकी किसी देवीकी हस्ती ही नही है। मोटे पेटवाला और सूंडवाला गणेश नामका कोई देवता ही नही है। एक आश्रम-वासीने यह दलील बड़ी नम्रताके साथ मगर उतने ही जोरसे दी कि ऐसे काल्पनिक देवताओंकी प्रार्थना करनेमें और उसे बच्चोंको सिखानेमें सत्यका हनन होता है। उन्हें दूसरे आश्रमवासियोका समर्थन भी प्राप्त था। इस बारेमे मैंने अपनी राय इस प्रकार दी:

'मैं अपनेको सत्यका पुजारी मानता हूँ, फिर भी मुझे ये श्लोक बोलनेमें या बच्चोंको सिखानेमे जरा भी चोट नही पहुँचती। अगर ऊपर की दलीलसे कुछ श्लोक रद कर दिये जायें, तो उनके गर्भमें हिन्दू धर्मकी जो सारी रचना भरी है उसपर हमला होता है। मैं यह नही कहता कि हिन्दू धर्ममे आक्रमण करनेके लायक जो चीज हो उसपर आक्रमण न किया जाये, भले ही वह कितनी ही पुरानी क्यो न हो। मगर इसे मैं हिन्दू धर्मका कमजोर या हमला करने लायक अंग नही मानता। इसके विपरीत, मेरा विश्वास है कि हिन्दू धर्ममे यह जो अंग रहा है वह शायद उसकी विशेषता है। मैं खुद सरस्वती या गणेश जैसी किसी अलग हस्तीको नही मानता। ये सब वर्णन एक ही ईश्वरकी स्तुतियाँ हैं। उसके असंख्य गुणोको भक्त-कवियोंने मूर्तिमान रूप दिया है। यह कोई बुरी बात नही हुई। ऐसे श्लोकोंमें अपने को या और किसीको धोखा देनेकी कोई बात नही है। देहधारी जब ईश्वरकी स्तुति

करने बैठता है, तब वह उसके बारेमें अपनी रुचिकी कल्पना कर लेता है। उसकी कल्पनाका ईश्वर उसके लिए तो है ही। निर्गुण निराकार ईश्वरकी प्रार्थना बोलते ही उसमें गुणोंका आरोपण होता है। गुण भी आकार ही हैं। असलमें तो ईश्वर वर्णनातीत है। वह वाणीकी सीमासे परे है। मगर क्षुद्र मानवको तो उसकी कल्पनाका ही आधार है। उसीसे वह पार लगता है और उसीसे डूबता भी है। ईश्वरके लिए जो भी विशेषण शुद्ध हेतुसे विश्वासके साथ गाओ वह तुम्हारे लिए सच्चा है। और मूलमें तो वह झूठा ही है, क्योंकि ईश्वरके लिए कोई भी विशेषण काफी नहीं होता। मैं खुद बुद्धिसे यह बात जानता हूँ, फिर भी उसके गुणोंका बखान किये बिना, उसका चिन्तन किये बिना नहीं रह सकता। मेरी बुद्धि जो कहती है उसका हृदयपर कोई असर नहीं होता। मैं यह स्वीकार करनेको तैयार हूँ कि मेरे निर्बल हृदयको गुणोंवाले ईश्वरका आसरा चाहिए। जो श्लोक मैं पिछले पन्द्रह सालसे गाता आया हूँ, वे मुझे शान्ति देते हैं, अपनी दृष्टिसे मुझे वे सच्चे मालूम होते हैं। उनमें मुझे सौन्दर्य, काव्य और शान्तिके दर्शन होते हैं। सरस्वती, गणेश वगैराके लिए विद्वान लोग कई कथाएँ कहते हैं। वे सब सारहीन नहीं हैं। उनके रहस्यका मुझे पता नहीं। उनमें मैं गहरा उतरा भी नहीं। अपनी शान्तिके लिए मुझे गहरा उतरनेकी जरूरत भी नहीं जान पड़ी। इसलिए सम्भव है मेरा अज्ञान ही मुझे बचा लेता हो। सत्यकी खोज करते हुए इस चीजकी गहराईमें जानेकी जरूरत मुझे महसूस नहीं हुई। अपने ईश्वरको मैं जानता हूँ। उस तक मैं पहुँचा नहीं हूँ, मगर मैं उस दिशामें जा रहा हूँ। मेरे लिए इतना काफी है।'

मैं यह आग्रह नहीं रख सकता कि इस दलीलसे साथियोंको सन्तोष होगा ही। मुझे पता नहीं कि इससे किसको कहाँ तक सन्तोष हुआ। इस बारेमें एक बार एक समिति कायम की गई थी और खूब चर्चा होनेके बाद यह फैसला हुआ कि जो भी चुनाव किया जायेगा, उसमें किसी-न-किसीको कोई दोष तो दिखेगा ही। इसलिए जो है उसीको रहने दिया जाये। इन श्लोकोंका अर्थ सब अपनी-अपनी कल्पनाके अनुसार करेंगे। मैं जिन बातोंका बयान कर गया हूँ, वे सब एक साथ नहीं घटीं। अलग-अलग मौकोंपर अलग-अलग विरोध हुए। मैंने उन सबको एक जगह इकट्ठा करके दे दिया है।

श्लोकोंके साथ भजन तो होते ही थे। प्रार्थनाकी शुरुआत दक्षिण आफ्रिकामें भजनोंसे ही हुई थी। श्लोक तो हिन्दुस्तानमें आनेके बाद उसमें जोड़े गये। भजन गाने-गवानेमें मगनलाल ही मुखिया थे। इससे हम दोनोंको असन्तोष था। जो-कुछ करना हो अच्छी तरह, यानी सच्चे ढंगसे करनेका लोभ था। इसलिए कोई संगीतशास्त्री मिल जाये तो उससे सब तालीम लें और भजन रसके साथ गाये जायें। भजनमें एक-सा स्वर न निकले तो उसमें तल्लीन होना असम्भव भले ही न हो पर कठिन तो था ही। मगर शास्त्री ऐसा होना चाहिए, जो आश्रमके नियमोंका पालन करे। ऐसा लगा कि इस तरहका संगीत-शास्त्री मिलना कठिन है। तलाश करते-करते मगनलालको स्व० संगीताचार्य विष्णु दिगम्बर शास्त्रीने अपने पहले शिष्य नारायण

खरेको प्रेमपूर्वक सौंप दिया। उन्होंने आश्रमके खयालमे पूरा सन्तोष दिया और वे अब आश्रमके पूरे सदस्य बनकर रहते है। उन्होंने भजनोमे रस उँडेला। जो 'आश्रम-भजनावलि' आज हजारो लोग आनन्दके साथ पढते है वह मुख्यतः उन्हीकी कृति है। भजनके साथ उन्होंने रामधुन भी जारी की।

अभी प्रार्थनाका चौथा अग बाकी है। यह है गीता-पाठ। समय-समय पर 'गीता' तो पढी ही जाया करती थी। बरसोसे आश्रमवासी 'गीता'को आचार-विचारके लिए प्रमाण-ग्रन्थ मानते रहे है। कोई आचार या विचार शुद्ध है या नही, यह देखनेके लिए आश्रम 'गीता'को वैसा ही समझता है, जैसे हिज्जे या अर्थको समझनेके लिए विद्यार्थीके पास शब्दकोष या अर्थकोष होता है। 'गीता'के अर्थ हर आश्रमवासी जाने तो अच्छा, वह सबको मुखाग्र हो जाये तो और भी अच्छा, और ऐसा न हो सके तो भी मूलको शुद्ध उच्चारणके साथ पढ सके तो ठीक — इस तरहके विचारोको लेकर रोज गीतापाठ करना शुरू किया गया। पहले थोड़े श्लोक थे और याद हो जाने तक उन्ही श्लोकोका रोज पाठ होता था। इसमेसे पारायण [की कल्पना] पैदा हुई और अब 'गीता'के अध्याय इस ढगसे जमा लिये गये है कि चौदह दिनोमे पूरी 'गीता' पढ़ी जा सके। इस तरह हर आश्रमवासी जान सकता है कि किस दिन कौनसे श्लोक पढे जाते है। हर दूसरे शुक्रवारको पहला अध्याय शुरू होता है। जिस दिन यह लिखा जा रहा है उसके बादका शुक्रवार (१० जून, १९३२) पहले अध्यायका है। अठारह अध्याय चौदह दिनमे पूरे करनेके लिए ७-८, १२-१३, १४-१५, १६-१७ अध्याय एक ही दिन एक साथ गाये जाते है।[1]

मै कह चुका हूँ कि शामकी प्रार्थनामे भजन और रामधुनके सिवा 'गीता'के दूसरे अध्यायके पिछले उन्नीस श्लोक बोले जाते है। इन श्लोकोंमे स्थितप्रज्ञके लक्षण कहे गये है। सत्याग्रहीके भी यही लक्षण होने चाहिए। जो चीज स्थितप्रज्ञ साधता है, वही सत्याग्रहीको साधनी है। यह बात हमेशा याद रहे, इसीलिए ये श्लोक गाये जाते है।

रोज एक ही प्रार्थना करना उचित है या नही इसके बारेमें यह शंका उठाई गई है कि 'रोज एक ही प्रार्थना करनेसे वह यन्त्रवत् हो जाती है; इससे उसका असर जाता रहता है।' यह सही है कि प्रार्थना यंत्रवत् हो जाती है। हम खुद भी तो यन्त्र है। अगर हम ईश्वरको यंत्र चलानेवाला मानते है, तो हमे यन्त्रकी तरह चलना ही चाहिए। सूर्य, चन्द्र वगैरा अपना काम यंत्रोकी तरह न करें, तो जगत एक क्षण भी नही चल सकता। पर यंत्रवत्का अर्थ जड़वत् नही है। हम चेतन है। चेतनको शोभा दे उतना ही वह यन्त्र की तरह आचरण करे, चले। प्रार्थना

१. बादमें गीतापाठ हर चौदहवें दिनके बजाय हर सातवें दिन ही समाप्त होने लगा था। दिन और अध्यायका ब्यौरा इस प्रकार रहा: शुक्रवार, १ और २; शनिवार, ३, ४ और ५; रविवार, ६, ७ और ८; सोमवार, ९, १०, ११ और १२; मंगलवार, १३, १४ और १५; बुधवार, १६ और १७; बृहस्पतिवार, १८।

एक-सी ही हो या विविध, ये दो सवाल नही है। यह भी हो सकता है कि अनेक प्रार्थनाएँ रखनेपर भी उनका असर न पड़े। हिन्दुओकी वही गायत्री, इस्लामका वही कलमा, ईसाईकी वही प्रार्थना इन धर्मोके लाखों आदमी सदियोसे रोज पढते आये हैं। लेकिन इससे उनका चमत्कार कुछ कम नही हुआ, बल्कि बढ़ा ही है। अगर उनके पीछे मनुष्यकी भावना रहेगी, तो उनका चमत्कार और भी बढ़ेगा। यही गायत्री, यही कलमा, यही ईसाकी प्रार्थना नास्तिक पढ़े या तोता पढ़े, तो उसका कुछ भी असर न होगा। मगर जब यही प्रार्थना आस्तिकके मुँहसे रोज निकलती हैं, तब उसकी भव्य शक्ति रोज बढ़ती जाती है। हमारी मुख्य खुराक रोज वही-की-वही होती है। गेहूँ खानेवाले दूसरी चीजें भले ही लें, उनमे फेरबदल करें, परन्तु गेहूँकी रोटी तो रोज खायेंगे ही। इससे उनका शरीर बनेगा। वे ऊबेंगे नही। ऊब जाये तो शरीरका अन्त नजदीक आ जाये। यही बात प्रार्थना की है। मुख्य प्रार्थना तो एक ही होगी। आत्माको यदि उसकी भूख होगी, तो वह एक प्रार्थनासे भी ऊबेगी नही, बल्कि पुष्ट होगी। जिस दिन प्रार्थना नही होगी, उस दिन उसे उसकी भूख रहेगी। वह उपवासीसे भी ज्यादा शिथिल होगी। शरीरके लिए किसी दिन उपवास जरूरी होता है, लेकिन आत्माको प्रार्थनाकी बदहजमी हुई हो ऐसा कभी सुना नही गया।

असल बात यह है: हममें से बहुतेरे आत्माकी भूखके विना प्रार्थना करते हैं। आत्मा है, यह मानना एक 'फैशन' है, एक रिवाज-सा है, इसलिए 'आत्मा है' ऐसा मानते हैं। इस तरहकी हीन दशा बहुतोंकी होती है। कुछके लिए 'आत्मा है' यह उनकी बुद्धि निश्चित कर देती है। ऐसोंके लिए यह विचार हृदयगत नही होता, इसलिए उन्हें प्रार्थनाकी जरूरत नही प्रतीत होती। बहुतेरे प्रार्थनामें यह मानकर शरीक होते हैं कि समाजमे रहकर वही करना चाहिए जो समाज करता है। ऐसोको विविधताकी जरूरत जान पड़ती है। मगर असलमें वे प्रार्थनामें समरस होते ही नही। वे संगीत सुनने आते हैं, कुतूहल-वश आते हैं, प्रवचन सुनने आते हैं। वे ईश्वरके साथ एकता साधने नही आते।

प्रार्थनाका अर्थ क्या है?

प्रार्थनाका मूल अर्थ तो माँगना होता है। ईश्वरसे या बड़ोसे नम्रताके साथ की गई माँग ही प्रार्थना है। यहाँ इस अर्थमें प्रार्थना शब्द नही लिया गया है। यहाँ प्रार्थनाका अर्थ है ईश्वरकी स्तुति, भजन-कीर्तन, उपासना, सत्संग, अन्तर्ध्यान, अन्तर-शुद्धि।

परन्तु ईश्वर कौन है? वह कोई हमारे शरीरसे या संसारसे बाहर रहनेवाला व्यक्ति नही है। वह तो सर्वव्यापक है, सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान है। उसे स्तुतिकी क्या गरज? सर्वव्यापक होकर वह सब-कुछ सुनता है, हमारे विचार जानता है; ऊँचे स्वरसे बोलकर उसे क्या सुनाया जाये? वह हमारे दिलमें बसा हुआ है। नाखून अँगुलीके जितना पास है उससे भी ज्यादा ईश्वर हमारे नजदीक है। यहाँ प्रार्थना क्या करेगी?

चूँकि ऐसी उलझन है, इसीलिए प्रार्थनाका अर्थ अन्तर-शुद्धि भी किया गया है। वोलकर ईश्वरको नही सुनाना है। वोलकर या गाकर हम अपनेको ही सुनाते हैं, नीदसे जगाते हैं। हममे से कुछ लोग ईश्वरको वुद्धिसे पहचानते हैं। कुछको तो उसके वारेमे भी शंका है। किसीने ईश्वरको आँखोसे देखा नही है। हमें उसे दिलसे पहचानना है, उसका साक्षात्कार करना है, उसके स्वरूपमे मिल जाना है। इसीके लिए हम प्रार्थना करते हैं।

यह ईश्वर, जिसका हम साक्षात्कार करना चाहते हैं, सत्य है। या यों कहिए कि सत्य ही ईश्वर है। पर सत्यका अर्थ इतना ही नही है कि सच वोला जाये। सत्यका अर्थ है वह तत्व जो इस जगतमे अपने रूपमे हमेशासे था, है और रहेगा — उसके सिवा दूसरा कुछ भी नही है; वह तत्व जो अपनी शक्तिसे विद्यमान है, जिसे किसीका सहारा नही चाहिए, वल्कि जगतमें जो-कुछ है, सव उसीके सहारे टिका हुआ है। सत्य ही शाश्वत है, वाकी सव क्षणिक है। उसे किसी आकारकी जरूरत नही। वही शुद्ध चेतन है, वही शुद्ध आनन्द है। उसे ईश्वर कहें, क्योकि उसीकी सत्तासे सव-कुछ चलता है। वह और उसका कानून एक ही है, इसलिए वह कानून चेतन-रूप है। उसी कानूनके सहारे सारा तन्त्र चलता है। उसी सत्यकी आराधना ही प्रार्थना है, यानी हमारी सत्यमय होनेकी तीव्र इच्छा है। यह इच्छा चौवीसो घंटे होनी चाहिए। मगर हममे इतनी जागृति नही है; इसीलिए हमे नियत समय पर प्रार्थना, आराधना या उपासना करनी ही चाहिए और ऐसा करते-करते हमे चौवीसों घंटे सत्यका चिन्तन हो।

आश्रम इस तरहकी प्रार्थनाको सिद्ध करना चाहता है। अभी तो वह उससे वहुत दूर है। ऊपर वताये हुए उपचार तो सव वाह्योपचार हैं। मगर किसी भी तरह प्रार्थनाको हृदयमें उतारनेकी धारणा है। और अगर आश्रमकी प्रार्थना अवतक आकर्षक नही वनी, अभी भी आश्रमवासियो तकको प्रार्थनामें हाजिर रहनेके लिए टोकना पड़ता है, तो उसका अर्थ यह है कि आश्रममे हममें से किसीमें भी उस अर्थमें प्रार्थना मूर्तिमान नही हुई है।

हार्दिक प्रार्थनामे तो भक्तको इतना ध्यानस्थ रहना चाहिए कि उस समय उसे किसी दूसरी चीजका भान ही न हो। भक्तको विषयीकी उपमा ठीक ही दी गई है। विषयीको जव उसका विषय मिल जाता है, तव वह अपना भान भूलकर विषय-रूप वन जाता है। उसकी सारी इन्द्रियाँ तदाकार हो जाती है, क्योंकि उसे अपने विषयके अलावा और कुछ सूझता ही नही। इससे भी ज्यादा तदाकारता उपासकमे होनी चाहिए। यह तदाकारता वड़े प्रयाससे, तपसे, संयमसे ही समय पाकर आती है। जहाँ ऐसा कोई भक्त होता है वहाँ प्रार्थनामें जानेके लिए किसीको ललचाना नही पड़ता। उसकी भक्ति औरोंको जवरदस्ती खीच लाती है।

यहाँ तक सामूहिक प्रार्थनाके वारेमे लिखा गया। मगर आश्रममें व्यक्तिगत, एकान्त प्रार्थना पर भी जोर दिया जाता है। जो अकेला प्रार्थना करता ही नही, वह भले सामूहिक प्रार्थनामे शरीक हो, मगर उसमें से वह वहुत लेता नही। समाजके

लिए सामूहिक प्रार्थना बहुत जरूरी है। लेकिन जैसे व्यक्तिके बिना समाज हो ही नही सकता, उसी तरह व्यक्तिगत प्रार्थनाके बिना सामूहिक प्रार्थना भी सम्भव नही। इसलिए हर आश्रमवासीको बार-बार चेतावनी दी जाती है कि उसे सोते-जागते अनेक बार अपने-आप ही तल्लीन होना चाहिए। इसके लिए कोई पहरा नही लगा सकता और न इसका कोई हिसाब ही हो सकता है। मैं नही कह सकता कि आश्रममें ऐसी प्रार्थना कहाँ तक होती है। मैं मानता हूँ कि थोड़ी-बहुत मात्रामें सभी इस दिशामे प्रयत्न कर रहे हैं।

अहिंसा

कहा जा सकता है कि ज्यादा-से-ज्यादा परेशानी शायद अहिंसा-पालनके बारेमे हुई है। सत्यकी पहेलियाँ बनी ही रहती है। प्रार्थना हृदयमें नही उतरती। मगर ये दोनों (सत्य और प्रार्थना) क्या है यह समझनेमें बहुत मुश्किल नही पड़ती। अहिंसाको समझनेमे ही दम निकल जाता है। जितनी चर्चा अहिंसाकी हुई है, उतनी आश्रममे और किसी विषयकी नही हुई होगी। जो अमुक काम किया गया वह हिंसा है या अहिंसा, यह सवाल आश्रममे उठा ही करता है। और बहुत बार हिंसा-अहिंसा का भेद जानते हुए भी अहिंसाका पालन नहीं किया जा सकता। पालन करनेमें अक्सर हमारी कमजोरी आड़े आती है। यह कमजोरी भी ऐसी नही होती, जो आसानीसे दूर की जा सके। मन, वचन और शरीरसे किसीको भी दुख न देना, अपना या दूसरेका भला मानकर भी किसी जीवको दुख न देना अहिंसा है। इसपर पूरी तरह अमल करना देहधारीके लिए असम्भव है। वह एक साँस लेनेमे ही अनेक सूक्ष्म जीवोंकी हिंसा करता है। जो जीव आँख पर बैठना चाहते हैं आँख झपकानेमें उनकी हिंसा होती है। खेती करनेमें अनेक छोटे-बड़े जीवोंकी हिंसा होती है। साँप-बिच्छू काटेंगे इस डरसे उन्हे हम मारते नही पर पकड़कर दूर तो जरूर छोड़ आते हैं। पकड़नेमें उन्हें थोड़ा दुख तो होता ही है। भले उसे अनिवार्य समझा जाये, मगर ऊपरकी व्याख्याके अनुसार वह हिंसा तो है ही।

मैं जो खाता हूँ, जो जगह रोकता हूँ, जो कपड़े पहनता हूँ, उसमें से यदि कुछ बचा लेता हूँ, तो यह स्पष्ट है कि मुझसे जिन्हें ज्यादा जरूरत है उन गरीबोंके वे काम आयें। मेरे स्वार्थके कारण उन्हें ये चीजें नही मिल पातीं। इसलिए मेरे भोगसे मेरे कंगाल पड़ोसीकी हिंसा होती है। जीनेके लिए मैं कई तरहकी वनस्पति खाता हूँ। उसमें वनस्पति-जीवनकी हिंसा है।

इस व्यापक हिंसामें पड़ा हुआ मैं किस तरह अहिंसाका पालन करूँ? पग-पग पर नई समस्याएँ खड़ी होनेवाली ही है।

ऊपर बताई हुई हिंसा तो ऐसी है जो समझमें आ सकती है। मगर हम एक-दूसरेसे जो सूक्ष्म द्वेष करते हैं, उसका क्या हो? शिक्षक लड़कोको मारे, माँ बच्चोंको डाँटे, बराबरीवाले लोग कभी-कभी एक दूसरेको लाल आँखें दिखायें, यह सब हिंसा ही है और बहुत बुरी हिंसा है। इसका ठीक उपाय नहीं मिलता। जहाँ रागद्वेष हैं वहाँ हिंसा है ही। यह हिंसा कैसे मिटे?

इसलिए पहले तो हम आश्रममे यह सीख लेते है कि देश और कुटुम्ब या अपने लिए किसीका सिर धड़से उड़ा देना तो हिंसा है ही, मगर क्रोधादिसे रोज होनेवाली सूक्ष्म हिंसा इस स्थूल हिंसासे शायद अधिक खराब है। अलग हिसाब लगाये तो दुनियामे जो रोज खून होते है उनकी संख्या काफी जान पड़ेगी। पर दुनियाकी आबादीके प्रमाणमें जो मौते और तरहसे होती है, उनसे तुलना करनेपर इन खूनोकी संख्या नाममात्रकी मालूम होगी। मगर क्रोध वगैरासे रोज होनेवाली सूक्ष्म हिंसाका तो अन्दाजा ही नही लग सकता।

इन सब तरहकी हिंसासे निपट पानेकी कोशिश आश्रममे रोज होती है। सब अपनी कमजोरीको समझते है। सॉप-बिच्छूका डर मुझसे लेकर सब आश्रमवासियो तक को है। इसलिए उन्हे पकडकर किसीको नुकसान न हो ऐसी जगह छोड़ आनेका आम रिवाज है। और कोई डरके मारे उसे मार डाले तो वह उलाहनाका पात्र नही माना जाता। एक बार गोशालामें एक भयकर नाग ऐसी जगह घुस कर बैठ गया था, जहाँसे उसे पकड़ा नही जा सकता था। ऐसी हालतमे वहाँ ढोर बाँधनेमे खतरा था। आदमी काम करनेमे भी डरते थे। मजबूर होकर मगनलालने उसे मार डालनेकी मंजूरी दे दी। मुझसे जब उसने यह बात कही तो मैंने उसका काम पसन्द किया। मै मानता हूँ कि मै खुद उस समय आश्रममे होता तो और कोई उपाय नही कर सकता था। मेरी अपनी बुद्धि कहती है कि साँपको भी अपना सगा समझकर उसके साथ वैसा ही बरताव करना चाहिए। उसके काटनेसे मौत हो जाये तो वह खतरा उठाकर भी मुझे साँपको हाथसे पकड़कर डरनेवालोके पाससे हटाना चाहिए। मगर मेरे दिलमे न तो इतनी मित्र-भावना है, न इतनी निर्भयता है और न साँप वगैराके काटनेसे होनेवाली मौतके प्रति उपेक्षा-भाव ही है। इन तीनो बातोको हृदयमे पैदा करनेकी मेरी कोशिश है, पर मै सफल नही हो पाया हूँ। यह सम्भव है कि मुझपर साँप हमला करे तो मै उसका हमला सह लूं और उसे मारनेको तैयार न होऊँ, पर दूसरेके शरीरको खतरेमे डालनेके लिए मै तैयार नही हूँ।

एक समय आश्रममे बन्दरोका उपद्रव इतना बढ़ गया कि वे फसलको बेहद नुकसान पहुँचाने लगे। रखवाले उन्हे गोफनसे डराते, पर वे क्यो डरने लगे? अन्तमें वे बन्दरोंको घायल करने लगे। एक बन्दर लँगड़ा हो गया। मुझे इसमे शरीर-दंडसे ज्यादा हिंसा दिखाई दी। इस बारेमे साथियोसे चर्चा करनेके बाद यह फैसला हुआ कि बन्दर न जाये, तो गोफनसे या दूसरी तरहसे घायल करनेके अलावा दूसरे हलके उपायोसे यदि वे न भगाये जा सकें तो एक-दोकी जान ली जाये और उपद्रवको शान्त किया जाये। यह आखिरी फैसला करनेसे पहले मैंने 'नवजीवन' के द्वारा तथा मित्रोको लिखकर इसकी खुली चर्चा की थी। इसलिए यहाँ सारी दलीलोमें मै नही उतरता। जिन्हें इस विषयमे ज्यादा जाननेकी इच्छा हो वे 'नवजीवन' पढ़ लें।[1]

मनुष्येतर प्राणी यदि हिंसक हो तो भी उन्हे न मारा जाये, ऐसी धर्मभावना हिन्दुस्तानके बाहर भी मानी गयी हो यह मै नही जानता। मालूम हुआ है कि ऐसा

१. देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ ३४-५ तथा खण्ड ३८, पृष्ठ ७६-७।

धर्म सत फ्रासिस जैसे व्यक्तिने पाला था। लेकिन आम लोगोने उस धर्मको पाला हो यह मै नही जानता। आश्रम इस धर्मको मानता है। फिर भी दुखकी बात है कि इसे अमलमे लानेमे आश्रम बहुत कच्चा है। इस धर्मको पालनेकी कला अभी हाथ नही लगी है। सम्भव है उसके पालनमे बहुतसे लोग अपने प्राण गँवाये तभी यह हाथ लगे। अभी तो यह सिर्फ मनोरथके रूपमे है। बहुत समयसे इसे धर्म मान लिया जानेपर भी उसका पालन बहुत कम होता है। इसका मुख्य कारण मै यह मानता हूँ कि इसे धर्म रूपमे स्वीकार करनेवाले आलस्यवश या दूसरे कारणोंसे अपने-आपको धोखा ही देते है।

पागल कुत्तेको मार डालनेका आश्रममे रिवाज है। ऐसा अवसर मेरी जानकारीमें एक ही बार आया है। ऐसा करनेमें खयाल यह रहा है कि पागल कुत्ता तकलीफ पा-पाकर अन्तमे मर ही जाता है। यह अच्छा नही हो सकता। वह दूसरी जगह जहाँ भी पहुँचता है, वहाँ लोग उसे मार डालनेके बजाय पीड़ा पहुँचाते है और यह मानकर अपनेको धोखा देते है कि ऐसा करके वे अहिंसा-धर्मका पालन करते है और यो मेरे खयालसे तो वे ज्यादा हिंसा करते है। ऐसा समझकर आश्रममें पागल कुत्तोको मार डालनेमे ही धर्म माना है।

किसी प्राणीको देहमुक्त करनेमे भी कभी-कभी अहिंसा हो सकती है, ऐसी स्पष्ट मान्यतासे आश्रममे एक बछडेका देहान्त किया गया। यह एक प्रसिद्ध उदाहरण है। उस बछड़ेका पैर टूट गया था। उसमे घाव हो गये थे, कीड़े पड़ गये थे। न उसे उठाया जा सकता था और न कोई दूसरी राहत पहुँचाई जा सकती थी। वह इतना बड़ा जानवर था कि मनुष्यसे न उसकी करवट बदली जा सकती थी और न उसे गोदमे बैठाया जा सकता था। उसका शरीरान्त न किया जाता तो यही होता कि वह छटपटाता रहता और हम देखा करते। यह आशा भी नही थी कि वह बछड़ा बहुत दिन जियेगा। ऐसी हालतमे मुझे लगा कि उसकी जान ले लेनेमे ही दया है। ऐसे छटपटाते प्राणीकी पीड़ाको लम्बानेमे मुझे धर्म न जान पड़ा। जहाँ अपना स्वार्थ न हो, जहाँ प्राणीका ही स्वार्थ देखा जाये, वहाँ प्राण-हरण धर्म हो सकता है, ऐसा मुझे स्पष्ट लगा। इसकी लम्बी चर्चा आश्रमवासियोसे की। कइयोने 'विरोध भी प्रगट किया। मगर अन्तमे मारनेका निश्चय किया गया। मैंने प्रसिद्ध सेठ अम्बालाल साराभाईकी मदद माँगी। उनके यहाँ जो बन्दूकवाले सिपाही थे उन्हे भेजनेको कहा। उन्होने जहरकी पिचकारी लगाकर बछडेके प्राण लेनेका उपाय ज्यादा पसन्द किया। मैंने इसका समर्थन किया। उनके डाक्टरने आकर जहर देकर थोडे ही पलोमें बछड़ेका काम तमाम कर दिया।'[1] मै सारे समय वहाँ मौजूद था। यह लिखते वक्त भी इस घटनाका विचार करते हुए मुझे किसी तरहका पश्चात्ताप नही है, बल्कि वह पुण्यका काम था ऐसा मेरा विश्वास है। बहुत-से हिन्दुओके दिलको इससे चोट पहुँची थी। सम्भव है, इसे पढ़कर भी चोट पहुँचे। मुझे लगता है कि ऐसे आघातके पीछे अहिंसाके स्वरूपके विषयमे हमारा अज्ञान ही कारण है। आज

१. देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ ३२३-२७ और खण्ड ३८, पृष्ठ १४७-८।

तो यह जीता-जागता धर्म नहीं रहा। अहिंसाका रिवाज-सा पड़ गया है। उसीके अनुसार बगैर सोचे-समझे, जहाँ तक खुदको बहुत असुविधा महसूस न हो वहाँ तक हिन्दुस्तानके हिन्दू अपना आचरण करते हैं। इस बछड़ेकी घटनाकी और उससे पैदा होनेवाले कई सवालोकी पूरी चर्चा 'नवजीवन'में हो चुकी है।

इतना कहकर मैं मनुष्यके सिवा दूसरे जीवोके सम्बन्धमें अहिंसाके जो प्रयोग आश्रममे हुए उनकी चर्चा पूरी करता हूँ।

आश्रमकी दृष्टिसे इस जीवदयामे समाहित अहिंसा इस व्यापक धर्मका बड़ा किन्तु एक अंगमात्र है। उससे भी बड़ा अंग मनुष्योंका एक दूसरेके साथका व्यवहार है। मामूलीसे-मामूली व्यवहार या तो हिंसक होगा या अहिंसक। सौभाग्यसे अहिंसा व्यापक धर्म है और इसलिए मनुष्य उसका पालन सहज ही करता है। अगर एक-दूसरेको निभा न लिया जाये, तो मनुष्य-जातिका कभीका नाश हो गया होता। ऐसे महान् अवलोकनोसे हम अहिंसा-धर्मको साबित कर सकते हैं, मगर इससे उसका पालन करनेका यश हम नही ले सकते।

जहाँ-जहाँ हमारा क्षणिक स्वार्थ बाधक होता है, वहाँ-वहाँ हम अक्सर जान-बूझकर हिंसाका रास्ता अपनाते हैं। और यह कुटुम्बमे, गाँवमें, देशमें और अलग-अलग धर्मोंके सम्बन्धमे समय-समय पर देखा जाता है। अहिंसाका ज्ञानपूर्वक पालन मनुष्यको नवजीवन प्रदान करता है, उसे बदल डालता है। इस कठिन धर्मको जान-बूझकर पालनेकी आश्रममे कोशिश की जाती है। इसमे सैकड़ो रुकावटे आती हैं, निराशाएँ पैदा होती हैं और कई बार श्रद्धाकी परीक्षा होती है। आपसके बरतावमे आचार-शुद्धिसे ही सन्तोष नही रहता। किसीके लिए खराब विचार न करना, किसीने हमारा बहुत नुकसान किया हो तो भी उसका बुरा न चाहना, विचारमे भी उसे दुख न देना — यह बड़ा मुश्किल है, मगर अहिंसा-पालनकी कसौटी इसीमे निहित है।

आश्रममे चोर आये हैं, चोर पैदा हुए हैं। उन्हें सजा देनेकी नीति यहाँ नही रखी गई; पुलिसको खबर नही दी जाती; उनके उत्पातोको यथाशक्ति बरदाश्त किया जाता है। इस नियमका सदा पूरी तरहसे पालन नही किया गया। एक बार दिनमे चोरी करते हुए एक चोर पकड़ा गया था। जिसने उसे पकड़ा उसने उसे बाँध दिया, उसका अपमान तो किया ही। मैं उस दिन आश्रममे था। मैं चोरके पास गया, उसे उलाहना दिया और उसे बंधनमुक्त किया। मगर असलमे देखा जाये तो इससे अहिंसावादीका धर्म पूरा नही होता। ऐसे उत्पातोंको रोकनेके लिए काफी उपाय खोजे और किये जाने चाहिए। एक उपाय तो यह है कि आश्रमके परिग्रह और भोग-विलासको कम किया जाये, ताकि किसीको वहाँसे कुछ लेनेका प्रलोभन ही न उठे। दूसरा उपाय यह है कि आसपासके गाँवोमे शुद्ध आचरणका प्रचार किया जाये। और तीसरा यह कि आश्रमकी सेवा इतनी व्यापक हो जाये कि भले-बुरे सभीमे यह भावना पैदा हो जाये कि आश्रम हमारा अपना है।

इस परसे देखा जा सकता है कि परिग्रहीके लिए स्थूल अहिंसाका भी पूरा पालन असम्भव-सा है। जो अपनी जायदाद रखता है, वह उसकी रक्षा का उपाय

करेगा ही। अतः ऐसा करनेमे कही-न-कही दण्डका स्थान भी होगा ही। जो सब चीजोसे ममत्व हटाकर उदासीन होकर व्यवहार करता है, वही स्थूल अहिंसाका पूरा पालन कर सकता है। जिस समाजमे ऐसे आदमी या ऐसी संस्थाएँ ज्यादा होगी, वहाँ हिंसक उपाय कमसे-कम काममे लाये जानेकी सम्भावना रहेगी। जैसे हिंसा पर रचे हुए समाजमे गोला-बारूदका बड़ा स्थान होता है और उसका उपयोग जानने-वाला अच्छा सिपाही समझा जाता है तथा इनामोका हकदार होता है, वैसे ही जहाँ समाज-रचना अहिंसा पर आधारित होती है वहाँ गोला-बारूदकी जगह तप और संयम लेते है और उनसे काम लेनेवाला सिपाही समाजकी रक्षा करता है। ऐसे धर्मको दुनियाने अभी तक स्वीकार नही किया है। हिन्दुस्तानमे वह थोड़ा-बहुत स्वीकार किया गया है, मगर वह व्यापक रूपमे स्वीकार किया गया है, यह नही कहा जा सकता। आश्रममे यह विश्वास प्रतिष्ठित है कि ऐसी अहिंसा व्यापक होनी चाहिए, व्यापक हो सकती है, और समाजकी रचना भी उस पर आधारित की जा सकती है। इसी विश्वासके आधार पर प्रयोग हो रहे है। अभी तो यही कहा जायेगा कि सफलता थोड़ी मिली है। इस प्रकरणमे मैं ऐसी मिसालें नही दे सका हूँ, जिनसे अहिंसाके पुजारीको आश्वासन मिले। राजनीतिक क्षेत्रमे अहिंसाका जो प्रयोग हुआ है, उसे मै इसमे नही गिनता। उस प्रयोगके लिए एक अलग प्रकरण होगा।[1]

ब्रह्मचर्य

अहिंसाकी तरह यह व्रत कई तरहके धर्म-संकट और पहेलियाँ पैदा करनेवाला नही है। आमतौर पर इसका अर्थ सब समझते है; मगर अर्थ जानते हुए भी इसका अमल करनेमे बहुतोका खून पानी हुआ है, और बहुतेरे कोशिश करने पर भी आगे नही बढ़ सके है। कुछ पीछे भी हटे है। पूर्णताको कोई नही पहुँचा है। सबको इसका महत्त्व साफ मालूम हो गया है। मेरा प्रयत्न १९०६ के पहले शुरू हुआ। मैंने व्रत १९०६ में लिया। बहुत उतार-चढ़ाव आये। ब्रह्मचर्यका सूक्ष्म अर्थ मै अनुभवसे, ठोकरें खाकर ही जान सका। इसका अर्थ समझनेपर मैंने देखा कि पुस्तकमें पढ़ा हुआ अर्थ भी अनुभव किये बिना न समझनेके बराबर ही है। अनुभव होनेके बाद भी वही अर्थ भिन्न प्रकारसे समझमें आता है। चरखे जैसा निहायत सादा यंत्र चलानेकी रीति पढ़ लेना एक बात है, और उस पर अमल करना दूसरी बात है। अमल शुरू करते ही नई रोशनी पड़ती है। और चरखे जैसी सादी और आँखोंको दीखनेवाली चीजके बारेमें यदि यह बात सही है, तो अप्रत्यक्ष भावोके बारेमे कितनी ज्यादा सही होनी चाहिए!

जो मन, वचन और कायासे इन्द्रियोंको वसमें रखता है वही ब्रह्मचारी है। इसका अर्थ अमल करने पर ही मुझे कुछ-कुछ स्पष्ट हुआ, ऐसा कहा जा सकता है। पूरी तरह स्पष्ट तो आज भी नही हुआ है, क्योकि मै अपनेको सोलह आने

१. यह प्रकरण लिखा नहीं गया।

पूर्ण ब्रह्मचारी नही मानता। मनके विकार कावूमे रह सकते है, लेकिन नष्ट नही हुए है। जिसके मनोविकार नष्ट नही हुए, वह पूरा ब्रह्मचारी नही माना जा सकता। जब मै उस स्थितिमे पहुँच जाऊँगा, तब इसी व्याख्याको मै नई आँखोसे देखूँगा। मामूली ब्रह्मचर्य जितना कठिन दीखता है, उतना है नही। हमने उसका अनर्थ करके उसे कठिन बना दिया है। ब्रह्मचर्यका खेल खेलनेवाले बहुत लोग आगमें हाथ डाल कर भी जलने न पाये ऐसी कोशिश करते है, और जलते है तब व्रतकी कठिनताकी शिकायत करते है। यह तो बहुत थोड़े ही समझते है कि [ब्रह्मचर्यके लिए] एक इन्द्रियका ही नही, बल्कि सभी इन्द्रियोका संयम करना जरूरी है। स्त्री-संग न करनेमे जो ब्रह्मचर्यका आदि और अन्त मानते है, वे ब्रह्मचारी नही है, और इसलिए उनका यह कहना कि ब्रह्मचर्य बडा कठिन है, एक सामान्य कथन ही है। जो पुरुष दूसरे सब भोग भोगते हुए केवल स्त्री-संगसे दूर रहनेकी इच्छा रखता हो, या ऐसी कोई स्त्री पुरुष-संगसे दूर रहना चाहती हो तो उनका प्रयत्न निष्फल है। उनका यह प्रयत्न तो जान-बूझकर कुएँमे उतरकर भी पानीसे अछूता रहनेके प्रयत्न जैसा ही है। जो स्त्री-पुरुष सग-त्यागको सहज-साध्य बनाना चाहते है, उन्हे चाहिए कि वे उसे उत्तेजन देनेवाली सभी जरूरी चीजे छोड़ दे। उन्हे जीभके स्वाद छोड़ने चाहिए, शृगार-रस छोडना चाहिए और विलास-मात्र छोड़ना चाहिए। ऐसे लोगोके लिए ब्रह्मचर्य आसान है, इसमे मुझे जरा भी शक नही है।

कुछ लोग ऐसा मानते है कि अपनी या पराई स्त्रीके प्रति विकारवश होनेमे, विकारी बनकर उन्हें छूनेमे ब्रह्मचर्यका भंग नही होता। यह भयंकर भूल है। इसमें स्थूल ब्रह्मचर्यका सीधा भंग है। इस तरहके खेल करनेवाले स्त्री-पुरुष अपनेको और दुनियाको धोखा देते है और दिनोदिन शक्तिहीन होते है। ऐसे स्त्री-पुरुष कई बीमारियोंके शिकार बनते है। ऐसे लोगोका चरम सीमा तक जाना बाकी रह जाये, तो उसका श्रेय उन्हे नही परन्तु परिस्थितियोको है। वे पहले ही मौके पर फिसलनेवाले है। यह मै अपने और बहुतसे साथियोंके अनुभवके आधार पर लिख रहा हूँ।

आश्रमके ब्रह्मचर्यमे तो अपनी पत्नीसे भी सग करना त्याज्य है। पर अपनी स्त्रीके साथ सग चालू रखकर भी जो परस्त्री-सग छोड़ता है वह ठीक ही करता है। उसका ब्रह्मचर्य सीमित भले ही माना जाये, मगर उसे ब्रह्मचारी मानना इस महाशब्दकी हत्या करना ही है।

इस तरह ब्रह्मचर्यकी व्याख्या तो पूर्ण ही रखी गई है। फिर भी, आश्रममें स्त्री-पुरुष दोनो रहते है और उन्हे एक-दूसरेके साथ मिलनेकी काफी आजादी है। यानी, आदर्श यह है कि जितनी स्वतन्त्रता माँ-बेटे या बहन-भाई भोगते है, वही परस्पर व्यवहारमे आश्रमवासियोको मिल सके। यानी ब्रह्मचर्यके लिए जिन मर्यादाओंकी आम तौर पर कल्पना की जाती है वे सब यहाँ नही रखी जाती। इसके विपरीत, यह माना जाता है कि जिस ब्रह्मचर्यको इन सब दीवारोकी हमेशा जरूरत हो वह ब्रह्मचर्य ही नही है। ब्रह्मचर्यके प्रयत्नके लिए उस दीवारकी भले ही आवश्यकता मानी जाये, मगर अन्तमे तो वह दीवार टूटनी ही चाहिए। इसका यह अर्थ नही

कि दीवार टूटते ही ब्रह्मचारी स्त्रियोंका साथ ढूँढ़ने लगे; परन्तु इसका अर्थ यह है कि स्त्री-सेवाका प्रसंग आये, तब ब्रह्मचारी यह मानकर कि उसके लिए इसका निषेध है उस सेवासे भाग नही सकता।

ब्रह्मचारीके लिए स्त्री नरककी खान नही है। उसके लिए वह अम्बा-माता है, वह जगत-जननी है। स्त्रीपर नजर पड़ते ही अथवा सेवाके लिए उसे अचानक या इच्छापूर्वक छूते ही जिसे विकार हो जाता है वह ब्रह्मचारी नही है। उसके लिए सजीव हो या काठकी निश्चेष्ट पुतली हो, दोनों एकसी होनी चाहिए। मगर जो स्त्रीका नाम सुनते ही विकारवश होता है और फिर भी ब्रह्मचर्यका पालन करनेको उत्सुक है, उसे तो काठकी पुतलीसे भी दूर भागना पड़ेगा।

ऊपर बताये अनुसार स्त्री-पुरुष एक ही आश्रममे रहें, साथ-साथ काम करे, एक-दूसरेकी सेवा करे और ब्रह्मचर्य पालनेकी कोशिश करे, तो इसमें अनेक भय है। इसमे एक हद तक जान-बूझकर की जानेवाली पश्चिमकी नकल है। इस तरहके प्रयोग करनेकी अपनी योग्यतामें भी मुझे शक है। मगर यह तो मेरे सारे ही प्रयोगोंके बारेमे कहा जा सकता है। यह शंका बहुत प्रबल है, इसीलिए मै किसीको अपना शिष्य नही मानता। समझ-बूझकर जो आश्रममे आये है, वे सब इन खतरोंको जानते हुए ही साथियोके रूपमे यहाँ आये है। लड़कों और लड़कियोको मै अपने बच्चे मानता हूँ, इसलिए वे सहज ही मेरे प्रयोगोमे घसीटे जाते है। मेरे तो सारे प्रयोग सत्यरूपी परमेश्वरके नाम पर चलते है। वह कुम्हार है और हम उसके हाथमें मिट्टीकी भाँति है।

आश्रमके अपने आज तकके अनुभवसे मै कह सकता हूँ कि जो खतरा उठाकर यहाँ ब्रह्मचर्य पालनेकी कोशिश जारी है, उसमे निराशाका कारण नही मिला है। कुल मिलाकर स्त्री-पुरुष दोनोको उससे लाभ ही हुआ है। मगर मेरा विश्वास है कि सबसे ज्यादा लाभ स्त्रियोंको हुआ है। प्रयोग करनेमे कुछ स्त्री-पुरुष असफल रहे है, कुछ गिरकर उठे है। प्रयोग-मात्रमे ठोकर, ठेस तो खानी ही होती है। जिसमें सोलहो आने सफलता मिल जाये वह प्रयोग ही नही है; वह तो सर्वज्ञका स्वभाव ही कहा जायेगा।

जिसका स्थान पहला है उसकी चर्चा मैंने आखिरके लिए रखी है। 'गीता' के दूसरे अध्यायमे कहा गया है कि "निराहारीके विषय तबतक भले ही दब गये दीखे जब तक निराहार जारी रहे, मगर उसका रस नही मिटता। वह तो तभी मिटेगा जब 'परं' के यानी सत्य अर्थात् ब्रह्मके दर्शन हो जायेगे।" इसमें निराहारीके बजाय संयमी शब्द समझना चाहिए तब वह सब इन्द्रियोके लिए लागू होगा। इस श्लोकमे अनुभवी कृष्णने पूर्ण सत्य कह दिया है। उपवाससे लेकर जितने संयमोकी कल्पना की जा सकती हो, वे सब ईश्वरकी कृपाके बिना बेकार है। सत्य या ब्रह्मके दर्शनका क्या अर्थ है? इसमें इन आँखोंसे दर्शन करनेकी बात नही है। कोई चमत्कार देखनेकी बात भी नही। ब्रह्मका दर्शन यानी ब्रह्म हृदयमे निवास करता है, ऐसा अनुभव-ज्ञान। जबतक यह न आये तबतक रस कभी नही छूटता। इसके आते

ही रसमात्र उसी समय सूख जाते है। इस ज्ञानकी खातिर ही सारे व्रत है, सारी साधना है, आश्रमोकी रचना है। यह ज्ञान सतत अभ्याससे ही होता है। प्रेमी प्रेमिकाकी खातिर तबाह होता देखा गया है। मगर चूँकि यह सारा कष्ट वह क्षणभंगुर भोगके लिए उठाता है, इसलिए अन्तमे उसके भाग्यमे धूल-की-धूल ही रहती है। मगर जिस लगनके साथ प्रेमी मेहनत करता है, उससे भी ज्यादा लगन सत्य-दर्शनके लिए चाहिए। और सत्यके दर्शनके अन्तमे ही परमानन्द प्राप्त होता है। फिर भी, प्रेमी जैसी लगन थोड़े ही जिज्ञासुओमे पाई जाती है। तब अगर वह दर्शन दुर्लभ हो तो शिकायत क्यों? प्रेमिका तो हजारो कोस दूर भी हो सकती है, पर ब्रह्म तो हृदयमें ही है। अँगुलीसे नाखून जितना दूर है, ब्रह्म तो उतना भी दूर नही है। मगर जहाँ 'बगलमे लडका शहरमें ढिढोरा' हो वहाँ क्या कहा जाये?

निराहारीका ब्रह्मचर्य उपेक्षा करने जैसा नही है। उसके अन्तमें भी रस क्षीण हो सकते है। उपवास करके, उलटे सिर लटककर, हाथ और पैर सुखाकर — किसी भी तरह विषयोंकी निवृत्ति करनी ही है। ऐसा करते-करते सम्भव है रस लगभग क्षीण हो जायें। इतनेमें ब्रह्मके दर्शन होंगे और रसमात्र हमेशाके लिए चले जायेंगे, और जिसे हमने खोया हुआ रत्न मान लिया है वह मिल सकेगा। जिसने मृत्यु पर्यन्त कोशिश ही न की हो, उसे ब्रह्मको न देखनेकी शिकायत करनेका कोई अधिकार ही नही है। ब्रह्मचर्यका पालन भी ब्रह्मको ढूँढ़नेका एक साधन है। ब्रह्मचर्यके विना ब्रह्म नही मिलता और ब्रह्मके विना ब्रह्मचर्यका पूरा पालन ही असम्भव है। इसलिए यहाँ निराहारका निषेध नही किया गया है, केवल उसकी मर्यादा बताई गई है।

ब्रह्मचर्यके पालनका प्रयत्न आश्रममे छोटे-बड़े, पति-पत्नी सभी करते हैं, फिर भी जीवनभर सभी उसका पालन करनेवाले नही हैं। ऐसे तो थोड़े ही है। लडके और लडकियाँ विवाहके योग्य हो जाते है, तब उन्हें चेता दिया जाता है कि कोई भी जबरन ब्रह्मचर्य-पालनके लिए बँधे हुए नही है; जो उसका तेज सहन न कर सके उन्हे शादी करनेका अधिकार है, और यदि वे माँग करेंगे तो ठीक साथी खोज देनेमे आश्रम उनकी मदद करेगा। यह बात इतनी ज्यादा और इतनी वार साफ की गई है कि उसे सब अच्छी तरह समझते है। इसका नतीजा भी बहुत अच्छा निकला है। नवयुवक ज्यादा मात्रामें ब्रह्मचर्यका निर्वाह कर रहे है। कन्याएँ काफी उम्र तक इसका पालन करती है। कोई भी कन्या पन्द्रह सालसे नीचे तो ब्याही ही नही गई है। ज्यादातर कन्याओंकी शादी उन्नीसके आसपास ही हुई है।

जो आश्रमकी मददसे शादी करना चाहते है, उन्हे निहायत सादगीसे सन्तोष करना पड़ता है। भोज वगैरा नही होते। बरातियोके तौर पर कोई आ नही सकते। ढोल-नगाडोंकी गुंजाइश नही होती। सिर्फ धार्मिक विधि ही होती है। वर-कन्याको खादीमय होना पडता है। गहना एक भी नही होता। वरकी तरफसे कन्याको कुछ देना नही पड़ता। कन्याको माता-पिता या संरक्षककी तरफसे पहननेके कपड़ो व चरखे वगैराके सिवा कुछ नही दिया जाता। विवाहमे दस रुपयेका भी खर्च नही होता।

विधिमें एक घंटेसे ज्यादा समय नही लगता। सप्तपदीके वचन[1] वर-कन्या मातृभाषा में बोलते है, जिन्हे पहलेसे ही समझ लिया जाता है। विवाहके दिन विवाहकी विधिसे पहले दोनो उपवास रखते है, पेडोंको पानी पिलाते है, गोशालाकी सफाई करते है, जलाशय साफ करते है और गीतापाठ करते है। कन्यादान करनेवाला भी दान करनेके समय तक उपवास रखता है। अब यह भी आग्रह रखा जाता है कि आश्रमकी मारफत एक ही जातिवालोके बीच विवाह नही कराया जायेगा। उपजातियोका बन्धन ढीला करनेकी गरजसे आश्रम उपजातिके विवाहको प्रोत्साहन नही देता और आश्रममे जो शादी करते है उन्हे उपजातियोके बाहर सम्बन्ध करनेका प्रोत्साहन दिया जाता है।[2]

अस्तेय और अपरिग्रह

इन व्रतों पर ज्यादा लिखनेकी जरूरत नही। पाँच महाव्रतोमे से ये है। जो आत्मदर्शन करना चाहते है उनके लिए ये जरूरी है। इसलिए उन्हे आश्रमके व्रतोमे स्थान दिया गया है।

अस्तेय: इस व्रतके पालनके लिए सिर्फ इतना ही काफी नही है कि दूसरेकी चीज उसकी इजाजतके बिना न ली जाये। जो चीज हमे जिस कामके लिए मिली हो उसके सिवा दूसरे काममे उसे लेना या जितने समयके लिए मिली हो उससे ज्यादा समय तक उसे काममे लेना यह भी चोरी ही है। इस व्रतकी बुनियादमे यह सूक्ष्म सत्य निहित है कि परमात्मा प्राणियोके लिए दैनिक जरूरतकी चीजें नित्य पैदा करता है और उन्हें देता है। उससे अधिक वह पैदा ही नही करता। इसका अर्थ यह हुआ कि अपनी कमसे-कम जरूरतसे अधिक जितना भी मनुष्य लेता है वह चोरी है।

अपरिग्रह: अपरिग्रह अस्तेयमे ही समाया हुआ है। अनावश्यक चीजे जैसे ली नही जानी चाहिए, वैसे ही उनका संग्रह भी नही होना चाहिए। अत: जिस खुराक या साज-सामानकी हमे जरूरत न हो, उसका संग्रह करना इस व्रतका भंग करना है। जिसका काम कुर्सीके बिना चल सकता है उसे कुर्सी रखनी ही नही चाहिए। अपरिग्रही मनुष्यको चाहिए कि वह अपना जीवन हमेशा सादेसे-सादा बनाता जाये।

अपरिग्रह और अस्तेय मनकी स्थितियाँ ही है। देहधारीके लिए उनका पूरा अमल असम्भव है। शरीर खुद ही एक परिग्रह है। और जबतक शरीर है तबतक वह दूसरे परिग्रहोकी आशा रखता ही है। कुछ परिग्रह तो अनिवार्य हैं। 'कुछ'की तादाद भी हर मानसिक स्थितिके अनुसार होगी। जैसे-जैसे वह इन व्रतोकी तरफ मुड़ती जायेगी, वैसे-वैसे मनुष्य शरीरका मोह छोड़ता जायेगा और अपनी जरूरतें घटाता जायेगा। सबके लिए एक ही प्रमाण निश्चित नही किया जा सकता।

१. वचनों और उनके अर्थोंके लिए देखिए खण्ड ३०, पृष्ठ ९२-३।

२. १९४८ में गांधीजीने कहा था कि मैं उसी विवाहमें उपस्थिति हो सकता हूँ जहाँ एक पक्षवाले हरिजन हों और दूसरे सवर्ण हिन्दू।

चीटीका परिग्रह दूसरा ही होगा। कणसे ज्यादा जमा करनेवाली चीटी परिग्रही है, पर हजारो कण समा जाये इतनी घास जिस हाथीके सामने पड़ी हो, उसे परिग्रही नही माना जा सकता।

ऐसी परेशानियोंसे संन्यासकी प्रचलित कल्पना पैदा हुई मालूम होती है। आश्रमका ध्येय ऐसे संन्यासका पालन करना नही है। और किसीके लिए ऐसा संन्यास जरूरी भले ही हो, भले किसीमे दिगम्बर बनकर, समाधि लगाकर, गुफामे बैठकर विचारमात्रसे जगतका कल्याण करनेकी शक्ति हो, पर सभी गुफामे बैठ जाये तो नतीजा खराब ही होगा। साधारण स्त्री-पुरुषोके लिए तो मानसिक सन्यास ही सम्भव है। दुनियामे रहते हुए भी जो सेवाभावसे और सेवाके लिए ही जीता है, वह संन्यासी है।

ऐसा संन्यास सिद्ध करनेकी आश्रमको आशा है। वह उसी दिशामे जा रहा है। इस मानसिक संन्यासमे यद्यपि जरूरी चीजोंका संग्रह रहता है, फिर भी परिग्रहमात्रके (शरीर तकके) त्यागकी तैयारी होनी चाहिए। यानी एक भी वस्तुके जानेसे चोट न लगनी चाहिए। और जब तक शरीर है तबतक सेवाका जो भी काम सामने आये वह किया जाये। खाने-पहननेको मिले तो ठीक, न मिले तो भी ठीक। परीक्षाका ऐसा समय आये तब भी कोई आश्रमवासी हारे नही — इस तरह मनको तैयार करनेकी कोशिश चल रही है।

शारीरिक श्रम

हर स्त्री-पुरुष शरीरसे मेहनत करे, इसे आश्रम धर्म मानता है। इस उसूलकी जानकारी या सूझ मुझे टॉल्स्टॉयके एक लेखसे हुई। उन्होने रूसके लेखक बोन्डारेफके बारेमे लिखते हुए बताया कि रोटी-श्रमकी जरूरत इस लेखककी इस युगकी बड़ी खोजोमे से एक थी। उसका मतलब यह है कि हर तन्दुरुस्त आदमीको अपने पेटके लायक शरीर-श्रम करना ही चाहिए। मनुष्यको अपनी बुद्धिकी शक्तिका उपयोग आजीविकाके लिए या उससे भी ज्यादा प्राप्त करनेके लिए नही, बल्कि सेवाके लिए, परोपकारके लिए करना चाहिए। इस नियमका पालन सारी दुनिया करने लगे तो सहज ही लोग समान हो जाये, कोई भूखों न मरे और जगत बहुतसे पापोसे बच जाये।

यह सम्भव है कि इस स्वर्ण-नियमका अमल सारी दुनिया कभी न कर सके। नियमको जाने-बूझे बिना तो करोड़ो उसका पालन जबरदस्ती करते हैं। उनके मन उसके विरुद्ध चलते हैं, और इसीलिए वे दुख पाते हैं और उनकी मेहनतका जितना लाभ दुनियाको होना चाहिए उतना नही होता। जो लोग इस नियमको समझते हैं, उन्हे इस ज्ञानसे इसका पालन करनेका प्रोत्साहन मिलता है। इस नियमका पालन करनेवाले पर उसका चमत्कारी प्रभाव होता है, क्योकि इससे उसे परम शान्ति मिलती है, उसकी सेवाशक्ति और उसकी तन्दुरुस्ती बढ़ती है।

मुझपर टॉल्स्टॉयका बहुत असर हुआ। और उनकी बातो पर यथासम्भव अमल करना तो मैंने दक्षिण आफ्रिकामे ही शुरू कर दिया था। आश्रम कायम हुआ तभीसे रोटी-श्रमको उसमे मुख्य स्थान मिला।

'गीता' का अध्ययन करनेपर 'गीता' के तीसरे अध्यायमें इसी नियमको यज्ञके रूपमें देखता हूँ। मैं यह नही कहना चाहता कि यज्ञका अर्थ वहाँ शरीरश्रम ही है। परन्तु यज्ञसे पर्जन्य[1] होता है, इस भावमे मुझे शरीर-श्रमका धर्म दीखता है। यज्ञसे बचा हुआ अन्न वही है, जो मेहनत करनेके बाद प्राप्त होता है।[2] आजीविकाके लिए पर्याप्त श्रमको 'गीता' ने यज्ञ कहा है। अपने पोषणके लिए जितना चाहिए उससे जो ज्यादा खाता है वह चोरी करता है; क्योंकि मनुष्य आजीविकाके लिए आवश्यक श्रम भी मुश्किलसे ही करता है। मेरी मान्यता है कि मनुष्यको आजीविकासे ज्यादा लेनेका अधिकार ही नही है। और जो शरीरश्रम करते है उन सबको उतना लेनेका अधिकार तो है ही जितना शरीर-निर्वाहके लिए आवश्यक है।

इससे कोई यह न कहे कि इसमे श्रमके बँटवारेकी गुंजाइश ही नही है। मनुष्यकी आवश्यकताओंके लिए जो भी चीज तैयार होती है, उसमे शरीर-श्रम तो लगता ही है। इसलिए श्रम चाहे जिस जरूरी क्षेत्रमे किया जाये वह रोटी-श्रम ही है। पर सब लोग इतना श्रम भी नही करते, इसलिए तन्दुरुस्ती बनाये रखनेके लिए व्यायामके नामसे खास तौर पर शरीर-श्रम करना पडता है। जो प्रतिदिन खेतीमें श्रम करता है, उसे अलग व्यायामकी जरूरत नही रहती। किसान यदि तन्दुरुस्तीके दूसरे नियमोका पालन करता रहे तो वह बीमार ही न पड़े।

यह देखा जाता है कि इस दुनियामे मनुष्यको रोज जितना चाहिए उतना कुदरत रोज पैदा करती है। उसमेंसे अगर कोई अपनी आवश्यकतासे अधिकका उपयोग कर लेता है, तो उसके पड़ोसीको भूखा रहना ही पडेगा। बहुत लोग अपनी आवश्यकतासे अधिक लेते हैं, यही कारण है कि हम दुनियामे भुखमरी देखते हैं। हम कुदरतकी देनको किसी भी तरह काममे ले, फिर भी कुदरत तो अपने जमाखर्चके दोनों बाजू बराबर ही रखती है। उसके बहीखातेमे न जमामे बाकी रहता है न नामेमे। वहाँ तो आमद-खर्चका हिसाब रोज बराबर हो जाता है और शून्य बाकी रहता है। और इस शून्यमे हमे भी शून्यवत् होकर समा जाना है।

ऊपरके नियममे यह बात बाधक नही है कि विविध रसायनों और यन्त्रोके जरिये मनुष्य जमीनसे ज्यादा फसल पैदा करता है, अपनी मेहनत से अन्य प्रकारसे अनेक वस्तुएँ उत्पन्न करता है। यह तो कुदरतकी शक्तियोका रूपान्तर है। सबका आखिरी परिणाम तो शून्य ही होनेवाला है। रोजके इन आँकडोको पानेके लिए हमारे पास काफी साधन नही है। मगर हमे रोज जो-कुछ अनुभव होता है उसका पृथक्करण किया जाये, तो उससे यही अनुमान होता है कि जमा और खर्चके दोनो बाजू बराबर रहते है।

कुदरत ऐसा करती हो या न करती हो, मेरी दूसरी दलीलोमे सार हो या न हो, पर आश्रममे रोटी-श्रमके नियमका अधिकसे-अधिक अच्छे ढंगसे पालन किया गया है, इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही। इसे पालन करनेका साधारण आग्रह

१ और २. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ १५७।

हो तो पालन आसान है। यदि कुछ निश्चित घंटोंमें शरीर-श्रमके सिवा दूसरा काम ही न हो तो मजदूरी होगी ही। भले ही उसमें फिर आलस्य हो, कार्य-दक्षता न हो, मन न हो, मगर कुछ घंटे पूरे तो होंगे ही। फिर, कुछ मेहनत तुरन्त फल देनेवाली होती है, इसलिए उसमें बहुत आलस्यकी गुंजाइश भी नहीं रहती। श्रम-प्रधान संस्थाओंमें नौकर नहीं होते या थोड़े ही होते हैं। पानी भरना, लकड़ी चीरना, दियाबत्ती तैयार करना, पाखाने और रास्ते साफ करना, मकानोंकी सफाई करना, अपने-अपने कपड़े धोना, रसोई करना वगैरा अनेक काम ऐसे हैं जो होने ही चाहिए।

इनके सिवा खेती, बुनाईका काम, इनसे सम्बन्धित और दूसरी तरहसे जरूरी बढ़ईका काम, गोशाला, चमड़ेका काम वगैरा काम आश्रमके साथ जुड़ी हुई प्रवृत्तियाँ हैं। उनमें थोड़े या सारे आश्रमवासियोंके लगे बिना काम ही नहीं चल सकता।

ये सब काम रोटी-श्रमके नियम-पालनके लिए काफी माने जायेंगे। मगर यज्ञका दूसरा अंग परमार्थ या सेवाकी वृत्ति है। इन कामोंमें उसका समावेश करें तो आश्रमकी खामी जरूर मालूम होगी। आश्रमका आदर्श सेवाके लिए ही जीना है। इस ढंगसे चलनेवाली संस्थामें आलस्य और काम-चोरीको स्थान नहीं है। वहाँ सब काम तन-मनसे होने चाहिए। सभी लोग ऐसा करते तो आज आश्रमकी सेवाकी योग्यता बहुत बढ गई होती। लेकिन ऐसी सुन्दर स्थितिसे आश्रम अब भी बहुत दूर है। इसलिए यद्यपि आश्रमका हर काम यज्ञरूप है, फिर भी आदर्शका विचार करके दरिद्रनारायणके लिए कमसे-कम एक घंटेकी कताईको आवश्यक स्थान दिया गया है। जिनका शरीर काम कर सकता है उन सबके लिए यह कताई अनिवार्य है। इस स्थिति तक पहुँचनेमें काफी मेहनत करनी पड़ी है। लेकिन इसका वर्णन खादी-कार्यका विचार करते समय ज्यादा ठीक रहेगा।

यह आरोप समय-समय पर सुना गया है और आज भी सुना करता हूँ कि श्रम-प्रधान संस्थामें बुद्धिके विकासकी गुंजाइश नहीं रहती, इसलिए वह जड बन जाती है। मेरा अनुभव इससे उलटा है। आश्रममें जितने भी लोग आये हैं, सभी की बुद्धि कुछ तेज हुई है; किसीकी मन्द हुई हो ऐसा जाननेमें नहीं आया।

बहुत बार यह अर्थ किया जाता है कि जगतकी अनेक घटनाओंका माना हुआ बाह्य ज्ञान ही बुद्धि है। मुझे यह कबूल करना पड़ेगा कि ऐसी बुद्धि आश्रममें कम विकसित होती है। लेकिन अगर बुद्धिका अर्थ समझ, विवेक वगैरा हो, तो वह आश्रममें काफी विकसित होती है। जहाँ शरीर-श्रम केवल मजदूरीके तौर पर और सिर्फ गुजारेकी खातिर होता है, वहाँ मनुष्यका जड बन जाना सम्भव है। अमुक चीज किसलिए या किस तरह होती है, इसका ज्ञान उसे कोई नहीं देता और उसे खुद इस विषयमें जिज्ञासा नहीं होती। उसे अपने काममें दिलचस्पी भी नहीं होती। आश्रममें इससे उलटा होता है। हर काम — पाखाना-सफाई तक — समझकर करना पड़ता है। उसमें दिलचस्पी ली जाती है। वह कार्य परमेश्वरको प्रसन्न करनेके लिए होता है, इसलिए उसे करते हुए भी बुद्धिके विकासकी गुंजाइश रहती है।

सबको अपने-अपने विषयका पूरा ज्ञान प्राप्त करनेका प्रोत्साहन दिया जाता है। जो यह ज्ञान पानेकी कोशिश नही करते, उनके लिए वह दोष माना जाता है। आश्रममे सभी मजदूर हैं या कोई भी मजदूर नही है।

यह मानना कि कितावोसे ही, मेज-कुर्सी पर बैठनेसे ही ज्ञान मिलता है, बुद्धिका विकास होता है, घोर अज्ञान है, भारी भ्रम है। इसमे से हमें तो निकल ही जाना चाहिए। जीवनमे वाचनके लिए स्थान जरूर है, मगर वह अपनी जगह पर ही शोभा देता है। शरीर-श्रमको हानि पहुँचाकर उसे बढ़ाया जाये तो उसके खिलाफ विद्रोह करना फर्ज हो जाता है। शरीर-श्रमके लिए दिनका ज्यादा समय देना चाहिए और वाचन वगैराके लिए थोड़ा। आजकल इस देशमें, जहाँ अमीर लोग या ऊँचे वर्णके माने जानेवाले लोग शरीर-श्रमका अनादर करते है, शरीर-श्रमको ऊँचा दर्जा देनेकी बड़ी जरूरत है। और बुद्धिशक्तिको सच्चा वेग देनेके लिए भी शरीर-श्रमकी यानी किसी भी उपयोगी शारीरिक धन्धेमे शरीरको लगानेकी जरूरत है।

अगर वाचनको आश्रम कुछ ज्यादा समय दे सके तो देने जैसा है। जो आश्रम-वासी निरक्षर हैं उनको शिक्षककी मदद मिल सके तो वह भी दी जानी चाहिए। फिर भी ऐसा लगता रहा है कि जो-जो कार्य आश्रममे हो रहे हैं उनको नुकसान पहुँचाकर वाचन वगैरामे समय न लगाया जाये। शिक्षक वैतनिक तो रखे नही जाते। और जबतक वर्तमान शिक्षा देनेवाले ज्यादा शिक्षकोंको आश्रम अपनी तरफ खींच न सके, तबतक जितने है उन्हीसे काम चलाया जाता है। स्कूलों और कालेजोमें पढ़े हुए जो लोग आश्रममें हैं, वे श्रमके साथ शिक्षाका समन्वय करनेकी कलामें पूरी तरह दक्ष नही हैं। हम सबके लिए यह नया प्रयोग है। मगर अनुभवसे कामकी समझ बढ़ती जा रही है और जैसे-जैसे व्यवस्था-शक्ति बढ़ती जायेगी वैसे-वैसे जो लोग साधारण शिक्षा पाये हुए हैं उन्हे इस बातकी सूझ अधिकाधिक होती जायेगी कि वे अपना ज्ञान दूसरोंको कैसे सिखायें।

स्वदेशी

स्वदेशीको आश्रम सार्वभौम धर्म मानता है। हर मनुष्यका पहला फर्ज अपने पड़ोसियोके प्रति है। इसमे परदेशीके प्रति द्वेष नही है, और स्वदेशीके लिए पक्षपात नही है। शरीरधारीकी सेवा करनेकी शक्तिकी मर्यादा होती है। वह अपने पड़ोसियोंके प्रति भी मुश्किलसे अपना धर्म पूरा कर पाता है। अगर पड़ोसीके प्रति सब कोई अपना धर्म ठीक-ठीक पाल सके, तो दुनियामे मददके अभावमें कोई भी दुखी न हो। इसलिए यह कहा जा सकता है कि मनुष्य पडोसीकी सेवा करके सारी दुनियाकी सेवा करता है। असलमें देखा जाये तो इस स्वदेशी-धर्ममे अपने-परायेका भेद ही नही है। पड़ोसीके प्रति धर्म-पालन करनेका अर्थ है जगत्के प्रति धर्म-पालन। और किसी तरहसे दुनियाकी सेवा हो ही नहीं सकती। जिसकी दृष्टिमें सारा जगत ही कुटुम्ब है, उसमे अपनी जगह पर रह कर भी सबकी सेवा करनेकी शक्ति होनी चाहिए; और वह तो पड़ोसीकी सेवाके जरिये ही हो सकती है। टॉल्स्टॉय तो इससे भी आगे बढ़कर कहते हैं कि अभी तो हम एक-दूसरेके कन्धे पर चढे बैठे हैं।

हम दूसरेके कन्धेसे उतर जायें तो बस है। यह कथन उसी बातको दूसरी तरह पेश करता है। अपनी सेवा किये बिना कोई दूसरेकी सेवा करता ही नहीं। और दूसरेकी सेवा किये बिना जो अपनी ही सेवा करनेके इरादेसे कोई काम शुरू करता है, वह अपनी और संसारकी हानि करता है। कारण स्पष्ट है। हम सभी जीव एक-दूसरेके साथ इतने ज्यादा ओतप्रोत हैं कि जो-कुछ एक आदमी करता है उसका अच्छा-बुरा असर सारे जगत पर पड़ता ही है। हमारी अतिमर्यादित दृष्टिके कारण भले ही हम न देख सकें, भले ही एक व्यक्तिके कामका असर इस संसार-सागरमें नहींके बराबर हो, मगर वह होता जरूर है। अपनी जिम्मेदारी समझनेके लिए इतना ज्ञान हमारे लिए काफी होना चाहिए।

इसलिए शुद्ध स्वदेशी-धर्म विदेशीके विरुद्ध नहीं है। फिर भी स्वदेशी सर्वदेशी नहीं है, इसलिए कि ऐसा होना असम्भव है। 'सबका' करने जायें तो वह होता नहीं, और 'अपना' भी चला जाता है। 'अपना' करते रहनेमें 'सबका' होता ही रहता है। 'सबका' करनेका यही एक उपाय है। 'मेरे लिए सब बराबर हैं' यह कहनेका अधिकार उसीको है, जिसने पड़ोसीके प्रति अपना धर्म पाला हो। 'मेरे लिए सब बराबर हैं', यह कह कर जो पड़ोसीका तिरस्कार करता है और अपने शौक पूरे करता है, वह स्वेच्छाचारी है, स्वच्छन्द है। वह केवल अपने ही लिए जीता है।

हम कुछ साधु पुरुषोंको अपना स्थान छोड़कर सारी दुनियाका भ्रमण करते और 'परदेशियों' की सेवा करते देखते हैं। वे बुरा करते हैं या स्वदेशी-धर्मकी दृष्टिसे अपवाद हैं सो बात नहीं। उनकी शक्ति उनके हाथसे ज्यादा सेवा कराती है। किसी मनुष्यके लिए उसके पास रहनेवाला पड़ोसी ही होता है। दूसरेकी मर्यादा अपने गाँव तक होती है। तीसरेकी अपने आसपासके दस गाँवों तक जा सकती है। इस तरह सब अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार काम करेंगे। साधारण मनुष्यकी पहुँच साधारण ही होती है। व्याख्या ऐसी ही रची जानी चाहिए जो साधारण मनुष्यपर लागू की जा सके। इस व्याख्याके भावार्थमें वे सब बातें समा सकती हैं, जो उसके शब्दार्थके विपरीत न हों। साधारण मनुष्य यह नहीं मानता कि वह स्वदेशीका पालन करके किसीकी सेवा करता है। अपने पड़ोसीके साथ वह व्यापार इसलिए करता है कि उसमें उसे सुविधा रहती है। यह मानना ठीक ही है। परन्तु इस सुविधामें कभी-कभी असुविधा भी देखी जाती है। जो स्वदेशीको धर्म समझता है, वह वैसे समयमें भी उसका पालन करेगा। आजकल बहुतोंको अपने देशमें ही बनी हुई चीजोंसे सन्तोष नहीं होता। कई तरहके प्रलोभन दिखाई देते हैं, इसलिए बहुत लोग विदेशी चीजें लेनेमें अपनी सुविधा देखते हैं। ऐसे समय यह बताना पड़ता है कि स्वदेशी केवल सुविधा ही नहीं, धर्म भी है। आज हिन्दुस्तानमें ऐसी ही स्थिति है इसीलिए यहाँ स्वदेशी-धर्म जाननेकी जरूरत पैदा हुई है। स्वदेशीका हिंसक अर्थ, दूसरे देशोंकी जनताके प्रति द्वेषका अर्थ तो सर्वथा त्याज्य ही है। किसीका बुरा करना या चाहना तो धर्म हो ही नहीं सकता।

इस स्वदेशी-धर्मका पालन आश्रमके व्रतोमे से एक व्रत है।

इस स्वदेशीका साकार रूप मैंने खादीको माना है, क्योंकि इसे छोड़कर हिन्दुस्तानने घोर पाप किया है और अपना स्वाभाविक धर्म छोड दिया है। खादीकी आवश्यकताके बारेमे अन्य स्थानो और अन्य प्रसंगो पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है। यहाँ तो इतना ही बतलानेके लिए उसका उल्लेख किया है कि उसका आश्रमके साथ कैसे सम्बन्ध हुआ। लेकिन इसका उल्लेख करनेमे खादी-कार्यके आरम्भका इतिहास आ जाता है।

सन् १९०८ मे मुझे खादी-धर्म और चरखा-धर्म सूझा।[1] उस समय मुझे खयाल भी न था कि चरखा कैसा होता है। मै चरखे और करघेका फर्क भी नही जानता था। हिन्दुस्तानके गाँवोकी हालतका मुझे थोडा ही ज्ञान था। मगर यह मै साफ देख सका था कि हिन्दुस्तानके गाँवोके कंगाल होनेका मुख्य कारण चरखेका नाश है। मैंने मनमे गाँठ बाँध ली थी कि हिन्दुस्तान जाऊँगा तब चरखेका प्रचार करूँगा।

१९१५ मे जब मै देशमें आया तब मनमे यह विचार भरा ही था। आश्रमकी स्थापनाके साथ ही स्वदेशी-व्रत शुरू हुआ। पर हममें कोई यह न जानता था कि सूत कैसे कातते है। इसलिए हाथ-करघा लगाकर ही हमने सन्तोष माना। सबके दिलोंसे बारीक कपड़ेका मोह मिटा नही था। स्त्रियोकी साडी बुनने लायक स्वदेशी सूत तो मिलता ही न था। इसलिए बहुत थोडे समय तक विदेशी सूतसे बुनाईका काम किया। बादमें कुछ बारीक सूत देशी मिलका लिया और विदेशीको विदा दी।

आश्रममे करघा बैठानेमे भी मुश्किल तो काफी थी। हममे से किसीको बुननेका ज्ञान नही था। मित्रोके जरिये करघा जुटाया और सिखानेवाला जुलाहा खोजा और बुनाई सीखनेका भार मगनलाल पर लादा।

जैसे-जैसे आश्रममें मै प्रयोग करता गया, वैसे-वैसे देशमे स्वदेशीका प्रचार भी करता गया। लेकिन जबतक सूत न कते तबतक सारी बात बिना दूल्हेकी बरात जैसी ही लगी। अन्तमे चरखा मिला, कातनेवाली मिली और चरखेका आश्रममे प्रवेश हुआ। यह हकीकत 'सत्य प्रयोगो'[2] मे आ गई है।

कोई यह न समझे कि चरखा मिलते ही सब कठिनाइयाँ दूर हो गई। कठिनाइयोका सूक्ष्म ज्ञान हुआ, और यह भी कहा जा सकता है कि इससे छिपी हुई कठिनाइयाँ सामने आईं यानी वे बढी।

देशमे दौरा करते हुए मैंने देखा कि चरखेकी बात करते ही लोग उसे अपना लें सो बात नही। यह मालूम था कि उससे कमाई थोडी ही होती है, मगर यह पता न था कि कितनी कम होगी। उसमे से एकसार और बारीक सूत तुरन्त नही निकलता। बहुत-सी स्त्रियाँ तो मोटा-पतला ही निकालेगी। फिर यह भी देखा कि यह सूत कच्चा होता है। चाहे जैसी रुईसे काम नही चलता। उसे पीजना पडता

१. गांधीजीने इस विषयपर हिन्द स्वराज्य में लिखा था; देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ५७-६०।

२. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ३६६-८।

है, पूनियाँ बनानी पड़ती हैं। मगर पीजनेमे भी दारोमदार इस बात पर है कि रुई कैसी स्थितिमे मिली है। चरखे भी चाहे जैसे हो तो काम नही चलता। इसलिए चरखेका पुनरुद्धार होना चाहिए, यानी एक बड़ी योजना बनानी चाहिए। केवल धन काम नही देगा। एक दो आदमियोंके बसका भी यह काम नही। सैकडो सेवक मिले तभी यह काम बने। सेवक भी मामूली दर्जेके नही चाहिए। वे ऐसे होने चाहिए जो नया शास्त्र सीखनेको तैयार हो, थोडी कमाईमे सन्तोष करे और देहातका जीवन बितायें। इतना भी काफी नही है। देहातियोमे आलस्य, निराशा और अविश्वास छा गया है। ये दुर्गुण न मिटे तो चरखा गाँवोमे दाखिल नही हो सकता। इसलिए चरखेको सफल बनानेके लिए सेवको और सेविकाओ दोनोकी पूरी शक्तिकी जरूरत है। और इसके साथ ही अटूट धीरज ओर अटल श्रद्धा न हो तो चरखा नही चल सकता।

कहना चाहिए कि इस श्रद्धामे पहले तो मै अकेला ही था। मगर श्रद्धाके सिवा मेरे पास दूसरी कोई सम्पत्ति नही थी। मैंने देखा कि जहाँ श्रद्धा होती है वहाँ दूसरी सामग्री अपने-आप आ जाती है। श्रद्धाके अनुसार ही बुद्धि सूझती है, श्रम करना आता है। यह तो साफ ही था कि तमाम प्रयोग आश्रममे ओर आश्रमके द्वारा ही होगे। आश्रमकी हस्ती ही इसलिए थी। मैंने देखा कि आश्रमकी मुख्य बाहरी प्रवृत्ति चरखा ही हो सकता था। चरखेके शास्त्रकी रचना करनेका दूसरा उपाय ही नही था। इसलिए अन्तमे कातनेकी क्रियाको महायज्ञ माना गया। अत. जो आश्रममे प्रवेश करे उसे कातना सीखकर यह यज्ञ तो करना ही पड़ता था।

लेकिन यज्ञका अर्थ है काम करनेमे कुशलता प्राप्त करना।[1] जैसे-तैसे कात लेनेका नाम यज्ञ नही है। इसलिए पहले तो कमसे-कम आधे घटे तक कातनेका निश्चय हुआ। लेकिन जल्दी ही मालूम हुआ कि चरखा बिगड़ जाये तो आध घटेमे तीन तार भी नहीं निकल सकते। इसलिए यह तय हुआ कि कमसे-कम १६० तार तो कातना ही चाहिए। एक तार यानी ४ फुट सूत। लेकिन सूत मोटा-पतला हो तो किस कामका? इसलिए सूतकी समानता, मजबूती वगैरा पर जोर दिया जाने लगा। और अब तो इस हद तक पहुँच गये हैं कि २० नम्बरसे कमका सूत हो तो उसकी यज्ञमे गिनती नही हो सकती।

मगर अच्छेसे-अच्छे सूतका उपयोग कौन करे? मै तो पहलेसे ही समझता था कि इस सूतका उपयोग यज्ञके लिए कातनेवाले तो कर ही नही सकते। मगर यह बात मै सबके गले नही उतार सका। कोई सूतकी मजदूरी खुद चुका दे और सूत खरीद ले तो क्या हर्ज है? ऐसा करनेसे अच्छेसे-अच्छा सूत कतेगा, इस लालचसे मैंने मनको यो समझा लिया कि मजदूरी चुकाकर जो अपना काता हुआ सूत खरीद ले उसने भी यज्ञ किया, ऐसा माना जायेगा। इन पक्तियोको लिखते समय भी यह दोष बिल्कुल दूर नही हो सका है। जो दोष शुरूमे ही नही मिटा दिया जाता वह घर कर लेता है। और फिर जैसे घर किये हुए रोगको दूर करनेमें कठिनाई होती है, वैसी ही ऐसे दोषको निकालनेमें भी होती है।

१. भगवद्गीता २, ५०।

यह कहा जा सकता है कि इस यज्ञके फलस्वरूप ही चरखेकी प्रवृत्ति लगभग हिन्दुस्तान-भरमे फैल गई है। मगर यह नही कहा जा सकता कि उसने गाँव-गाँवमें घर कर लिया है। इसका कारण मै तो अच्छी तरह देख सकता हूँ। मेरी श्रद्धाके साथ ज्ञान बिल्कुल नही था। भूले करते-करते, ठोकरें खाते-खाते थोड़ा-सा ज्ञान मिला। साथी भी मिले है मगर यह नही कहा जा सकता कि इस महान कार्यके लिए वे काफी है। सैकड़ों सेवक तैयार हुए है, मगर यह भी नही कहा जा सकता कि उनमे अटूट श्रद्धा या ज्ञान है। जहाँ मूल ही अभी कमजोर है, वहाँ पूरे फलकी आशा नही रखी जा सकती।

लेकिन इसमे मेरे खयालसे किसीका दोष नही है। यह नया काम है, महासागर जैसा विशाल है और कठिनाइयोका तो इसमें पार ही नही है। इसलिए जितना हुआ उससे सन्तोष तो नही माना जा सकता; फिर भी वह श्रद्धा कायम रखनेके लिए तो काफी है ही। सफलताकी आशा पूरी तरह रखी जा सकती है। इतना ज्ञान मिला है और इतने श्रद्धालु सेवक-सेविकाएँ पैदा हो गई है कि यह काम अब नष्ट तो नही होगा, ऐसा जरूर कहा जा सकता है।

इस एक प्रवृत्तिके साथ दूसरे छोटे काम आश्रममे और देशमे इतने ज्यादा पैदा हुए है कि उनका इतिहास लिखूं, तो इस इतिहासकी सीमा भंग हो जाये। मैंने यह नही सोचा है कि आश्रमका इतिहास देते हुए उसके सब विभागोका भी इतिहास देनेका साहस करूँ। लेकिन थोड़े मे यहाँ बता दूं कि उसके सिलसिलेमे कपासकी खेती होती है, बढ़ईका काम चलता है, रंगाईका काम होता है और ओटाईसे लेकर बुनाई तकके औजार बनते है — उनमें सुधार हुए है और आज भी हो रहे है। चरखेका प्रकार सुधारनेमे जो प्रगति हुई है, वह तो मुझे एक काव्य जैसी लगती है।

अस्पृश्यता

सत्यका आग्रह रखनेके लिए और उसकी खातिर मरना पड़े तो मरनेकी कला सीखनेके लिए जो आश्रम स्थापित हुआ, उसमे अस्पृश्यताको कलंक मानते हुए भी उसे दूर करनेकी रचनात्मक प्रवृत्ति न की जाये, तो फिर वह सत्याग्रह-आश्रम कैसे कहला सकता है? अस्पृश्यताको पाप मानना मै और मेरे साथी लोग दक्षिण आफ्रिका मे ही सीख गये थे। इसलिए यहाँ आश्रम स्थापित होते ही अस्पृश्यताको मिटाना आश्रमका एक बड़ा कार्य हो गया।

आश्रम स्थापित होनेके बाद एक महीनेके भीतर ही दूदाभाईने कुटुम्ब-सहित आश्रममें रहनेकी माँग की। मैं नही मानता था कि इतनी जल्दी आश्रमकी परीक्षा होगी। दूदाभाईको भरती करनेकी सिफारिश श्री अमृतलाल ठक्करने की थी। उनकी सिफारिशवाले परिवारका मुझे स्वागत करना ही चाहिए। इसलिए मैंने उसे आनेका पत्र लिख दिया। इस कुटुम्बके आते ही आश्रममें खलबली मच गई।[1] पहले तो

१. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ३०१-३ भी।

मैंने देखा कि आश्रममें जो परिवार रहते थे उन्हीमे कही-न-कही अछूतोके साथ परहेज और घृणा थी। मेरी ही पत्नीमे, हालाँकि इस बारेमे उसे दक्षिण आफ्रिकामे बहुत कष्ट सहना पड़ा था, छुआछूतकी भावना बाकी थी। मगनलाल जैसे बहादुर आदमीने देखा कि उसमे भी गहराईमे यह दोष रह गया है। उसकी पत्नीमें तो और भी ज्यादा था। यहाँ तक नौबत आई कि मेरी पत्नी या तो आश्रम छोड़ दे या आश्रमके कड़े नियमका पालन करे। छुआछूत रखनेवाले सम्बन्धियोने उसे समझाया कि पतिके पीछे चलनेवाली स्त्रीको पाप लगता ही नही, पर न चलनेसे जरूर पाप लगता है। इस मान्यताने पत्नी पर असर किया और वह शान्त हो गई। मै खुद यह नही मानता कि पत्नीका पतिके पापमे साथ देना किसी भी तरह धर्म है। मगर यहाँ मैंने पत्नीके सहयोगका स्वागत किया, क्योकि मै अछूतपन मिटाना पुण्यका काम समझता था। अस्पृश्यता-निवारण आश्रममे रहनेकी एक अनिवार्य शर्त थी। इसलिए अगर मेरी पत्नी इस शर्तका पालन न करती, तो उसे आश्रमके बाहर रहना ही पड़ता। यह मेरे लिए दुखद तो था ही। जिसने आज तक मेरे सुख-दुःखमे बड़ी-बड़ी तकलीफें उठाकर मेरा साथ दिया था, उसका वियोग सहन करना भारी कष्ट था। मगर धर्म-पालनके लिए कैसे भी संकट आयें, उन्हे सहन तो करना ही था। इसलिए स्वतन्त्र रूपमे नही, परन्तु पत्नीधर्मके नाते पत्नीने जब छुआछूतको छोड़ दिया, तो इसे स्वीकार करनेमे मुझे संकोच नही हुआ।

मगनलालकी परीक्षा मुझसे कड़ी थी। उन्होंने तो क्षणभरमे आश्रम छोड़नेकी हिम्मत करनेका विचार कर लिया। सामान बाँधकर वे मुझसे इजाजत लेने आये। मै इजाजत कैसे देता? मैंने मगनलालको सावधान किया। आश्रम खड़ा करनेमें जितना मेरा हाथ था उतना ही उसका था। अपना रचा हुआ वह खुद ही कैसे छोड़ सकता था? छोड़नेका अर्थ आश्रमका नाश करना ही था। मगनलाल यह नही चाहता था। अपनी बनाई चीजको छोड़नेकी इजाजत मुझसे तो लेनी ही क्या थी? यो उससे आश्रम छोड़ा ही नही जा सकता था। इतना कहना मगनलालके लिए बहुत हो गया। यह लिखते समय मुझे ऐसा लगता है कि उसने तो मेरा रास्ता साफ करनेके खयालसे ही यह कदम उठाना ठीक समझा होगा। सबका वियोग सहन हो सकता था, मगर मगनलालका वियोग सहन करना मेरे लिए कठिन था। इसलिए मैंने मगनलालको कुटुम्बसहित मद्रास जानेकी बात कही। वहाँ जाकर दोनों शान्त हों और बुनाईकी कलाका ज्यादा ज्ञान प्राप्त करें। आश्रममे जो मददगार आया था उसने एक हदसे आगे बुनाई सिखानेसे इनकार कर दिया। उसे यह निरर्थक डर लगा कि ऐसा करनेसे उसका धन्धा खत्म हो जायेगा। मद्रासमे स्व० त्यागराज चेट्टीने अपने हाथ-बुनाईके कारखानेमे मणिलाल गांधीको काम सीखनेके लिए रख लिया था। मगर मद्रासके कारीगरोंको भी अहमदाबादके कारीगरोंकी ही तरह डर था। इसलिए कारीगर दिल खोलकर अपनी कारीगरी नही सिखाते थे। मगनलालमे वशीकरण-शक्ति ज्यादा थी, उसका ज्ञान भी अधिक था। मै मानता था कि वह देख-देखकर भी बहुत सीख लेगा। इसके सिवा, दक्षिणके साथ सीधा सम्बन्ध भी जोड़ना ही था। अतः

मगनलालको मद्रास भेजनेके लिए उसके धर्म-संकटका वहाना मुझे मिल गया और मैंने उसे पकड़ लिया। मगनलालको और उसकी पत्नीको मेरी बात पसन्द आई। वे मद्रास गये और वहाँ कोई छः मास रहे। दोनोंने बुननेकी कला अच्छी तरह सीख ली और गहरा विचार करके अछूतपनका मैल पूरी तरह धो डाला। दोनो अपनेमें घुसी हुई कमजोरीको देख सके। वे मद्रासमें ही अछूतोसे आजादीके साथ मिलने लगे; दूसरे सम्वन्ध भी उन्होंने जोड़े और काम पूरा होने पर वे दोनों और मणिलाल आश्रम लौट आये।

इस तरह आश्रमवासियोंमे पैदा हुई खलवली शान्त हुई। वाहर भी कम खलबली नही मची थी। जिन्होंने आश्रमको मदद देनेकी प्रतिज्ञा की थी, उनमें से मुख्य सहायकने तुरन्त मदद वन्द कर दी। कुएँका पानी न मिलने तकका भय खड़ा हो गया। मगर उसमें से हम विना वाधाके पार हो गये। और रुपये-पैसेकी मददके वारेमें 'नरसिंह मेहताकी हुंडी' स्वीकारने-जैसी घटनाएँ हुई। अनपेक्षित स्थानसे अचानक तेरह हजारके नोट आ पड़े। इस तरह यह माना जा सकता है कि आश्रमवासियोंने दूदाभाईको सव संकट सहकर भी निभा लेनेकी जो प्रतिज्ञा की थी, वह भारी सकट उठाये विना ही पूरी हुई। इस तरह अछूतपन मिटानेकी परीक्षामें आश्रम उत्तीर्ण हुआ। अव अछूत परिवार आजादीसे आते-जाते है और आश्रममे रहते है। दूदाभाईकी लड़की लक्ष्मी तो ऐसी हो गई है, जैसे परिवारकी ही लड़की हो।

अछूतोसे सम्वन्धित तीन धन्धे आश्रममे चलते है और उनमे सुधार हो रहे है। आश्रममे रहनेवाले सभीको भंगीका काम तो करना ही पड़ता है। दरअसल उसे धन्धा नही माना जाता, वल्कि वह तो हरएकका फर्ज समझा जाता है। इसलिए पाखाना-सफाई सव मिलकर कर लेते है। वह डॉ० पूरके वताये हुए तरीके पर होती है। मैला आश्रमकी जमीनमे छिछला गाड़ा जाता है जिससे थोड़े ही दिनमें उसकी खाद वन जाती है। डॉ० पूरका कहना है कि १२ इंच तक गहरी जमीन सजीव होती है। उसमें वेशुमार जीव रहते है। उनका काम मैली जमीनको साफ करना है। वहाँ तक हवा और सूर्यकी किरणे पहुँचती है। इसलिए उतनी गहराईमे मैला गाड़नेसे वह मिट्टीमे जल्दी मिल जाता है।

पाखाने भी इस ढगसे बनाये गये है कि उनमे वदवू न आये और सफाई करने मे जरा भी कठिनाई न हो। उपयोग करनेके बाद हर आदमी उसमें काफी सूखी मिट्टी डालता है—इतनी कि जव देखो तव ऊपरकी सतह सूखी ही नजर आये।

दूसरा धन्धा वुनाईका है। मोटी खादी गुजरातमें तो अछूत जुलाहे ही वुनते थे। उनका धन्धा लगभग नष्ट हो गया था और वहुतेरे भंगीका काम करने लग गये थे। अव उस धन्धेका जीर्णोद्धार हुआ है।

तीसरा चमारका धन्धा है। यह भी आश्रममे जारी हो गया है। इसके वारेमें ज्यादा बातें 'गोसेवा' के प्रकरणमे आयेगी।

आश्रममें उपजातियोंके वंधन नही माने जाते। एक-दूसरेके साथ खानेमें छुआछूत नही रखी जाती, इसलिए आश्रममें सभी एक पंगतमें खाने बैठते है। इस

व्यवहारका प्रचार आश्रमके वाहर नही किया जाता। अस्पृश्यता मिटानेके लिए इस प्रकारकी जरूरत नही मानी गई है। अस्पृश्यता मिटानेका अर्थ यह है कि अछूतोके सार्वजनिक सस्थाओंमे जाने पर जो रुकावटे लगाई जाती हैं उन्हें दूर किया जाये, और उन्हे स्पर्श करनेमे जो छुआछूत मानी जाती है उसे मिटाया जाये। ये पावन्दियाँ कानूनसे भी हटाई जा सकती हैं। रोटी-वेटीका व्यवहार इससे भिन्न सुधार है। इसमें कानून या समाज दखल नही दे सकता। इस मान्यताके आधार पर आश्रमवासी अपने लिए सवके साथ खाद्य-पदार्थ खानेकी स्वतन्त्रता तो रखते हैं, मगर ऐसा करनेका प्रचार नही करते।

आश्रमकी तरफसे अछूतोके लिए पाठशालाएँ खोलने और कुएँ खुदवानेकी कोशिश भी हो रही है। इसमे आश्रमका खास काम रुपया जमा करना है। अस्पृश्यताको लेकर आश्रमकी सच्ची प्रवृत्ति तो आश्रमवासीका अपना आचरण सुधारनेकी है। आश्रममें ऊँच-नीचपनको कोई स्थान ही नही है।

इतने पर भी आश्रम वर्णाश्रमको हिन्दू-धर्मका अंग मानता है। मगर वर्णाश्रमका सच्चा अर्थ सामान्य अर्थसे भिन्न मानता है। चार वर्ण और चार आश्रम सिर्फ हिन्दूधर्मकी ही व्यवस्था हो सो वात नही है, वल्कि यह चीज मनुष्यमात्रमें है। यह सार्वजनिक नियम है। उसका भंग करनेसे दुनियामे कई आपत्तियाँ पैदा हुई है। जैसे वर्ण चार है वैसे ही आश्रम भी चार है — ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। ब्रह्मचर्य आश्रमका अर्थ है विद्याभ्यास-काल। इस समयमें विद्यार्थी — स्त्री या पुरुष — ब्रह्मचर्यका पालन करे इतना ही काफी नही, वल्कि इस कालमे उसपर विद्या-सम्पादनके सिवा दूसरा कोई भार नही होना चाहिए। यह अवस्था कमसे-कम २५ वर्ष तककी मानी गई है। उसके वाद ब्रह्मचारीको गृहस्थ-जीवनमें प्रवेश करना हो तो वह कर सकता है। ९९·७५ प्रतिशत लोग तो इस जीवनमे प्रवेश करेंगे ही। मगर यह जीवन ५० वर्षकी उम्र तक ही चलना चाहिए। इस कालमे गृहस्थ अपनी विषय-तृप्ति करे — धन कमाये, धन्धा करे, सन्तान पैदा करे। वाकीके २५ वर्ष पति-पत्नी अलग रहकर सिर्फ भलाईके काम करें, जनताकी सेवा करे, परिवारसे दूर रहकर सारे संसारको अपना परिवार माननेकी कोशिश करें। आखिरी २५ वर्ष दोनो संन्यासमे वितायें। इसमे कोई खास व्यवसायके वजाय दोनो अलग-अलग रहकर लोगोंमें धार्मिक जीवनका प्रचार करे, आदर्श जीवन विताकर लोगोको आदर्श सिखाएँ और स्वयं केवल लोगोकी दयापर गुजर करें। यह स्पष्ट मालूम होता है कि इस तरहका व्यवहार वहुत लोग करें तो समाजका जीवन वहुत ऊँचे दर्जेका हो जाये।

मगर इस वारेमे अलग-अलग राय हो सकती है कि आश्रमकी जो मर्यादा मैंने ऊपर वताई है वही आज भी होनी चाहिए या दूसरी। मुझे मालूम नही कि आश्रम-व्यवस्थाकी खोज हिन्दू धर्मके वाहर भी हुई है। आज तो यह कहा जा सकता है कि हिन्दूधर्ममें वह लगभग नष्ट हो गई है। ब्रह्मचर्य-आश्रम जैसी चीज तो कोई है ही नही, यद्यपि यह आश्रम तो जीवनका आधार है। दूसरे आश्रमोमे सन्यास-

आश्रम नामके लिए जरूर पाया जाता है, परन्तु संन्यासियोंमें बहुतसे तो सिर्फ वेषधारी रह गये है, बहुतसे ज्ञानहीन है, और कुछ, जिन्होने अच्छी विद्या प्राप्तकी है, ब्रह्मज्ञानी तो नही केवल धर्मान्ध है। इनमे कही-कही कोई चरित्रवान संन्यासी भी जरूर देखनेमे आते है। मगर संन्यासीके तेजवाले मुश्किलसे नजर आते है। सम्भव है ऐसे लोग छिपे हुए रहते हो। मगर यह तो स्वयसिद्ध है कि सन्यास-आश्रमका भी लोप हो रहा है। जिस समाजमे प्रौढ़ सन्यासी विचरते हो, उस समाजमें धर्मकी और अर्थकी कगाली नही होती, वह पराधीन नही होता। आजका हिन्दू समाज धर्महीन, तेजहीन, अर्थहीन और पराधीन है। इस बारेमे दूसरी राय मैंने नही सुनी। मेरी राय तो यहाँ तक जाती है कि सन्यास-आश्रम जीवित होता, तो दूसरे समीपके धर्मोंपर भी इन संन्यासियोका असर पड़े बिना न रहता। संन्यासी केवल हिन्दू-धर्मका ही नही होता, वह तो सभी धर्मोका होता है।

मगर ऐसे सन्यासी ब्रह्मचर्य-आश्रमके बिना पैदा ही नही हो सकते; वानप्रस्थ तो नामको भी नही है। बाकी रहा गृहस्थ-आश्रम। जो गृहस्थ-जीवन आश्रमके रूपमे नही रहा, वह तो सिर्फ मनमानी करनेका साधन बना हुआ है। उसमे मर्यादा नही रही। दूसरे आश्रमोकी ढालके बिना गृहस्थ-जीवन पशु-जीवन है। गृहस्थ-जीवनकी मर्यादा मनुष्य और पशुके बीचका एक बड़ा भेद है। वह भेद न रहे तो मेरी रायमे यह कहनेमें अतिशयोक्ति नही होगी कि गृहस्थ-जीवनमे पशु-जीवनके सिवा और कुछ नही रहेगा।

इस आश्रम-जीवनका पुनरुद्धार करनेका महान प्रयत्न आश्रममे जारी है। मुझे खुद यह प्रयत्न वैसा ही हास्यजनक लगता है, जैसे चीटा गुड़से भरे घड़ेको उठानेकी कोशिश करे। मगर कितना ही हास्यजनक लगे तो भी यह एक सत्यनिष्ठासे प्रेरित प्रयत्न है। और इसीलिए आश्रममे सभीको ब्रह्मचर्यका पालन करना पड़ता है; आश्रमवासियोको उसे मरते दम तक पालना है। इस दृष्टिसे आश्रममे रहनेवाले सभी लोगोंको आश्रमवासी नही माना जाता। जिसने उम्रभर ब्रह्मचर्यका पालन करनेका व्रत लिया है, वही आश्रमवासी माना जा सकता है। ऐसे तो थोडे ही है। बाकी सब आश्रम-विद्यार्थी माने जायेंगे। अगर यह प्रयत्न सफल हो तो शायद उसमें से आश्रम-व्यवस्था पैदा हो जाये। मेरा खयाल है कि इस प्रयत्नकी सफलताका अन्दाज लगानेके लिए आश्रमका सोलह वर्षका जीवन काफी नही है। मै नही जानता कि यह अन्दाजा कब लगाया जा सकेगा। इतना ही कह सकता हूँ कि सोलह वर्षकी कोशिशके बाद मुझे निराशा जरा भी नही है।

अगर आश्रम-व्यवस्था इस तरह बिगड़ गई है, तो वर्ण-व्यवस्थाकी हालत भी इससे कुछ कम खराब नही है। मूलतः चार वर्ण थे। अब अनगिनत है अथवा एक ही है। यदि जातियोके बराबर वर्ण मानें तो जातियोका पार ही नहीं है। और यदि यह मानें कि जातियोंका वर्णसे कोई सम्बन्ध ही नही है (मेरी रायसे यही मानना भी चाहिए), तो एक ही वर्ण रहा है और वह है शूद्र। यहाँ शूद्र शब्द दोषसूचक नही है, लेकिन वस्तुस्थितिका सूचक है। जो वर्ग नौकरी करता है वह पराधीन है

यानी शूद्र है। आज तो सारा हिन्दुस्तान पराधीन है, इसलिए वह शूद्र है। किसान अपनी जमीनका मालिक नही, व्यापारी अपने व्यापारका मालिक नही। शास्त्रोमें ब्राह्मणो और क्षत्रियोके जो गुण बतलाये गये है, वैसे गुणवाले ब्राह्मण और क्षत्रिय भाग्यसे ही देखनेको मिलते है।

जब वर्ण-व्यवस्थाकी खोज हुई थी, तब मेरे खयालमे समाजमे ऊँच-नीचकी भावना नही थी। इस संसारमे न तो कोई ऊँचा है, न नीचा, इसलिए जो अपनेको ऊँचा मानता है वह कभी ऊँचा नही हो सकता। जो अपनेको नीचा मानता है वह सिर्फ अज्ञानके कारण ही मानता है। उसे नीचा होनेका पाठ उसके सहारे ऊँचापन भोगनेवालोने सिखाया है। ब्राह्मणमे ज्ञान हो तो ज्ञानहीन लोग उसका आदर करेगे ही। पर जो ब्राह्मण उस आदरके कारण अभिमानी बनेगा या अपनेको ऊँचा मानेगा, वह उसी क्षणसे ब्राह्मण नही रहेगा। गुणकी पूजा सदा ही होगी, मगर गुणवान आदमी यदि अपनेको गुणोके कारण ऊँचा मानेगा तुरन्त उसके गुण निकम्मे हो जाते हैं। जिसमे कोई भी गुण या शक्ति है, वह उसका रक्षक है और उसे समाजके लिए उसका उपयोग करना चाहिए। किसी भी व्यक्तिको अपने लिए जीनेका अधिकार नही है। कोई अपनी शक्तिका उपयोग अपने ही लिए नही कर सकता। सब अपनी शक्तिका उपयोग समाजके लिए पूरी तरह कर सकते है।

इस कल्पनासे वर्ण-व्यवस्थाकी स्थापना हुई हो या न हुई हो, आज तो कोई भी अपनेको ऊँचा कहलाकर जीवन-निर्वाह नही कर सकता। उसका यह दावा समाज अपनी इच्छासे नही मानेगा। यह हो सकता है कि समाज मजबूरीसे अपना सिर झुका ले। दुनियामे जो जागृति हुई है उसमे स्वेच्छाचार भले बहुत आ गया हो, मगर लोकमत ऊँच-नीचका भेद सहनेको आज तैयार नही है। दिन-दिन इस भेदके प्रति इनकार बढ़ता जा रहा है। यह ज्ञान फैलता जाता है कि आत्माके रूपमे सभी बराबर है। यह भावना भी ऊँच-नीचका भेद मिटाती है कि हम सब एक ही ईश्वरके बनाये हुए है। इसका यह मतलब नही कि यह भेद नही है या नही होना चाहिए अर्थात् सबकी शक्ति आज बराबर है या होनी चाहिए। सबकी शक्ति एक-सी नही है, सबकी जायदाद बराबर नही, सबको अवसर समान नही है; फिर भी सब समान है, इसीका नाम तो भ्रातृभाव है। भाई-बहन सब भिन्न प्रकृतिके, भिन्न शक्तिवाले, भिन्न उम्रके होते हुए भी सब समान है। यही बात जीवमात्रके बारेमे सच है।

इस तरह अगर वर्ण-व्यवस्था परमार्थके लिए हो, धार्मिक हो, तो उसमे ऊँच-नीचके लिए गुंजाइश ही नही होती।

इस तरहके एक-दूसरेको समान समझनेवाले चार विभाग वर्ण-व्यवस्थामे है और वे जन्मके आधार पर है। कर्मसे वे बदल भले ही जाये, पर वर्ण-व्यवस्थाका मूल आधार जन्म न हो, तो ऐसा ही लगता है कि फिर उसका कोई अर्थ ही नही रह जाता।

वर्ण-व्यवस्थामे धर्म और अर्थका संग्रह है। उसमे पिछले जन्मका और माता-पिताका असर मान लिया गया है। सभी एक-सी शक्ति और एक-सी वृत्ति लेकर

पैदा नहीं होते। यह भी नहीं हो सकता कि असंख्य बन्धोंकी शक्तिका माता-पिता या सरकार अन्दाजा लगा सके। लेकिन अगर इस मान्यतासे बच्चेको अपने धन्धेके लिए तैयार किया जाये कि बच्चेमें उसके माता-पिताका, आसपासके वायुमण्डलका और पूर्व संस्कारोंका असर होगा ही, तो किसी तरहकी परेशानी न हो। इससे निरर्थक प्रयोगोंमें लगनेवाला समय बच जाये, नीति-नाशक होड़ न हो, समाजमें सन्तोष रहे और आजीविकाके लिए कशमकश न हो।

इस व्यवस्थाके गर्भमें ही ऊँच-नीचपनका भेद मिट जाता है। अगर मोचीसे बढ़ई बड़ा और बढ़ईसे वकील-डाक्टर और भी बड़े माने जायें, तो अपनी मरजीसे कोई मोची या बढ़ई न रहे, बल्कि सब वकील-डाक्टर बननेकी कोशिश करें। और ऐसा करनेका उन्हें अधिकार होना चाहिए, वह बात प्रशंसनीय समझी जानी चाहिए। यानी वर्ण-व्यवस्थाको बुराई मानकर उसके नाशकी इच्छा और कोशिश करना ठीक है।

सब अपने-अपने पैतृक धन्धेकी शिक्षा ग्रहण करें, ऐसा कहनेमें यह मान्यता भी आ जाती है या होनी चाहिए कि सब धन्धोंका मूल्य इतना ही हो जिसमें आजीविका चल जाये। अगर मोचीसे बढ़ईकी दैनिक मजदूरी ज्यादा हो और दोनोंसे वकील और डाक्टरकी बहुत ही अधिक हो, तो फिर सभी वकील-डाक्टर बननेकी कोशिश करेंगे। आज ऐसा ही होता है। उसमें द्वेष बढ़ा है और वकील-डाक्टरोंकी संख्या जितनी चाहिए उससे ज्यादा हो गई है। समाजको जैसे बढ़ई और मोची वगैराकी जरूरत है, वैसे ही वकील-डाक्टरकी जरूरत भी भले ही हो। यहाँ ये चार धन्धे उदाहरणके लिए और एक-दूसरेके साथ तुलना करनेकी दृष्टिसे ही लिये गये हैं। कौन-से धन्धोंकी समाजको ज्यादा जरूरत है या बिल्कुल जरूरत नहीं है, यह विचार यहाँ अप्रासंगिक होगा।

लेकिन वर्ण-व्यवस्थाको माननेके साथ ही यह भी मान लेना चाहिए कि विद्या कोई धन्धा नहीं है और रुपया जमा करनेके लिए उसका उपयोग नहीं होना चाहिए। इसलिए वकील या डाक्टरके कामको जिस हद तक धन्धा माना जाये, उस हद तक उसमेंसे भी उतना ही लिया जाना चाहिए जितना आजीविकाके लिए पर्याप्त हो। पहले ऐसा ही था। देहाती वैद्य बढ़ईसे ज्यादा नहीं कमाते थे। उन्हें भी जीविकाके लायक ही मिलता था। मतलब यह कि सब धन्धोंकी कीमत बराबर और जीविकाके लिए पर्याप्त-भर होनी चाहिए। वर्णोंकी विशेषता उनकी संख्याका निश्चय करनेमें नहीं है; उनकी विशेषता मनुष्यके कर्तव्यका निश्चय करनेमें है। वर्णोंकी संख्या भले एक हो या अनेक, शास्त्रकारने तो चार वर्ण जरूरी मानकर बताये हैं। सबको बराबरीका दर्जा देनेके बाद उन्हें चार मानें या उनकी संख्या बिल्कुल उड़ा दी जाये, उससे बहुत फर्क नहीं पड़ता।

इस अर्थको सामने रखकर आश्रममें वर्णोंका पुनरुद्धार करनेका प्रयत्न चल रहा है, भले वह कोशिश समुद्रकी लहरोंको रोकने जैसी हो। दो बुनियादी बातोंका उल्लेख मैंने कर दिया है: ऊँच-नीचका भेद मिटाना और सबको जीविका कमानेका

अधिकार देकर सबकी कमाई एक-सी रखना। यह ध्येय पूरा करनेमें जितनी सफलता मिलेगी उतना ही समाजको लाभ ही होगा।

कोई कहेगा कि मैं इस स्पष्ट हानिको कैसे भूल जाता हूँ कि इस व्यवस्थासे विद्योपार्जन करनेकी उमंग मन्द पड जायेगी। विद्याकी उमग आज जिस कारणसे होती है वह उसे कलंकित करती है, और उस हद तक वह मन्द पड़ जाये तो उसमें समाजका भला ही है। विद्या मुक्तिके लिए यानी सेवाके लिए होनी चाहिए। जिसमे सेवाकी लगन होगी वह विद्या प्राप्त करनेकी कोशिश करेगा ही; और उसकी विद्या उसके और समाजके लिए शोभास्पद होगी। जब विद्याके जरिये रुपया पैदा करनेका लालच दूर हो जायेगा, तब विद्याभ्यासका क्रम बदल जायेगा और विद्या पाने तथा प्रदान करनेका तरीका भी बदल जायेगा। आज तो उसका काफी दुरुपयोग होता है। इस नये दृष्टिकोणको मान्यता मिल जाये तो विद्याका दुरुपयोग कमसे-कम हो।

इसके बाद भी होड़की गुंजाइश तो रहेगी ही, पर वह होड़ अच्छा बननेकी, सेवावृत्ति बढ़ानेकी होगी। और सबको जीविकाके लायक मिलता रहेगा, तो असन्तोष और अन्धाधुन्धी मिट जायेगी।

इस विचारसरणीके अनुसार वर्णका जो गलत अर्थ आज होता है वह दूर होना चाहिए। छुआछूत मिटनी चाहिए और रोटी-बेटी व्यवहारके साथ वर्णका जो निकट सम्बन्ध आज है, वह टूटना चाहिए। किसके साथ खाया जाये और कौन किसके साथ विवाह करे, इसका वर्णके साथ कोई सम्बन्ध नही है। मनुष्य जहाँ खाना चाहेगा, जहाँ खाना उसे पसन्द होगा, जहाँ उसे प्रेमसे निमन्त्रण मिलेगा वही वह खायेगा। स्त्री-पुरुषको जहाँ अपना श्रेय दिखेगा वहाँ वे विवाह करेंगे। आमतौरपर विवाह एक ही वर्णमें होना सम्भव है, मगर दूसरे वर्णमें हो तो वह पाप नही माना जा सकता। पापका निर्णय दूसरी ही तरह होगा। मनुष्यका बहिष्कार वर्णसे नही, समाजसे होगा। समाजका विधान आजसे ज्यादा अच्छा होगा। उसमें जो गन्दगी, पाखण्ड वगैरा घर कर चुके है, वे निकल जायेंगे।

खेती

कहना चाहिए कि आश्रममें जो खेती होती है, वह मगनलालके कारण है। खेतीके बिना आश्रम बिना दूल्हेकी बरात जैसा माना जायेगा। फिर भी खेतीमें पड़नेकी मेरी हिम्मत बिल्कुल न थी। मेरा खयाल था कि उसके लिए आश्रम न तो कुशल है, न वैसी परिस्थितियाँ है। खेतीका काम एक बहुत बड़ा साहस है और उसके लिए काफी जमीन, रुपया और आदमी चाहिए। उसपर ध्यान दिया जाये तो दूसरे जो काम जरूरी माने गये थे, जिनको पूरा करनेकी हममें हिम्मत थी और जो रुकने जैसे नही थे, उन्हे धक्का पहुँचनेका भी डर था। मगर मगनलालके आग्रहके सामने मैं लाचार हो गया। उसने कहा — "कुछ नही तो मेरे मनबहलावके लिए ही खेती होने दीजिए।" मगनलाल मेरे साथ शायद ही कभी दलील करता था। मैं जो कहता

था उसपर अमल करनेका धर्म उसने पूरी तरह सीख लिया था। जहाँ वह समझ न पाता या अपना मतभेद देखता वहाँ मुझे बता देता। इतने पर भी यदि मै अपने विचार पर दृढ़ रहता तो यह मानकर कि मेरा विचार ही ठीक होगा, वह उसमे जुट जाता। सच पूछा जाये तो उसका यह खयाल था कि खेतीके बिना आश्रमका अस्तित्व हो ही नही सकता। मगर उसके लिए उसे बहस करनी पड़ती। वैसा न करके उसने प्रेमकी सबसे बड़ी दलील पेश कर दी और खेती शुरू हुई। आश्रममें जो पेड़ हैं वे ज्यादातर मगनलालके लगाये हुए या लगवाये हुए हैं। खेतीके बारेमें मेरी शंकाएँ आज भी बनी हुई है। आज भी मै यह दावा नही करूँगा कि आश्रम खेती करता है। परन्तु जो खेती आश्रमम चलती है उसके लिए मुझे दुःख नही है। उसमे रुपया भी काफी खर्च हुआ है, लेकिन आज भी हिसाब लगाकर यह नही बताया जा सकता कि खेती स्वावलम्बी हो गई है। इतने पर भी मै देखता हूँ कि जितनी खेती होती है उतनी खेती आश्रमके अस्तित्वके लिए जरूरी ही थी। खेतीके बिना आश्रम बन ही नही सकता। आश्रमको अपनी साग-भाजी तो पैदा करनी ही चाहिए। मगनलालने अपने लिए तो पिछले वर्षोमे यह व्रत ही ले लिया था कि आश्रममे जो साग-तरकारी मिलेगी उसी पर गुजर करूँगा। आश्रममें अपनी जरूरतका अनाज और घास भी पैदा करनेकी शक्ति होनी चाहिए। खेतीके सुधारका लोभ भले न रहे, मगर मै देख सकता हूँ कि खेती के बिना आश्रम वैसा ही लगेगा जैसे नाकके बिना शरीर।

यह खेती अभी तो प्रयोगके रूपमें ही है। यह दावा नहीं किया जा सकता कि उसके जरिये किसीको बहुत शिक्षा दी जा सकती है। मगर खेतीकी साधारण जानकारी हासिल करनेके लिए तो उसका उपयोग होता ही है। आश्रमकी जमीन पर जहाँ एक भी पेड़ नही था वहाँ अब अनेक पेड़ है, और हर पेड़ उपयोगकी दृष्टिसे लगाया गया है। साग-भाजी होती है, थोडे फल होते है, घास-चारा होता है। जैसा मै पहले बता चुका हूँ, मनुष्यके मैलेको खादके काममे लिया जाता है, और यह कहा जा सकता है कि इसका नतीजा बहुत अच्छा निकला है।

खेती करनेमे पुराने और नये हलोका प्रयोग किया गया है। पानी खीचनेके लिए वे ही योजनाएँ काममें ली गई जो गाँवोमें चल सकती हैं। यह कहा जा सकता है कि मुख्यतः पुराने औजारोंकी तरफ हमारा झुकाव रहा है। गरीब किसानके लिए ये औजार आदर्श मालूम हुए हैं। यह दूसरी बात है कि उनमे थोड़ा फेरबदल किया जा सकता है। मगर इस बारेमे निश्चयपूर्वक कहने लायक परिणाम अभीतक नही निकाला जा सका, क्योंकि उसे मुख्य काम समझकर उसके लिए जितना चाहिए उतना समय और बुद्धिका उपयोग नही किया गया। आश्रम इस काममें दूसरोका नेतृत्व कर सके, ऐसी स्थिति तो है ही नही।

गोसेवा

आश्रमका आदर्श तो दूधके बिना गुजर करना है। आश्रमका जैसे यह खयाल है कि मांस मनुष्यकी खुराक नही, वैसे ही पशुओके दूधके सम्बन्धमें भी है। एक

साल तक बहुत आग्रहके साथ आश्रममें दूध-घीके त्यागका पालन करनेके बाद यह प्रयोग बन्द करना पड़ा। आश्रममें परवरिश पानेवाले बच्चोंके शरीर उससे कमजोर होने लगे। बड़े लोग भी दुर्बल होने लगे। इसलिए धीरे-धीरे घी और बादमें दूध शुरू हो गया। इनके शुरू होते ही यह निश्चय स्वाभाविक था कि पशु रखे बिना आश्रमका काम नही चलेगा।

आश्रम 'गोरक्षा' धर्मको मानता है। 'गोरक्षा' शब्दमें अभिमान है, और आडम्बर है। मनुष्य जानवरका रक्षक बननेमें असमर्थ है। जो खुद रक्षा चाहता है वह दूसरेकी रक्षा नही कर सकता। जीवमात्रका रक्षक एक परमेश्वर ही है। ऐसी मान्यता होनेके कारण आश्रमने 'गोरक्षा'के बजाय 'गोसेवा' शब्दका प्रयोग पसन्द किया। लेकिन खुद दूध-घी छोड़कर सिर्फ परमार्थकी दृष्टिसे गोसेवा करनेकी आश्रमकी इच्छा सफल न हुई, इसलिए ढोर पाले गये। शुरू-शुरूमें यह स्पष्ट नही था कि सिर्फ गाय-बैल ही रखना धर्म है। इसलिए गाय, बैल और भैंसें रखी गईं।

पर दिनोदिन यह साफ होता गया कि आज तो गोसेवा करनेसे ही सब मनुष्येतर प्राणियोंकी सेवा हो जाती है। गोसेवा तो मनुष्यके लिए मार्ग-दर्शकभर है। इससे आगे जानेके उसके पास साधन नही हैं। और फिर हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ेका एकमात्र कारण गोवध ही बन जाता है। आश्रमकी मान्यता है कि मुसलमानसे गाय जबरन छीन लेनेका हिन्दूको अधिकार नही है और न यह उसका धर्म ही है। दूसरेके साथ जबरदस्ती करके उससे गाय छुड़ानेमें गोसेवा या गोरक्षा नही है; बल्कि इसके कारण गायकी हत्या जल्दी हो सकती है। गायके प्रति स्वयं अपना धर्मपालन करके और इस तरह गायका मूल्य बढ़ाकर ही हिन्दू गायकी और उसकी सन्तानकी सेवा या रक्षा कर सकते हैं। यह काम आजकल हिन्दू समाजने छोड़ दिया है। गायकी जरूरत कम ही पड़ती है। गायसे भैंस ज्यादा दूध देती है, उसके दूधमें घीका प्रमाण ज्यादा होता है, उसे पालनेमें खर्च थोड़ा होता है। फिर भैंसकी औलाद अगर पाड़ा हो तो बहुतोंको उसकी सार-सँभालकी चिन्ता नही रहती या बहुत कम चिन्ता रहती है; क्योंकि भैंसकी रक्षा या सेवा करना उनका धर्म ही नही है। इस तरहका ओछा हिसाब लगाकर हिन्दू समाजने कायरता, अज्ञान और स्वार्थसे गायकी उपेक्षाकी है और भैंसको जगह दी है, और ऐसा करके दोनोंका नुकसान किया है। भैंसको पालनेमें भैंसका स्वार्थ भी नही सधता। भैंसका भला उसके स्वतन्त्र रहनेमें है। भैंस पालनेका अर्थ है पाड़ेको दुःख देकर मारना। यह बात सब प्रान्तोंपर लागू नही होती। लेकिन गुजरातमें पाड़ेका उपयोग खेतीमें नही होता, इसलिए वहाँ उसके नसीबमें बुरी मौत मरना ही लिखा होता है।

इस विचारसे आश्रममें से भैंसको निकाल दिया गया और सिर्फ गाय-बैल पालनेका ही आग्रह रखा गया है। गायकी नस्ल सुधारना, अलग-अलग खुराक देकर उसका दूध बढ़ाने और सुधारनेकी सम्भावनाओंकी खोज करना, दूधको अधिक काल तक टिकाये रखनेकी कला सीखना, उसमें से आसानीसे मक्खन निकालना, बछड़ोंको कमसे-कम कष्ट देकर खस्सी करना — आदि बातोंपर ध्यान दिया जाता है। फिलहाल तो

यह सब प्रयोगके रूपमे चल रहा है। मगर आश्रमकी मान्यता यह है कि गायका उपयोग पूरा हो और दयाके साथ हो, तो गाय भार-रूप वन ही नही सकती।

आज शायद वहुतोंको पता न हो कि गाय महँगी पड़ती है। वह महँगी पड़ती है इसलिए उसकी हत्या होगी ही। मनुष्य इतना परोपकारी नही होता कि खुद मरकर गायको वचाये, यानी गायको अपना ही भक्षक वनने दे। आजके हिसावके अनुसार पशुओंकी संख्या इतनी है कि उन्हे अच्छी तरह पालें, तो मनुष्यको अपने ही लिए काफी खुराक न मिले। यह वात सही नही है ऐसा सावित करनेके लिए यह वताना चाहिए कि गाय-वैलको ज्यादा अच्छी तरह पालनेसे उनकी उत्पादक शक्ति वढ़ सकती है। आश्रमकी राय है कि यह सावित करके वताया जा सकता है।

लेकिन यह वात सावित करनेके लिए हिन्दू समाजमें धर्मके नामसे जो वहम घुस गये हैं, उन्हें मिटाना चाहिए। हिन्दू समाज गायकी हड्डियों, अँतड़ियों वगैराका उपयोग नही करता। मरनेके वाद गायका क्या होता है, इसकी परवाह नही की जाती। चमारके धन्धेको पवित्र माननेके वजाय अपवित्र माना जाता है। दूसरे जानवरोंकी हड्डियाँ काममें ली जायेंगी, मगर गायकी नही; और ली भी जायेंगी तो वे हिन्दू समाजकी तैयार की हुई नही होंगी। गाय अस्थि-पिंजर होकर आस्ट्रेलिया जाकर वहाँ कतल की जाये, वहाँसे उसकी हड्डीकी खाद वनकर यहाँ आये, उसके चमड़ेके जूते वगैरा वनकर आयें, तो उन सवका उपयोग किया जायेगा! उसके मांसका अर्क दवाके रूपमे आयेगा तो उसे भी पी लिया जायेगा!

ऐसा करनेमें गायका नाश होता है, रुपयेकी वरवादी होती है और धर्मके नामपर लूट चलती है। इसलिए आश्रममें वड़ी कोशिशसे चमारका धन्धा शुरू किया गया है। उसमे अभी तक कोई कुशल नही हो सके हैं। वाहरसे कोई ऐसा चमार नही मिला, जो शिक्षा पाया हुआ हो और आश्रमके नियमोंका पालन कर सके। एक आया था मगर उसे हम रख न सके। मामूली चमारोंको वसानेकी कोशिश भी असफल रही। फिर भी चमार का काम आश्रमका अंग वना हुआ है; और चरखेकी ही तरह इस कलापर भी अधिकार पाकर आश्रम उसका प्रचार करनेकी आशा रखता है। क्योंकि मरी हुई गायके सारे अवशेषोंका उपयोग किया जायेगा, तभी गायका भार-रूप होना वन्द होगा। उससे नफा तो कभी होगा ही नही। धर्म, अर्थका विरोधी कभी नही है, लेकिन नफेका विरोधी वह हमेशा है। लेकिन अगर गायसे उसका अपना खर्च निकलवाना हो तो आज जिस ढंगसे उसके मृत शरीरका दुरुपयोग होता है या जिस तरह वह व्यापारियोंका व्यापार वढ़ानेके काम आता है, वह वन्द होना चाहिए। यह जवरन वन्द नही किया जा सकता। लेकिन हिन्दू समाज गायको अपने पास रखे, जीते-जी उसे और उसकी सन्तानको अच्छी तरह पाले, वुढ़ापेमे उसकी रक्षा करे और मरने पर उसके शरीरका पूरा उपयोग करे, तो ही गायकी रक्षा हो सकेगी और उसकी रक्षासे जीवमात्रकी रक्षा करना शायद हम सीखेंगे। आज तो हमारे अज्ञान, आलस्य और द्वेषके कारण गायकी वरवादी दिनोदिन वढ़ती जा रही है। फिर दूसरे पशुओंकी तो वात ही क्या?

आश्रमकी मान्यता यह है कि जितनी गोशालाएँ और पिंजरापोल हैं, उनका धार्मिक और शास्त्रीय उपयोग हो, धनी लोग अपने यहाँ गोशाला चलायें और गायके दूध-घीके उपयोगका ही आग्रह रखें तथा गायके दूधका व्यापार निषिद्ध मानकर सार्वजनिक गोशालाएँ इस तरह चलायें कि उनका आय-व्यय बराबर रहे, तो जल्दी ही गायकी रक्षा हो सकती है।

अभी तो आश्रमका उद्देश्य छोटा ही है—आश्रममे आदर्श गोशाला चलाना, गाय-बैलका विकास करना, मरने पर उनके हर अंगका उपयोग करके यह साबित करना कि उनका खर्च सिरपर नही पड़ता, गोशाला चलाते हुए गोसेवक तैयार करना और तैयार होनेपर उनकी सेवाओंका उपयोग करना। यह काम इस समय हो रहा है। इसमे रुकावटें बहुत आती हैं, मगर पूरा भरोसा है कि इसमे सफलता मिलेगी।

शिक्षा

यहाँ शिक्षा शब्दका विशेष और साधारण दोनों अर्थोमें उपयोग किया गया है। इस शिक्षाके प्रयोगमे आश्रमकी जितनी परीक्षा हुई है, उतनी और किसी प्रयोगमें नही हुई।

आश्रमकी स्थापना होते ही मैंने देख लिया कि आश्रममे रहनेवाले स्त्री-बच्चोंको पढ़ाना-लिखाना आश्रमका धर्म है। और आगे चलकर तो यह भी देखा कि जो अपढ़ पुरुष आश्रममें आते हैं, उनके लिए भी ऐसा बन्दोबस्त होना चाहिए। जो लोग आश्रममे थे उनसे शिक्षाका काम पूरा नही हो सकेगा, यह भी साफ मालूम हो गया। शिक्षा दे सकनेवाले लोगोको आश्रममे खीचनेकी जरा भी आशा रखनी हो तो शिक्षकवर्गके लिए ब्रह्मचर्यका नियम कड़ा नही रखा जा सकता—इस खयालसे आश्रमके दो भाग कर दिये गये:-एक शिक्षक-विभाग और दूसरा आश्रम-विभाग। मकान भी अलग-अलग बनाये गये।

मनुष्य-जाति अपना स्वभाव एकाएक कैसे छोड़ सकती है? बहुत कोशिश करने पर भी ये विभाग करते ही ऊँच-नीचकी भावनाका जहर फैलने लगा। 'आश्रम-विभाग' के लोगोंमें अभिमान पैदा हुआ। शिक्षक-विभाग इसे कैसे सहता? यह अभिमान आश्रमके उद्देश्यके विरुद्ध था, इसलिए असत्य भी था। अगर पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन जरूरी था तो ये विभाग भी स्वाभाविक थे। मगर पूर्ण ब्रह्मचर्यकी छापवालोंके लिए अपनेको ऊँचा माननेका तो कोई कारण ही नहीं था। यह भी तो हो सकता है कि पूर्ण ब्रह्मचर्य पालनेका दावा और प्रयत्न करनेवालोका मनसे यानी विचारोसे रोज पतन होता हो और ब्रह्मचर्यका दावा न करनेवाले परन्तु उसे पसन्द करनेवाले अपने प्रयत्नमें रोज ऊँचे उठते हो। बुद्धिसे यह सब समझ पड़ता था, मगर उसपर अमल करना सबके लिए कठिन हो गया था।

गड़गड़ीका एक कारण यह तो था ही। दूसरा कारण और पैदा हो गया। शिक्षाकी पद्धतिके विषयमे मतभेद हो गया और उससे आश्रमकी व्यवस्थामे मुश्किले आने

लगी। अनेक वाद-विवाद हुए, अनेक झंझटें पैदा हुईं, जहर पैदा हुआ, लोगोंके मन खट्टे हो गये। इतना होने पर भी अन्तमे सब शान्त हो गये, या एक-दूसरेको सहन करने लगे। इसमे मुझे आश्रमके मूल हेतु यानी सत्यकी जीत मालूम हुई। मतभेदवालो के मनमे मैल नही था। कोई भी व्यक्ति गन्दी तिकड़ममे नही पड़ता था। जो मतभेद होते थे उनके लिए उन्हे दुख होता था। जो सत्य हो उसीपर चलनेकी सबकी इच्छा थी। अपनी-अपनी रायके आग्रहके कारण सामनेवालेकी दलीले समझनेमे रुकावट होती थी, इसलिए मनमे क्लेश और उद्वेग होता था। इससे इस बातकी परीक्षा हो सकी कि आश्रमवासियोमे एक-दूसरेके प्रति कितनी उदारता है।

आश्रममे इस बारेमे खूब चर्चा हुई कि शिक्षा किस प्रकारकी दी जाये और कितने समय तक दी जाये। अब भी यह दावा नही किया जा सकता कि हम आखिरी फैसले पर पहुँच गये है। इस विषयमे मेरे अपने विचार भिन्न ही है। मै नही कह सकता कि इस मामलेमे मै अपने सब साथियोंको अपनी रायका बना सका हूँ। इस-लिए आश्रमका शिक्षा-सम्बन्धी आदर्श क्या है, इसे ठीक निश्चयपूर्वक बताना कठिन है। मेरी मान्यता इस तरहकी है:

१. लड़को और लड़कियोको एक साथ शिक्षा देनी चाहिए। यह बाल्यावस्था आठ वर्ष तक मानी जाये।

२. उनका समय मुख्यतः शारीरिक कार्यमे लगना चाहिए और यह कार्य भी शिक्षककी देखरेखमे होना चाहिए। इस शारीरिक कार्यको भी शिक्षाका अंग माना जाये।

३. हर लड़के और लड़कीकी रुचि पहचानकर उसे काम सौपना चाहिए।

४. हरएक काम लेते समय उसके कारण की जानकारी करानी चाहिए।

५. लड़का या लड़की समझने लगे तभीसे उसे सामान्य-ज्ञान देना चाहिए। उसका यह ज्ञान अक्षर-ज्ञानसे पहले शुरू होना चाहिए।

६. अक्षर-ज्ञानको सुन्दर लेखन-कलाका अंग समझकर पहले बच्चेको ज्यामितिकी आकृतियाँ खीचना सिखाया जाये और उसकी अँगुलियाँ जब अभ्यस्त हो जाये तब उसे वर्णमाला लिखना सिखाया जाये अर्थात् शुरूसे ही उसे शुद्ध अक्षर लिखना सिखाया जाये।

७. लिखनेसे पहले बच्चा पढ़ना सीखे। यानी अक्षरोंको चित्र समझकर उन्हे पहचानना सीखे और फिर चित्र खींचे।

८. इस ढगसे जो बच्चा सीखेगा और मुँहसे ज्ञान पायेगा, उसे तो आठ वर्षके भीतर अपनी शक्तिके अनुसार बहुत ज्ञान पा जाना चाहिए।

९. बालकोको जबरदस्ती कुछ न सिखाया जाये।

१०. वे जो पढ़ें उसमे उन्हें रस आना ही चाहिए।

११. बच्चोंको शिक्षा खेल जैसी लगनी चाहिए। खेल भी शिक्षाका जरूरी अंग है।

१२. बच्चोंकी सारी शिक्षा मातृभाषाके जरिये होनी चाहिए।

१३. बच्चोंको हिन्दी-उर्दूका ज्ञान राष्ट्रभाषाके तौरपर दिया जाये। उसकी शुरुआत अक्षर-ज्ञानसे पहले होनी चाहिए।

१४. धार्मिक शिक्षा जरूरी मानी जाये। वह पुस्तकसे नही, बल्कि शिक्षकके व्यवहारसे और उसीके मुंहसे मिलनी चाहिए।

१५. नौ से सोलह वर्षका दूसरा काल है।

१६. दूसरे कालमे भी जहाँ तक सम्भव हो लड़के-लड़कियोकी शिक्षा साथ-साथ हो तो अच्छा है।

१७. दूसरे कालमे हिन्दू बालकको संस्कृतका ज्ञान मिलना चाहिए और मुसलमान बालकको अरबीका।

१८. इस कालमे भी शारीरिक कार्य तो चलना ही चाहिए। अक्षर-ज्ञानका समय जरूरतके अनुसार बढ़ाना चाहिए।

१९. इस कालमे माता-पिताका धन्धा अगर निश्चित हुआ जान पड़े, तो बालकको वह सिखाया जाये और उसे इस तरह तैयार किया जाये कि वह बाप-दादाके धन्धेसे अपनी गुजर करना पसन्द करे। यह नियम लडकीपर लागू नही होता।

२०. सोलह वर्ष तक लडके-लड़कियोंको दुनियाके इतिहास-भूगोलका और वनस्पति-शास्त्र, खगोल-शास्त्र, गणित, ज्यामिति और बीजगणितका सामान्य ज्ञान हो जाना चाहिए।

२१. सोलह वर्षके लड़के-लड़कीको सीना-पिरोना और रसोई बनाना आ जाना चाहिए।

२२. सोलहसे पच्चीस वर्ष तक मै तीसरा काल मानता हूँ। इस कालमे हर-एक युवक और युवतीको उसकी इच्छा और परिस्थितिके अनुसार शिक्षा मिले।

२३. नौ वर्षके बादसे शुरू होनेवाली शिक्षा स्वावलम्बी होनी चाहिए। यानी विद्यार्थी पढ़ते समय ऐसे उद्योगोमे लगे जिनकी आयसे पाठशालाका खर्च निकल सके।

२४. पाठशालामे आमदनी तो शुरूसे ही होनी चाहिए। मगर शुरूके वर्षोमें खर्चके बराबर आमदनी नही होगी।

२५. शिक्षकोके वेतन ऊँचे नही हो सकते, लेकिन उन्हे जीविकाके लायक तो जरूर मिलना चाहिए। उनमें सेवावृत्ति होनी चाहिए। प्रारम्भिक शिक्षाके लिए हर किसी शिक्षकसे काम चला लेनेकी प्रथा बुरी है। शिक्षकमात्रको चरित्रवान होना चाहिए।

२६. शिक्षाके लिए बड़े और खर्चवाले मकानोंकी जरूरत नही।

२७. अंग्रेजीकी पढ़ाई भाषाके रूपमे ही हो सकती है और उसे पाठ्यक्रममे जगह मिलनी चाहिए। जैसे हिन्दी राष्ट्रभाषा है, वैसे ही अंग्रेजीका उपयोग दूसरे राष्ट्रोके साथ व्यवहार और व्यापारके लिए है।

इसमें साधारण शिक्षाके बारेमे मेरे ज्यादातर विचार आ जाते है। स्त्रियोंकी विशेष शिक्षा कैसी और कहाँसे शुरू हो, इस बारेमें मै खुद निश्चय नही कर पाया

हूँ, पर मेरा यह दृढ़ मत है कि जितनी सुविधा पुरुषको मिलती है उतनी ही स्त्रीको मिलनी चाहिए; और जहाँ खास सुविधाकी जरूरत हो, वहाँ खास सुविधा भी मिलनी चाहिए।

बालिग उम्रवाले निरक्षर स्त्री-पुरुषोके लिए रात्रिवर्गोकी जरूरत तो है ही। लेकिन मेरी मान्यता ऐसी नही है कि उन्हे अक्षर-ज्ञान होना ही चाहिए। उनके लिए व्याख्यानों आदिके जरिये साधारण ज्ञान मिलनेकी सुविधा होनी चाहिए, और जिन्हे अक्षर-ज्ञान पानेकी इच्छा हो उनके लिए पर्याप्त सुविधा होनी चाहिए।

इन सारी बातोंमे मेरे और साथियोके बीच मतभेद है, ऊपरके वचनोसे मेरा कहनेका मतलब यह नही है। लेकिन कुछ बातोमे सूक्ष्म मतभेद है, इसलिए मैंने उपर्युक्त विचारोको अपना कहकर प्रस्तुत किया है। यह नही कहा जा सकता कि आश्रममे आज तक जितने प्रयोग हमने किये है, उन परसे हम दृढ़ निश्चयो पर पहुँच सके है। हाँ, एक बातमे हम सब लोग एकमत है और वह यह कि शिक्षामे उद्योगको और खासकर कताईको बडा स्थान मिलना चाहिए, शिक्षा ज्यादातर स्वावलम्बी होनी चाहिए और देहाती जीवनकी पोषक और उस जीवनके साथ सम्बन्ध रखनेवाली होनी चाहिए।

मेरा खयाल यह है कि शिक्षाके प्रयोगोंमे आश्रमको ज्यादासे-ज्यादा सफलता स्त्रियोके बारेमे मिली है। वह इस तरह कि जो स्वतन्त्रता और आत्म-विश्वास आश्रमकी स्त्रियोमें आया है, वह उतने ही अरसेमे और उसी वर्गकी स्त्रियोमे अन्यत्र कही भी देखनेमे नही आया। इसका कारण आश्रमका वातावरण है। आश्रममे स्त्री पर ऐसा कोई अंकुश नही रखा गया है जो पुरुष पर न रखा गया हो। स्त्रियोके मनमे समानताका विचार शुरूसे ही भर दिया जाता है। कामोमे सबको एक-सा भाग लेना पड़ता है। ऐसा फर्क नहीं रखा गया है कि अमुक काम स्त्रीका ही है और पुरुष उसे करे ही नही। रसोईके काममें स्त्री-पुरुष दोनोने भाग लिया है और आज भी लेते है। शरीरका जो श्रम स्त्री कर ही नही सकती उससे उसे मुक्त रखा जाता है। इससे सिवा, एक भी ऐसा उद्योग नही जिसमे स्त्री-पुरुष साथ-साथ काम न करते हो। पर्दा और घूँघट जैसी चीज आश्रममें है ही नही। इस तरह आश्रमका वातावरण कुछ ऐसा बन गया है कि स्त्री कहीसे भी आई हो, आश्रममे आते ही उसे अलग प्रकारका और स्वतन्त्र वातावरण मालूम होता है और वह अपनेको निर्भय मानने लगती है। मेरा विश्वास है कि इसमे ब्रह्मचर्य-व्रतका बहुत बडा हाथ रहा है। बडी उम्रकी लड़कियाँ भी कुँवारी है। आश्रममे रहनेवाले हम सब जानते है कि आश्रमका यह प्रयोग खतरोसे भरा हुआ है। लेकिन इस तरहके खतरे उठाये बिना स्त्रियोंकी उन्नति और उनकी जागृति असम्भव-सी जान पडती है।

जिस तरह अस्पृश्यता मिटानेकी जरूरत है, उसी तरह स्त्रियोके बारेमें कुछ वहम, मान्यताओ और रिवाजोको भी दूर करनेकी आवश्यकता है। बाल-विवाह, हर लड़कीके लिए विवाहको आवश्यक माननेवाला धर्म, मासिक धर्म शुरू होनेसे पहले विवाह करनेकी आवश्यकता, विधवाका पुनर्विवाह न करनेका समाज द्वारा लगाया

हुआ प्रतिवन्ध वगैरा प्रथाएँ जवतक वन्द नही होंगी तवतक स्त्री जाति आगे नही वढ़ सकती। इस दृष्टिसे आश्रम स्त्रियोंको आते ही यह सीख देने लगता है कि ऊपरकी प्रथाएँ खोटी और धर्म-विरुद्ध हैं। वे इस शिक्षा पर अमल होते देखती हैं, इसलिए उनके दिलको चोट नही पहुँचती और उन्हें ऐसा नही लगता कि ये सव वातें केवल दूसरोको उपदेश देनेकी खातिर ही कही जाती हैं।

जिसे हम आमतौर पर शिक्षा मानते हैं, आश्रममें वैसी शिक्षा कम ही दिखाई देगी। इतने पर भी मेरी राय यह है कि वच्चेसे वूढ़े तक सारे स्त्री-पुरुषोमे शिक्षा की लगन पैदा हुई है, ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा वढ़ती जा रही है और इसके लिए समय न मिलनेकी शिकायत भी वनी रहती है। यह मुझे शुभ चिह्न मालूम होता है। आश्रममे आनेवाले लोग शिक्षामे रस लेनेवाले या शिक्षा पाये हुए नही होते। वहुतोंको तो मुश्किलसे लिखना-पढ़ना आता है। वाहर तो उनमे इससे आगे वढ़नेकी उमग तक न थी। आश्रममे थोड़ा समय वीतने पर अक्षर-ज्ञानमे वृद्धि करनेकी उमंग पैदा होती है। जो संस्था इतना कर सकती है, उसका रास्ता आसान हो जाता है; क्योंकि पहली सीढ़ी तो अक्सर सीखनेकी उत्कण्ठा पैदा करना ही है। आश्रममें आने-वालोंमे यह उत्कण्ठा तुरन्त पैदा होती जाती है। आश्रम इस उत्कण्ठाको पूरा करनेके लिए जितनी चाहिए उतनी सुविधा नही दे पाता, इसका मुझे वहुत दुःख नही है। आश्रमकी पावन्दियोंके कारण शायद यथेष्ट संख्यामे ऐसे आदमी कभी नही आयेंगे जो शिक्षाका काम कर सकें और इसलिए आश्रममे ही इस कामके लिए जो तैयार हो सकते हैं उन्हीसे सन्तोष मानना पड़े। लेकिन ऐसा भी हो सकता है कि आश्रमकी प्रवृत्तिके कारण ऐसे शिक्षक तैयार न हो सकें या उनके तैयार होनेमे वहुत समय लग जाये। ऐसा हो तो भी जिनमे ज्ञान प्राप्त करनेकी सच्ची लगन पैदा हो चुकी है वे वादमे भी ज्ञान प्राप्त करेंगे। शिक्षाके लिए समयकी कोई मर्यादा ही नही है। सच्ची शिक्षा तो शाला छोड़नेके वाद ही शुरू होती है। जिसने उसका महत्त्व समझा है, वह तो सदा ही विद्यार्थी है। अपना कर्तव्य-पालन करते हुए और उस कर्तव्यके पालनके लिए मनुष्यके ज्ञानमे रोज वढ़ती होनी ही चाहिए। जो सव काम समझकर करता है, उसका ज्ञान रोज वढ़ना ही चाहिए और यह वात आश्रममे अच्छी तरह समझ ली गई है।

शिक्षाकी प्रगतिमे एक चीज रुकावट डालनेवाली है। शिक्षकके विना शिक्षा ली ही नही जा सकती, यह भ्रम समाजकी वृद्धिको कुंठित करता है। मनुष्यका सच्चा शिक्षक तो वह स्वय ही है। आजकल तो अपने-आप शिक्षा प्राप्त करनेके साधन खूव वढ़ गये हैं। वहुत-सी वातोका ज्ञान परिश्रमपूर्वक सवको मिल सकता है और जहाँ शिक्षककी ही जरूरत होती है वहाँ मनुष्य खुद शिक्षक ढूँढ़ लेता है। अनुभव सवसे वड़ी पाठशाला है। कई धन्धे ऐसे हैं जो शालामें नही सीखे जाते, वल्कि उन धन्धोंकी दुकानो पर या कारखानोमे सीखे जा सकते हैं। पाठशालाका ज्ञान तो अक्सर तोतेका-सा होता है। पुस्तकोंमे तो धन्धेसे वाहरका ज्ञान मिल सकता है। इसलिए वड़ी उम्रवालोके लिए शालाके वजाय इच्छाकी, लगनकी और आत्म-विश्वासकी जरूरत है।

बच्चोंकी शिक्षा माता-पिताका धर्म है, ऐसे सोचे तो असंख्य पाठशालाओंकी जरूरतके बजाय सच्ची शिक्षाका वायुमण्डल पैदा करनेकी ज्यादा जरूरत है। ऐसा वायुमण्डल पैदा होते ही जहाँ शालाकी जरूरत होगी वहाँ वह जरूर खड़ी हो जायेगी।

आश्रममे इस दृष्टिसे शिक्षा चल रही है, और इस दृष्टिसे सोचने पर सफलता भी एक हद तक अच्छी मिली है। आश्रमका तो हर विभाग ही एक शाला है।

सत्याग्रह

आश्रमकी विभिन्न प्रवृत्तियोंका वर्णन बहुतांशमे यहाँ आ ही चुका है। आश्रम का अस्तित्व सत्यके आग्रहके द्वारा सत्यकी खोज करनेके लिए है। और ऐसा आग्रह रखते हुए जब सत्याग्रह-शस्त्रका प्रयोग करना पड़े तब आश्रम उसका प्रयोग करे और इस सत्याग्रहके नियमो और मर्यादाओंकी खोज करे। आमतौर पर उसके नियम क्या होने चाहिए, इसकी चर्चा भी यहाँ हो चुकी है।

मगर सत्याग्रहकी मर्यादा क्या है? इस शस्त्रका तीव्र उपयोग कब किया जा सकता है? मनुष्य हमेशा सत्य पर डटा रहता है, उसका नाम भी सत्याग्रह है। यहाँ इस सत्याग्रहकी चर्चा नही है, चर्चा उस सत्याग्रहकी है जिसका वह शस्त्रके रूपमे दूसरेके प्रति प्रयोग करता है।

ऐसा सत्याग्रह साथियोके विरुद्ध, सम्बन्धियोके विरुद्ध, समाजके विरुद्ध, राज्यके विरुद्ध और सारी दुनियाके विरुद्ध हो सकता है। इसकी जड़मे . . .[1]

[यह इतिहास इसके आगे नही लिखा जा सका।]

[गुजरातीसे]

सत्याग्रहाश्रमनो इतिहास

२०७. पत्र: भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्याको

१२ जुलाई, १९३२

चि० भगवानजी,

तुमने लक्ष्मीदेवीसे क्षमा माँग ली, इतना ही पर्याप्त है। इसको लेकर ज्यादा चख-चख करनेकी जरूरत नही। तुम आना चाहो तो अनुमति मिलने पर चले आना। जिस फकीरीका हम गान करते हैं वह फकीरी वनकी नही, मनकी है। इसके विना सब कुछ अधूरा है। अभी वर्धा नही जाना है। जब विनोबा छूटेंगे तब इस पर विचार किया जा सकता है। 'कदी नही हारना भावें (भले) साडी जान जावे।'

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३५०)से; सौजन्य: भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या

१. यहाँ धाराका क्रम अकस्मात् टूट गया।

२०८. पत्र : ई० ई० डॉयलको

१३ जुलाई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

अपनी परेशानियोके लिए आपको फिरसे कष्ट दे रहा हूँ, कृपया क्षमा करे। मेजर भंडारीने मुझे कल वताया कि मेरे इसी ९ तारीखके पत्रके उत्तरमे उन्हे मुझे यह सूचित करनेको कहा गया है कि सरकारके पाससे मेरी डाकके प्राप्त होनेके वाद आपके या मेजर भडारीके आफिसमे उसपर कार्रवाई करनेमे कोई विलम्ब नही किया जाता। यह मुझे मालूम था। मेरा प्रश्न तो सरकारी कार्य-पद्धतिके वारेमें था। मुझे अपने वाहरके मित्रो तथा साथी कैदियोको, चाहे वे पुरुष हो या महिलाएँ, पत्र लिखनेकी अनुमति दी गई है। इनमे यरवडा जेलके साथी भी शामिल हैं। अपने आश्रमके पुरुषोकी ही तरह मैं महिलाओको भी नियमित रूपसे पत्र लिखता रहा हूँ। अगर इस जेलके साथियोको लिखे मेरे पत्र और उनके पत्र शीघ्र एक-दूसरेको नही दिये जाते तो उन्हे मेरा लिखना वेकार है। स्वभावतः इन पत्रोमे एक-दूसरेकी कुशल-क्षेम तथा उन लोगोंकी कुशल-क्षेमकी वाते होती है जिनमे मेरी और उन लोगोकी दिलचस्पी है।

यही वात आश्रमके पत्रो पर भी लागू होती है।

दूसरे लोगोके जो पत्र मुझे मिलते हैं उनमे से कुछ पत्र मेरी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण होते है। अधिकारी लोग उन्हे महत्त्वपूर्ण माने या न माने, लेकिन मैं उनसे वंचित होना नही चाहूँगा।

मेरा पिछली वारका जेल-अनुभव यह है कि जव पत्र सरकारके पास भेजे जाते हैं, तो उनपर विचार करनेमे समय लगता है। १९३० मे शुरू-शुरूमें मेरे पत्र सरकारको भेजे जाते थे और मैं जानता हूँ कि पत्रोंका पहला वण्डल मुझे मिलनेमें लगभग छः सप्ताह लगे थे, और सो भी वारम्वार अनुरोध करनेके वाद। वादमें तत्कालीन सुपरिंटेडेट मेजर मार्टिनको मेरे पत्रोसे निपटनेका अधिकार दे दिया गया, और स्वभावतः फिर कोई विलम्व नही होता था। मेरे पत्र-व्यवहारकी जाँच कौन करता है इस विषयमे वेशक मुझे कुछ नही कहना है। मेरा जिन वातोसे मतलव है वे है :

१. मेरे पत्र-व्यवहारके सम्बन्धमे संशोधित निर्देश ठीक-ठीक क्या हैं?

२. मुझे अपनी डाक प्राप्त करने, और मेरे लिखे पत्र डाकमे छोड़े जायें, इसके लिए मुझे कितनी देर प्रतीक्षा करनी होगी?

३. मेरे जो पत्र रद कर दिये जायेंगे क्या वे मुझे हमेशाकी तरह लौटाये जाते रहेंगे और हमेशाकी तरह उन्हें रद करनेकी वजह मुझे सूचित की जायेगी?

४. जो पत्र और पार्सल मुझे नही दिये जायेंगे क्या उन्हे मेरी सम्पत्ति माना जायेगा, उनकी सार-सँभाल की जायेगी और मेरे रिहा होने पर वे मुझे सौंप दिये जायेंगे?

यदि आप इस पत्रको सरकारके पास अग्रेषित कर देंगे और इसका शीघ्र उत्तर मँगा देंगे तो मैं आभार मानूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०), भाग १, पृष्ठ २५७।

२०९. पत्र : मीराबहनको

१४ जुलाई, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारा ७ तारीखका पत्र मुझे आज सुबह (१४ तारीखको) ही प्राप्त हुआ। जहाँ तक मेरे पत्र-व्यवहारका सम्बन्ध है, अभी तो सब बातें अस्तव्यस्त हैं। सारे पत्र सरकारके पास जाते हैं। बादमें क्या होता है, सो मुझे मालूम नहीं। मैं जाँच कर रहा हूँ। जेल-जीवन ऐसा ही होता है। इसमें धीरजकी अच्छी तालीम मिलती है।

मुझे खुशी है कि मेरे पत्रोंसे दामोदरदास और उसकी पत्नीको कुछ सान्त्वना मिली है। मुझे उम्मीद है कि वे अब संकटसे पार हो चुके हैं। किस प्रकारकी स्त्री है यह प्रेमकुँवर? क्या उसमें इन जबर्दस्त क्षतियोंको सह पानेका साहस है?

मेरी तन्दुरुस्ती बिल्कुल अच्छी रहती है। वजन आजकल १०५½ पौंड पर स्थिर है। कुहनीका दर्द ज्योंका त्यों है। बहुत सम्भव है कि जो मरहम लगाया जा रहा है, उससे कुहनीको आराम हो जाये। लेकिन हो या न हो, चिन्ताकी कोई बात नहीं।

हाँ, प्यारेलालको थोड़े दिन नमक छोड़ देनेसे अवश्य लाभ होगा। तुम्हारे प्रयोगके अच्छे परिणाम निकलते रहे तो उसे बहुत लोग करेंगे। प्यारेलाल तो अवश्य आजमायेगा। परन्तु जबतक तुम उसे कमसे-कम साल भर न चला लोगी, तबतक उसके बारेमें कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती।

अखबार कहते हैं तुम बम्बईसे जा रही हो। आश्चर्य है कि तुम्हें ऐसा करनेका आदेश उस समय मिला जब पुलिसको अवश्य मालूम हो गया होगा कि तुम बम्बईसे रवाना होनेवाली हो।[1] अवश्य ही उन्हें तुम्हारी प्रस्तावित रवानगीका हाल मालूम होनेसे पहले आदेश मिल गये होंगे।

१. बापूज लेटर्स टु मीरामें मीराबहनने लिखा है: "जब मैं राजेन्द्रबाबूसे मिलनेके लिए छपरा जानेको सामान बाँध रही थी, ठीक उसी समय मुझे बम्बई छोड़ देनेका नोटिस मिला। मैंने अपनी योजना नहीं बदली, बल्कि पूर्व-निर्धारित दिन ही रवाना हुई।"

वल्लभभाईने अब लिफाफे बनानेके कामके अलावा संस्कृतका अध्ययन और कताईका काम भी शुरू कर दिया है। संस्कृतकी पढ़ाईके लिए वे बहुत ही परिश्रम कर रहे हैं और यद्यपि गांडीव चरखा उनके लिए नया है, तो भी वे २० अंकके १८० तार आसानीसे कात रहे हैं।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९७ से भी।

२१०. पत्र: एम० ए० खाँको[1]

१४ जुलाई, १९३२

प्रिय मित्र,

आपकी भर्त्सनाके लिए धन्यवाद। आप यह उम्मीद तो नही रखते होंगे कि मैं आपसे बहस करूँ। मुझे भय है कि कैदी होनेके नाते राजनीतिक मामलोंकी चर्चा करनेकी मुझे इजाजत भी नही मिलेगी। लेकिन आपसे इतना कह दूँ कि जेलके कोनेमें बैठकर गहराईके साथ विचार करनेके बाद भी मेरे खयालोंमें कोई तब्दीली नही हुई है।

आपका,

मो० क० गांधी

मौलवी साहब एम० ए० खाँ
कोतवाल स्ट्रीट बाजार ३
फिरोजपुर छावनी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) भाग २, पृष्ठ १८५।

१. एम० ए० खाँने लिखा था: "आप राजनीति नहीं समझते। इसे आगा खाँ और शास्त्री तथा सप्रू जैसे लोगोंके हाथमें छोड़ दीजिए। आप हिमालयपर चले जाइए और अपनी भूल स्वीकार कीजिए।" गांधीजीने इसका उत्तर अपने हाथसे लिखा था। महादेव देसाईने इस पत्रके सम्बन्धमें सरदार पटेल और गांधीजीके बीच हुई बातचीतकी निम्न रिपोर्ट लिखी है:

सरदार: इस अपमानजनक पत्रका जवाब आपने अपने हाथसे क्यों लिखा?

बापू: क्योंकि मुझे लिखना ही चाहिए था।

सरदार: क्या यह गाली देनेका पुरस्कार है? इससे वह अपने आपको बहुत बड़ा मानने लगेगा।

बापू: मैं नहीं समझता कि इससे हमें कोई नुकसान है। (महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१)

२११. पत्र : ए० वेलुसामीको

१४ जुलाई, १९३२

प्रिय मित्र,

मुझे तुम्हारा इसी ७ तारीखका पत्र मिला। गत १२ मार्चका पत्र मुझे मिला ही नही।

इसमे सन्देह नही है कि यह चेतन-जगत एक नियम द्वारा संचालित होता है। यदि तुम किसी नियामकके विना किसी नियमकी कल्पना कर सकते हो, तो मैं कहूँगा कि नियम ही नियामक अर्थात् ईश्वर है। जब हम नियमकी प्रार्थना करते है, तो इसमें हमारा हेतु नियमको जानने और उसका पालन करनेका होता है। हम जिस चीजकी लालसा करते हैं ठीक वैसे ही वन जाते हैं, इसीलिए प्रार्थना जरूरी है। हालाँकि हमारा वर्तमान जीवन पूर्वजन्मके कर्मोसे संचालित है, तो भी कार्य-कारणके उसी नियमके अनुसार हम इस जीवनमे जो-कुछ करेंगे, हमारा भावी जीवन वैसा ही होगा। अतः जब हमारे सामने दो या दोसे अधिक विकल्प हों तब हम अपना वैसा ही चुनाव करना चाहिए।

बुराईका अस्तित्व क्यों है और बुराई क्या है, यह सवाल हमारी सीमित बुद्धिसे परे है। इतना ही जानना काफी है कि अच्छाई और बुराई ये दोनो विद्यमान हैं। और जब भी हम अच्छाई और बुराईमें भेद कर सकें, हमें अच्छाईको चुनना चाहिए और बुराईसे बचना चाहिए।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

वेलुसामी
शिवगंगा

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९४७) से। बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०), भाग २, पृष्ठ १८३ से भी।

२१२. पत्र : सुधीरकुमार सेनगुप्तको[1]

१४ जुलाई, १९३२

प्रिय मित्र,

मैंने भैंस या गायका दूध न लेनेका व्रत लिया है, इसीलिए मैंने बकरीका दूध लेना शुरू किया। शरीर-विज्ञानकी दृष्टिसे इन तीनोंमें कोई भेद नहीं है। नैतिकताकी दृष्टिसे 'यह अच्छा होता कि मैं बकरीका दूध लेनेके लोभका संवरण कर सका होता। लेकिन नैतिकताके नियमोंका पालन करनेकी इच्छाके मुकाबले जीते रहनेकी इच्छा ज्यादा प्रबल थी। दुग्धाहारकी नैतिकताके बारेमें मेरे विचार ज्योंके-त्यों है। लेकिन मैं देखता हूँ कि कोई ऐसी सब्जी नहीं है, जो दूधका स्थान ले सके। तुम उसे मत छोडो।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्रीयुत सुधीरकुमार सेनगुप्त
मार्फत बाबू रजनीकान्त सेनगुप्त, प्लीडर
डाकखाना हुगली
बंगाल

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्टस, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ १८५। महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१ से भी।

२१३. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

१६ जुलाई, १९३२

चि० शान्तिकुमार,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तो तुम्हें, अपने बारेमें जो-कुछ लिखना चाहो सो लिखनेको कहा था। यहाँ बैठे हुए तुम्हारे सुख-दुखमें यदि मैं कोई भाग ले सकूँ, तो लूंगा। परिषद्के बारेमें तो कुछ लिखा ही नहीं जा सकता।

१. सुधीर नामक इस बंगाली बालकने गांधीजीको लिखा था : "आपने दूध छोड देनेका व्रत लिया था। लेकिन इसके बाद आपने बकरीका दूध लिया। क्या आपने उसमें कुछ विशेष लाभ देखे? मेरा मुख्य आहार चावल है। दूधके सिवा मैं अन्य किस चीजसे पोषण प्राप्त कर सकता हूँ?"

माँको हम सबका प्रणाम। गोकीबहनके साथ कोई रहता है क्या? उन्हें मैंने कुछ दिन पहले पत्र लिखा तो जरूर था।[1]

सुमतिको[2] आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७९७) से; सौजन्य: शान्तिकुमार मोरारजी

२१४. पत्र: नारणदास गांधीको

१६ जुलाई, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी जो डाक मंगलवारको मिलनी चाहिए थी वह आज अर्थात् शनिवारको मिली है। मिली है, यही ईश्वरकी बहुत कृपा है। लेकिन हमें यह तो समझ लेना चाहिए कि अब डाकके बारेमें सब-कुछ अनिश्चित हो गया है। मेरी डाक अब कदाचित् तुम्हें मिल गई होगी। अनासक्तिका अनुभव तुम सबको भी हो रहा है और यहाँ हम भी इसका अनुभव करते हैं। कैदीको पत्र लिखनेकी अथवा मिलनेकी छूट ही न हो तो वह क्या करे? उसमें भी यदि थोड़ी छूट मिल ही गई हो तो उसपर किसलिए आशाका महल खड़ा करे? इसलिए यदि मेरे पत्र न मिलें तो समझ लेना कि अनपेक्षित परिस्थितियोंके आ पड़नेके कारण ही ऐसा हुआ है। मैं तो नियमित रूपसे कुछ-न-कुछ अवश्य लिखता रहूँगा।

रानीपरज आश्रमके एक आश्रमवासीका दाह-संस्कार किया गया, यह बहुत ही अच्छा हुआ। उसकी आयुके बारेमें कुछ मालूम हो तो लिखना। उसे क्या हुआ था, अगर यह भी मालूम हो तो बताना।

नर्मदाकी कहानी तो किसी उपन्यासकी कहानी जैसी लगती है।[3] यहाँ पड़े-पड़े मैं इस सम्बन्धमें तुम्हारा अथवा नर्मदाका पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकता। इसके बारेमें भाई मावलंकर[4] अथवा यदि उन्हें समय ही न मिल सके या वे वहाँ न हों तो भाई तुलसीदास अथवा फूलशंकर वकीलको पूछना पड़े तो पूछना। अन्तमें तो इसमें धर्मका प्रश्न रह जाता है। इसलिए तुम्हें जो धर्मके आधारपर सूझ पड़े सो करना। तुमने नर्मदाके पतिको लिखा है, यह ठीक किया है।

१. देखिए "पत्र: गोकीबहनको", ८-७-१९३२।

२. शान्तिकुमार मोरारजीकी पत्नी।

३. ससुरालमें नर्मदाबहन राणाके साथ दुर्व्यवहार किया जाता था। उसे सौराष्ट्रके शम्भुशंकर त्रिवेदी वहाँसे छुड़ाकर आश्रम ले आये थे।

४. गणेश वासुदेव मावलंकर।

छोटूभाई[1] यदि अपने पिताकी सेवा करनेके लिए अभी आश्रममें रहे तव तो उसके पिताका आश्रममे आना ठीक ही हुआ, ऐसा कदाचित् कहा ही जा सकता है। हालांकि हमसे ऐसी प्रथा तो जारी नही की जा सकती कि आश्रममे रहनेवाले लोग अपने अपंग सगे-सम्बन्धियोको भी वहाँ रखें। ऐसा करनेसे तो आश्रम विच्छिन्न हो जायेगा। अभी चूँकि समय विषम है, और उसके पिता आश्रममें आ ही गये है, इसीलिए मैंने यह मध्यम मार्ग सुझाया है। छोटूभाई यदि आश्रममे न रहे तो उसके पिताको आश्रममे रहने देनेकी जिम्मेदारी आश्रम कदापि न ले।

हरियोमलका[2] लड़का यदि किसी अनिवार्य कारणवश आश्रममे नही आ सकता तो उसके लिए प्रति मास १५ रुपये भेजना मुझे ज्यादा प्रतीत नही होता। इस तरहकी मदद हमने कितनी ही वार की है। नियम तो जो तुम लिखते हो वही है। लेकिन हरियोमलके सम्बन्धमें उस नियमका अमल किया जाना चाहिए अथवा नही, यह विचारणीय है। तुम्हे इस मामलेमे अधिक जानकारी है, इसलिए मेरी रायको जितना महत्त्व देना हो उतना देनेके वाद जैसा ठीक लगे वह निर्णय करना।

आनन्दी और मणिके लिए डा० कानूगा[3] जो कहे सो करना। दूधसे हाथको कुछ फायदा हुआ हो, सो वात नही।

प्रार्थनाके सम्बन्धमे जो लेख[4] भेज रहा हूँ उसपर खूब चिन्तन-मनन करना। तुम्हे तो यह तुरन्त समझमे आ जायेगा, और यदि समझ लोगे तो औरोको भी आसानीसे समझा सकोगे। मै अनुभवसे देखता हूँ कि उसम समयका अपव्यय होनेके स्थानपर मन हलका होता है और कामका अथवा उतरदायित्वका वोझ ढीला होता जान पड़ता है। आजकल मेरे मनमे प्रार्थना-सम्बन्धी विचार बहुत उठते रहते है। इसमें भी व्यक्तिगत प्रार्थनाके बारेमे अधिक विचार करने लगा हूँ। मुझे तो वचपनसे रम्भाने[5] प्रार्थना करनेकी आदत डाल दी थी, इसलिए मेरे लिए तो वह अत्यन्त सहज वस्तु हो गई है। तथापि, अभी भी मै इसमें त्रुटियाँ देख सकता हूँ। यदि पूर्ण जागरूकता रहे तो इसकी भव्यताके आगे अन्य सब-कुछ मिथ्या ही लगे।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२३९ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. आश्रममें खादी-विभाग एक विद्यार्थी।

२. आश्रमके कृषि-फार्ममें काम करनेवाले एक सिन्धी कार्यकर्ता।

३. डा० बलवन्तराय कानूगा।

४. देखिए "व्यक्तिगत प्रार्थना", १७-७-१९३२।

५. बचपनमें गांधीजीकी परिचारिका; देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ २९।

२१६. पत्र : शम्भुशंकर त्रिवेदीको

[१६ जुलाई, १९३२][1]

प्रिय शम्भुशंकर,

तुम्हारा पत्र मिला। नर्मदाके बारेमें मैंने नारणदासके पत्रमे[2] जो लिखा है, उसे देख लो। ऐसे मामलोमे मैं यहाँसे कोई सलाह नही दे सकता। जहाँ वकीलसे सलाहकी जरूरत हो, वहाँ उससे सलाह ली जानी चाहिए, यही बुद्धिमानी है। इसके बाद यदि आश्रमको कुछ करना है तो नारणदासको पूरा अधिकार है। उसका कर्तव्य जो कहे सो उसे करना चाहिए। नर्मदाको जो पत्र मैं लिख रहा हूँ उसे देख लेना।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०), पृष्ठ ३१९।

२१७. व्यक्तिगत प्रार्थना

१७ जुलाई, १९३२

व्यक्तिगत प्रार्थनाके विषयमे मैं कुछ लिख[3] तो गया हूँ, लेकिन उसके महत्त्वके सम्बन्धमे फिरसे कुछ लिखनेकी आवश्यकता जान पड़ती है। मुझे ऐसा लगता है कि सामाजिक प्रार्थनामे दिलचस्पी न होनेका एक कारण व्यक्तिगत प्रार्थनाकी आवश्यकताका अज्ञान हो सकता है। व्यक्तिगत प्रार्थनासे ही सामाजिक प्रार्थनाकी व्यवस्था हुई है। व्यक्तिको प्रार्थनाकी भूख न हो तो समाजको क्योकर हो सकती है? सामाजिक प्रार्थनाका उपयोग भी व्यक्तिके लाभके लिए है। व्यक्तिके आत्म-दर्शनमे — आत्मशुद्धिमे — सामाजिक प्रार्थना सहायक होती है। अतएव यह आवश्यक है कि सब कोई व्यक्तिगत प्रार्थनाके महत्त्वको पहचान लें। जहाँ बच्चा समझने लायक होता है वहाँ माता तुरन्त ही उसे प्रार्थना सिखाती है। सारे धर्मोके लिए यह सामान्य वस्तु है।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", १६-७-१९३२।

३. देखिए "प्रार्थना", १९-६-१९३२।

इस प्रार्थनाके लिए दो समय तो स्पष्ट रूपसे निर्धारित है: अर्थात् सवेरे उठते समय उस अन्तर्यामीको याद किया जाये और रातको सोते समय उसका ध्यान किया जाये। इस बीच जाग्रत स्त्री-पुरुष अपनी प्रत्येक क्रियाको करते समय अन्तर्यामीको याद करेंगे; उसे साक्षी रूप मानेंगे। ऐसा करनेवाले व्यक्तिसे बुरा कृत्य तो हो ही नही सकता और अन्तमे उसको ऐसी आदत पड़ जायेगी कि वह अपने प्रत्येक विचारका साक्षी ईश्वरको मानेगा, उसे स्वामी बनायेगा। यह शून्यवत होनेकी स्थिति हुई। इस तरह जिसके समक्ष सारा समय ईश्वर विद्यमान रहता है उसके हृदयमें राम वास करता है।

ऐसी प्रार्थनाके लिए खास मन्त्र अथवा भजनकी जरूरत नही होती। हालाँकि प्रत्येक क्रियाके आरम्भ और अन्तके लिए मन्त्रोका विधान किया गया है, लेकिन उसकी आवश्यकता नही। हमे तो चाहे किसी भी नामसे, किसी भी तरह, चाहे किसी भी स्थितिमें ईश्वरको याद करना है। ऐसा करनेकी आदत बहुत कम लोगोको पड़ती है। यदि बहुतोंको ऐसी आदत हो तो जगतमे पाप कम हो जायें, मलिनता क्षीण हो जाये, और पारस्परिक व्यवहार शुद्ध हो जाये। ऐसी शुभ स्थितिको प्राप्त होनेके लिए प्रत्येक मनुष्यको, जैसा कि मैंने कहा है, दो समय तो निर्धारित करने ही चाहिए, और उसे इसके लिए अन्य समय भी निर्धारित कर लेना चाहिए और उसमें नित्य इजाफा करते जाना चाहिए, जिससे कि अन्तमे हर साँसमें रामका नाम निकलने लगे।

इस व्यक्तिगत प्रार्थनामें तनिक भी समय नही लगता। उसमे समयकी नही, जागरूकताकी जरूरत है। जैसे आँख मूँदनेमे समय नही लगता वैसे व्यक्तिगत प्रार्थनामें भी समय नही लगता। अपितु, जिस प्रकार हम जानते है कि पलक अपना [आँख मूँदनेका काम] करती है, उसी प्रकार हमारे हृदयमें भी निरन्तर प्रार्थना चलती रहनी चाहिए। ऐसी प्रार्थना करनेवालेको याद रखना चाहिए कि जिसका हृदय मलिन है वह उस मलिनताके रहते हुए प्रार्थना नही कर सकता। तात्पर्य यह कि प्रार्थनाके समय उसे मलिनताका त्याग करना ही होगा। जैसे कोई मनुष्य किसीके सामने कोई मलिन कार्य करनेसे शरमाता है, उसी तरह उसे ईश्वरके समक्ष भी मलिन कार्य करते हुए शरमाना चाहिए। लेकिन ईश्वर तो सदैव हमारे प्रत्येक कार्यको देखता है, विचारको जानता है, अतः ऐसा एक भी क्षण नही जब उससे छिपकर कोई भी काम अथवा विचार किया जा सकता हो। इस तरह जो मन:पूर्वक प्रार्थना करेगा वह अन्ततः ईश्वरमय हो जायेगा, अर्थात् निष्पाप हो जायेगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२१८. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

१७ जुलाई, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

तेरा पत्र मिला। इसमें सब प्रश्नोंके उत्तर नही आते। मुंह-जबानी पूछे प्रश्नोका तूने जो उत्तर दिया था उसका मुझे स्मरण नही है। उसके आधारपर मेरा कुछ लिखना उचित नही होगा। इसीलिए मैंने उन्हे लिखित रूपमें पूछा है। लेकिन अब तुझे परेशान नही करूँगा। तूने जो-कुछ भेजा है उसपर से क्या हो सकता है, सो देखूंगा। तूने अपनी दशाका जो वर्णन किया है वह दुखद है, तथापि मैं निराश नही होऊँगा। तू सचेत हो, ऐसा मेरा विश्वास है। और तू अपनी सामर्थ्यानुसार प्रयत्न भी करती है अतएव किसी-न-किसी दिन तुझमें आवश्यक शक्ति अवश्य आयेगी; तुझमे स्वयं इतना विश्वास होना चाहिए — ऐसी मेरी कामना है। तू यदि स्वयंमे विश्वास खो बैठेगी तो दूसरोका विश्वास कदाचित् ही काम आयेगा।

हम तीनों मजेमें है। हम अध्ययनमें खूब लगे रहते है।

डाककी स्थिति अब गड़बड़ा गई है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४२) से।

२१९. पत्र : मोहन एन० परीखको

१७ जुलाई, १९३२

चि० मोहन,

तूने पत्र लिखा सो ठीक किया। तूने एकादशी किस तरह बिताई, सो अब लिखना। महादेव काका तुझे आशीर्वाद कहते है, और यदि तू सरदारको प्रणाम लिख भेजे तो वे भी तुझे आशीर्वाद भेजेंगे। अरे भूल हुई। मै देखता हूँ कि तूने सरदारको भी प्रणाम लिखे हैं, अतएव उनके आशीर्वाद भी स्वीकार करना।

लिखावट सुधारना। धब्बे नही होने चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१८१) से।

२२०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१७ जुलाई, १९३२

चि० प्रेमा,

क्या यह समझ लूं कि तेरा नसीब ही खराब है? मैंने तो जन्मदिनका आशीर्वाद लौटती डाकसे भेज दिया था, लेकिन मेरा पत्र[1] ही अधरमे लटक गया। कदाचित् कल भेजा गया हो तो कहा नही जा सकता। लेकिन कोरे कागजमे लिखे आशीर्वादसे क्या लाभ हो सकता है? यदि आशीर्वाद हृदयसे निकला हो तो उतनेसे सन्तोष मानना चाहिए और वह तो है ही, अर्थात् मैं तुझे हृदयसे आशीर्वाद देता हूँ। हृदय किस तरहसे काम करता है, इसकी हमे खबर भी नही होती और सच केवल यही है, बाकी सब मिथ्या है।

तुझे पीठके दर्दका तुरन्त इलाज करना चाहिए। उसका मासिक धर्मके साथ सम्बन्ध हो सकता है। क्या वह समयसे और ठीक आता है? आनन्दी, मणि और मंगलाके बारेमें मुझे यही सन्देह है। तू लड़कियोंके साथ बातचीत करके जान लेना। सम्भवतया मणिको मासिक धर्म शुरू होनेवाला हो। मणि जब आश्रममें आई थी तब वह तीन सालकी थी, यह मुझे याद है। आज उसे सोलह वर्षकी हो जाना चाहिए। मंगलाकी भी कदाचित् यही उम्र हो। सब-कुछ ठीक-ठीक जान लेना।

आश्रममें जो नई बहनें आई हैं, उनमें से जो लिखना जानती हो उन्हें लिखनेके लिए कहना। नर्मदासे अच्छी तरह परिचय कर लेना। उसकी कहानी करुणाजनक है।

प्रेसिडेंट विल्सनके जीवन-वृत्तान्तसे मैं अवगत नही हूँ। जैसा कि सुननेमे आया है, वे एक अच्छे आदमी थे और उनके उद्देश्य भी अच्छे थे।

गत युद्धसे कुछ लाभ हुआ हो, ऐसा नही लगता। उससे नीतिका बल क्षीण हो गया है, द्वेष बढ़ गया है। लड़नेकी वृत्तिमें कमी नही आई है। लोभ बढ़ गया दीख पडता है।

किसी मनुष्य अथवा वस्तुको ध्यानमे रखकर प्रार्थना की जा सकती है। उसका फल भी मिलता है। लेकिन निःस्वार्थ भावसे की गई प्रार्थना आत्मा और जगतके लिए अधिक कल्याणकारी होती है। प्रार्थनाका प्रभाव अपनेपर होता है। तात्पर्य यह कि इससे अन्तरात्मा अधिक जाग्रत होती है, और जैसे-जैसे जागृति आती जाती है वैसे-वैसे प्रभावका विस्तार फैलता जाता है। ऊपर हृदयके बारेमे मैंने जो लिखा है वह यहाँ भी लागू होता है। प्रार्थना हृदयका विषय है। मुँहसे प्रार्थना बोलने आदिकी जो क्रियाएँ हैं वे हृदयको जाग्रत करनेके लिए हैं। यह जो निस्सीम शक्ति हमे बाहर दिखाई देती है वही हृदयमें भी है और उतनी ही व्यापक भी है। उसे शरीरका कोई व्यवधान नही। व्यवधान तो हम स्वय पैदा करते हैं। प्रार्थना द्वारा वह व्यवधान

१. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको", ३०-६-१९३२।

दूर होता है। प्रार्थनासे इच्छित फलकी प्राप्ति हुई अथवा नही, उसकी हमें खबर नही होती। मै यदि नर्मदाकी मुक्तिके लिए प्रार्थना करता हूँ और वह दुःखसे मुक्त हो जाती है, तो मुझे ऐसा नही मान लेना चाहिए कि यह मेरी प्रार्थनाका फल है। यह प्रार्थना निष्फल तो नही जाती, लेकिन वह हमे क्या फल प्रदान करती है सो हमें मालूम नही होता। और फिर, हमारा मनचाहा फल मिल गया इसलिए वह अच्छा ही है, ऐसा भी हमे नही मानना चाहिए। यहाँ भी हमे 'गीता बोध' मे दिखाये गये मार्गका अनुसरण करना है। प्रार्थना अनासक्त भावसे की जानी चाहिए। यदि हम किसी भी व्यक्तिके लिए प्रार्थना करें तो हमे अनासक्त भावसे करनी चाहिए अर्थात् फलके प्रति उदासीन रहकर करनी चाहिए। किसीकी मुक्ति अगर हमें इष्ट जान पड़े तो उसके लिए प्रार्थना करे। लेकिन वह मिलेगी अथवा नही, इसके विषयमे निश्चिन्त रहे। यदि विपरीत परिणाम निकले तो ऐसा माननेका कोई कारण नही कि हमारी प्रार्थना निष्फल गई। क्या इससे ज्यादा खुलासा चाहती है?

उर्दू पुस्तकोकी मैने जो तालिका माँगी है सो याद रखना। अब तो यह पत्र तुझे कब मिलेगा और इसका जवाब कब आयेगा, इसके बारेमें कुछ भी निश्चित नही है। अनिश्चिततामें निश्चितताका विकास करना और निश्चितता देखना हमारा काम है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९४) से। सी० डब्ल्यू० ५७५० से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

२२१. पत्र : देवदास गांधीको

१७ जुलाई, १९३२

प्रिय देवदास,

हामिद अलीके उर्दू पत्रकी पीठपर लिखा तुम्हारा ३० जूनका पत्र कल दोपहरको यानी १६ जुलाईको मिला। आजकल मेरी डाक बड़ी अनियमित हो गई है। वह बहुत चक्कर लगाकर मुझतक पहुँचती है। इसे मेरा सौभाग्य ही कहना चाहिए कि इसके बावजूद वह मुझे मिल जाती है। एक कैदीके भला क्या अधिकार है? कैद होनेके मतलब है अधिकारोका अभाव। चूंकि मै कैदका अर्थ यह लगाता हूँ, इसलिए मै अपना मन स्थिर रख सकता हूँ। मुलाकातोका भी यही हाल है। बहुत करके तो तुम महादेवसे मिल सकोगे। लेकिन जैसा तुम समझते हो, वैसी कोई समयसूची नही बनाई जा सकती। या तो तुम उससे मुलाकात न कर सकनेका खतरा लो और या फिर उससे मिलनेका मोह त्याग दो। यदि हो सकता है तो बेशक तुमसे और लक्ष्मीसे मिलकर मुझे प्रसन्नता होती, लेकिन मैने जो कदम उठाया है वह निश्चय ही ठीक प्रतीत होता है। सबसे अधिक आघातका अनुभव बा करती है, लेकिन उसने तो आघात झेलनेके लिए ही जन्म लिया है। मेरे साथ सम्बन्ध बनाने या रखनेवालेको

बड़ी कीमत देनी होती है। कहा जा सकता है कि बा को सबसे ज्यादा मूल्य चुकाना पड़ा है। पर मुझे बहुत सन्तोष है कि इससे बा ने कुछ खोया नही है।[1]

वरदाचारीके बारेमें तार मिलते ही मैंने भी तार भेज दिया था।[2] मैंने पत्र भी लिखे। मुझे अपने तारकी प्राप्ति-सूचना भी राजगोपालाचारीके जरिये तारसे ही मिल गई। कल लक्ष्मीका इसी आशयका एक पत्र भी मुझे मिला। इसमे मेरे तद्विषयक पत्र[3] की पहुँचकी कोई सूचना नही है। लेकिन लगभग उस दौरान मेरी डाक गलत दिशामे चली गई थी।

हममे से किसीको भी कल्पना नही थी कि तुम सितम्बरमे रिहा कर दिये जाओगे। हालाँकि गवर्नरने तुम्हारे स्वास्थ्यका ब्योरेवार हाल मुझे भेजा है, लेकिन ऐसा नही लगता कि तुम्हारा वहाँसे तबादला किया जायेगा। मै आशा करता हूँ कि तुम्हारे स्वास्थ्यको अब कोई नुकसान नही पहुँचेगा। हनुमान प्रसादकी उपस्थिति मेरे लिए बहुत शान्तिदायक साबित हुई। हामिद अलीके पत्रसे मुझे पता चला कि उन्होने 'रामचर्चा' भी भेजी थी। मै उसे पढ़ रहा हूँ। मैंने शहीद बालक, खेती-बाडी तथा कीमियागर आदिके बारेमे कहानियाँ पढी। यह सच है कि कुछ शब्द मै नही समझ सका, अन्यथा कोई कठिनाई नही हुई। मुझे अभीतक आरोग्यपर पुस्तक[4] नही मिली है। यह अच्छा होगा कि दिल्लीसे 'अल-फारूक' न मँगायी जाये। हमारे आश्रममें उसकी एक प्रति थी। मैंने उसे मँगाया है। 'रामचर्चा' खत्म करनेके बाद मै उसे पढूँगा। मुझे वह पसन्द है। मुझे अब याद आता है कि इसे पहले भी पढ चुका हूँ। इसमे मैंने जो अर्थ लिख लिये थे वे मौजूद है। इस किताबको यदि दो-तीन बार पढ़ लिया जाये तो गलत नही होगा। तुम हामिद अली और अन्य लोगोंको अंग्रेजीमे ही लिखते होगे। तुम्हे उर्दूमें लिखनेकी आदत डालनी चाहिए। मेरा विचार उसे उर्दूमे एक छोटा पत्र लिखनेका है। उसकी लिखावट तो बिल्कुल कातिबो जैसी है। वह जरूर कातिब होगा। हम लोग लेखन-कलाको भूल गये है। उर्दूमें यह अब भी कायम है।

मेरे दूध लेनेका कारण यहाँके सुपरिटेंडेंट [का आग्रह] है। वह परेशान थे और मेरा स्वास्थ्य कुछ ढीला पड़ गया था, इसलिए मै दूध ले रहा हूँ। इसकी कोई आवश्यकता नही थी। सम्भव था कि स्वास्थ्य शीघ्र ही फिरसे सामान्य हो जाता। लेकिन मैंने यहाँ प्रयोग जारी रखना ठीक नही समझा। मै फिलहाल दूध पीनेसे कोई लाभ नही देखता। वजन जो कम हो गया था, अब बढ़ कर १०५½ पौंड हो गया है। वह घट कर १०३ पौंड हो गया था। दूध लेनेका मुझे हाथ पर कोई असर नही दिखाई पड़ता। जब दूध लेता था, दर्द तो उस समय भी था। लेकिन ऐसा नही कहा जा सकता कि इस पीड़ासे मुझे कोई परेशानी है, क्योंकि

१. इस अनुच्छेदको **महादेवभाईनी डायरी**, खण्ड-१के गुजराती अंशसे मिला लिया गया है।
२. देखिए "तार: च० राजगोपालाचारीको", ५-७-१९३२।
३. देखिए "पत्र: लक्ष्मीको", ७-७-१९३२।
४. **गाइड टु हैल्थ**; देखिए "पत्र: हामिद अली खाँको", १७-७-१९३२।

दर्द तभी होता है जब कुहनीको एक खास ढगसे हिलाया-डुलाया जाये। जब वैसी हिल-डुल नही होती तो कोई दर्द नही होता। [कुहनीको] इस प्रकार हिलाना-डुलाना लगभग बन्द है। चिन्ताकी कतई कोई बात नहीं है।

वल्लभभाईने गाण्डीव चरखेपर कताई और संस्कृतका अध्ययन शुरू कर दिया है। जब उन्होंने सुना कि राजाजी संस्कृत पढ़ रहे हैं तो वह भी बहुत उत्साहित हो उठे। वह पूरे मनसे उसका अध्ययन कर रहे हैं। उन्होंने सातवलेकरकी कुंजीके २४ भाग मँगाये थे। इसमे से पहला भाग वह (छः दिनमे) समाप्त कर चुके हैं। अब वह दूसरा भाग पढ़ रहे हैं। उनका अध्ययन बहुत तेजीसे चल रहा है। सातवलेकरकी पुस्तकें कुल मिला कर अच्छी हैं। इन्हे याद करना आसान है। शायद तुमने भी इन्हे देखा और पढ़ा हो। उर्दू, खगोल-विज्ञान और राजनीतिक अर्थशास्त्रका मेरा भी अध्ययन चल रहा है। बीच-बीचमें मै कुछ धर्म-पुस्तकें भी पढ़ता हूँ। उदाहरणके लिए, मैंने अभय शर्मा[1] रचित 'वैदिक विनय' पुस्तक पढ़ी। अब मै 'स्वाध्याय संहिता'[2] नामक ग्रन्थ पढ रहा हूँ। इसमें वेदोंसे तथा अन्य पुस्तकोंसे चुने हुए अश दिये गये हैं और नीचे हिन्दीमे उनके अनुवाद दिये हुए हैं। महादेव फ्रेंच सीख रहा है और कुछ और भी पढ रहा है। अगर मुझे कुछ लिखानेको होता है तो मेरे लिए वह लिखता भी है। एक घटा वह वल्लभभाईके साथ देता है। वह मेरे लिए रोटी भी पकाता है। मैं बेकरीकी रोटीकी जगह [घरकी बनी] रोटी लेता हूँ। बेकरीकी रोटीमे चोकर नही होता, जबकि घरकी बनी रोटीमे होता है। यही कारण है कि मै फिरसे रोटी लेने लगा हूँ। मैं अपने ही हाथसे चिट्ठियाँ लिख रहा हूँ, क्योंकि मै ज्यादातर मौन रखते समय ही चिट्ठियाँ लिखता हूँ। मैं उनमे से अधिकांश किसी और से भी लिखवाता हूँ। मै जो-कुछ भी लिखता हूँ, उसे मुझे दाहिने हाथसे लिखनेमें कोई दिक्कत नही होती। मुझे बायें हाथसे लिखनेकी इजाजत नही है, इसीलिए मैं दाहिने हाथसे लिखता हूँ। मै फुरसतके वक्तमे आश्रमका इतिहास लिख रहा हूँ।[3] मैं उसे जल्दी ही खत्म कर लेनेकी आशा करता हूँ। मै मगन-चरखे पर कताई करता हूँ।

जालभाई नौरोजी अब चल-फिर सकते हैं। वह बिल्कुल मौतके मुँहसे बचे हैं।

मैंने राजाजीका पत्र तुम्हें वापस कर दिया है। मुझे तुम्हारे २ जूनके पत्रके बारेमें चिन्ता है। यहाँ उसे फिर ढुंढवाऊँगा। मेरे साथियोंकी तरफसे जो आशीर्वाद चाहो उनके सहित।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३३१। महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ से भी।

१. अभयदेव शर्मा, आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी।

२. वैदिक मुनि हरिप्रसादजी द्वारा रचित।

३. देखिए "सत्याग्रह आश्रमका इतिहास", ११-७-१९३२।

२२२. पत्र : मदालसा बजाजको

१७ जुलाई, १९३२

चि० मदालसा[1],

अभिमान खराब अर्थमें प्रयुक्त होता है, स्वाभिमान अच्छे अर्थमें। तुम बड़े आदमीकी लड़की हो यह समझकर फूल जाओ तो तुम अभिमानी कहलाओगी। परन्तु कोई तुम्हारा अपमान करे और उससे तुम डरो नहीं, तो यही माना जायेगा कि तुमने अपने स्वाभिमान या स्वमानकी रक्षा की। ओम[2] पत्र क्यों नहीं लिखती?

कमला[3] तो लिखेगी ही क्यों?

बाबू[4] अब तो बहुत बड़ा हो गया होगा। क्या वह अभी भी बहुत मिठाई पसन्द करता है?

पत्र लिखनेमें आलस्य न करना। बालकृष्णसे[5] लिखनेको कहना।

बापू

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद

२२३. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

१७ जुलाई, १९३२

प्रिय रामेश्वरदास,

'प्रिय' विशेषण मैं भूलसे लिख गया होऊँगा। मैं किसीको अपना 'प्रिय' नहीं बना सकता। जो मेरा 'प्रिय' होना चाहता है उसे गले में जंजीर पहननी चाहिए। वह दुर्बलताका बहाना करके बच नहीं सकता। तुम पक्के बनिया मालूम होते हो। तुम जहाँ कहीं (सम्भव होता है), कमजोरीका बहाना करके बच निकलते हो। ऐसा आदमी मेरा 'प्रिय' कैसे बन सकता है? यदि एकादशीका व्रत नाममात्रके लिए है, तो तुम्हें ईश्वर और समाजसे विनम्रतापूर्वक कह देना चाहिए कि उपवास करनेकी ताकत तुममें नहीं है। लेकिन तुम्हें इससे बचनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। जो-कुछ व्रत लिये गये हो उनपर दृढ़ रहना चाहिए और उनका पालन करना चाहिए। इससे जबर्दस्त शक्ति पैदा होगी।

१. जमनालाल बजाजकी लड़की।
२ और ३. मदालसा बजाजकी बहनें।
४. मदालसाके छोटे भाई रामकृष्ण।
५. बालकोबा, विनोबा भावेके छोटे भाई।

अब विनोली[1] प्रसन्न होगा। रामके बारेमें जैसा वह कहे, वैसा प्रबन्ध कर देना। किसी पिताको अपनी कमजोरी अपनी सन्ततिको नही प्रदान करनी चाहिए। जहाँतक बन सके उसे उनके हितोंकी रक्षा करनी चाहिए। दशरथने मरना पसन्द किया और रामको वनमें जाने दिया। यह याद रखते हुए शक्ति प्राप्त करो।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३१३।

२२४. पत्र : लक्ष्मीको

१७ जुलाई, १९३२

बेटी लक्ष्मी,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला। देवदासने वरदाचारीके विषयमें मुझे तार भेजा था, जिसपर से मैंने तुम्हे एक चिट्ठी[2] लिखी थी। वह तुम्हे अबतक मिल गई होगी। उसके साथ ही एक पत्र अन्नाको और एक पापाको भी भेजा था। इससे आगे मैं क्या सान्त्वना दे सकता हूँ? हम मृत्युका भय छोड़ दें और उसे अपना सबसे बड़ा मित्र मानने लगें, तो हमारे सभी दुःख मिट जाते हैं। आत्मा अविनाशी है, अतः हम दुःख क्यो करे? इस विचारको मनमें दृढ़ करना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि नरसिंहन[3] तुम्हारे पास दौड़ा गया है। अगर गया हो तो अन्नासे कहना कि उसे वापस चला जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती लक्ष्मी
गांधी आश्रम
तिरुचेङ्गोडु

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३३९।

१. अनुमानतः विनोबा, देखिए "पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको", २१-६-१९३२।
२. देखिए "पत्र : लक्ष्मीको", ७-७-१९३२।
३. लक्ष्मीका भाई।

२२५. पत्र : खोड़ीदास एच० शाहको

१७ जुलाई, १९३२

भाई खोड़ीदास,

अगर तुमने व्रत लिया है, तो उसका पालन करना तुम्हारा धर्म है।

मोहनदास

श्री खोड़ीदास एच० शाह
रोजिद
काठियावाड़

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३०१।

२२६. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

१७ जुलाई, १९३२

बालक और बालिकाओ,

आषाढ़ मासके शुक्ल पक्षकी एकादशीकी छुट्टी, विशेष छुट्टी क्यों मानी जाती है? अबतक ऐसा माना जाता रहा है कि एकादशीकी छुट्टी उपवासके लिए होती है। लेकिन दिखता है कि प्रेमाबहनने कुछ खोज की है। उनको समझाओ। इस छुट्टीको एक नये ढंगसे मनानेपर मेरी आपत्ति नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम उसका महत्त्व समझो। विद्यार्थीको चाहिए कि वह जो-कुछ करता है उसका महत्त्व समझनेका प्रयत्न करे।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ३०९।

२२७. पत्र : मणिको

१७ जुलाई, १९३२

प्रिय मणि [1],

मैं समझता था कि तू कभी बीमार नहीं पड़ेगी। तब फिर यह कैसे हुआ कि तू फिरसे बीमार पड़ गई? तू अब पत्र नही लिखती। क्या तुझे आश्रममें रहना अच्छा लगता है? तू माँके पाससे क्यों चली आई? मुझे हर बात विस्तारसे लिख। तेरी इच्छा क्या है, सो भी दिल खोल कर लिख।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३११।

२२८. पत्र : आनन्दीको

१७ जुलाई, १९३२

प्रिय आनन्दी,

ऐसा लगता है कि तुम्हें फिरसे बुखार हो गया है। तुम उसका कारण क्यो नही पता चलाते? अब तुम डा० कानूगाकी गोलियाँ ले रहे हो। मुझे बताओ कि उनका क्या असर है। मेरा पत्र मिले या न मिले, तुम मुझे बराबर लिखा करो।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३११।

१. लक्ष्मीदास आसरकी सबसे छोटी पुत्री।

२२९. पत्र : शारदा सी० शाहको

१७ जुलाई, १९३२

प्रिय शारदा,

मै नही समझता कि राम और भरत जब जीवित थे उस समय लोग उनकी आराधना करते थे। अनुभव बताता है कि व्यक्तिके मर जानेके बाद ही उसकी पूजा की जाती है। यह एक अलग बात है कि जीवितावस्थामें उनको सम्मानकी दृष्टिसे देखा जाता है। इसे हम आराधना नही कह सकते। जीवित आदमीको पूर्ण नही समझा जा सकता और पूजा और आराधना पूर्ण व्यक्तिकी ही करना उचित है। जिस व्यक्तिमें दोष हो, या जिससे गलती होनेकी सम्भावना हो उस व्यक्तिकी आराधना करनेसे नुकसान होगा, क्योंकि हम जिस व्यक्तिकी आराधना करते है, वैसे ही बन जाते है। मुझमें कोई शक्ति नही है और न चमत्कार दिखानेकी ही मेरी वैसी कोई इच्छा है, जैसे ईसा मसीहने दिखाये थे। उनमे और मुझमे कोई तुलना हो ही कैसे सकती है। वह बहुत बड़े महात्मा थे। भाईको लिखे तो उससे मुझे लिखनेको कहना।

अपना वजन जरूर बढ़ाओ।

क्यों तुझे पुरुष और स्त्रीकी शरीर-रचनामे भेद नही दिखाई पड़ता? जो भेद तू देखती है, उन्हे केवल आँखोसे ही देखा जा सकता है। मर्दके मूँछ होती है, जबकि स्त्रीके नही होती। स्त्री बच्चे जनती है, लेकिन पुरुष नही। स्त्री बच्चेको स्तनपान कराती है, लेकिन पुरुष नही कराता। क्या ये सब भेद बड़े भेद नही हैं, जिन्हें सभी लोग देख सकते है? और इसीलिए उनके काम और उनकी शिक्षामें भेद होना चाहिए।

बापू

[गुजरातीसे]

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९५४) से; सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

२३०. पत्र : छोटूभाईको

१७ जुलाई, १९३२

प्रिय छोटूभाई[1],

तुम्हारा पत्र मिला। यदि इस समय तुम अपने पिताकी देखभालके लिए आश्रममे बने रहो तो उनके आश्रममे बने रहनेमे कोई आपत्ति नही होगी; अन्यथा मेरा विचार है कि आश्रम उनकी देखभाल नही कर सकेगा, और ऐसे वक्तमे आश्रमके ऊपर यह बोझ नही पड़ने देना चाहिए। उनके कब्जका जो विवरण तुमने भेजा है उसपर विचार करनेके बाद मैं एक ही उपाय सोच पाता हूँ, और वह यह कि जबतक वह १०-१५ दिनका लगातार उपवास नही करते, उनका पेट साफ नही होगा। लेकिन यह तो वे और तुम ही कह सकते हो कि ऐसा करनेकी ताकत उनमें है या नही। ताकतसे मतलब उनकी शरीरकी ताकत नही, उनके मनोबलसे है। वे उपवास रखे तो भी साथ-साथ उन्हे कुछ उपचार भी करना होगा, अर्थात् खूब पानी पीना और प्रतिदिन एनिमा लेना।

ऐसा नही लगता कि तुम्हारे पिताको लिखना आता है, क्योकि सारा पत्र तुम्हारा ही लिखा हुआ है। अतः मैं उन्हे अलगसे नही लिख रहा हूँ।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८००(४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३१५-७।

२३१. पत्र : हामिद अली खाँको

१७ जुलाई, १९३२

भाई हामिद अली[2],

देवदासने तुम्हारा पत्र मुझे पढ़नेको भेजा है। मुझे जो किताबे भेजी गई है उनके लिए मैं तुम्हारा आभारी हूँ। मै अभी भी 'रामचर्चा' पढ रहा हूँ। मैंने अन्य पुस्तके समाप्त कर ली है। तीनो ही किताबे मुझे बहुत भाई। उन्हे समझनेमे बहुत कठिनाई नही हुई। कृपया 'अल-फारूक' [इस्लामके द्वितीय खलीफा, फारूक, की जीवनी] न भेजना, क्योकि वह मेरे पास यहाँ है। लेकिन मेरे लिए जो तुम्हे ठीक

१. साधन-सूत्रमें "छोनभाई" लिखा है; देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", १६-७-१९३२
२. जामिया मिलियावाले।

लगें, ऐसी कुछ और किताबें अवश्य भेजो। जामियाके सभी भाइयोंसे मेरा वन्देमातरम् कहना।

तुम्हारा,
मोहनदास गांधी

[पुनश्च:]

मुझे अभी तक 'गाइड टु हेल्थ' ('आरोग्यकी कुंजी')[1] पुस्तक नहीं मिली है। मैंने देवदासको उसके बारेमें लिखा है। प्रेस जलनेकी खबर सुनकर मुझे बहुत दुख हुआ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३३७।

२३२. पत्र: इन्दु एन० पारेखको

१७ जुलाई, १९३२

प्रिय इन्दु,

यदि तुम भली-चँगी हो, तो प्रार्थनामें अवश्य शामिल होना। यहाँ बैठकर मैं तुम्हारी माँगके बारेमें कुछ नहीं जान सकता। नारणदास जैसा करनेको कहे वैसा करो। तुम्हारा जीवन नियमित हुआ या नहीं? क्या तुम अपना ध्यान पढाईमें एकाग्र कर सकती हो? क्या तुम्हारे मस्तिष्ककी उलझन कम हुई है? क्या दिमाग अपनी जिम्मेदारी समझने लगा है? इन सब बातोंका विचार करो।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३०९।

१. देखिए खण्ड ११ और १२में "आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान" शीर्षकसे प्रकाशित लेखमाला।

२३३. पत्र : एस्थर मेननको

१८ जुलाई, १९३२

प्रिय बिटिया,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि अपेक्षित समय पर मेरा पत्र न मिले तो परेशान मत होना। मेरी डाक थोड़ी गड़बड़ चल रही है। मैं आशा कर रहा हूँ कि इसमें शीघ्र ही सुधार हो जायेगा। फिर भी, किसी कैदीको उसकी स्वस्थ आवश्यकताओंकी सहज सन्तुष्टिके लिए जो भी सुविधाएँ प्रदान की जायें, उसे उन्हींसे सन्तोष कर लेना पड़ता है।

तुम जब अपाहिज बहनसे मिलो तो उससे यह जरूर कहना कि मुझे अकसर उसकी याद आती है। तुम्हारे पड़ोसमें विकलांग बच्चोंके लिए जो छोटा-सा स्कूल[1] है वहाँ पता नहीं तुम कभी जाती हो या नहीं। मेरा खयाल है कि इस संस्थामें कुछ लगनशील कार्यकर्ता हैं। अगर तुम्हारे पास समय हो तो मैं चाहूँगा कि तुम इस संस्था और उसके प्रबन्धकोंके बारेमें और जानकारी प्राप्त करो, और उसकी प्रगतिके बारेमें मुझे लिखो।

तुमने लिखा है कि किसी स्त्रीके न होनेके कारण बजाजका घर बहुत सूना-सूना लगता था। मैंने हमेशा ऐसा माना है कि यह स्त्री और पुरुषोंके बीच कामके बँटवारेसे सम्बन्धित हमारी गलत धारणाका परिणाम है। कामका विभाजन अवश्य होना चाहिए। लेकिन घरको ठीक-ठीक हालतमें रखनेका मौका आनेपर पुरुषका लाचारी अनुभव करना और अपनी देखभाल खुद करनेका मौका आनेपर स्त्रीका लाचारी अनुभव करना (जो पश्चिमकी अपेक्षा यहाँ अधिक है) गलत ढंगके लालन-पालनका परिणाम है। यदि कोई स्त्री देखभाल करनेके लिए न हो तो पुरुषको इतना काहिल क्यों होना चाहिए कि वह अपना घर साफ-सुथरा न रख सके, और स्त्रीको ऐसा क्यों लगना चाहिए कि उसे हमेशा एक पुरुषके संरक्षणकी आवश्यकता है? मुझे लगता है कि इस असंगतिका कारण ऐसा मानने और सोचनेकी हमारी आदत है कि स्त्री मूलतः घरकी सार-सँभाल करनेके लिए ही उपयुक्त है और उसे ऐसा आरामका जीवन बिताना चाहिए कि वह निर्बलताका अनुभव करे और उसे हमेशा संरक्षणकी आवश्यकता बनी रहे। हम आश्रममें एक भिन्न वातावरण पैदा करनेकी कोशिश कर रहे हैं। यह कठिन काम है। लेकिन यह काम करने योग्य प्रतीत होता है।

१. १९३१ में गोलमेज सम्मेलनके लिए इंग्लैंड जानेके अवसर पर गांधीजी इस स्कूलमें गये थे।

श्रीमती विस्टनको पत्र लिखो तो उन्हें मेरा और महादेवका स्मरण दिला देना। बच्चोंको बहुत-बहुत चुम्बन।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (नं० ११२) से; सौजन्य: भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार। माई डियर चाइल्डसे भी।

२३४. पत्र: प्रिंसेस एफी एरिस्टार्शीको

१८ जुलाई, १९३२

प्रिय बहन,

आपने जो सुन्दर उपहार भेजे हैं उनके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ। मुझे 'द वे ऑफ द क्रॉस' नामक सुन्दर पुस्तक, जिसपर आपने चिह्न लगा दिये हैं, और क्रूसारोपण सम्बन्धी कार्ड मिले, जिनके पीछे आपने समुचित विवरण और विचारपूर्ण उद्धरण लिख दिये हैं।

मुझे आशा है कि आपकी सभी परेशानियाँ खत्म हो गई होंगी, और अगर न हुई हों तो [मैं जानता हूँ कि] ईश्वरने आपको इतनी बुद्धि तो दी ही है कि आपके ही एक उद्धरणकी भाषामें कहूँ तो, आप उन्हें "प्रच्छन्न वरदान" रूप मानेंगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

प्रिंसेस एरिस्टार्शी
होटल स्कोट्जकी
फ्राईबर्ग, आई० बी०, जर्मनी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २५३।

२३५. पत्र : गणेशदत्तको

१८ जुलाई, १९३२

प्रिय गणेशदत्तजी,

मुझे आपकी पुस्तक मिली। कैदियोको भूमिका लिखनेकी इजाजत नही है।

आपका,
मोहनदास गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २५१।

२३६. पत्र : नरहरि देवशर्माको[1]

१८ जुलाई, १९३२

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। जैसा कि आप जानते है, मै राजनीतिक विषयोंपर चर्चा करनेके लिए स्वतन्त्र नही हूँ। लेकिन मै आपके इस कथनका हार्दिक अनुमोदन कर सकता हूँ कि सभी नेताओंको अपने कार्योका स्वाभाविक परिणाम भोगना चाहिए।

आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत नरहरि देवशर्मा
बैरकपुर टैंक रोड
बैरकपुर

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २५३। महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ से भी।

१. देवशर्माने अपने पत्रमें लिखा था कि जनताकी तकलीफोंके लिए नेता लोग जिम्मेदार हैं।

२३७. पत्र : नटवरलालको

१९ जुलाई, १९३२

प्रिय नटवरलाल,

तुम्हारा पत्र प्राप्त हुआ। यह बड़ी अच्छी बात है कि तुम तकली चलाते हो। तकली चलानेका मतलब सूत निकालना ही नही, वल्कि प्रति घंटे १२ अंकका १६० गज एकसार सूत निकालना है ताकि बुनाईमें कोई कठिनाई न हो। जेलमें पडे आदमीके पत्रोंका भी कोई भरोसा नही करना चाहिए। तुम्हारा पत्र मुझे आज, यानी तुम्हारे लिखनेके चौदह दिन बाद मिला है। देखना है कि यह पत्र कब पहुँचता है। ऐसी हालतमें मेरे लौटती डाकसे जवाब देनेका कोई मतलव नहीं है। लेकिन तुम्हारी प्रतिज्ञा ऐसी है कि मेरा पत्र न मिलनेपर तुमने उसका पालन अवश्य किया होगा। इससे तुम्हें निश्चय ही लाभ होगा। और यदि तुम चाय और चीनीके बिना इतने दिन काम चला सकते हो तो तुम उनको हमेशाके लिए क्यों नही छोड़ सकते? इस दुनियामें करोड़ों लोगोके जीवनसे हम यह बात जानते है कि ये चीजें अनावश्यक है, क्योकि उनको चाय या चीनीका पता ही नही है। रही जेलकी बात। जेलमें रहनेवालेके जीवनके बारेमें विस्तारसे नही लिखा जा सकता। लेकिन जिनका मन निर्दोष है, ऐसे कैदियोंके लिए यह जीवन शान्तिपूर्ण और ऊँचा उठानेवाला है।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ २८९।

२३८. पत्र : श्री० दा० सातवलेकरको

१९ जुलाई, १९३२

भाइ सातवलेकरजी,

आपका पत्र आज ही मिला। संस्कृत पाठमाला पहले ही मिल गई थी। पत्रकी राह देख रहा था। पाठमालाके लिये अनुग्रह मानुं? आपके तरफसे मुझको कितनी पुस्तक मिल चुकी है। "पुरुषार्थ" इत्यादि भी आते ही है। आप जानकर खुश होंगे कि सरदारजीने दो भाग पूरे कर लिये हैं। तीसरा चल रहा है। जितने दोष देखनेमें आते हैं उसकी नोंध हो रही है। सूचना देनेका निश्चय पत्र आनेके पहले ही हो चुका था। यों तो पाठमालाकी सारी रचना बहुत अच्छी ही है, उसमें कोई संदेह

नही है। पाठमालाकी उपयोगिता बढ़ानेके लिये ही जो कुछ दोप हम लोगोंको प्रतीत होते है बताये जायेंगे।

मेरे हाथमें कुछ इतना बहुत दर्द नही है। एक प्रकारकी गति देनेसे ही बांय हाथकी कोहोनीमें दर्द होता है। यहांके मुखीने ही मुझको लाक्षादि तेल दिया था। उससे मालीश भी किया लेकिन कुछ लाभ नही हुआ। बात यह है कि जब वायु दोपसे दर्द होता है तब तो इस तेलका असर होता है। कोहीनीकी हड्डीमें जो दर्द है उसका कारण वायु नही है। अब तक तो डाक्तर लोग बता रहे हैं कि उसका कारण उस भागको चर्खेके मार्फत निरंतर काममे लाया गया वही है। इस कारण मैंने चर्खे चलानेमें बांय हाथका उपयोग करीब एक महिनेसे छोड़ दिया है। उससे भी कुछ लाभ हुआ है ऐसा नही कहा जाय। इस कारण अब ज्यादह चिकित्सा होनेवाली है। कोइ चिंताका कारण नही है। स्वास्थ्य ऐसे अच्छा ही रहता है।

विश्वरूप दर्शन योगके बारेमे जो आपने लिखा है[1] वह सब यथार्थ है। तदपि मैंने जो उस अध्यायकी भूमिकामें लिखा है[2] उसमे कोई फरक नही होता है। सारा जगत्को जो मनुष्य वासुदेव रूप मानेगा वह विश्वरूपका दर्शन अवश्य करेगा। परंतु अपनी कल्पनारूप ही मूर्ति होगा। ख्रिस्ती जगत्को इश्वररूप मानता हुआ अपनी कल्पनाके अनुकूल मूर्ति देखेगा। जो जैसे भजता है वैसे इश्वरको देखता है। हिंदु सभ्यतामे जो पैदा हुआ है और उसीकी शिक्षा जिसने पाई है वह ग्यारहवा अध्याय पढ़ते हुए थकेगा नही और उसमे अगर भक्तिकी मात्रा होगी तो उसमे जैसा वर्णन है वैसा ही विराट रूपका दर्शन करेगा। परंतु ऐसी कोइ मूर्ति जगतमे उसकी कल्पनाके बाहर नही है। ब्रह्म, आत्मा, वासुदेव जो कुछ भी विशेषण उस शक्तिके लिये हम इस्तेमाल करें निराकार ही है। भक्तके लिये वह आकाररूप बनती है। यह उस शक्तिकी माया है। यही काव्य है। हम उसका निचोड़ एक ही खीच सकते हैं जो आपने खीचा है। डाकूमे भी हमको वासुदेवका रूप देखना होगा। और हमारेमें यह शक्ति आ जायगी तो डाकू डाकूपन छोड़ देगा। और जबतक हमारेमें यह शक्ति नही आई तबतक हमारा सब अभ्यास और सब ज्ञान निरर्थक ही है। आपने विश्वरूप दर्शनपर जो लिखा है उसके बारेमें उत्तर नही मांगा है। मैंने दिया है क्योंकि मैं भी वैसे विचारोंमे ग्रस्त रहता हूं। और आपके साथ पत्र द्वारा ऐसे वार्तालाप करनेसे मुझको आनंद होता है।

अभयजीका "वैदिक विनय" मैंने पढ़ लिया। अब वैदिक मुनि हरिप्रसादजी कृत "स्वाध्याय संहिता" पढ़ रहा हूं। लेकिन वैदिक मंत्र पढ़नेमें मुझको बड़ी मुसीबत है। मेरा संस्कृत ज्ञान तो आप जानते ही हैं। कनिष्ठ श्रेणीका है। वेदकी भाषाका तो नहीसा परिचय है। मै इतना जानता हूं कि वैदिक मंत्रोके विद्वान् लोग बहुत

१. सातवलेकरने लिखा था कि गीताके ११ वें अध्यायमें न केवल काव्य ही है जैसाकि गांधीजीने लिखा है, बल्कि यह महत्त्वपूर्ण सत्य भी है कि ईश्वर समस्त प्राणियोंमें, जो कि उसके शरीरके विभिन्न अंग मात्र हैं, अन्तर्व्याप्त हैं।

२. देखिए खण्ड ४१, पृष्ठ १४१-४५।

अर्थ कर लेते हैं — सनातनी एक, आर्यसमाजी दूसरा। पश्चिमके लोग तीसरा। सनातनीओंमें भी, भिन्नता पाता हूं। सब आर्यसमाजी भी एक अर्थ नहीं करते है। आपके बीचमें और वैद्यजीके बीचमें जो संवाद मैंने करवाया था उसका तो स्मरण होगा ही।[1] यह सब दृष्टिमें रखता हुआ मै जब वैदिक मंत्र पढ़नेकी कोशिश करता हू तो घबराहटमें पड़ जाता हूं। अपना निश्चय करनेकी कुछ योग्यता नही पाता हूं। ईशोपनिषद् आजकल कंठ कर रहा हूं। मुझे ख्याल है कि शंकरने उसका एक अर्थ किया है, अरविंद बाबुने और किया है, आपका भी कुछ लिखा हुआ गत साल जब जेलमे था तब देखा था। उसमें कुछ और चीज है। अब मेरे पास एक गुजराती अनुवाद आ गया है उसमे और हरिप्रसादजीके अनुवादम भी और कुछ है। मैंने अपने लिये कुछ इस उपनिषद्का अर्थ बना लिया है लेकिन संस्कृत भाषाका अल्प ज्ञान होनेके कारण इस तरहसे अर्थ बना लेना दुष्टता-सा लगता है। क्या कोई ऐसी पुस्तक है कि जिससे वैदिक व्याकरणका कुछ ज्ञान हो सके और जितने अर्थ भिन्न भिन्न विद्वानोने आजतक किये है उसका संग्रह मिल सके? तात्पर्य मेरे जैसा मनुष्य वैदिक मंत्रोंका अर्थका निश्चय करनेके लिये क्या करे? किसी संप्रदायवालो पर मेरी ऐसी श्रद्धा नही है जिससे उनके अर्थको ही मैं वेदवाक्य मान लू। सद्भाग्य या दुर्भाग्य-वशात् संस्कृतका इतना ज्ञान भी रखता हूं जिससे मेरे सामने जब दो चार अर्थ आ जाते है तब मै अपनी पसंदगी कर लूं। लेकिन इस जेलमें मैं इतनी बड़ी लाइब्रेरी बनाना नही चाहता। न इतना गहरा अभ्यासमे भी पड़ना चाहता हूं। आत्मसंतोषके लिये गीताजी काफी है। परंतु वेदोंमें चंचुपात करना मुझको प्रिय है। इसलिये कुछ सूचना आप दे सकते हैं तो देनेकी कृपा करें। हम सब अच्छे है।

आपका,
मोहनदास

मूलकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७६३) से; सौजन्य : श्री० दा० सातवलेकर

१. देखिए खण्ड ३५, पृष्ठ ५८-९।

२३९. पत्र : नारणदास गांधीको

२० जुलाई, १९३२

चि० नारणदास,

१८ तारीखको डाला हुआ तुम्हारा पत्र २० तारीखको मिला। लेकिन मेरे पत्रोका तो जो हो जाये सो ठीक। मैंने ४ तारीखको जो डाक दी थी वह १६ तारीखकी डाकमे रवाना हुई, ऐसा मुझे अधिकारियोंने बताया है। मेरे सब पत्र जांचके लिए सरकारी दफ्तरमें जाते है और वहाँसे पास होनेपर यहाँ वापस आते है, तब जाकर उन्हें डाकमे डाला जाता है। इसका क्या कारण है, यह मै अभी तक नही समझ सका हूँ। मैं इसकी छानबीन तो कर रहा हूँ, फिर चाहे जो हो। हमे तो नियम-पूर्वक एक दूसरेको पत्र लिखते रहना चाहिए। मिलने होगे तब मिल जायेगे। हमें इसपर तनिक भी विचार नही करना है। किसी दिन अगर डाक बन्द होनी होगी तो हो जायेगी और तब भी हम निश्चिन्त रहेगे, हमे अपनी मनःस्थिति ऐसी बना लेनी चाहिए।

प्रभुदाससे कहना कि वह पत्र लिखे। दो दिन हुए डाक्टरने बाये हाथसे गांडीव चरखा चलानेकी अनुमति दी है, इससे अब गांडीव चरखा चलाता हूँ। मगन चरखेके बाद मुझे गांडीवकी ज्यादा कद्र महसूस हुई है। मेरा सूत तुरन्त महीन हो गया और टूटा भी बहुत कम। तार दाये हाथसे ही खीचता हूँ। चरखेमे थोड़ी खामियाँ है उन्हें दूर करूँगा, जिससे वह और भी ज्यादा अच्छी तरह चलने लगेगा। मगन चरखेके साथ गांडीव चरखेकी तुलना करनेपर देखता हूँ कि मगन चरखेपर गति तेज नही हो सकती। अर्थात् एक ही तकुआ चलानेके लिए गांडीव चरखा अथवा सामान्य चरखा अधिक उचित जान पड़ता है। जिसका एक हाथ धागा खीचनेमें अथवा चक्र चलानेमें भी असमर्थ हो जाये उसके लिए तो मगन चरखा अमूल्य खोज है। लेकिन जिस व्यक्तिके दोनों हाथ ठीक है, यह तो स्पष्ट ही है कि वह अधिक सूत कात सकता है। मगन चरखे पर महीनसे-महीन सूत नही काता जा सकता। उसमे कुछ फेरबदल करनेपर कदाचित् ऐसा हो सकता है। एक ही तकुआ चलानेके लिए, उसमे कुछ फेर-बदल करके उसे बनाया जाये तो सम्भव है कि रफ्तारमे भी वृद्धि हो। लेकिन वह सब तो प्रयोगकी बाते हुईं। अभी तो मैंने अपना जो अनुभव बताया वह यही है। पैरोंपर तो मेरा ठीक काबू है, ऐसा कहा जा सकता है।

मेरे हाथमें कुछ सुधार हो गया है इसलिए मुझे गांडीव चरखा चलानेकी अनुमति मिल गई है सो बात नही है, अपितु हाथको चरखेसे बिल्कुल आराम देनेके बावजूद कोई फायदा नही हुआ इसीलिए डाक्टरोंने चरखा चलानेकी अनुमति दी है। यह अनुमान किया जाता है कि हाथका यह कष्ट कदाचित् चरखा चलानेके कारण न हो। थोड़े दिनोंमें निश्चित रूपसे मालूम हो जायेगा।

डाक्टर तलवलकर गाड़ी-भाड़ेके दो रुपये लेते हैं और दवाका बिल लगाते हैं, यह बात मुझे अच्छी लगती है। यदि हम वर्षमें एकाध बार ही उन्हे कष्ट देते हों तो कदाचित् कुछ न लेनेकी बात उन्हे पुसा सकती है। लेकिन समय-समय पर वे दवा देते रहें और कुछ भी न लें, यह बात उन्हें नही पुसा सकती। उनके पास इतना धन भी नही है। गाड़ीका भाड़ा तो हम बहुत दिनोंसे देते आ रहे हैं, ऐसा मेरा खयाल है। डाक्टर तलवलकरके बिलका एक परिणाम यह होना चाहिए कि आजतक हम कदाचित् गफलतमे आवश्यकता न होनेपर भी उन्हें बुलाते रहे हैं तो अब यह गफलत दूर हो जायेगी। हालाँकि यदि हम शुद्ध धर्मका पालन करते हों, तो यदि कोई हमारी सेवा मुफ्त करता है तो हमे उसे लेनेमें अधिकसे-अधिक सकोच होना चाहिए। लेकिन हजारो उदाहरणोमे ऐसा नही ही होता। पानी मुफ्त मिलता है, इसलिए हम चाहे जितना पानी खर्च करते हैं। ऐसा करते हुए हमें लज्जा नही आती और मुफ्त मिलता है इसलिए हम क्यों न मुक्त भावसे उसका उपयोग करें, ऐसा हम निःसंकोच कहते हैं। और जिस तरह मुफ्त पानीके प्रति हम बेखबर रहते हैं, उसी तरह अन्य सभी सेवाएँ अथवा जो वस्तुएँ हमे मुफ्त ही उपलब्ध हो जाती हैं उनके विषयमे भी हमें वैसा ही लगता है। इन सबसे अस्तेयव्रत भग होता है— अहिंसाका भंग तो है ही।

बा का पत्र मुझे मिला नही। मैंने बहुत दिन पहले लिखा था। उसका कोई उत्तर नही आया इसलिए अभी फिरसे नही लिखा। इन पत्रोका क्या होता है, इसका कुछ पता नही चलता। तथापि बा को एक पत्र तो लिखूँगा ही[1] और वह इस पत्रके साथ भेजूंगा। वह पत्र यदि तुम्हारे हाथ आये, तो वहाँके जेल-अधीक्षकको बताकर उसे बा को देना। सर्दीके कारण जो लोग बीमार पड़ गये थे वे सब अब ठीक हो गये होंगे। देवदासको फिरसे हलका बुखार आया है, इस आशयका तार मुझे मिला है। शान्ति यदि इस पत्रके प्राप्त होनेके समय वहाँ हो तो उसे और उसकी बहूको मेरा आशीर्वाद देना, और कहना कि उसने आकर ठीक किया। उसे मेरा पत्र मिला था? मैंने राजकोटके पतेपर लिखा था।

छक्कड़दासकी पूनी यदि किसीके साथ डाह्याभाईको भेजोगे तो पर्याप्त होगा। अन्य पूनियाँ तो यहाँ हैं ही, इसलिए छक्कड़दासकी जरा देरसे आयेंगी तो कोई हर्ज नही।

पारनेरकरकी तबीयत अच्छी रहती है? पृथुराजको[2] तो ठीक होना ही चाहिए।

तुम्हारे वर्णनसे तो ऐसा लगता है कि शंकरभाई बाल-बाल बचे हैं। रसोईकी छतसे गिरनेवाला तो कदाचित् ही बच सकता है, क्योकि छत काफी ऊँची है। उम्मीद है, अब हाथ अच्छा हो गया होगा।

१. देखिए "पत्र: कस्तूरबा गांधीको", २१-७-१९३२ या उसके पश्चात्।

२. लक्ष्मीदास आसरका पुत्र।

सीतला सहायके बारेमें तो मैं अपने समस्त विचार व्यक्त कर चुका हूँ।[1] यह पत्र तुम्हें मिलेगा तो तुम जान सकोगे। पारनेरकरकी माताजीके विषयमें भी मैं लिख चुका हूँ[2] और नर्मदाके सम्बन्धमें भी।[3]

महादेवने यहाँसे दुर्गाको ११ तारीखको जो पत्र लिखा था वह १४ तारीखको डाकमें डाला गया, इसकी सूचना जेलरने हमें दी थी। लेकिन वह तुम्हें वहाँ १८ तारीख तक तो नहीं मिला, इसलिए वहाँ भी कुछ गड़बड़ अवश्य होगी।

मेरी ओरकी डाक फिलहाल अनिश्चित जानो — भविष्यमें जो हो जाये सो ठीक। प्रेमाके पत्रमें[4] विशेष रूपसे लिखा है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२४० से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

२४०. तार: लाहौर सेंट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंटको

[२१ जुलाई, १९३२ से पूर्व][5]

सुपरिंटेंडेंट
सेंट्रल जेल
लाहौर

खबर मिली है कि खुर्शेदबाई नौरोजीका ऑपरेशन हुआ है। कृपया मुझे ऑपरेशनका कारण तथा [मरीजकी] वर्तमान दशा सूचित करें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल नम्बर ९।

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", ६/१०-७-१९३२।
२. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको," २८-६/४-७-१९३२।
३. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको," १६-७-१९३२।
४. देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको," २४-७-१९३२।
५. जेल अधिकारियोंने यह तार लाहौर भेजनेकी अनुमति प्राप्त करनेके लिए २१ जुलाई, १९३२ को बम्बईके गृह-सचिवके पास पूना भेजा था।

२४१. पत्र : मीराबहनको

२१ जुलाई, १९३२

चि० मीरा,

मेरे सामने तुम्हारा पत्र और पोस्टकार्ड है। शरीर तो अपना भाडा लेगा ही। हम जान ही नही पाते कि शरीरपर लागू होनेवाले कानूनोको हम कब भंग कर बैठते है। और मानवी कानूनकी तरह प्रकृति भी अज्ञानका बहाना नही मानती। इसलिए तुम्हारे ज्वरपर मुझे आश्चर्य नही होता।[1] मै आशा करता हूँ कि तुमने जो जोरदार इलाज किया, उसने मलेरियाको बढ़नेसे रोक दिया होगा। हाँ, ऐसे समय मित्रोकी सेवा भारी वरदान सिद्ध होती है और उससे जल्दी आराम होता है। मुझे ज्ञात है कि शिवप्रसाद बाबूके[2] घरपर मेहमानोकी कितनी उदार सेवा की जाती है। मुझे खुशी है कि तुम्हे ये मधुर अनुभव हो रहे है। इससे तुम्हारी जैसी बीमारी न केवल सहनीय ही बन जाती है, बल्कि वह स्वागत योग्य भी बन जाती है; क्योकि इन अनुभवोके जरिये हम मानव स्वभावके उत्तम स्वरूपको समझ पाते है और जब यह स्वभाव ऐसा हो कि मनुष्य सबके साथ और सभी परिस्थितियोमे समान व्यवहार करने लगता है, तब तो वह लगभग देव तुल्य ही बन जाता है।

तुम्हारा गगाका वर्णन बिल्कुल काव्यमय है। मुझे भी लगभग ऐसा ही महसूस हुआ था जैसा तुम्हें हुआ है और शायद जगह भी वही थी, जहाँ मै पैदल टहला करता था। मैने 'नवजीवन' के लिए अपने संस्मरण लिखे थे।[3] मेरे खयालसे इसको लगभग दस साल हो गये होगे।

दूधकी खुराक अब भी जारी है। वजन १०५½ पौड है। इससे कुहनीपर कोई असर नही हुआ है। जब मै बादाम और रोटी ले रहा था, तबकी अपेक्षा अब तबीयतमें कोई बेहतरी नही महसूस करता। जहाँतक हाजमेका ताल्लुक है, अवश्य ही दूधकी खुराककी अपेक्षा उस खुराकको लेते समय हाजमा ज्यादा अच्छा था।

पता नही यह पत्र तुम्हे कब मिलेगा। मेरे पत्र-व्यवहारमे गडबड अभीतक जारी है। आनेवाली डाक तो नियमित हो गई है, परन्तु जानेवाली डाकमे बड़ी देर होती है। मै इसके बारेमे सरकारसे लिखा-पढ़ी कर रहा हूँ।[4] मै इस अचानक पैदा हुई गड़बड़को कतई नही समझ सकता। लेकिन गड़बड़ हुई तो है ही। सौभाग्यसे मैने चित्तकी शान्तिकी खातिर दक्षिण आफ्रिकामे भी अपना कैदी जीवन यह मानकर

१. छपरासे बनारस पहुँचनेके एक-दो दिनके भीतर ही मीराबहनको मलेरिया हो गया था।

२. बनारसके एक अत्यन्त प्रतिष्ठित रईस और कांग्रेसी नेता।

३. देखिए खण्ड १७, पृष्ठ ६९।

४. देखिए "पत्र : ई० ई० डॉयलको", ९-७-१९३२, १३-७-१९३२ और २२-७-१९३२ भी।

ही शुरू किया था कि कैदीके कोई अधिकार नही होते। अगर तुम अभी तक जेलकी दीवारोसे बाहर हो और अगर तुम्हें मेरे पत्र नियमित रूपसे नहीं मिलते, तो तुम जान लोगी कि उसका कारण क्या है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

सब मित्रोंसे वन्दे कहना। सम्भव हो तो देवदाससे मिल लेना। वह तुम्हारे बहुत ही निकट है।

श्रीमती मीराबाई
द्वारा बाबू शिवप्रसाद गुप्त
सेवा उपवन
नगवा
बनारस

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५०८) से; सौजन्य: मीराबहन

२४२. पत्र : देवदास गांधीको

२१ जुलाई, १९३२

प्रिय देवदास,

आज हनुमान प्रसादजीका जो तार मिला उससे चिन्ता होती है। लगता है कि बुखारका फिरसे आक्रमण हुआ है। तारमे कहा गया है कि यह आक्रमण हलका ही है। अतः मैं आशा करता हूँ कि यह पत्र मिलने तक तुम बिल्कुल ठीक हो गये होगे। मैंने इससे पहले जो पत्र लिखा था वह मिल गया होगा। मैं जो डाक भेजता हूँ, उसका अब भी कोई भरोसा नही है। ऐसा लगता है कि मेरे पत्रों (की जाँच-पड़ताल)मे कई दिन लग जाते है। पत्रोंको बारीकीसे जाँचा जाता है। तुम्हे निश्चय ही अपने स्वास्थ्यके बारेमे सावधान रहना चाहिए। कैसा भी मौसम हो, मेरे विचारसे आहारमें समुचित परिवर्तन करके उसे नियन्त्रणमे रखा जा सकता है। मुझे लिखना कि दुबारा बीमार क्यों हुए।

लगता है कि मुझे अपनी डाक फिरसे नियमित रूपसे मिलने लगी है। हम तीनों सानन्द है। वल्लभभाई एक अध्यवसायी छात्रकी भाँति संस्कृत सीख रहे हैं। वह उसके अध्ययनमे कई घंटे देते है। वह दो भाग समाप्त कर चुके है और तीसरा पढ़ रहे है। इस रफ्तारसे यदि वह चार-पाँच महीनेके भीतर सभी २४ भाग समाप्त कर डालें, तो कोई आश्चर्यकी बात नही। तथापि, यदि वह 'महाभारत'

और 'रामायण' सामान्य रूपसे समझने लगे तो यह आश्चर्य और चमत्कारकी बात ही होगी।

बापूके आशीर्वाद

देवदास गांधी
डिस्ट्रिक्ट जेल
गोरखपुर, संयुक्त प्रान्त

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३५३।

२४३. पत्र: सोनीरामजीको

२१ जुलाई, १९३२[1]

भाई सोनीरामजी[2],

मुझे आपका पत्र मिला।[3] मैंने जनेऊके एकाधिक गूढ़ अर्थ सुने हैं। लेकिन ये सब अनुमान मात्र हैं। जनेऊका प्रयोग जब आरम्भ हुआ तब उस समय ये विचार मौजूद थे, मैं ऐसा नहीं मानता। अपनेको आर्य कहनेवाले लोगोंने आर्य-अनार्यका भेद करनेके लिए जनेऊको अपनाया। यह उस समय हुआ होगा जब रुईसे कपड़ा बनानेकी कला ईजाद हुई होगी। उस समय करोड़ो लोग केवल धोती पहनते थे, जैसा कि आज भी पहनते हैं, और शरीरका शेष भाग अनढका रहता था। किसी भी सूरतमे वे लोग तो ऐसा करते ही थे जिन्हे अनार्य माना जाता है। अतः आर्योंने कताई-कलाको प्रोत्साहित करने और उसमे सुधार करने तथा यह सिद्ध करनेके लिए कि यह एक पुनीत काम है, जनेऊ धारण करना शुरू किया। अपनी इस बातके समर्थनमें मेरे पास इतिहासकी कोई साक्षी नहीं है। यह मेरा अनुमान मात्र है। आज आर्यो और अनार्योंके बीच कोई भेद नहीं है, और होना भी नहीं चाहिए। हजारो वर्ष पहले दोनों जातियोके खून मिल गये थे और भारतके वर्तमान निवासी उसी मिश्रित रक्तकी उत्पत्ति हैं। यदि जनेऊ धारण किया ही जाता है तो सभी जातियोको उसे धारण करनेका अधिकार होना चाहिए। मुझे इस आन्दोलनमे कोई तत्व नजर नहीं आता। यही कारण है कि जनेऊका प्रयोग छोड़नेके बाद मैंने उसे पुनः पहननेकी कोशिश नहीं की, और न वैसा करनेकी मेरी इच्छा ही है। और जहाँतक जनेऊ पहननेके रिवाजके कारण ही ऊँच-नीचका भेद उत्पन्न होनेकी सम्भावना है, वहाँ तक उसे छोड़ ही देना चाहिए। गौरीप्रसादको मेरी सलाह है कि वह जनेऊका मोह छोड

१, २ और ३. बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें उपलब्ध अंग्रेजी अनुवादसे।

दे। जनेऊ ब्रह्मचारीकी निशानी है। यदि कोई व्यक्ति ब्रह्मचर्यका पालन करता है, तो वह स्वयंमें सर्वोत्तम जनेऊ है। सूतके जनेऊकी क्या जरूरत है?[1]

कुएँके पानीको साफ रखनेके लिए उसे तारकी जालीसे ढककर रखना चाहिए। उसके आस-पास धूलगर्द बिल्कुल नहीं होनी चाहिए। कुँआ गहरा होना चाहिए और उसमें हर महीने (एक निश्चित मात्रामें) पोटैशियम परमैंगनेट या क्लोरीन डालना चाहिए। दवाकी मात्रा किसी डाक्टरसे पता कर लेनी चाहिए। ये सावधानियाँ बरतनेके अलावा पानीकी समय-समयपर जाँच करवा लेना अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४०३–५।

२४४. पत्र : कपिलको

२१ जुलाई, १९३२

प्रिय कपिल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमें जानकर दुख हुआ। मेरी राय है कि तुम शान्त मनसे अपने स्वास्थ्यको सुधारो और स्वास्थ्यको सुधारते हुए तुम जो कुछ सेवा कर सको, उससे ही सन्तोष मानो।[2] तकली चलाना सेवा ही है। तुम्हारे पास-पड़ोसमें जो बच्चे हों उन्हें पढ़ाओ या प्रौढ़ लोगोंके लिए रात्रि-कक्षाएँ चलाओ। यह भी सेवा ही है। उम्र बढ़नेके साथ ही हमें अपनेको शुद्ध करते जाना चाहिए और एक भी अशुद्ध विचारको मनमें नहीं घुसने देना चाहिए। यह भी मेरी दृष्टिमें एक सेवा है। रोग-शय्या पर पड़ा हुआ आदमी भी इतना तो कर ही सकता है।[3] तुम प्रार्थना आदिसे सम्बन्धित नियमोंका पालन तो कर ही रहे होगे। मुझे लिखना जरूर।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३९९।

१. इसके आगेका अनुच्छेद बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें उपलब्ध अंग्रेजी अनुवादसे लिया गया है।
२. इसके आगेका पाठ महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१ के गुजराती पाठसे मिला लिया गया है।
३. इसके आगेका पाठ बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें उपलब्ध अंग्रेजी अनुवादसे लिया गया है।

२४५. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दारको

२१ जुलाई, १९३२

भाई हनुमानप्रसाद,

आज तुम्हारा पत्र मिला और तार भी। तुम जबतक वहाँ हो तबतक मुझे देवदासकी चिन्ता नही रहेगी। और फिर, देवदासने मुझे लिखा है कि तुमने बहुत स्नेहपूर्ण वर्ताव किया है। डाक्टर 'वाकई बहुत अच्छे आदमी हैं। समय-समयपर तुम्हारे पत्र मुझे मिलते रहेगे, ऐसी मेरी सदैव आशा है।[1]

जो मनुष्य सासारिक वस्तुकी प्राप्तिके लिये या और किसी कारण असत्यका सहारा लेता है, रागद्वेषसे भरा है, उसको भगवत्प्राप्ति हो ही नही सकती है।[2] और दूसरा दृष्टान्त जो आपने दिया है उसे मैं असम्भव मानता हूं सत्यके मार्ग पर चलना और प्रपच अर्थात् प्रवृत्तिसे अलग रहना आकाशपुष्प जैसी बात हुई। जो प्रवृत्तिसे अलग रहता है वह किस मार्ग पर चलता है वह कैसे कहा जाये। सत्यके मार्गपर चलनेमें ही प्रवृत्तिप्रवेश आ जाता है। बगैर प्रवृत्तिप्रवेशके सत्यके मार्गपर चलने न चलनेका कोई मौका ही नही रहता। गीतामाताने कई श्लोकोसे स्पष्ट किया है कि मनुष्य बगैर प्रवृत्ति एक क्षणके लिए भी रह नही सकता है। भक्त और अभक्तमें भेद यह है कि एक पारमार्थिक दृष्टिसे प्रवृत्तिमें रहता है और प्रवृत्तिमे रहते हुए सत्यको कभी छोड़ता नही है, और रागद्वेषादिको क्षीण करता है; दूसरा अपने भोगोके ही लिए प्रवृत्तिमे मस्त रहता है, और अपना कार्य सिद्ध करने के लिए असत्यादि आसुरी चेष्टासे अलग रहनेकी कोशिश तक भी नही करता है। यह प्रपंच कोई निंद्य वस्तु नही है। प्रपंचके ही मारफत भगवद् दर्शन शक्य है। मोहजनक प्रपंच निंद्य और सर्वथा त्याज्य है। यह मेरा दृढ़ अभिप्राय है। और अनुभव है।

बापुके आशीर्वाद

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल न० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४०१।

१. आगेका अनुच्छेद महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१ के हिन्दी अंशसे लिया गया है।

२. हनुमानप्रसाद पोद्दारने पूछा था : "जो व्यक्ति सांसारिक वस्तुओंकी प्राप्तिके लिए असत्यका सहारा लेता है उसे क्या भगवद्प्राप्ति हो सकती है? अथवा जो सत्यका पालन करनेके लिए सारी प्रवृत्तियोंका त्याग कर देता है क्या उसके लिए भगवद्दर्शन सम्भव है?"

२४६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

[२१ जुलाई, १९३२ या उसके पश्चात्][1]

बा,

कोई नही कह सकता कि क्या वजह है कि तुम्हे मेरे पत्र नही मिलते और मुझे तुम्हारे पत्र नही मिलते? इसीलिए मैंने हालमें कोई पत्र नही लिखे हैं। जब यही निश्चित नही है कि पत्र तुम्हें मिलेगा, तो मुझे लिखना अच्छा कैसे लग सकता है? तुम्हारे बारेमें समाचार मुझे अवश्य मिलते रहते हैं। नीमूने लिखा है कि तुम्हारी ताकत क्षीण होती दिखाई देती है। यह कैसी बात है? खाना हजम होता है कि नही?

हम यहाँ सानन्द हैं। तुम्हें मालूम होगा कि मैं इस समय दूध ले रहा हूँ। दूध लेनेका कोई विशेष कारण नही था। यहाँके सुपरिंटेंडेंटने आग्रह किया, इसलिए मैं लेने लगा। मैं रोटी और सब्जी भी लेता हूँ। वल्लभभाईने संस्कृत सीखनी शुरू की है और चरखा भी चलाने लगे हैं। मेरे पत्रोंके बारेमें फिलहाल अनिश्चितता रहती है, इसलिए यह नही कहा जा सकता कि इस पत्रका क्या होगा।

देवदास फिर बीमार पड़ गया है, लेकिन चिन्ताकी कोई बात नही है।

राजाजीके दामादकी मृत्युका तुम्हे पता चला होगा। अगर सम्वेदनाका पत्र न लिखा हो, तो लिख देना। बहनोंको आशीर्वाद।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल न० ८००।

१. तीसरे अनुच्छेदमें देवदासके पुनः बीमार पड़नेके उल्लेखके आधार पर; देखिए "पत्र : देवदास गांधीको", २१-७-१९३२ भी।

२४७. पत्र : ई० ई० डॉयलको

२२ जुलाई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

यह पत्र मेरे १३ ता० के पत्रके सिलसिलेमें है। मेरा पुत्र गोरखपुरमें भी दुबारा रोगग्रस्त हो गया है। उसका मन हलका करनेको मैंने उसे एक पत्र लिखा है[1], किन्तु मुझे पता नही कि वह पत्र कब मंजूर होकर उसे भेजा जायेगा। लाहौर जेलमे स्थित एक मित्रको[2] भी, जिसका ऑपरेशन हुआ था, मैंने एक पत्र लिखा है। तीसरा पत्र लापता वायु सैनिक जीजीभाईकी बहनको लिखा है।[3] चौथा पत्र श्रीमती मीराबाई स्लेडके[4] नाम है, जो बनारसमे बुखारमे पड़ी है। और आज एक लड़कीको पोस्टकार्ड लिख रहा हूँ, जिसमे उसके परिवारमे हुई एक मृत्युपर उसके तथा परिवारके सदस्योके लिए सान्त्वना-सदेश है।[5] यदि ये पत्र भेजे जाने है तो निस्सन्देह उनका महत्त्व तत्काल भेजनेमे ही है, अन्यथा उनका कोई मूल्य नही। किन्तु आश्रमके पत्रोको जिस ढगसे रोके रखा जाता है, उसे देखते हुए मै कैसे आशा करूँ कि पूर्वोक्त पत्र शीघ्र ही मंजूर होकर भेज दिये जायेंगे। मुझे आश्रमसे प्राप्त एक पोस्टकार्डसे सूचना मिली है कि मेरा ५ जुलाईका पत्र वहाँ २० जुलाईको पहुँचा। और स्पष्ट है कि मेरे १२ तथा १९ जुलाईको लिखे पत्र अभीतक नही भेजे गये है। उनमें आश्रमवासी रोगियों तथा अन्य दुखी व्यक्तियोके लिए महत्त्वपूर्ण हिदायते है, जिनका राजनैतिक मामलोसे कोई सम्बन्ध नही। मेरे पत्र-व्यवहारके विषयमें सरकारने अपनी जिस आज्ञाकी मुझे सूचना दी है यदि वह उसे वापस नही लेना चाहती, तो फिर मुझे पत्रोकी तुरन्त रवानगीका भी आश्वासन मिलना चाहिए। मेरे पत्रोको गन्तव्य स्थान तक भेजनेमें यह जो विलम्ब होता है वह मुझे अपने प्रति घोर अन्याय और सरकारके लिए अशोभनीय प्रतीत होता है। अपने पत्र-व्यवहारसे सम्बन्धित कोई भी नियम मैंने स्वेच्छया नही तोड़ा है, बल्कि इसके विपरीत मैंने सरकारकी हिदायतोका बारीकीसे पालन किया है। मेरे पत्रोंके वितरणसे सम्बन्धित इस दुखदायी परिवर्तनका कारण मेरी समझमें नही आता।

१. देखिए "पत्र : देवदास गांधीको", २१-७-१९३२।

२. खुर्शेदबहन नौरोजीको; देखिए "तार: लाहौर सेंट्रल जेलके सुपरिटेंडेंटको", २१-७-१९३२ से पूर्व।

३. इस खण्डके अन्तिम शीर्षक "दैनन्दिनी, १९३२" में, २१ जुलाई, १९३२ के अन्तर्गत शीरींबाईके नाम पत्रका उल्लेख है, किन्तु वह पत्र उपलब्ध नहीं है। फिर भी, देखिए "पत्र : शीरींबाईको", २६-७-१९३२।

४. देखिए "पत्र : मीराबहनको", २१-७-१९३२।

५. देखिए अगला शीर्षक।

क्या आप कृपा करके इस पत्रको सरकार तक भिजवा कर इस विषयमें अधिकारियोंकी सम्मति जान लेंगे ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल नम्बर ९।

२४८. पत्र : रोहिणीवहन देसाईको

२२ जुलाई, १९३२

चि० रोहिणी,

आज हमीदाका पत्र मिला। उसमें लिखा है कि तुम्हारे मामाका निधन हो गया है। तुम सबकी ठीक परीक्षा हो रही है। अपनी माँको हम सबकी ओरसे सान्त्वना देना। सच बात तो यह है कि हमें मृत्युका शोक नहीं करना चाहिए। मौतको यदि हम मित्रवत् मानें तो मामाका मित्रसे मिलन हुआ है। हम अपने स्वार्थके कारण शोक करते हैं तो भले ही करें। सौभाग्यसे हम सभीको इस मित्रसे मुलाकात करनी है। मालूम हुआ है कि कानजीभाई[1] भी कमजोरी महसूस करते हैं। मुझे ब्योरेवार लिखना। सरदार भी जानना चाहते हैं।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती रोहिणीवहन
मार्फत श्रीयुत् कनैयालाल नानाभाई देसाई
गोपीपुरा, सूरत

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६५८) से।

१. रोहिणीवहनके पिता, कनैयालाल देसाई।

२४९. पत्र : निर्मलाबहन गांधीको

२२ जुलाई, १९३२

प्रिय नीमू,

तुम बहुत चतुर लड़की प्रतीत होती हो। यह दिखानेके बाद कि तुम्हारे पास कोई समय नही बचता, तुम मेरे विरुद्ध पाँसा पलट कर कहती हो कि जितने घंटे मै कहूँगा उतने घंटे तुम दोगी। लेकिन मै तुम्हे पहले ही लिख चुका हूँ कि बच्चोंकी जो देखभाल तुम करती हो, वह आश्रमका ही काम है। उसका कोई हिसाब नही रखा जा सकता, तो कोई हर्ज नही। यदि उसमे से, एक घंटेकी कौन कहे, आधा घंटा भी बचता हो तो उसका भी हिसाब रखा जा सकता है। इसमें कोई शर्मकी बात नही है।

यदि हासू विनयको यहाँ भेज दे तो इससे तुम्हारा और मेरा, दोनोंका हेतु पूरा हो जायेगा। तब एकके बजाय दो लड़कियाँ होंगी। बड़ीवाली लड़कीके बच्चे है। लेकिन इसमें दो शर्ते है। सुमित्रा[1] चोरी करके सजा पाये, पुरुषके भेषमें हो, किसी यन्त्रमें खिच-खिचा कर बड़ी हो जाये और उम्रमे सोलह वर्षकी दिखे, और या फिर उसके दोके बजाय चार पैर और एक दुम हो! तब मुझे चार पैरवाली बिल्ली रखनेकी अनुमति शायद मिल सके। क्या सुमित्रा चार पैरवाली और पूंछवाली बिल्ली बननेको राजी है? यदि हो, तो गंगाबहन वहाँ जा रही है, उनसे दवा ले लो, उसके (अतिरिक्त) पैर और दुम उगा दो और उसे भेज दो।

पत्र लिखती रहो। तुम्हारी सब तकलीफे दूर हो गई होगी।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३९७।

१. निर्मलाबहन गांधीकी लड़की।

२५०. पत्र : नन्दूबहन बी० कानूगाको

२२ जुलाई, १९३२

प्रिय बहन,

मैं तुम्हें पत्र लिखनेकी सोच ही रहा था कि तुम्हारे पत्रोंकी झड़ी लग गई, बेशक सरदारके ऊपर। वर्षा किसी भी कारणसे हो, लेकिन वह भिगोती तो सभीको है। वही बात हम लोगोंके साथ भी है।

तुम्हारा विनोदी स्वभाव है, यह तो मैं जानता था, लेकिन तुम्हारे पत्रसे ही पता चला कि तुम्हारे अन्दर विनोद लबालब भरा हुआ है। तुमने मेरा आशीर्वाद माँगा है, लेकिन वह तो सदा ही तुम्हें प्राप्त है।

तुम सरदारको ठीक जोश दिलाती रही हो, लेकिन वह मेरी तरह कोमल बनिया नहीं है। जब उसको दिलसे साहसिक प्रेरणा होती है, तभी वह जो-कुछ करना चाहता है उसे करता है। बात यों है। आजकल तो उसे संस्कृतके अध्ययनका जोश चढ़ा है, यानी वह पूरे मनसे उसमें जुट गया है। लेकिन यहाँ ऐसा कोई नहीं है, जिसे इसका श्रेय दिया जा सके। उसका शिक्षक महादेव है। [संस्कृतके] साथ ही गांडीव चरखा भी है। पर वह भी तब जब उसका मन हुआ। अतः तुमने उसके साथ श्रेयमें भागीदारीका जो इरादा किया है, वह बेकार है। हाँ, उसके संस्कृत-ज्ञानका श्रेय लेना चाहती हो तो वह जरूर ले सकती हो। अगर तुम कहो तो हम उसे तारसे भेज सकते हैं।

कितने शर्मकी बात है कि एक डाक्टर भी मेरे जैसा दन्त-विहीन हो जाये। हरिभाईसे[1] कहना कि अगर डाक्टर लोग भी बीमार पड़ने लगें तो फिर हम किसका भरोसा करें।

ऐसा लगता है कि तुम्हारा और लीलावतीबहनका वजन काफी कम हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ३९५-७।

१. अहमदाबादके डा० हरिभाई देसाई।

२५१. पत्र : राघवदासजीको

२२ जुलाई, १९३२

महाराज राघवदासजी,

आपकी भेजी हुई पुस्तक मुझे मिली। समय मिलने पर मैं उसे पढ़ूंगा। जेलसे कोई समीक्षा नहीं भेजी जा सकती। इसलिए मैं क्षमा चाहूँगा।

आपका,
मोहनदास गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (२) भाग २, पृष्ठ ३६५।

२५२. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२३ जुलाई, १९३२

चि० काका,

बहुत प्रतीक्षा करनेके बाद तुम्हारा पत्र मिला। और चूंकि [जेल अधिकारियों द्वारा] उसमें बहुत-सी पंक्तियाँ काट दी गई हैं, इसलिए मुझे तुम्हारी तबीयतके बारेमें पूरी तरहसे मालूम नहीं हो सकता। तुम्हारी तबीयतके विषयमें मैंने कर्नल डॉयलको लिखा तो है ही। मैंने उनके सामने तुम्हें मेरे पास भेजनेका सुझाव रखा है, और यदि वे भेज देते हैं तो तुम्हारा शरीर तो तुरन्त सुधर जायेगा और हमारा खगोल विद्याका अध्ययन भी साथ-साथ हो सकेगा; कदाचित् इस विषयपर हम कुछ लिख भी पायेंगे।

मेरा सुझाव दोहरा है। या तो शंकर[1] और/अथवा बाल[2]को तुम्हारे पास भेजा जाये अथवा तुम्हे मेरे पास। शंकर यहीं है। तुम्हारे पास रहकर तुम्हारी सेवा करनेकी उसकी इच्छा अवश्य होती है। बाल का मुझे सीधे तो कोई पत्र नहीं मिला है, लेकिन बाल आदि बच्चोंके सम्बन्धमें मुझे समाचार मिलते रहते हैं। वीसापुरसे कोई-न-कोई तो लिखता ही है।

१. सतीश कालेलकर; काकासाहबके बड़े पुत्र।

२. काकासाहबके द्वितीय पुत्र।

खगोलशास्त्रके सम्बन्धमें तुम्हारा जो अनुमान है, मेरे कहनेका भावार्थ भी वही था। आकाशदर्शनसे रात्रिमे समय जाना जा सकता है अथवा ग्रहों और ताराका वैदिक देवी-देवताओंके साथ कोई सम्बन्व है, इसको लेकर मैंने कभी कोई विचार नहीं किया था। भाई हीरालालके विचारोंसे मै अवगत हूँ। उनके भेजे हुए लेख मैं पढ गया था। वे सब लेख दिलचस्प है, लेकिन मेरी दिलचस्पी भिन्न प्रकारकी है।

आकाशको निहारते हुए जिस अनन्तताका, स्वच्छताका, नियमनका और भव्यताका विचार आता है, वह हमें पवित्र करता है। ग्रहों और तारोंपर पहुँचनेपर कदाचित् हमें पृथ्वीके समान ही अच्छे-बुरेका अनुभव हो, लेकिन दूरसे देखनेपर उनमें जो सौन्दर्यकी अनुभूति होती है और उनसे जो शीतलता स्फुटित होती है, उसका प्रभाव शान्त और सुखद होता है। यह मुझे अलौकिक प्रतीत होता है। और आकाशको लेकर हम जो अनुसन्धान करते हैं उसमें, हम जहाँ कहीं भी हों, कोई व्यवधान उपस्थित नही हो सकता। यह तो घर बैठे गंगा आनेके समान हुआ। इन सब विचारोंने मुझे आकाश दर्शनका दीवाना बना दिया है। इसलिए मैं अपने सन्तोषके लिए पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर रहा हूँ। आज तो उसके विषयमे मेरे पास छोटा-मोटा संग्रह हो गया है। प्रोफेसर त्रिवेदीने मुझे जेम्स जीन्सकी तीन पुस्तकें[1] भेजी है। उनमे से दो बड़ी किताबें मैं पढ़ गया हूँ। मुझे दोनों अच्छी लगी हैं। अब मैं खगोलशास्त्रका तनिक विधिवत् अध्ययन कर रहा हूँ। अभी मै खरासकी पुस्तक पढ रहा हूँ। लेखकने इस पुस्तक पर अच्छी मेहनत की जान पड़ती है। चित्र पुष्कल मात्रामे है। इनसे बहुत मदद मिलती है। चूँकि मै [इस विषय पर] अन्य पुस्तकें पढ़ गया हूँ, इसलिए इसमे रस ले सकता हूँ। यदि इसी पुस्तकसे आरम्भ किया होता, तो कदाचित् यह अच्छी नही लगती। लेखकने पुस्तकको दिलचस्प बनानेका प्रयत्न नही किया है।

खगोलके विषयपर मै गुजरातीमे किस प्रकारकी पुस्तक चाहता हूँ, इसकी चर्चा मैं अभी नहीं करूँगा, क्योकि इस विषयपर अभी तो मेरे विचार बन रहे है। इसलिए इस सम्बन्धमे कोई रूपरेखा बनाना ठीक नही जान पड़ता और न सहल ही लगता है।

तुम्हारा कातना कम हो गया है, यह ठीक ही है। शरीरको जोखिमम डाल कर कोई काम करनेकी जरूरत नही।

लिफाफे बनानेके उद्योगमें वल्लभभाईने इजाफा किया है। वे गांडीवपर रोज दस पूनी कातते हैं और संस्कृतके अध्ययनमे भी रत हो गये है। उन्होंने सातवलेकरकी ग्रंथमालाके २४ भाग मँगाये और पढ़ना शुरू किया, तथा अभी पन्द्रह दिन ही हुए होंगे कि तीसरा भाग पूरा होने जा रहा है। यह तरक्की काफी अच्छी कही जा सकती है। चार-पाँच महीनोंमे उनके सब भागोंको पढ़ जानेकी सम्भावना है। वे 'रामायण', 'महाभारत' पढ़ जानेकी अपेक्षा रखते है।

महादेवने चरखा कातना आधा कर दिया है। ४० अंकका सूत कातनेमे समय बहुत लगता था और थकावट भी काफी महसूस होती थी। ४० अंकका सूत काफी सुन्दर काता जाता था।

१. द स्टारस इन देयर कोर्सेज, द यूनिवर्स अराउण्ड अस, और मिस्टीरियस यूनिवर्स।

मेरी बायी कुहनी ठीक तो नहीं कही जा सकती, लेकिन डाक्टरकी अनुमतिसे मगन चरखा छोडकर मैं पुनः गांडीव पर कातने लगा हूँ। चक्र बायें हाथसे घुमाता हूँ और तार दायें हाथसे खीचता हूँ। दायें हाथ पर मेरा इतना अधिकार नही है कि चाहे जैसा महीन सूत कात सकूं, लेकिन मगन चरखेकी अपेक्षा मैं महीन तार अवश्य निकालता हूँ। रफ्तारमें भी काफी वृद्धि हुई है, और यदि बायी कुहनी मेरा साथ देगी तो रफ्तार अभी और भी तेज होनी चाहिए। मैं देखता हूँ कि गति और सूतकी बारीकीमे अभी द्वन्द्व-युद्ध चलेगा।

अभी तो आश्रमके इतिहासमे[1] समय चला जाता है। इसे पूरा करनेसे पहले अन्य कुछ लिखनेकी इच्छा नही होती। उर्दूकी पढाई, मुद्रा शास्त्र और 'स्वाध्याय संहिता' तो चलती ही है। अतएव 'दैवी सम्पद्'[2] के लक्षणो पर कुछ लिखनेके लोभमें मैं नही पड़ूँगा। यह कल्पना भी तुम्हारी ही है और इस पर तुम्ही लिखो, यही उचित है।

'आश्रमका इतिहास' विचित्र स्वरूप धारण करता जा रहा है। काम कठिन भी लगता है। इसमे व्यक्तियोंका उल्लेख कम ही हुआ है। इसमें भिन्न-भिन्न व्रतोके बारेमें और उनका पालन कैसे किया जाता है, इस विषयपर लिखा गया है। इसमें अहिंसा, वर्णाश्रम, रोटी-श्रम और ब्रह्मचर्यपर बहुत-कुछ कहा गया है। कदाचित् पन्द्रह-एक दिनोमें पूरा हो जायेगा। तुम्हारे समस्त सुझाव[3] मेरे सामने ही है, लेकिन इतिहासमें कदाचित् इन सबका समावेश नही हो सकेगा। लेकिन अभी तो मुझे ही मालूम नही कि अन्ततः इसका स्वरूप क्या होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८७)से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१. देखिए "सत्याग्रह आश्रमका इतिहास", ११-७-१९३२।

२. देखिए भगवद्गीता, १६, १-३।

३. काका कालेलकरने लिखा था: "उपरोक्त पत्रमें आश्रमके इतिहासमें क्या-क्या शामिल होना चाहिए उससे सम्बन्धित मेरे सुझावोंका उल्लेख है। मैंने गांधीजीसे खास तौर पर प्रार्थना की थी कि वे हममें से उन लोगोंको कदापि न बख्शें जिनके संकुचित दृष्टिकोण और अयोग्यताने उन्हें काफी तकलीफ पहुँचाई है और जो सत्याग्रह आश्रमके नामसे पहचाने जाने जानेवाले सामाजिक पुनरुत्थानके हेतु समुदायिक जीवन सम्बन्धी महान प्रयोगको कारगर करनेमें असमर्थ रहे है।"

२५३. देखरेखकी अनावश्यकता[1]

२४ जुलाई, १९३२

कदाचित् यह शीर्षक चौकानेवाला है। हम अभी देखरेखके विना अपना काम-काज चला सकते है, ऐसा इस शीर्षकका आशय नही है। लेकिन इसका आशय देखरेख कम करना और अन्तमे उसे विल्कुल खत्म कर देनेका उपाय सुझाना अवश्य है।

धार्मिक संस्थामे जिस हद तक देखरेखकी आवश्यकता पडती है, उस हद तक यह धर्मकी कमीका परिचायक है। इसके पीछे अविश्वासकी भावना निहित है। अविश्वास धर्मके लिए—आत्माके लिए—घातक है। ईश्वर सवको देखनेवाला है। फिर हमें किसकी देखरेख करनेकी जरूरत है? जिसने रसोई अथवा पाखाना साफ करनेका भार अपने सिर उठाया है, वह अपने-आप उसे समुचित रूपसे क्यों न करे? वह अवश्य करेगा, ऐसा विश्वास हम अपने मनमे क्यों न रखे? देखरेखके विना जो व्यक्ति अपने हिस्सेका काम पूर्णरूपेण अथवा ठीक ढंगसे न करे तो उसके आश्रमसे चले जानेकी वात तो सहन की जा सकती है, लेकिन देखरेखकी वात असह्य लगनी चाहिए। हमारे रोजके कार्यका लेखा-जोखा ही हमारी देखरेखका द्योतक है।

यहाँ देखरेखका अर्थ समझ लेना चाहिए। वालकको देखरेखकी अपेक्षा होती है। उसे [काम करनेका ढग] नही आता, इसीलिए उसको सौपे हुए कामको वतानेकी आवश्यकता होती है। बड़े लोग भी जिनको कोई काम न आता हो, उनके लिए भी देखरेख जरूरी है, उनकी ऐसी अपेक्षा भी होगी। वस्तुतः देखा जाये तो ऐसी देखरेख, देखरेख नही अपितु शिक्षककी मदद है। इसी मददके आधारपर नये सीखनेवाले लोग आगे वढ़ते है।

लेकिन जो देखरेख चौकसीके रूपमे की जाती है, सामने वैठा हुआ व्यक्ति अपना काम ठीक तरहसे करता है अथवा नही, उसपर चौकसी करनेके लिए की जाती है, वह दोषपूर्ण चीज है। वालकोंपर भी इस तरह चौकसी करना वुरी चीज है। इस दोषसे बच निकलनेका मार्ग हमे ढूँढ़ निकालना चाहिए।

इसका प्रथम चरण यह है: जहाँ-जहाँ देखरेखकी जाती है उन कामोकी तालिका वना लेनी चाहिए। उनमें कौन-कौन है, यह भी देख लेना चाहिए। उनके साथ सलाह-मशविरा करनेके वाद उन्हें उनके विश्वासपर छोड़ देना चाहिए। आश्रमके संस्थापक और अन्य लोगोको इस वातका पूरा एहसास होना चाहिए कि परमात्मा सवसे वड़ा साक्षी है। वालकोंको भी ईश्वरकी उपस्थितिका भान अभीसे ही हो जाना चाहिए। यह कोई वहम नही है, अनिश्चित वस्तु नही है, अपितु हमें अपनी उपस्थितिका जितना विश्वास है उतने ही विश्वासकी यह चीज भी है।

१. यह लेख "पत्र: नारणदास गांधीको", २०-७-१९३२ के साथ भेजा गया था।

मेरे इस सुझावपर सब विचार करने लग जायें और जहाँ तक उसपर अमल करना सम्भव हो वहाँतक हम उसपर अमल करें, यह हमारा धर्म है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२५४. पत्र: ई० ई० डॉयलको[1]

२४ जुलाई, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

आपको मैंने अपनी डाकके बारेमें जो पत्र लिखा था[2], उसके बाद मेजर भण्डारीने उस विषयपर आपको भेजा गया सरकारका पत्र दिखाया है।

मुझे यह स्वीकार करना पड़ेगा कि यह पत्र देखकर मुझे धक्का लगा है। अगर मैं उसे ठीक समझता हूँ, तो उससे समूचे भारतीय सरकारी कर्मचारियोंके प्रति अविश्वासकी गन्ध आती है, और इसीलिए स्वभावतः देशकी उस महान भाषाके प्रति अवमानना भी प्रकट होती है, जिसे यहाँके करोड़ों निवासी बोलते हैं। जो लोग इस नीतिसे प्रभावित हैं, उनके लिए उसके परिणाम अत्यन्त घातक हैं। जो लोग अंग्रेजी नहीं जानते और पैसा देकर अंग्रेजी जाननेवालोंकी मदद नहीं ले सकते या जो लोग ऐसी मदद लेना अपने सम्मानके विरुद्ध मानते हैं, वे सब इस नीतिके फलस्वरूप घाटेकी स्थितिमें हो जाते हैं। मेरा अपना मामला इसका एक दृष्टान्त है। गोरखपुर सेंट्रल जेलमें मेरा लड़का[3] बीमार है। उससे मिलकर आनेवाले एक मित्रने मुझे लिखा है कि वह (मेरा लड़का) उत्कंठाके साथ मेरे पत्रकी राह देख रहा है। मैंने उसे पत्र लिखा था। लेकिन मेरे मित्रने जब पत्र लिखा उस समयतक मेरा

१. यह पत्र जिस दिन लिखा गया उसी दिन डाकमें नहीं छोड़ा जा सका। इस सम्बन्धमें महादेवभाईने लिखा है: "बापूने हमारे पत्र-व्यवहारके बारेमें डॉयलको भेजनेके लिए एक पत्र लिखा। लेकिन सुपरिंटेंडेंट घबरा गया और बोला, 'कृपया ऐसा कोई पत्र मत भेजिए। इसपर से वे ऐसा समझ सकते हैं कि इस जेलके भारतीय अधिकारियोंने आपसे शिकायत की है।'... [अगले दिन] बापूने सुपरिंटेंडेंटको विश्वास दिलाया कि उसे जिस बातका भय है, पत्रमें उस आधारपर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। सुपरिंटेंडेंटने कहा, 'कृपया इसमें इतना स्पष्ट कर दीजिए कि मैं जेलके अधिकारियोंकी तरफ इशारा नहीं कर रहा हूँ।' बापूने कहा कि 'वैसी हालतमें वे जरूर ऐसा मानेंगे कि यह पत्र आपके सुझावपर लिखा गया है। उसके बजाय मैंने जिस रूपमें लिखा है उसी रूपमें इसे जाने दीजिए। वस्तुतः यह एक ऐसा सवाल है जिसपर आपको इस्तीफा दे देना चाहिए — अगर आपमें कुछ आत्मसम्मान है तो। लेकिन हम ऐसा आत्मसम्मान खो चुके हैं। इसलिए अगर आप कोई कार्रवाई नहीं कर सकते तो मुझे कमसे-कम इतना तो करने दीजिए।'" (महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१)

२. १३-७-१९३२ को।

३. देवदास गांधी।

पत्र उसे नही मिला था। मेरा लड़का अंग्रेजी जानता है, लेकिन हमने एक-दूसरेको कभी अंग्रेजीमे पत्र नही लिखा है। मेरी पत्नी भी मेरे पत्र न पानेकी शिकायत करती है। वह अंग्रेजी नही जानती। मै नही जानता कि मेरे नाम लिखे उसके पत्रो और उसको लिखे मेरे पत्रोका क्या हो जाता है। मेरी विनम्र रायमें भारतकी प्रमुख भाषाएँ यदि अंग्रेजीसे बड़ी नही तो कमसे-कम उसके बराबरका दर्जा पानेकी हकदार जरूर हैं।

मुझे यह सोचकर दुख होता है कि मैं गुजराती या हिन्दी या उर्दूमें जो पत्र लिखता हूँ, वे नियमोंकी मर्यादामें आते है या नही, इसका निर्णय करनेके लिए किसी भी भारतीय अधिकारीको, जो कि ये भाषाएँ जानता है, योग्य अथवा विश्वसनीय नही माना जाता। मैं अपने इसी २२ तारीखके पत्रमे पहले ही पूछ चुका हूँ कि क्या मैंने अनजानेमे कोई ऐसी बात कर दी है, जिसकी वजहसे मेरे पत्रोंकी इतनी असाधारण जाँच की जाती है।

अतः ऐसा लगता है कि सरकारने मुझे पत्र लिखनेकी जो स्वतन्त्रता दे रखी है, वह सरकारके इस नये आदेश द्वारा प्रकारान्तरसे वापस ले ली गई है।

अतः तर्क और भावना, दोनोके आधारपर मैं सरकारसे कहूँगा कि यदि वह सचमुच दिलसे चाहती है कि मैं अभीतक जिस प्रकार पत्र लिखता रहा हूँ उसी प्रकार लिखता रहूँ तो वह अपने निर्णयपर पुनर्विचार करे, और ऐसा प्रबन्ध कर दे कि मेरे अंग्रेजीके पत्रोंको जिस फुर्तीके साथ भिजवानेका वचन दिया गया है, उसी फुर्तीके साथ भारतीय भाषाओमें लिखे मेरे पत्रोको भी भिजवाया जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्टैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) भाग १, पृष्ठ २४९।

२५५. पत्र : एम० जी० भण्डारीको

२४ जुलाई, १९३२

प्रिय मेजर भण्डारी,

आश्रमवाली चिट्ठियोंके थैलेमें छोटूभाईके नाम लिखे पत्र[1] संख्या २७ के बारेमें आपकी पूछ-ताछके जवाबमें मुझे कहना है कि वह मुझे अपने कागजातोंमें नहीं मिला है। एक जगहसे दूसरी जगह जाते हुए वह कहीं गुम हो गया होगा। पत्रोंको एकत्र करनेके बाद उनकी सूची बना ली जाती है। इसलिए उनमें से किसी पत्रके यहाँ छूट जानेकी कोई सम्भावना नहीं है। गुमशुदा पत्रमें मैंने छोटूभाईको उनके पिताके बारेमें सलाह दी थी, जिनको पुराने कब्जकी शिकायत है और जिनका दिमाग भी कमजोर है मुझे आशा है कि यदि पत्रका पता चल जाये और वह आपत्तिजनक न समझा जाये है। तो उसे आश्रम भेज दिया जायेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१३२) से।

२५६. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

२४ जुलाई, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

तेरा पत्र मिला। तू लिखती है कि प्यारेलाल वगैरा अच्छे हैं, जब कि किसी अन्य पत्रमें लिखा है कि प्यारेलालका शरीर एकदम कमजोर हो गया है। यह किसके पत्रमें था, मैं भूल गया हूँ। तू फिर मिल आय तो अच्छा। प्यारेलालने मुझे तो कोई पत्र नहीं लिखा है। मैंने उसे लिखा है, परन्तु मेरे पत्रोंका अभी कोई ठिकाना नहीं है।

तेरी किसी तरहकी पढ़ाई हो रही है? तू अंग्रेजी सीख रही थी उसका क्या हुआ?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४३) से।

१. अनुमानतः "पत्र : छोटूभाईको", १७-७-१९३२।

२५७. पत्र : छगनलाल जोशीको

२४ जुलाई, १९३२

चि० छगनलाल,

आशा है, तुम सब सकुशल आश्रम पहुँच गये होगे। कुरेशीको[1] चाहिए कि वह अपनी तबीयतको, जो अभी सुधार पर है, बिगड़ने न दे। इमाम साहबकी कब्र पर तुम भी गये होगे। कुरेशीसे कहना कि उसके बारेमें वह मुझे लिखे। कब्रके आसपास दीवार खड़ी करना ठीक लगे तो अवश्य करना। केवलराम[2] कहाँ है? उसका शरीर कैसा है? उससे कहना, मुझे लिखे। निर्मला[3] तो सो ही गई है। मुझे अभी उसका कोई पत्र ही नही मिला है।

धीरू[4] और विमलाकी[5] खबर देना। उनसे मिले हो तो उनकी सेहत कैसी है, यह बताना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५०३)से।

२५८. पत्र : पुरातन बुचको

२४ जुलाई, १९३२

चि० पुरातन,

'भाई' और 'चिरंजीव' मे बहुत भेद नही है। 'भाई' अथवा जो भी लिखा है सो कैसे लिखा गया या न लिखा गया, इसका मुझे स्मरण नही। मैंने जानबूझकर परिवर्तन नही किया था। दूसरा व्यक्ति क्या चाहता है, इसका विचार मैं कभी-कभी अवश्य किया करता हूँ; पर तुम्हारे विषयमे मैंने यह भी नही किया। इतना जरूर है कि जिसे मैं 'चिरंजीव' लिखता हूँ, उसे मेरा भार ज्यादा उठाना पड़ता है। जबतक मैं जेलमे हूँ, मेरे साथ रहनेकी बात तो सोची भी नही जा सकती। इस बारेमें किसी दिन जेलसे निकलूंगा, तब पूछना। मैं कही स्थिर होकर बैठूंगा, तब तुम्हें अवश्य अपने साथ रखूंगा। मेरी चेतावनीका आशय तुम्हें प्रश्न करनेसे रोकना नही,

१. गुलाम रसूल कुरेशी, इमाम साहबके दामाद।

२. केवलराम भीमजी जोशी।

३. केवलरामकी पत्नी।

४ और ५. छगनलाल जोशीके बच्चे।

अपितु अन्तर्मुख होनेके लिए था। मूल समस्याको जान लेनेके बाद गौण समस्याओंका समाधान करना हमें आना ही चाहिए। जबतक यह नहीं आता तबतक मूल समस्याको हमने समझ लिया है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। यह बात ज्यामितिके साध्योंकी तरह है। एकका हल सिद्ध हो जानेपर उससे उत्पन्न अन्य उपसाध्योंका हल निकलना ही चाहिए। अपना स्वास्थ्य सुधार लेना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६७) से।

२५९. पत्र: चिमनलाल एन० शाहको

२४ जुलाई, १९३२

चि० चिमनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। शारदा मुझे समय-समय पर लिखती रहती है। वह अकेली है, यह बहुत अच्छी बात है। हमारे सब बच्चोंको माता-पितासे अलग रहनेकी आदत होनी चाहिए। माता-पिता पर निर्भर रहनेवाले बच्चे अन्तमें दुर्बल हो जाते हैं।

तुम्हारी नाकके कष्टके लिए गहरा श्वासोच्छ्वास लेनेकी आदत प्रभावकारी सिद्ध होगी। पोटैशियम परमैंगनेटका पानी नाकमें चढ़ानेसे कदाचित् लाभ हो। क्या डा० रजबअलीने जाँच की थी? यदि नाककी हड्डीपर कुछ असर हुआ है तो उसमें डाक्टरकी मददकी जरूरत होगी; अन्यथा गहरे श्वासोच्छ्वाससे आराम मिलना ही चाहिए। वैद्यकी दवाके परिणामके बारेमें मुझे बताओगे ही। यदि वहाँकी आबोहवा तुम दोनोंको अनुकूल बैठे तो वहाँसे निकलनेमें जल्दी न करना। छगनलाल और काशीको[1] तुम दोनोंका साथ तो पसन्द होगा ही, और काम तो हम जहाँ भी रहें, करना ही है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १४) से।

१. छगनलाल गांधीकी पत्नी।

२६०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२४ जुलाई, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला है। अब मैं कितने पत्र लिख पाऊँगा सो नही कहा जा सकता। पत्रों पर तलवार लटक रही है। पत्रोको यहाँसे भेजनेमे जो ढील होती है अगर वह जारी रही तो पत्र लिखनेमे मैं कोई सार नही देखता। आनेवाले पत्र तो अब मुझे तुरन्त दे दिये जाते हैं। यहाँसे जानेवाले पत्रोके बारेमें-अभी पत्र-व्यवहार हो रहा है। यदि पत्र न आये तो समझना कि मेरी गाड़ी पटरीसे उतर गई है। लेकिन इससे घबराने अथवा उदास होनेका कोई कारण नही। लिखने देना या न देना सरकार के हाथमें है। कैदी अधिकारकी रूसे पत्र लिखनेकी माँग नही कर सकता। इतने दिनो तक लिखते रहे, इससे यह हमारा अधिकार नही हो जाता, और जिस वस्तुके बारेमे हमे कोई अधिकार नही है वह यदि हाथसे चली जाये तो इसमें दुःखी होनेकी कोई बात नहीं।

तेरी वर्षगाँठ पर मैंने आशीर्वादका जो पत्र तुझे भेजा था[1] वह तो तुझे अब मिल ही गया है। देरीसे मिला, इसकी क्या चिन्ता? कदाचित् इससे उसकी कीमत बढ़ गई। नही मिलनेसे उसमे अपशकुन मानने जैसी कोई बात न थी। मुझे तेरा पत्र मिले और मैं आशीर्वाद न भेजूं, ऐसा तो हो ही नही सकता। अप्रत्याशित परिस्थितियोके उपस्थित होनेपर पत्र न मिले अथवा देरसे मिले तो उसमें अपशकुन कैसा? और वस्तुतः अनासक्तके लिए अपशकुन जैसी कोई चीज है ही नही। इसलिए ऐसा कभी न मानना कि तेरा नया वर्ष खराब जायेगा। खराब तो वह तब जायेगा जब हम कुछ खराब सोचेंगे, करेंगे अथवा बोलेंगे और यह तो हमारे वशकी बात है।

यदि डाक्टरकी राय गलेके टासिल्स कटवा देनेकी हो तो कटवा देना। उसने पहले भी यही सलाह दी थी न? इसमे कुछ देर नही लगती और न कोई जोखिमकी बात ही है। तेरा शरीर बिल्कुल स्वस्थ हो जाना चाहिए। मेरी मान्यता है कि अन्ततः अपने शरीरके बारेमें सबसे ज्यादा मनुष्यको स्वयं ही पता रहता है।

डाक्टरोको भी बहुत कुछ रोगीके कहनेपर निर्भर रहना पड़ता है। इससे यह प्रकट होता है कि यदि रोगीको अपने शरीरके बारेमें अच्छी तरहसे मालूम नही है तो वह डाक्टरको ठीक-ठीक उत्तर नही दे सकता। 'सिर दर्द होता है,' इतना भर कहनेसे डाक्टर क्या कर सकता है? सिरदर्द क्यो होता है, यह रोगीको मालूम होना चाहिए। और हम देख सकते हैं कि यह बात अन्य अनेक रोगो पर भी लागू

१. ३०-६-१९३२ को।

होती है। ठीक यही बात उपचारके सम्बन्धमे भी चरितार्थ होती है। अमुक उपचार का रोगी पर क्या प्रभाव हुआ, यह बात डाक्टर अपने-आप नही जान सकता, अपितु उसे रोगी पर निर्भर करना पड़ता है। लेकिन सब रोगी उपचारोके प्रभावको नही पहचान सकते। खुराक शरीरके लिए नित्य किया जानेवाला उपचार है। इसका असर तो खानेवालेको ही मालूम हो सकता है। अतएव जिस व्यक्तिने हवा, पानी और खुराकके प्रभावको जान लिया है वह अपने शरीरको जितना काबूमें रख सकता है उतना डाक्टर कभी नही रख सकता। इसलिए मुझे लगता है कि हम सबको शरीरके सम्बन्धमे सामान्य ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। उसी तरह हवा, पानी और खुराकके बारेमे भी जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। इस ज्ञानको प्राप्त करने लायक साहित्य हमारे यहाँ है। वह सब पढ़नेकी जरूरत नही। लेकिन यदि उसमे से थोड़ा जान लिया हो तो काम चल सकता है। शिवाजीने अपने प्रयत्नो द्वारा अपने शरीरको उत्तम बनाया था। अपने बारेमे तो मै यह मानता ही हूँ कि यदि मैने आवश्यक ज्ञानकी प्राप्ति न कर ली होती तो मै कबका इस संसारसे कूच कर गया होता। मेरा जर्जर शरीर भी मेरी सावधानीके कारण ही टिका रहा है। उसमे डाक्टरोका बहुत कम हाथ है, ऐसा मेरा विश्वास है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९५) से। सी० डब्ल्यू० ५७४९ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

२६१. पत्र: प्रभुदास गांधीको

२४ जुलाई, १९३२

प्रिय प्रभुदास,

नारणदासको लिखे अपने पत्रमें[1] मैंने मगन-चरखेके बारेमे जो लिखा है उसे पढ़ जाना।[2] सत्यके विषयमे मुझे कुछ नही कहना है। ईश्वरकी व्याख्या कठिन है। सत्यकी व्याख्या तो सबके हृदयमे निहित है। तू जिसे अभी सच मानता है वही सत्य है और वही तेरा परमेश्वर है। इस स्वकल्पित सत्यकी आराधना करते हुए मनुष्य अवश्य ही अन्तिम शुद्ध सत्यको प्राप्त करता है, और वही परमात्मा है। आजकल मै वेदोका दोहन पढ़ रहा हूँ। उसमे भी यही बात कही गई है। मेरे विचारानुसार तो जबतक हमे सच्चा जीवन जीना नही आता तबतक समस्त वाचन व्यर्थ है। सच्चे जीवनमें कृत्रिमताको तो अवकाश ही नही है। सत्यका पुजारी जैसा

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", २०-७-१९३२।
२. आगेका अंश महादेवभाईनी डायरी से लिया गया है।

है वैसा ही वह दिखाई देगा। उसके विचार, वाणी और व्यवहारमें एकरूपता होगी, ईश्वरको सत्यरूप जाननेसे हमें यह शिक्षा जल्दी प्राप्त होती है। ऐसा सत्यमय जीवन बनानेके लिए बहुत-सी पोथियोंको उलटनेकी जरूरत नहीं पड़ती, अपितु सारी बाजी हमारे हाथमें आ जाती है। "हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितंमुखं, तत्वं पूषन्नपावृणु, सत्यधर्माय दृष्टये।"[1] इस मन्त्र पर मनन करना।

बापू

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – २, तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३८९-९१।

२६२. पत्र : पद्माको

२४ जुलाई, १९३२

चि० पद्मा,

तेरे और दुर्गाके लिए मैंने रंगीन कागजके टुकड़े सँभालकर रखे हैं। यदि नई जमीन तुझे अनुकूल बैठे तब तो यह निश्चय ही बहुत अच्छी बात है। तेरा वजन हर हालतमें बढ़ना ही चाहिए। यदि तू वहाँ ही अच्छी हो जाये तो भुवाली जानेकी कोई जरूरत नहीं होगी। तेरा कब्ज दूर हो गया, इसे मैं बहुत बड़ा सुधार मानता हूँ। वहाँ फल कौन-कौनसे मिलते हैं? दूध कितना पी सकती है? समय किस तरह बिताती है? शीला सारा दिन क्या करती है?

पिताजीके पत्रकी बात तूने लिखी, पर वह मुझे नहीं मिला।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३४) से। सी० डब्ल्यू० ३४८६ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

१. ईशोपनिषद्, १५।

२६३. पत्र : कमलाबहनको

२४ जुलाई, १९३२

प्रिय कमलाबहन,

तुम आश्रम आ गई हो यह अच्छा है। अब वहाँ शान्तिसे रहो। क्या आश्रमका पानी तुम्हें मुआफिक बैठता है? क्या तुम्हे गोपालदासका कोई समाचार मिलता है? उसका स्वास्थ्य कैसा है? मुझे लिखना।

मुझे अभी बालकृष्णके स्वास्थ्यके बारेमें कोई समाचार नही मिला है। क्या वह अभी भी लड़कियोंका स्कूल चला रहा है?

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ३९३।

२६४. पत्र : डा० प्राणजीवन मेहताको

२४ जुलाई, १९३२

भाई प्राणजीवन,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला। पोलक लिखते है कि वह मगनलाल[1] से संतुष्ट हैं। उसका मन अध्ययनमें रमा हुआ है। यदि ऐसी बात है, और यही हालत बनी रही तो उसे अवश्य ही लाभ होगा। इधर काफी अर्सेसे मुझे मगनलालका कोई पत्र नही मिला है। रतिलाल[2] फिलहाल ठीक चलता दिखता है। उसके मामलेमे तो—अच्छे और बुरे—परिवर्तन आते ही रहेगे।

मेरी बायी कुहनी पर पट्टी बँधी रहनेसे भी कोई लाभ नही हुआ है। चूँकि जबतक एक खास ढंगसे न हिलायी जाये तबतक वह कोई तकलीफ नही देती, इसलिए मैं उसके बारेमे चिन्ता नही करता। यहाँ डाक्टर बिजलीकी सेंक दे रहे हैं। अभी तक केवल तीन बार सेंक लगी है और इसलिए उसके प्रभावके बारेमें कुछ

१. प्राणजीवन मेहताका पुत्र, जो उस समय इंग्लैंडमें पढ रहा था।

२. प्राणजीवन मेहताका पुत्र जो बीमार था।

नही कहा जा सकता। मैं आशा करता हूँ कि तुम अपनी दुकानकी देखभालमें बहुत ज्यादा श्रम नही कर रहे हो।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४०५-७।

२६५. पत्र : कुसुम गांधीको

२४ जुलाई, १९३२

प्रिय कुसुम (छोटी),

मालूम पडता है, तू सोचे बिना ही बहुत बक-बक करती है। मेरी डाक वहाँ पहुँची नही, इस कारण तूने पत्र लिखना ही बन्द कर दिया, हालांकि तू मुझे अकसर लिखती रही है कि तू मुझे हर सप्ताह पत्र लिखना चाहती है। जल्दबाजीमें या बिना सोचे-समझे कुछ मत बोला कर। भली प्रकार विचारे बिना कोई व्रत मत ले। यदि कोई व्रत ले ही ले तो उसे ध्यानमें रख कर उसका पालन कर। क्या तेरा बुखार उतर गया? तू कितना दूध पी लेती है? यदि तू नर्स बनना चाहती है तो जल्दीसे ठीक हो जा और मननपूर्वक जीवन बिता। हम जो भी कार्य-भार उठायें, यदि उसके मूलभूत सभी कारणोंकी शोध करेंगे, तो वह कार्य रोचक बन जायेगा और भार-समान नही प्रतीत होगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल नं० २०/९।

२६६. पत्र: गंगाबहन वैद्यको

२५ जुलाई, १९३२

चि० गंगाबहन,

मैं तुमसे नहीं मिल सका, इसका मुझे निश्चय ही दुख हुआ। लेकिन धर्मके आगे हम सब लाचार हैं। बाहरके लोगोंसे मुलाकात बन्द करनेके बाद कोई अपवाद थोड़े ही हो सकता है? अब तुम लिखना। अपनी तबीयतका समाचार देना। काकूके बारेमें भी लिखना। अमीना[1] भी मुझे पत्र लिखे। आशा है, तुम प्रसन्न होगी। हम तीनों मजेमें हैं। मैं पत्र लिख सकूंगा या नहीं, यह निश्चित नहीं है। जो हो, उसे हमें सहन करना होगा।

उम्मीद है, तुम नाथसे[2] मिली होगी। उनकी खबर देना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६: गं० स्व० गंगाबहेनने। सी० डब्ल्यू० ८७९१ से भी; सौजन्य: गंगाबहन वैद्य

२६७. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

२५ जुलाई, १९३२

चि० मथुरादास,

२३ तारीखको तुम्हारा पत्र मिला। यदि वहाँका मौसम तुम्हें माफिक आ जाये तो यह अच्छा होगा। क्या तुम्हें कोई साथी दिया गया है? क्या तुम्हें पर्याप्त कपड़े दिये जाते हैं? मुझे 'पॉपुलर एस्ट्रॉनॉमी' की पुस्तक मिली थी। यह पुस्तक किसने भेजी, सो मुझे मालूम नहीं हो सका। पुस्तकमें दिये गये नामपरसे मैंने सोचा कि उसे प्राणलालने भेजा होगा। हुआ यह कि कुछ महीने पहले पुस्तककी एक प्रति मेरे हाथ लगी। आश्रमके शिवाजी (विनोबाके भाई)ने (इस विषयका) गम्भीर अध्ययन किया। मैंने उन्हें लिखा था कि वह अपनी पसन्दकी कोई पुस्तक मुझे भेजें। और इस तरह यह पुस्तक मेरे पास आई। और अब मेरे पास इस पुस्तककी दो प्रतियाँ

१. अमीना जी० कुरेशी, इमाम साहबकी छोटी पुत्री।

२. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

है। इसमें दिये गये मानचित्र अच्छे हैं लेकिन विषय-वस्तुमें विशेष कुछ नही है। (विषय-वस्तुके लिहाजसे) इस समय मेरे पास इससे बेहतर किताबें हैं। इस मौसममें आकाशका कुछ अध्ययन नही किया जा सकता। सितम्बर अथवा अक्टूबरमें जब आसमान साफ हो जायेगा और सूर्यास्त जल्दी होने लगेगा तब यदि तुम्हें साढे सात-आठ बजे तक बाहर रहनेकी इजाजत हुई तो तुम आकाश-दर्शन कर सकोगे।[1]

मैं देखता हूँ कि सामाजिक सुधार-विषयक तुम्हारे विचार अत्यन्त आधुनिक हैं। इसके विषयमें मेरा दृष्टिकोण भिन्न है। जिन सुधारोकी मैं तात्कालिक कोई आवश्यकता नही देखता, और जिनके बारेमें तनिक भी शंकाकी गुंजाइश हो उनको लेकर मैं ऊहापोहमें नही पड़ता। तलाक ऐसी ही चीज है। एक तो आम जनतामें तलाक पर कोई रोक ही नही है और जहाँ प्रतिबन्ध है वहाँ तलाक तक पहुँचनेसे पहले बहुत-सी चीजें बाकी रह जाती हैं। इसलिए इस विषयको लेकर मैं अपनी शक्तिका अपव्यय नही करूँगा और न लोगोको संभ्रममें डालूँगा।

सन्तति-नियमनके बारेमें तो मेरा मन सदा विरोध करता रहता है। बहुत सम्भव है कि इस सम्बन्धमें मैं अपने प्राचीन विचारोसे बहुत ज्यादा प्रभावित होऊँ, लेकिन जिन कारणोको लेकर मैं विरोध करता हूँ वे कारण आज भी मौजूद हैं। इसलिए सन्तति-नियमनसे होनेवाले भारी नुकसानको हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं। नई सन्तानको उत्पन्न होनेसे रोकनेके लिए कृत्रिम उपायोकी खोज करनेसे आज जो सबल दिखाई देते हैं वे भी दुर्बल हो जायेंगे। सन्तति-नियमनके पीछे निहित समस्त विचार-धारा ही भयकर और दोषमय है। सन्तति-नियमनका समर्थन करनेवाले ऐसा मानते हैं कि जननेन्द्रियको सन्तुष्ट करनेका मनुष्यको अधिकार है, इतना ही नहीं वरन् ऐसा करना उसका धर्म है और यदि वह इस धर्मका पालन नही करता तो जीवनका विकास अवरुद्ध हो जाता है। मुझे तो यह विचार अत्यन्त दोषमय जान पड़ता है और अनुभवसे भी मुझे यह दोष दिखाई देता है। इन कृत्रिम उपायोका सहारा लेने वाले लोगोसे संयमकी आशा करना व्यर्थ है। इस सम्बन्धमे संयम असम्भव है, इस मान्यताके आधार पर ही सन्तति-नियमनके उपायोका प्रचार होता है और जननेन्द्रियके संयमको असम्भव मानना अथवा अनावश्यक मानना अथवा हानिकर समझना, यह मेरे विचारसे धर्म न माननेके समान है। क्योकि धर्मकी सारी रचना धर्मपर ही की गई है। दुर्बल सन्ततिकी उत्पत्तिको रोकनेके लिए अनेक सीधे, सरल और निर्दोष उपाय हैं। इन उपायोको छोड़कर सन्तति-नियमन जैसी खतरनाक चीजका उपयोग कैसे किया जा सकता है? और यह बात लगभग सब लोग स्वीकार करते हैं कि इसमें बहुत जोखिम है। फलतः मैं जिस किसी तरहसे भी इसका विचार करता हूँ तो मुझे यह त्याज्य लगता है। इतना सब लिखनेका फिरसे मन हो आया सो इसका कारण यह है कि विचारके लिए तुम्हारे पास समय है, और चूँकि यह विषय अत्यन्त गम्भीर है इसलिए आवश्यक है कि तुम इसपर खूब अच्छी तरहसे विचार कर जाओ। फिर चाहे तुम जिस किसी भी निष्कर्षपर पहुँचो इसका मुझे कोई भय नही, क्योकि मैं

१. यह अनुच्छेद बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें प्राप्त अंग्रेजी अनुवादसे लिया गया है।

मानता हूँ कि अन्ततः तुम्हारी निश्छलता तुम्हें बचा लेगी अथवा यदि मैं भूलपर हुआ तो तुम उस भूलको सुधार सकोगे। यदि सन्तति-नियमन तुम्हे नैतिक दृष्टिसे उचित लगेगा तो मुझे मनवाये बिना तुम्हें चैन नही पड़ेगा। और मेरा काम आसान है। मै किसी विचार-विशेषके प्रति चाहे कितना भी आग्रह क्यों न रखूँ तथापि यदि उसमे मुझे दोष दिखाई दे अथवा कोई मुझे उसका एहसास कराये तो उसका त्याग करनेमें मुझे कोई देर नही लगती।

हम तीनोकी तबीयत अच्छी है। मै फिलहाल दूध लेता हूँ। उसका मुझे कोई लाभ हुआ हो, ऐसा मै नही समझता। मै तो यहाँके डाक्टरोंके अधीन हो गया हूँ। कुहनीका दर्द जारी है लेकिन वह तभी होता है जब उसे अमुक ढंगसे घुमाया जाये। इसलिए इसके बारेमें चिन्ताकी कोई बात नही। मुलाकातके सम्बन्धमे मै तारामतीको लिख चुका हूँ।[1] लिफाफे बनानेके अलावा सरदारने दो और काम हाथमें लिये है: चरखा और संस्कृतका अध्ययन। संस्कृतका अध्ययन वेगके साथ चल रहा है। तुमने सातवलेकर [की ग्रंथपाल] के कदाचित् २४ भाग देखे होंगे। उनमे से तीन तो १५ दिनमे ही पूरे कर डाले। यह गति निश्चय ही अच्छी कही जा सकती है।

देवदासको फिरसे बुखार हो आया था। अन्तिम समाचार परसे लगता है कि बुखार उतर गया है। गोरखपुरके अधिकारियोने उसकी अच्छी देखभाल की है, ऐसा उसने लिखा है। मेरे पत्रोकी स्थिति अब अनिश्चित हो गई है। बाहरसे आनेवाली डाक तो नियमित रूपसे मिलती है, लेकिन जो मै लिखता हूँ उन पत्रोके रवाना होनेमे खासी देर हो जाती है। इसलिए यदि मेरा पत्र मिलनेमें देर हो तो चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नही।

वहाँ तुम्हारी खुराक क्या है? हजम हो जाती है? कसरत किस तरहकी करनेको मिलती है? वजन कैसा रहता है, नीद कैसी आती है? यह सब समाचार देना। आजकल क्या पढते हो?

मेरा उर्दूका अध्ययन ठीक चल रहा है। अब थोड़ा-थोड़ा लिखा जा सकता है। यह मुझे अच्छा लगता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुम्हें गांडीव चरखा मिल गया है? महादेव याद दिलाता है कि चरखा मिल जानेकी बात तो तुमने मुझे लिखी थी। मेरी स्मरणशक्ति धूमिल पड़ गई है। क्या तुम चरखा चला सकते हो?

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४६५।

१. १४-९-१९३२ को।

२६८. तार : मदनमोहन मालवीयको

२६ जुलाई, १९३२

पंडित मालवीयजी
हिन्दू विश्वविद्यालय
बनारस

मीराबाई और देवदासकी देखभाल रखनेके लिए धन्यवाद। मीराबाईके ज्वरसे चिन्ता है। कृपया उसकी हालतकी सूचना तारसे दें।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३७१।

२६९. पत्र : मीराबहनको

२६ जुलाई, १९३२

चि० मीरा,

तुम्हारे पोस्टकार्डोंको पाकर बड़ी राहत मिली। मेरी समझमें नहीं आता कि तुम्हें बुखार क्यों बना रहता है। उम्मीद है कि तुम मच्छरदानी बराबर प्रयोग करती हो। आनेवाले पत्र फिरसे ठीक समयसे मिलने लगे हैं। जानेवाले पत्रोंमें बहुत विलम्ब होता है। मैं सरकारसे अभी भी पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। तुम्हें मेरा पत्र न मिले या देरसे मिले तो चिन्ता न करना।

सप्रेम,

बापू

श्रीमती मीराबाई
सेवा उपवन
नगवा, बनारस

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२२९) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९६९५ से भी।

२७०. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

२६ जुलाई, १९३२

तुम्हारा इसी २३ तारीखका हृदयस्पर्शी पत्र मुझे आज मिला। पापाका पत्र मुझे अभी तक नही मिला। अधिकारी लोग मेरे पत्र-व्यवहारकी जरूरत से ज्यादा जाँच करते है। इसलिए पत्र मिलनेमें बड़ी देर होती है और अनिश्चितता भी बहुत रहती है। आनेवाले पत्र जरूर वक्त पर मिल जाते है।

तुम्हारे ऊपर जो विपत्ति पड़ी है, उसको देखते हुए मै तुमसे मृत्युकी चर्चा नही करना चाहता। जॉवकी तरह तुम भी कह सकते हो कि 'यह तो ढाढ़स बँधाते हतोत्साह कर देनेवाला आदमी है'।[1] लेकिन मुझे इतना तो लगता ही है कि यदि हम ईश्वरको पहचानते है तो हमें मृत्युमे भी आनन्द मानना सीखना ही चाहिए। जब गुजरातके प्रथम भक्त-कवि नरसिंह मेहताके बेटेका निधन हुआ तो कहते है कि उन्होंने आनन्द मनाया और कहा: "यह अच्छा ही हुआ कि जंजालसे मुक्ति मिली। अब मै ईश्वरसे शीघ्र ही मिलूँगा।" यह एक सुन्दर गीतके पदका बड़ा भोडा अनुवाद है। परमात्मा करे तुमको इस अन्धकारमेंसे ज्यादा प्रकाश मिले।[2] मै जानता हूँ कि आपको हममें से किसीके भी सांत्वना बँधानेकी जरूरत नही है। वह तो भीतरसे ही मिल सकती है। यह तो सिर्फ यही बतानेको लिखा है कि हम तीनोके मनमें आपके प्रति क्या भावना है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. बाइबिल; द बुक ऑफ जॉब, १६,२।

२. राजाजीने लिखा था: "सही है कि मृत्यु एक प्रिय मित्र है, भयंकर शत्रु नहीं, जैसा कि लोग मानते हैं। तथापि उसके आनेपर हम उसके विरुद्ध इतना जोरदार संघर्ष करते हैं और इस मित्रको भगानेके लिए सभी प्राचीन तथा आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञानका इस तरह उपयोग करते हैं कि सत्यको हम उसी समय बिलकुल भुला बैठते हैं जिस समय उसको सबसे ज्यादा याद रखना चाहिए।. . .यह शोक नहीं, हमारे चारों ओर घिरा हुआ अन्धकार है। मैं अब भी प्रकाशके लिए ईश्वरसे प्रार्थना कर रहा हूँ।

२७१. पत्र : मगनलाल पी० मेहताको

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय मगनलाल,

मैं प्रति सप्ताह तुम्हारा एक पत्र पानेकी आशा रखता हूँ, किन्तु निराश होना पडता है। श्री पोलकने मुझे सूचित किया है कि तुम ठीक-ठाक चल रहे हो और अपनी पढाईमे व्यस्त हो। मुझे मंजुलाके[1] पत्र मिलते रहते है।

मुझे विस्तारसे लिखना। मुझे वताना कि तुम कौन-कौनसे विपय पढ़ रहे हो।

अपने शरीरको अच्छी तरह पुप्ट करो।

आशा है तुम डाक्टरको नियमित रूपसे लिख रहे हो।

तुम्हारा,
वापू

[अंग्रेजीसे]

वॉम्वे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल व्राच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४५५।

२७२. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय हेनरी,

मैं देखता हूँ कि तुम भी अपना मूल्य वसूलना चाहते हो। मेरा खयाल था कि मिलीके साहचर्यसे तुम सुधर जाओगे। लेकिन यह तो तेंदुएके धब्बेवाले पुराने किस्मेकी लाखवी वार पुनरावृत्ति जैसा है। मैंने तुम्हारे अन्दर एक अच्छी वात देखी, इसलिए तुम चाहते हो कि मैं तुममे और वहुतसी अच्छाइयाँ देखूँ। मैं सधन्यवाद तुम्हारे निमन्त्रणको अस्वीकार करता हूँ। कारण, अगर मैं उसे स्वीकार कर लूँगा तो इसका परिणाम यह होगा कि मेरे अन्य साथी जलने लगेगे और मुझे त्याग देंगे।

मॉड जव अपनी कार चलाती थी तव देवदास हमेशा घवराता रहता था। वह हमेशा तनावकी स्थितिमे रहती है और अकसर अन्यमनस्क भी। उसे स्वयं कार चलाना वन्द कर देना चाहिए। कृपया यह पत्र उसे दे देना।

1. मगनलाल मेहताकी पत्नी।

मै लियॉनको पत्र लिख रहा हूँ।[१] उसका पत्र मुझे तुम्हारे पत्रसे पहले मिल गया था। हम सब आशा करते है कि वह और मारी बहुत वर्षों तक सुखी रहेंगे।

मगनलाल इतना अच्छा निकल रहा है इसकी मुझे खुशी है। कृपया उसे संलग्न पत्र[२] दे देना।

तुम सबको प्यार; महादेवका भी।

तुम्हारा,
बापू

श्री एच० एस० एल० पोलक
पाँचवी मजिल, डेव्स इन हाउस
२६५, स्ट्रैंड
लन्दन, डब्ल्यू० सी० २

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४५३।

२७३. पत्र : लियॉन पोलकको

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय लियॉन,

मुझे खुशी है कि तुमने मारी लिड्रमके साथ अपनी सगाईके बारेमें लिखा। ईश्वर करे कि तुम दोनो बहुत-बहुत वर्षों तक आनन्दपूर्ण और सेवाका जीवन भोगो।

तुम दोनोको मेरा प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४५३।

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

२७४. पत्र : शीरींबाईको[1]

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय बहन,

तुम्हारा दुखभरा पत्र आज ही मिला। मुझ तक पहुँचनेसे पहले इसे कितने ही हाथोंसे गुजरना पड़ा है। तुम्हारे और तुम्हारी बूढ़ी माताजीके प्रति मेरी हार्दिक सहानुभूति है। हम ईश्वरको दोष देते हैं, उसे गाली देते हैं और उसका अस्तित्व माननेसे इनकार करते हैं, और वह हमे यह सब कुछ करने देता है। यह सब हम अज्ञानवश करते है। हम रोज सुबहकी प्रार्थनामें एक सुन्दर संस्कृत श्लोक बोलते हैं जिसका अर्थ है: "दुख, दुख नही है और न खुशी ही सच्ची खुशी है। ईश्वरको भूल जाना ही सच्चा दुःख है और ईश्वरका सदैव स्मरण ही सच्चा सुख है।" और क्या एक अंग्रेज कविने भी नही कहा है कि "चीजे जैसी दिखती हैं वैसी नही होती"? बात यह है कि ईश्वरके सारे कानून हम जानते हो, तो ही हमे उन बातोका अर्थ मिल सकता है जो साधारण हालतमे हमारी समझमे नही आती। हम ऐसा क्यों माने कि तुम्हारे भाईको हमारे बीचसे उठा लिया गया तो यह दुःखकी बात हुई? हम सही बात नही जानते। मगर हम इतना तो जानते ही है या हमे जानना चाहिए कि ईश्वर पूरी तरह भला है और पूर्णतः न्यायी है। हो सकता है कि जैसी बीमारी तुम्हारे दूसरे भाईको है, वैसी हमारी बीमारियाँ भी कोई दुर्भाग्यकी चीज न हों। जीवनका अर्थ ही है अनुशासन। उसके लिए हमे कष्टकी आगमे से गुजरना ही पड़ता है। मैं चाहता हूँ कि तुम और तुम्हारी माताजी अपने इस दुःखमें सचमुच आनन्द ले सको। परमात्मा तुम्हे शान्ति दे।

शहदकी बात बिल्कुल भूल जाना[2] और मुझे अंग्रेजीमें शौकसे लिखना।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१ में लिखा है: "शीरींबाईने, जिनका भाई वायु सेनामें था और लापता था, गांधीजीको एक हृदय-द्रावक पत्र लिखा था। शीरींबाईकी ७२ वर्षीय माता अभी जीवित थी, और उनका एक दूसरा भाई लन्दनके एक अस्पतालमें पिछले ८ वर्षसे बीमार पड़ा था। शीरींबाईने ३० वर्ष पहले थोड़ी-सी गुजराती सीखी थी, लेकिन उसने प्रयत्नपूर्वक गांधीजीको गुजरातीमें ही पत्र लिखा था। पत्रके अन्तमें उसने बापूसे अंग्रेजीमें पत्र लिखनेकी अनुमति माँगी थी।"

२. शीरींबाईने गांधीजीको एक शहदका छत्ता भेजा था, और उसके बारेमें विस्तारसे लिखनेको कहा था।

२७५. पत्र : ए० सुब्बैयाको

२६ जुलाई, १९३२

बच्चेकी मृत्युपर[1] तुम्हारे और तुम्हारी पत्नीके शोकको मैं समझ सकता हूँ। ललिता[2] उसके बारेमें अत्यन्त प्रेम-पगे शब्दोंमें लिखा करती थी। लेकिन तुम आश्रममें इतने दिनों रहे हो कि विशेष रूपसे ऐसे अवसरोंपर यह समझ सको कि ईश्वर हमें जो कुछ देता है, उसे वापस ले लेनेका उसे अधिकार है। हमारा विश्वास क्या है, यह तुम जानते हो। हमारा विश्वास है कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति इस दुनियामें ऋणीके रूपमें आता है और जब यह सामयिक ऋण अदा हो जाता है तब हम चले जाते हैं। तुम्हारे बच्चेने ऋण अदा कर दिया है और अब मुक्त है। तुम्हें और ललिताको तथा हम बाकी लोगोंको अभी अपने दायित्वोंको पूरा करना शेष है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

२७६. पत्र : ललिताको

२६ जुलाई, १९३२

बेटी ललिता,

सुब्बैयाके पत्रसे तुम्हारे शोकका पता चला और सुब्बैयाने लिखा है कि तुम बहुत ज्यादा रोती रही हो। लेकिन तुम्हे जानना चाहिए कि धर्म रोनेका निषेध करता है। जिस ईश्वरने बच्चीको दिया उसे उसको वापस ले लेनेका भी अधिकार है। और अन्तमें हम सभीको वहीं जाना है। उसका क्या शोक? अतः शोकको भुला दो और (दूसरोंकी) सेवामें जुट जाओ। निश्चय ही मुझे पत्र लिखना। ईश्वर तुम्हे शान्ति दे।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४९१।

१. सुब्बैया जिस दिन जेलसे रिहा किये गये थे उसी दिन उनकी लडकीका देहान्त हो गया था।

२. सुब्बैयाकी पत्नी।

२७७. पत्र : नाजुकलाल एन० चोकसीको

२६ जुलाई, १९३२

भाईश्री नाजुकलाल,

बहुत राह दिखानेके बाद तुमने पत्र लिखा है। मुझे यह अठारह दिनों बाद मिला, लेकिन इसमें तुम्हारा कोई दोष नही है। क्या तुम भूखे पेट सोते हो? यह जगत-प्रसिद्ध बात है कि जिसे देरसे खानेकी आदत होती है उसे तुरन्त नीद नही आती। अतएव यदि तुम्हे सूर्यास्तसे पूर्व भोजन करनेकी आदत न हो तो डालना और यदि रामनाममें मन न लगता हो तो ऐसा कोई भी श्लोक अथवा भजन जो तुम्हें पसन्द हो उसको बार-बार रटोगे तो बहुत करके नीद आ ही जायेगी। मैं माने लेता हूँ कि और सब तरहमे तुम्हारी तबीयत ठीक है। प्रमोद[1] काफी बड़ा हो गया होगा। हम तीनों मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० १२१५०)से।

२७८. पत्र : हमीदा तैयबजीको

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय हमीदा[2],

सुन्दर लिखावटमें लिखा तुम्हारा पत्र मिला। अब्बाजीको भी सूचित कर दिया गया था कि तुम्हारे स्वास्थ्यमे सुधार हुआ है। रोहिणीके मामाकी मृत्युका समाचार मुझे देकर तुमने अच्छा किया। बादमे रोहिणीका पत्र मिला। हालाँकि मैंने उसे सम्वेदनाका पत्र लिख दिया है[3], लेकिन मुझे अब (किसीकी) मृत्युपर सम्वेदना प्रकट करना पसन्द नही है। मृत्युसे क्यो भागे? ईश्वरने हमे कई वरदान दिये है, और मृत्यु सबसे बड़े वरदानोमे से एक है। यह कोई विपत्ति नही है। हमे मृत्युको मित्रके रूपमे देखनेका अभ्यास करना चाहिए। जो चीज हर प्राणीपर लागू होती है उसे हम विपत्ति कैसे मान सकते है? उसे विपत्तिके रूपमे देखकर हम ईश्वरके सामने अपराधी बनते है।

१. नाजुकलाल चोकसीका सबसे बड़ा पुत्र।
२. अब्बास तैयबजीकी पोती।
३. देखिए "पत्र: रोहिणीबहन देसाईको", २२-७-१९३२।

रेहानाकी भाँति यदि तुम मुझे गुजराती और उर्दू दोनों भाषाओंमें पत्र लिखो तो तुम भी उसकी जैसी निपुण हो जाओगी। तुम्हें गुजरातीमे लिखना चाहिए ताकि तुम्हें उसमे लिखनेकी आदत पड़े। मै चाहता हूँ कि तुम्हारा गुजरातीका ज्ञान बढे।

यह अच्छी बात है कि तुमने रोहिणीके परिवारसे इतनी मैत्री बना ली है। इसमें कोई शक नही कि वह परिवार अच्छा है और ईमानदार है। लेकिन तुम जो प्रमाणपत्र दोगी वह सच्चा होगा। मै उन लोगोके बहुत सम्पर्कमें नही हूँ। वहाँ सब लोगोको मेरा सलाम।

बापूके अनेक आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४७१।

२७९. पत्र : तारामती म० त्रिकमजीको

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय तारामती,

बेलगाँवसे मुझे मथुरादासका पत्र मिला है जिसमें उसने लिखा है कि जबतक वह बुलाये नही तबतक तुम्हें बेलगाँव नही जाना चाहिए। मथुरादासका स्वास्थ्य अभी तक तो ठीक है। मुझे खगोल-शास्त्र पर पुस्तक मिल गई है। आशा है तुम और दिलीप अच्छी तरह हो। आजकल तुम्हारा कोई पत्र नही है।

तुम्हारा,
बापू

श्रीमती तारामती मथुरादास
२१ मिंट रोड, फोर्ट
बम्बई

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४४७।

२८०. पत्र : देवदास गांधीको

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय देवदास,

श्री हनुमान प्रसादजी मुझे नियमित रूपसे तुम्हारा समाचार भेजते रहते हैं, इसलिए मैं निश्चित हूँ। मैं तुम्हें एक पत्र[1] पहले ही लिख चुका हूँ, लेकिन आजकल मेरे जानेवाले पत्र पहले सचिवालय जाते हैं और जाँचके बाद उन्हें डाकसे भेजा जाता है। और यदि पत्र गुजरातीमें होते हैं तो उनमें बहुत समय लगता है, और यही कारण है कि वे तुम्हें जल्दी नहीं मिलते। इसलिए यदि तुम्हें मेरा पत्र न मिले या देरसे मिले, तो चिन्तित मत होना। जेल-जीवनकी यही दशा है। तथापि मैं सरकारके साथ पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। तुम फिर बीमार पड़ गये, यह क्योंकर हुआ?

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

देवदास गांधी
कैदी
डिस्ट्रिक्ट जेल
गोरखपुर, संयुक्त प्रान्त

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४५१।

१. २१ जुलाई, १९३२ को

२८१. पत्र : रमणीकलाल वि० शाहको

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय रमणीकलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं तुम्हारे घरके बड़ोको नही जानता, इसलिए मैं उन्हे लिखनेका साहस नही कर सकता। तुम उन्हे यह पत्र दिखा सकते हो। जिनको हम गलतीसे अछूत या नीच जातिका कहते हैं, उन्हें छूना या उनके साथ भोजन करना हमारा धर्म है। उनको न छूना तो पाप ही है। इस बारेमे मुझे रत्तीभर भी सन्देह नही है। यह सुधार पश्चिमसे नही आया है, वल्कि यह तो हिन्दुओका कर्तव्य है।

तुम्हारा,
मोहनदास गांधी

रमणीकलाल विम्बाशी शाह
चिन्तामणि बिल्डिग
२ भोईवाड़ा, बम्बई–२

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४५१।

२८२. पत्र : एक बालिकाको[1]

२६ जुलाई, १९३२

प्रिय . . .,

तुम्हे कभी देखा हो, ऐसा याद नही है। वर्षों पहले जब मैं भिक्षाटनके लिए निकला था, उस समय सम्भव है मैंने तुम्हे देखा हो। हालाँकि मेरा तुमसे कोई सीधा परिचय नही है, फिर भी तुम्हारे पितासे और . . . से चूँकि मेरा सम्बन्ध है, इसीलिए बड़ेके नाते मैं तुमपर कुछ अधिकार जताना चाहता हूँ। लेकिन मेरे इस पत्रको किसी अपनेसे बुजुर्ग आदमीका पत्र न समझना। मैं तुम्हारा मित्र होना चाहता हूँ। . . . ने जो कुकर्म किया है उससे मैं अवगत हूँ। . . . चूँकि आश्रममें पला और बड़ा हुआ है, इसलिए उस कुकर्मके कारण मुझे दुख है। अतः मुझे उसके

१. इस पत्रमें और इससे अगले पत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।

कुकर्मके लिए तुमसे क्षमा माँगनी है। जब तुम . . . को अपने दिमागसे बिल्कुल निकाल दो तभी मेरी क्षमा-प्रार्थनाको स्वीकार कर सकती हो, और अब किसी नौजवानके जालमें मत फँसना।

मेरा विश्वास है कि सयाने हो जानेपर लड़के और लडकियाँ अपने माता-पिताके नियंत्रणसे मुक्त हो जाते हैं। माता-पिता मित्रकी भाँति उनका मार्ग-दर्शन कर सकते हैं। (लेकिन) वे उनपर कोई दबाव नही डाल सकते। इस स्वतन्त्रताका भोग करनेवाली उम्र अभी तुम्हारी नही हुई है। तुम्हें शायद पता न हो कि मैंने तुम जैसी बहुत-सी लडकियोंका मार्ग-दर्शन किया है, और उनमें से जिन्होंने मेरी सलाहपर अमल किया है वे सुखी हैं। इस संसारमें असत्यसे बड़ी बुराई कुछ नही है। जिसे छिपाना नही चाहिए, ऐसी बातको छिपानेवाला व्यक्ति मिथ्याचरण करता है। अगर तुम्हारा विश्वास था कि तुम्हारे माता-पिताको तुम्हारे ऊपर अधिकारका अकुश नही रखना चाहिए बल्कि तुम्हारा मार्ग-निर्देशन करना चाहिए, तब तुमने . . . को या किसीको भी गुप्त पत्र क्यों लिखा? यदि तुम्हारा किसीसे प्रेम हो जाये तो वैसा करनेका तुम्हे अधिकार है। लेकिन स्नेहके नामपर ही अनेक लड़के और लड़कियाँ अपनी गुप्त वासनाओंको सन्तुष्ट करते हैं। यदि वे प्रतिज्ञा कर ले कि माता-पितासे कोई बात नही छिपायेंगे और इस प्रतिज्ञाका पालन करें, तो इस प्रकारकी विपत्तियोंसे वे अवश्य ही बच जायेंगे।

तुम्हारा यह समय विद्याध्ययन करनेका है। तुम भाग्यवान हो कि तुम्हारे माता-पिता ऐसे उदार हैं, और इसी कारण वे तुम्हारे लिए पढ़ाईकी सुविधाएँ उपलब्ध कर रहे हैं। इस सुविधाका लाभ जबतक तुम उठाना चाहती हो तबतक तुम्हे ब्रह्मचर्यका जीवन व्यतीत करना चाहिए। लेकिन यह सम्भव है कि ऐसा कर सकना तुम्हारी सामर्थ्यसे परे हो। यदि यह बात हो, तो तुम्हें शुद्ध मनसे अपने माता-पितासे परामर्श करना चाहिए। इसमें संकोच करनेकी तनिक भी जरूरत नही है। यदि तुम इतना करोगी और यदि तुम मुझे (ऐसा काम फिर कभी न करनेका) वचन दोगी, तभी मैं जानूंगा कि . . . ने जो कुकर्म किया है उसका तुम्हारे मनपर तनिक भी प्रभाव नही बचा है। यदि तुम्हें यह पत्र मिले तो उत्तर देना। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४८७।

२८३. एक पत्र

[२६ जुलाई, १९३२][1]

तुम्हारा इसी ८ तारीखका पत्र मुझे आज मिला। इस समय मेरी डाक अनियमित हो गई है। कुछ दिनोंसे मुझे अपनी चिट्ठियाँ नियमित रूपसे मिल जाती है। बाहर जानेवाली डाक अभी भी अनियमित है। पता नही यह पत्र तुम्हे कब मिलेगा।

तुमने . . . के बारेमें लिखकर अच्छा किया। मै आशा करता था कि . . . सुधर गया होगा। लेकिन तुम्हारा विवरण पढनेके बाद मैंने उसके लिए जो विशेषण प्रयोग किया था, वही कहूँगा। . . . के बारेमें तुमने जो कदम उठाये थे वे उचित ही थे। मेरी रायमें उसे और भी स्पष्ट शब्दोंमें होशमें लाना चाहिए था। उसके बारेमें इस वक्त सोचनेकी कोई जरूरत नही है।

तुमने . . . के बारेमें गहराईसे विचार किया होगा। तुमने जो लिखा है उससे देखता हूँ कि उसका मन अभी भी शुद्ध नही हुआ है। मैंने . . . को एक पत्र[2] लिखनेकी हिम्मत की है। यदि तुम उचित समझो तो वह उसे दे देना। उस पत्रसे तुम्हें बच्चोके बारेमे मेरे विचारोंका भी पता चलेगा। . . . के कारण तुम मियाँ-बीवी पर जो मुसीबत पड़ी है उससे मै दु:खी हूँ। . . . में जो दोष अभी भी बच रहे है उनके लिए . . . उतने ही जिम्मेदार है जितना कि आश्रम। चूंकि आश्रममें पवित्रताका वातावरण फैल नही पाया है, इसलिए बच्चे और बड़े कोई भी दोषोंसे मुक्त नही हो पाते। मेरा दृढ़ विश्वास है कि जहाँ पूर्ण पवित्रताका वातावरण होता है, उस वातावरणमे रहते हुए किसी दुष्ट व्यक्तिको अपनी अशुद्धियोका त्याग करना ही पड़ता है। आश्रममे इतना भी नही हो पाया है। यही कारण है कि . . . के जैसे दृष्टान्त मिलते है।

मै देखता हूँ कि . . . के सम्बन्धमें तुम्हारा रवैया बिल्कुल नही बदल सकता। . . . अत्यन्त निष्कपट और खरे व्यक्ति है। . . . के कारण उन्होंने बहुत कष्ट भोगा है। जब वह यह सुनेंगे तो उन्हे गहरी पीडा होगी।

मैंने इस महीनेके शुरूमे दूरबीन वापस कर दी थी। उसे एक महीनेसे ज्यादा रखनेकी इजाजत मुझे नही मिली थी। अतः तुम्हारा सुझाव देरसे मिला। हम उसका बहुत थोड़ा उपयोग कर पाये। 'गुरु' तारा तो हम बहुत साफ देख सकते थे। लेकिन तारोंके बारेमें दूरबीनकी मददसे हमे कोई जानकारी नही मिल सकी। पारिजातके[3] बारेमे हमने पढा था, लेकिन उसका सौन्दर्य नही देख पाये। अन्य कोई दूरबीन हाथमें आयेगी, तब मै तुम्हारे सुझावका पालन करूँगा। इस समय तो बादलोंके कारण हमें आकाशके दर्शन ही नही होते।

१ और २. देखिए पिछला शीर्षक।

३. लघु सप्तर्षि नामक एक तारामण्डल।

मेरे पास संस्कृतका शब्दकोष है। मैं [श्री] खरासकी लिखी पुस्तक पढ़ रहा हूँ। मुझे उसकी शैली पसन्द आई। मुझे लगता है कि यदि कोई इस पुस्तकसे आरम्भ करेगा तो उसे कठिनाई होगी। वैसे, यह किताब उनके लिए नही लिखी गई है जिन्हे खगोल-शास्त्रका कतई कोई ज्ञान नही है। लेकिन मैं और दूसरी किताबें पढ़ चुका हूँ, इसलिए मुझे यह पुस्तक समझनेमें कोई कठिनाई नही होती। मै आशा करता हूँ कि तुम्हारे आविष्कारके बारेमें कभी तुम्हारे मुँहसे सुनूँगा। इस बीच लिखने लायक कुछ हो तो कृपया जरूर लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४८३।

२८४. पत्र : रेहाना तैयबजीको

२६ जुलाई, १९३२

बेटी रेहाना,

इस वक्त तुम्हारे तरफसे कुछ खबर नही आया है। मेरी उम्मीद है कि तुम्हारी सेहत तो अच्छी होगी। अब्बाजानका बहुत अच्छा खत मिला है। उनकी कंपनीका काम साफ हो गया। जानकर मुझे बहुत खुशी हुई। उनका दर्द मिट गया होगा। बड़े होनेकी बहुत देर है। मै उनका नाच देखनेकी उम्मीद करता हूं। हमीदाका भी खत आ गया है। आजकल रामचर्चा नामकी एक उर्दू किताब पढ़ रहा हूँ। बहुत अच्छी छपी हुई है। और उर्दू समझनेमें आसान है। ये किताब खत्म होनेसे सीरत[1] शुरू करनेका इरादा है। रामचर्चा एक दो दिनमें खतम होगी। यहां बारिश अच्छा पड़ रहा है। अब्बाजान और अम्माजानको हम सबकी तरफसे आदाब, वंदे-मातरम और मेरी तरफसे अब्बाजानको भुररररररररर। तुम सबको जानकर खुशी होगी की सरदारने संस्कृत सीखना शुरू करना दिया है। और वे बहुत तरक्की कर रहे हैं।

बापूके रेहानाको
आशीर्वाद

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६४५) से।

१. सीरत-उन-नबी; देखिए इस खण्डके अन्तिम शीर्षक "दैनन्दिनी, १९३२" में २८ जुलाई, १९३२के अंतर्गत प्रविष्टि।

२८५. पत्र : मीराबहनको

२७ जुलाई, १९३२

चि० मीरा,

तुम मुझे अपने स्वास्थ्यकी दैनिक रिपोर्ट दे रही हो, इससे मुझे बहुत तसल्ली है। हर बारकी बीमारीके बाद अचानक इस प्रकार कमजोरी महसूस करना यही दिखाता है कि तुम्हारे शरीरमें बहुत दम नहीं है। लेकिन मुझे खेद है कि इसका कोई इलाज नहीं है। पिछले एक पत्रमें मैंने तुम्हें हो सके तो देवदाससे मिलनेको कहा था[1], पर अब उसका विचार भी मत करना। तुम्हें मानसिक और शारीरिक दोनों तरहसे लम्बे आरामकी जरूरत है। बाबू शिवप्रसाद तथा उनके कुटुम्बके लोगोंको मेरा स्मरण दिलाना।

सप्रेम,

बापू

श्रीमती मीराबाई
सेवा उपवन
नगवा, बनारस

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९६ से भी।

२८६. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

२७ जुलाई, १९३२

चि० रुक्मिणी[2],

बहुत दिनों बाद तेरा पत्र मिला। तुझे बुखार आता है, इस बातकी मुझे कतई कोई खबर न थी। वैसी स्थितिमें तू तो निश्चय ही पत्र नहीं लिख सकती थी, और तू न लिखे तो भला बनारसी[3] क्यों लिखे? लगता है देवलालीमें तूने जो शक्ति अर्जित की थी उसे तू खो बैठी है। फिर प्राप्त कर ले तो अच्छा होगा।

१. देखिए "पत्र: मीराबहनको", २१-७-१९३२।

२. मगनलाल गांधीकी पुत्री।

३. रुक्मिणी बजाजके पति।

बच्चा तो ठीक तरहसे बढ़ रहा है न? तुम सब लोग देवदाससे मिल आये, यह ठीक किया।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती रुक्मिणी
मार्फत श्रीयुत बनारसीदास
पंचगंगा, बनारस शहर, सं० प्रा०

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४५१) से; सौजन्य: बनारसीलाल बजाज

२८७. एक पत्र[1]

२७ जुलाई, १९३२

प्रिय. . .,

तू कमजोर हो गई है। लेकिन मैं तेरे दुखको समझ सकता हूँ। मैं तुझसे पहले ही कह चुका हूँ कि तेरी संगतिमें तेरा और . . .[2] का दोनोंका जीवन बरबाद हो गया है।[3] तू यदि सचमुच विकाररहित है तो . . .के वशमे होनेके बावजूद तू उसे सन्तोष प्रदान नही कर सकती। यह सब विषयी लोगोका अनुभव है। परिणाम यह होता है कि तेरे साथ विषयोपभोग करनेके बावजूद . . . अतृप्त ही रहता है और इससे उसकी विषयवासना बढ़ती ही है। इसलिए यदि तुझे संग ही रहना है तो तुझे विषयोपभोगमे रुचि लेनी होगी। और यदि तुझे रस न आये तो तुझे अलहदा रहना ही चाहिए। फिलहाल तो मैं तुम दोनोके संग रहनेके बुरे परिणाम ही देख रहा हूँ। तुम परस्पर एक दूसरेको धोखा देते हो, स्वयं अपनेको और जगतको भी धोखा दे रहे हो। तुम्हारे जीवनके सम्बन्धमें मेरे सिवाय अन्य लोग तो यही मानते जान पड़ते हैं कि आश्रममे रहनेके कारण तुम परस्पर साधु-साध्वी जैसा जीवन व्यतीत करते हो। इस असत्यकी स्थितिसे तुम दोनों निकल जाओ और अपनी इच्छाके अनुरूप विवाह कर लो, यह तो सबसे अच्छी बात है। मेरे विचारसे तुम दोनोंका आजका जीवन दोषमय है। यदि. . . अन्य स्त्रीसे विवाह करता है तो उसके जीवनको मैं निर्दोष मानूंगा, क्योंकि वह स्वाभाविक होगा और अन्ततः उसकी कामवासना शान्त होगी। इस परिवर्तनके लिए तुम दोनोको दिल खोलकर बात कर लेनी चाहिए और बादमे जो कदम उठाना उचित जान पड़े सो निश्चयपूर्वक उठाना चाहिए। ऐसा हो तो. . . किसी दिन निर्विकार हो सकेगा। आजकी स्थितिमें तो

१. इस पत्रमें और इससे अगले पत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।
२. जिसे यह पत्र लिखा गया है उस महिलाका पति।
३. इसके बादका अंश महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१से लिया गया है।

उसकी विषयाग्नि सुलगती ही रहेगी और उसके विकारोंमें वृद्धि होती ही रहेगी। तुझमें जो शक्ति है उसे तू मत खो बैठ। निराश न हो। ईश्वर तेरी सहायता करे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५०९।

२८८. एक पत्र

२७ जुलाई, १९३२

प्रिय. . .,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं तुम्हारी टिप्पणीको बहुत ध्यानसे पढ़ गया हूँ। . . .के प्रति तुम्हारा कर्तव्य मुझे स्पष्ट दिखाई देता है। यदि वह विकाररहित है तो तुम्हे उससे अलग रहना चाहिए। यदि उसे. . . विषयोपभोगकी कामना नही होती तो मैं उसे विकाररहित नही मानूँगा, अर्थात् उसे तुम्हारी वासनाको तृप्त करना ही चाहिए। चूँकि तुम अपनी वासनाको नही दबा सकते, इसलिए तुम्हे दूसरा विवाह कर लेना चाहिए। यदि वहाँ मिल सके तो तुम अपनी मनपसन्द स्त्रीसे विवाह कर लो। यदि वह विधवा हो, तो ज्यादा अच्छी बात होगी; और इस तरह तुम अपनी काम-वासनाको सन्तुष्ट करो।[1] ऐसा करते हुए तुम किसी दिन निर्विकार बनोगे। आज तुम्हारे लिए वह असम्भव-सा जान पड़ता है। तुम्हारे क्रोधका कारण भी वही है। तुम्हारी स्वादेन्द्रिय बहुत तेज जान पडती है। इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही, क्योंकि क्रोध, काम और रस साथ-साथ ही चलते हैं। तुम मानते हो कि तुम अपने काममें तन्मय हो। लेकिन इसके बारेमें मुझे सन्देह है। इसका अर्थ यह नही कि तुम लापरवाह हो। लेकिन जो व्यक्ति अपने कर्तव्यमे तल्लीन हो, वह कदापि विकारवश नही हो सकता। इतनी फुर्सत वह कहाँसे लाये? तुम्हारी ऐसी स्थिति ही नही है। यह बात स्पष्ट है कि तुम कर्तव्यपरायण होनेके लिए प्रयत्नशील हो, ऐसे तो तुम निर्विकार होनेके लिए भी प्रयत्न कर रहे हो। लेकिन [अभी तक] जैसे तुम निर्विकार नही हुए, उसी तरह तुम कर्तव्यमें भी तन्मय नही हो पाये हो। लगता है, कार्य करते हुए भी तुम्हारे मनमें विकार उठते रहते है। मेरी स्वयंकी भी क्या ऐसी स्थिति न थी? मेरे कार्यमें कोई दोष नही था, ऐसा अन्य लोगोको महसूस होता था लेकिन मैं अपना दोष देख सकता था। इसीलिए तो मैं ब्रह्मचर्य पर आ गया।[2]

१. इसके बादका अंश महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१ से लिया गया है।
२. इसके बादका अंश बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्समें उपलब्ध अंग्रेजी अनुवादसे लिया गया है।

मेरे पिछले पत्र और इस पत्रको पढ़ कर. . .को सुना देना। मेरी कामना है कि तुम दोनों किसी-न-किसी तरह इस दुखसे छुटकारा पा जाओ। भगवान तुम्हारी सहायता करे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ५०७।

२८९. पत्र : राधा गांधीको

२७ जुलाई, १९३२

मुझे तुम्हारा पत्र कई दिनो बाद मिला है। मेरी डाक आजकल अनियमित हो गई है। यह बिल्कुल ही ठप हो जाये तो आश्चर्य मत करना। मैं इस मसलेको तय करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मुझे आशा है कि बरसातका तुम्हारे स्वास्थ्य पर कोई बुरा असर नही हुआ है। मुझे आज सन्तोकका एक पत्र मिला है, जिसमे उसने लिखा है कि वह काशी जा रही है। मुझे रुखीका भी एक पत्र मिला है। अब वह बिल्कुल ठीक है। वह देवदाससे मिली है। देवदासका स्वास्थ्य अच्छा नही चल रहा था, लेकिन अब वह ठीक है। प्रेमकुँवरसे कहना कि मुझे उसका कोई पत्र मिलनेका ध्यान नही आता। अगर वह मुझे मिला होगा, तो मैंने भी प्रत्युत्तर दिया होगा।

तुम्हारा,
बापू

राधाबहन गांधी
ब्लॉक 'ए'
भाटिया सैनिटोरियम, देवलाली

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४९७।

२९०. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२७ जुलाई, १९३२

तुम मेरा कोई पत्र न मिलनेके कारण चिन्तित हो रही हो, लेकिन मैं पहले ही तीन पत्र लिख चुका हूँ। एक पत्र मैंने आश्रमके पते पर भेजा था। यह पाँचवाँ पत्र है, जो अब मैं तुम्हे लिख रहा हूँ। हम दोनोंको समझना चाहिए कि हम दोनों ही कैदी हैं। अगर एक दूसरेको पत्र लिखनेकी इजाजत ही न होती तो हम क्या करते? ऐसी चीजोंके बारेमें चिन्ता करना व्यर्थ है। मैं बिल्कुल ठीक हूँ। मैं अब दूध, रोटी, और सब्जियाँ ले रहा हूँ। वल्लभभाई और महादेव भी अच्छे है। मुझे पता चला है कि तुम कमजोरीका अनुभव करती हो। मुझे तुम्हारा कोई पत्र नही मिला। मुझे विस्तारसे लिखो।

तुम्हारा,
बापू

श्रीमती कस्तूरबा गांधी
कैदी
सेंट्रल जेल, साबरमती

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ४९९।

२९१. तार : गिरिजाशंकर बाजपेयीको

२८ जुलाई, १९३२

गि० शं० वाजपेयी
डंडेलियन
शिमला

आपकी इस गमीमे हमारी हार्दिक सम्वेदनाएँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग २, पृष्ठ ३७७।

२९२. पत्र : डा० मुहम्मद आलमको

३० जुलाई, १९३२

प्रिय डा० आलम,

अखबारोंमें यह पढ़कर मैं चिन्तित हूँ कि आप अस्वस्थ हैं और आपको अस्पताल ले जाना पड़ा। कृपया मुझे अवश्य सूचित करें कि आपको क्या तकलीफ है। सरदार और महादेवके साथ मेरी यह कामना है कि आपका रोग कोई गम्भीर रोग नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४) से।

२९३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३० जुलाई, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। लगता है तेरी मूर्खताकी कोई हद नहीं है। जब क्रोध करती है तब भान ही भूल जाती है। जिस पत्रमें क्रोध पर विजय पानेके व्रतकी चर्चा करती है, उसीमें क्रोध करती है और वह भी बिना कारण। मेरी हल्की फटकारका क्या कारण है, यह तू समझी ही नहीं। मेरी शिकायत तो यह थी कि लिफाफे पर तूने जो किंगरीवाली कतरन चिपकाई थी उसमें सजावट अथवा कला जैसी कोई बात नहीं थी।[1] जो व्यक्ति अपना समय कलामें लगाता है, उसे मैं नहीं फटकारता। लेकिन यहाँ तो कला थी ही नहीं। लिफाफेपर इस तरह कतरन चिपकानेमें क्या कला हो सकती है? और वह चिपकाई भी इस तरहसे गई थी कि आधी तो उखड़ भी गई थी। इसलिए तेरा क्रोध अकारण ही था। इससे मुझे तुझ पर हँसी ही आई। पास होता तो चपत लगाता। लेकिन तू [अपने व्रतसे] गिर गई, सो उसका क्या होगा? तूने इसमें इतना समय गँवाया। [क्रोध] न करनेकी दलील दी और अपना शरीर बिगाड़ा, क्योंकि क्रोधका शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव होता है, यह बात वैज्ञानिकोंने प्रयोगों द्वारा सिद्ध कर दिखाई है। हम लोगोंमें तो यह मान्यता पहलेसे ही विद्यमान है। तेरा व्रत भंग हुआ, सो अलग। अब फिर इस

१. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको", ६-७-१९३२।

तरह क्रोध न करना। और फिर, मेरी आलोचना तो मधुर आलोचना थी। इतनी-सी बात समझनेकी अक्ल भी तू खो बैठी।

पत्रोंके बारेमें तो गाजरकी पिपनीवाली [जिसे बच्चे बजा न सकनेके कारण खा जाते हैं] बात लागू होती है। इसलिए यदि पत्र न मिले तो दुःखी न होना। वहाँसे तो तू लिखती ही रहना। पत्र लिखना बन्द हो जायेगा तो मैं तुझे बता दूँगा। और यदि मुझसे इतनी खबर भी न दी जा सकी, तो भी तेरा लिखा हुआ व्यर्थ नही जायेगा।

नये पुष्पोंको मेरी ओरसे प्रणाम कहना। आशा है मैं किसी-न-किसी दिन उनके बीच सो सकूँगा, ऐसा कहकर उन्हे आश्वासन देना।

तू बहुत जिद्दी है। फूलोंके आसपास यदि तू टमाटर और सब्जीकी खेती करे, तो ये तुझे बारह मास मिलेगी और शरीरको भी लाभ पहुँचेगा। शरीर तेरा नही है। वह तो ईश्वरकी ओरसे तुझे सौंपी गई वस्तु है। इसलिए तुझे उसकी रक्षाके लिए समय अवश्य देना चाहिए। टमाटर और सब्जी उगानेके लिए बहुत समय नही देना पड़ता। और ये जमीन बहुत कम रोकते हैं। दक्षिण आफ्रिकामें मेरे साथ एक अंग्रेज मित्र रहा करते थे। वे बिना किसी परिश्रमके थोडे ही दिनोमें क्रेस नामक सब्जी उगा लेते थे, जो कच्ची ही खाई जाती है।

लडकियोंकी बीमारीके बारेमें तो मैंने तुझे लिखा है।[1] इसकी अच्छी तरहसे जाँच करना। रामभाऊके बारेमें मुझे पहले ही आशंका थी। लेकिन चूँकि उसने तुझसे सब-कुछ कह दिया है, इसलिए उसे जीतनेकी कोशिश करना।

तेरा वजन यदि कम हो गया है, तो तुझे फल लेने ही चाहिए। थोडा ज्यादा खर्च हो, तो खर्च होने देना। इसमें लोभ करके शरीरको बिगाडनेसे क्या लाभ? जो बात खाने पर लागू होती है, वही बात आराम करने पर भी होती है। तुझे दोपहरको थोडा आराम अवश्य करना चाहिए। इतना समय कैसे निकाला जा सकता है, यह मेरे बतानेकी चीज नही है। इतना समय निकालना ही है, यदि तू इस बातका निश्चय कर ले तो निकाल सकती है।

अब तेरी मुसीबतोके बारेमें:

१. व्यक्तिपूजाके स्थान पर गुणपूजा करना उचित है। व्यक्ति तो बुरा भी निकल सकता है, और वह नश्वर भी है। गुणोका कभी नाश नही होता।

२. यदि आश्रमको चलानेवाले लोगोंमे से बहुत सारे लोग तुझे पसन्द नही है, तो उन्हें सहन करना सीखनेका यह स्वर्णिम अवसर है। दोषके बिना तो कोई नही है, और यदि हम दूसरोको अपने जैसा मानने लगे तो पसन्द अथवा नापसन्दका सवाल ही न रहे।

३. यदि आश्रममे रहनेवाले लोगोको आश्रमके मूलभूत सिद्धान्त स्वाकार्य हो और बाह्य स्वरूपको लेकर परस्पर मतभेद हो, तो उसकी चिन्ता नही। हमें तो तत्वोंसे सरोकार है, बाह्य स्वरूपसे नही।

१. ६ जुलाई, १९३२ को।

४. अपने स्वभावजनित दोषोंको दूर करनेके लिए आश्रममे रहना तेरा धर्म है।

५. और यदि आश्रममे रहकर तू अपने लक्ष्यको प्राप्त नही करती, तो इसमे दोष तेरा है। आश्रममे सम्पूर्ण स्वतन्त्रता है।

६. तू जिन लोगोको प्यार करती है उनके प्रति इस तरह आकर्षित होनेके कारण तू आश्रमसे बाहर क्यों जाये? [होना तो यह चाहिए कि] आवश्यकता पड़नेपर उनका प्रेम उन्हें आश्रममें तेरे पास खींच लाये। प्रेमको भौतिक सान्निध्यकी आवश्यकता नही होती, और यदि हो तो वह प्रेम क्षणिक माना जायेगा। एकके शुद्ध प्रेमकी कसौटी दूसरेका वियोग होने पर—मृत्यु होने पर—होती है। लेकिन यह सब तो बुद्धिवाद हुआ। तेरा हृदय जहाँ होगा वही तू रहेगी। यदि तेरा हृदय आश्रममें नही रम सकता तो इसमे मै क्या कर सकता हूँ, और तू भी क्या कर सकती है?

मेरे सूतकी साड़ियाँ तो बुनी ही जानी चाहिए। मैंने सूतके विषयमें जो विचार व्यक्त किये हैं[1], यह सूत उससे पहलेका है। सच पूछो तो यह बा के लिए ही काता गया था। इसलिए बा को उसका त्याग करना चाहिए। मुझे इसमे कुछ नही कहना है। बा बहुत ज्यादा मोटी साड़ी तो पहन नही सकती। इसलिए आश्रमकी ओरसे भी उसे सामान्यरूपसे महीन साड़ियाँ ही दी जानी चाहिए। इस तरह भी मेरे सूतकी साड़ीको बा आरामसे पहन सकेगी। अब बादके सूतके विषयमें तो सख्तीसे काम लिया जाना चाहिए। लेकिन इसमें भी मै बा के साथ जोर-जबरदस्ती नही करूँगा। बा खुशीसे उसका त्याग करके उसके हिस्सेमे जो सूत आये उसमे सन्तोष माने, ऐसा मै अवश्य चाहूँगा। लेकिन यह तो भविष्यकी बात हुई। फिलहाल तो मेरा काता हुआ नया सूत सबका सब यही है। चाहे जो हो, मेरा सूत ऐसे पड़े नही रहना चाहिए। किसीका भी नही रहना चाहिए। जिस समय सूत बुनने लायक हो जाये, उस समय वह तुरन्त बुना जाना चाहिए।

धुरन्धरके बारेमें तुझे मालूम है। 'लीलावती तो कातती है, ऐसा मेरा खयाल है। लेकिन जो तू लिखती है, वह ठीक ही है। अनेक बहनें कातना छोड कर कढ़ाईका काम पसन्द करेगी। जो बात खानेके सम्बन्धमें चरितार्थ होती है वही कामके सम्बन्धमे भी होती है। रोटीको छोडकर मन पकौड़ीकी ओर भागेगा। रोटी पर कायम रहनेमे संयम है, त्याग है, पकौड़ी पर जानेमें स्वच्छन्दता है। उसी तरह कातने पर टिके रहनेमे संयम है, अन्य काम करनेमे (अपेक्षाकृत) स्वच्छन्दता है।

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", ३१-५/३-६-१९३२, जिसमें गांधीजीने लिखा था कि कताई यज्ञमें भाग लेनेवाले लोगोंको अपने उपयोगके लिए अपना कता हुआ सूत नहीं रखना चाहिए। प्रेमाबहनका तर्क था कि गांधीजी द्वारा काता गया सूत बा के उपयोगके लिए होना चाहिए।

'किसीकी आलोचना न करो, क्योंकि कही कोई तुम्हारी न कर बैठे'—पर तूने जो टीका[1] की है, वह उचित नही है। तूने इसका अर्थ ही नही समझा। तेरी टीकामें बहुत अहंकार भरा हुआ है। 'कही कोई तुम्हारी आलोचना न कर बैठे' का तात्पर्य यह है कि हमे ऐसा कोई काम ही नही करना चाहिए, जिसपर कोई हमारी आलोचना करे। हम संसारके प्रति उद्धत न बने। 'भले ही संसारको जो कहना अथवा करना हो सो करे' ऐसा विचार अथवा ऐसे वचन हम मुँहसे कैसे निकाल सकते है? संसारके सम्मुख हमे विनीत होना चाहिए, अर्थात् सत्य मार्गपर चलते हुए भी हमें जगतको दण्डित नही करना चाहिए, उसकी टीका नही करनी चाहिए। अपितु जगत द्वारा दिये गये दण्डको, उसके द्वारा की गई आलोचनाको हमे सहन करना चाहिए। इसीका नाम नम्रता अथवा अहिंसा है। तूने जो-कुछ भी लिखा कदाचित् वह व्यंग्य-भरा और क्रोधमे लिखा गया है, परन्तु मेरी इच्छा तो यही होगी कि तू ऐसा न लिखे। मुझपर तूने जो क्रोध निकाला है उसकी मुझे फिक्र नही। उसे मैं हँसीमें उड़ा सकता हूँ। लेकिन यह वाक्य मुझे खटकता है। तेरी लेखनीसे ऐसे वाक्य नही निकलने चाहिए; तात्पर्य यह कि तेरे मनमें इस तरहका विचार भी नही आना चाहिए। तेरे मनमे विचार उठा और उसे तूने भले ही मेरे आगे रखा; और चूँकि तूने उसे रखा, इसलिए मैं उसमे सुधार कर सकता हूँ। मैंने यह वाक्य इसलिए नही लिखा है कि तू अपने विचारोंको मुझसे छिपाने लगे। मैं तुझे पागल, उद्धत, विनम्र तू जैसी भी है उसी रूपमें देखना चाहता हूँ। लेकिन मेरी माँग तो यही है कि तू उपर्युक्त विचारको अपने मनमें आने तक न दे।

लड़कियाँ अगर जोरसे मालिश नही कर सकती तो उन्हें सिखाना चाहिए। इसमे शारीरिक बलकी नही, कौशलकी जरूरत है।

अब तू जो पढ़ रही है, उसके विषयमें। जैसा तूने लिखा है वैसी मान्यता किसी समय अवश्य थी, लेकिन आज नही है। माल्थसके कुछेक सिद्धान्तोको लोग समझ नही पाये और कुछेक भूल भरे हैं। जो नियम मानवेतर प्राणी पर लागू होता है, वह मनुष्योंपर नही होता। मानवेतर प्राणी अन्य जीवोंको मारकर निर्वाह करता है। मनुष्य इस स्थितिसे निकल जानेके लिए प्रयत्नशील है। इसमें उसकी अहिंसा है। जब तक देह है तबतक मनुष्य पूर्ण अहिंसाको प्राप्त नही हो सकता। लेकिन यदि भावनाके स्तर पर उसका [अर्थात् अहिंसाका] पोषण करे तो वह कमसे-कम हिंसासे निर्वाह कर सकता है। स्वयं मरकर दूसरोंको जीने देनेकी तत्परतामें मनुष्यकी विशेषता निहित है। जैसे-जैसे मनुष्य बढ़ता है वैसे-वैसे खुराक भी बढ़ती जाती है। अभी उसमे और आगे बढ़नेकी शक्ति है। डार्विनकी खोजके बाद और बहुत-सी खोजें

१. प्रेमाबहनने इसका यह अर्थ किया था: "अन्य लोग मेरी टीका करेंगे, इस भयसे यदि मैं टीका नहीं करती तो मैं दुर्बल ठहरूँगी। मुझे वैसा नहीं होना। भले जगत मेरी टीका करे, लेकिन मुझे जो ठीक लगे वह मैं क्यों न कहूँ? मैं संसारसे क्यों डरूँ? मुझे संसारकी कोई परवाह नहीं।" देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको", ६-७-१९३२ भी।

की गई है। तू जो पुस्तक पढ रही है, वह पुरानी जान पडती है। पुरानी हो अथवा नई, 'ज्यादासे-ज्यादा लोगोंका भला' अथवा 'वलीके दो भाग' का सिद्धान्त गलत है।

अहिंसा सबके कल्याणकी वात सिखाती है। ईश्वरके यहाँ सबके कल्याणका ही न्याय हो सकता है। यह कैसे किया जाता है अथवा ऐसे न्यायमे मनुष्यका क्या कर्तव्य है, इसपर विचार करना हमारा काम है, इस नियमका दूसरे नियम द्वारा खण्डन करनेका नही है। लेकिन यह विषय बहुत वड़ा है। मैंने तो सक्षेपमें थोड़ा कह दिया है। तू यदि इसपर ज्यादा चर्चा करना चाहे तो प्रश्न पूछना।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९६) से। सी० डब्ल्यू० ५७५१ से भी; सौजन्य : प्रेमावहन कंटक

२९४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

३० जुलाई, १९३२

भाई घनश्यामदास,

आपका २२ जुलेका पत्र मिला है। द्रव्यशास्त्रके मेरे पास जितनी पुस्तक थी मैं पढ़ चुका हूं। इसका यह अर्थ नही कि सब अच्छी तरह समज चुका हूं। परंतु समजशक्तिमे कुछ न कुछ वृद्धि हुई है। मेरी उम्मीद थी कि आखरकी पुस्तक पढ़ लुंगा। उसके पहले आपकी तरफसे दूसरी पुस्तक मिल जायेगी। लेकिन वह खत[1] ही आपको न मिला। यह दूसरा खत है जो नही मिला। मुझे चाहिये फाउलर कमिटी, चैंबरलेन कमिटी, वैबिंगटन स्मिथ और हिल्टन यंग कमिटिकी रिपोर्ट और उसीके साथ विरोधी रिपोर्ट भी। दादा चानजीकी करेन्सी ऑर एक्सचेज[2] नामक पुस्तक और फिण्डले शिराज[3] आजकल लिखी है वह।

मुझको कुछ डर है कि आपको वादाम अनुकूल नही होगी। क्योकि मै बरसो तक वादाम मोंर्यासग इ० तेली चीजों पर रहा हू मैं उन्हे बरदास्त कर लेता हूं। आपके लिए तो दूध दहि ही मुख्य खुराक रहेगा। स्टार्च कम होनी चाहिये और डालकी प्रोटीड बिलकुल नही। गेहूं, दूध, दहि, सेलडभाजी और स्टार्चरहित फल जैसे कि अंगुर, अनार, नारंगी, सेब, अननस, पपनस, यही खुराक आवश्यक और अनुकूल आप ऐसोंके लिये है यह मेरा अनुभव है। वादाम दूधकी जगह तब ही ले सकती है जब वनस्पतिमेंसे कोई ऐसी मिल जाय तो दूधकी जगह ले सके। रसायन-

१. सम्भवत: २८ जून, १९३२ का।
२ और ३. मूलमें ये अंग्रेजी लिपिमें हैं।

शास्त्रके प्रयोगसे तो दूध और बादाममे एक ही तत्व है लेकिन दूधमें जो कुछ सूक्ष्म वस्तु है वह बादाममे नही है और जो एनिमल प्रोटीन'में ही मिलती है। मेरा पूर्ण विश्वास है कि लाखों वनस्पतिओमे ऐसी वनस्पति अवश्य है जिसमे भी वह सूक्ष्म वस्तु है। परंतु हमारे वैद्योंने अपने आलस्यके कारण इसकी आजतक शोध नही की है। और इसीलिए जितना काम दूध देता है वह सबका सब बादाम नही दे सकती है।

मेरा हाथ ज्योंका त्यों है। लेकिन काम करनेमे कोई बाधा नही आती है। इसलिये कुछ चिंताका कारण नही है।

हम तीनो अच्छे हैं। आपको जानकर खुशी होगी कि सरदारने संस्कृतका अभ्यास आरभ कर लिया है और बहुत तेज गतिसे चल रहे हैं।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९०२ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

२९५. 'गीता' कंठस्थ करें[2]

३१ जुलाई, १९३२

'गीता' कंठस्थ करनेके बारेमे मैं अनेक बार लिख चुका हूँ, कह चुका हूँ। चूंकि मैं स्वय ऐसा नही कर पाया हूँ, इसलिए मुझे यह कहना शोभा नही देता। तथापि, बारम्बार ऐसा कहते हुए मुझे शर्म नही आती, क्योकि मैं उससे होनेवाले लाभको समझता हूँ। मेरा काम तो जैसे-तैसे चल गया है, क्योंकि मैंने एक बार तो तेरह अध्याय तक 'गीता' कठस्थ कर ली थी और 'गीता'का मनन तो वर्षोंसे चल रहा है। इसलिए बहुत करके मेरा जीवन उसकी छायामें बीता है। लेकिन अगर कही मैं उसे कंठ कर सका होता, यदि मैं उसमे और भी अधिक गहरे उतर सका होता तो मैं उससे कही अधिक ग्रहण कर सका होता। लेकिन मेरा चाहे जो हुआ हो अथवा अब हो, मेरा समय तो अब बीत गया कह सकते हैं, या कहें कि यदि मुझे अभी भी अवसर मिला तो मैं दुबारा 'गीता'को कठस्थ करनेका अवश्य प्रयत्न करूँगा।

यहाँ हमें 'गीता'के अर्थको तनिक विस्तारसे बताना चाहिए। 'गीता' अर्थात् हमारा आधारभूत ग्रन्थ। हममे से अनेक व्यक्तियोंका [आधार] 'गीता' है, इसीलिए मैंने 'गीता' शब्दका प्रयोग किया है। लेकिन अमतुल, अमीना अथवा कुरेशी 'गीता'के बदले सारी 'कुरानशरीफ' अथवा उसके कुछ अंशोंको कठस्थ करें। जिसे संस्कृत न आती हो, जो अब संस्कृत न सीख सकता हो वह गुजराती अथवा

१. मूलमें ये अंग्रेजी लिपिमें है।

२. यह "पत्र: नारणदास गाधीको", २८/३१-७-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

हिन्दीकी ['गीता'] कंठस्थ करे। जिन्हें 'गीता' पर आस्था न होकर अन्य धर्म-ग्रन्थपर हो तो वे उस ग्रन्थको कंठस्थ करे।

और कठस्थ करनेके अर्थको भी हमे समझ लेना चाहिए। जिस वस्तुको हम कंठस्थ करें उसके अनुरूप आचरण करनेका भी हमें आग्रह होना चाहिए। वह मूल सिद्धान्तोंका हनन करनवाला नही होना चाहिए और हमे उसके अर्थको पूरी तरह समझ लेना चाहिए।

इसका पुरस्कार भी मिलता है। हमारे पास ग्रन्थ न हो, चोरी हो जाये, जल जाये, हम राह भूल जाये, हमारी आँखे चली जाये, हम गूँगे बन जाये लेकिन हमारी समझनेकी शक्ति कायम हो—ऐसे ही अन्य प्रसंगोकी भी कल्पना की जा सकती है—उस समय यदि हमारा प्रिय आधारभूत ग्रन्थ हमें कठस्थ हो तो वह हमें बड़ा ही शान्ति-प्रदायक सिद्ध होगा और मार्गदर्शक बनेगा, विपत्तिमे मित्र होगा।

जगतका अनुभव भी यही है। हमारे पूर्वज—हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी अमुक पाठ कंठस्थ किया करते थे। आज भी अनेक लोग करते है। इन सबके अमूल्य अनुभवोंका हम त्याग न करें। इसमे कुछ हदतक हमारी श्रद्धाकी कसौटी भी है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२९६. पत्र : नारणदास गांधीको

२८/३१ जुलाई, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारा २५-२६ तारीखका पत्र आज मिला है। मेरे पत्र तुम्हे मिल सकते है, इसके लिए हमे ईश्वरका उपकार मानना चाहिए। लेकिन न मिले तब भी हमे उसका उपकार मानना चाहिए। अर्थात् सर्दी-गर्मी, जन्म-मरण, अच्छा-बुरा, सुख-दुःख का भेद बिल्कुल दूर हो गया। यदि हमने अपनी जीवनडोर उसके हाथमे दे दी हो तो जैसा वह नचाये वैसा हम नाचेंगे। पत्र भेजे तो प्रसन्न हों और न भेजे तो भी प्रसन्न रहे। "भलु थयु भांग जंजाल" (अच्छा हुआ, बन्धन टूट गया) यह कहकर नरसिंह मेहता नाच उठे थे। इसका अर्थ कोई यह थोड़ा ही था कि उनके प्रियजन उन्हे प्रिय न थे अथवा उनकी उपस्थिति उन्हे अच्छी नही लगती थी? अवश्य अच्छी लगती थी। तिसपर भी वे चले जायें तो समझना चाहिए कि इसमें ईश्वरका कोई रहस्य है। इतना ही नही, अपितु इसमें भी उसकी कृपा ही निहित है। फलतः जबतक मेरे पत्र मिलते रहे तबतक उनसे जो आनन्द मिल सके सो लेना और न मिलनेपर भी सन्तुष्ट रहना; और इस सन्तोषमें आनन्द समाया हुआ ही है।

पिछली डाकके मिलनेपर तुमने जो पोस्टकार्ड लिखा था वह मुझे मिल गया था। हाथकी स्थिति पहले जैसी ही है। वजन १०५½ हो गया था, लेकिन फिर १०४ हो गया है। ऐसे फेरबदल थोड़े-बहुत होते ही रहते है लेकिन तबीयत अच्छी ही रहती है।

पद्माको कर्ज नही लेना चाहिए था, यह बात सिद्धान्तके रूपमे सही है। लेकिन ऐसा भी हो सकता है कि वस्तुस्थितिके बदलनेसे यह बात लागू न हो सके। इसलिए उसके साथ न्याय करनेके लिए हमे उसका सारा हिसाब देख जाना चाहिए। यदि यह लगे कि खर्च ठीक हुआ है तो कर्ज चुका देना चाहिए। ऐसा प्रसग भी उपस्थित हो सकता है जब कर्ज लिये बिना काम न चले। उस समय कर्ज लेना धर्म हो सकता है। ये सब बाते परिस्थितियोके साथ-साथ बदलती है और तभी व्यक्तिके साथ न्याय किया जा सकता है, अन्यथा इसका परिणाम विपरीत होगा। टाइटसके बारेमे तुम्हें जो उचित जान पडे सो करना।

केशूने २०० अंक तक काता यह तो बहुत ज्यादा हुआ। ऐसे कितने तार काते? इनमे से यदि हरेक तारकी पाँच-सात छोटी आँट बनाकर अपने पत्रमे पिरोकर भेजोगे तो वह बिना खोये मिलेगी और हम वह सूत देख सकेंगे। जिस पूनीसे वह इतना महीन सूत कात सका उसे भी यदि यहाँ कोई आनेवाला हो तो उसके साथ भेजना। यदि वह ऐसा सूत और कात सकता है तो तुम्हे उससे कपडा बुननेके लिए तैयार रहना चाहिए। केशूने २०० अंकका सूत किस चरखे पर काता और तकुआ कैसा था?

यह तो मै लिख ही चुका हूँ कि अब मै गाडीव पर सूत कातता हूँ।[1] उसके मोढियामे मैंने कुछ परिवर्तन किये है और इसमे सहज ही ३० अंकका सूत कात रहा हूँ। आज कदाचित् ३० से भी ज्यादा अकका काता गया होगा और टूटन भी बहुत कम होती है। जो परिवर्तन किये है वे ये है: मोढ़ियामे उतनी जगह ही रखी है जितनी तकुएके लिए आवश्यक है; मोढ़िया बहुत संकीर्ण बना डाला है; और मोढिया में तकुआ इस तरह बिठाया गया है कि चरखी आसानीसे खिसक नही सकती; उतनी ही जगह रखी गई है जिससे तकुआ आसानीसे घूम सके। ऐसा करनेसे तार टूटनेकी सम्भावना भी कम हो गई है और निश्शक होकर खूब महीन तार निकाला जा सकता है। तकुएको अभी और भी पतला करके उससे सहज ही महीन सूत काता जा सकता है या नही, सो देखना बाकी है।

मीराबहनका समाचार यहाँ तो मुझे नियमित रूपसे मिलता रहता है। यह पत्र लिखते समय तो २३ तारीख तकका समाचार मालूम था। उस समय वह खाटपर थी, यद्यपि पोस्टकार्ड उसके हाथका ही लिखा हुआ था। वह कमजोर बहुत हो गई है।

१. २०-७-१९३२ को।

सवेरेकी प्रार्थनाको लेकर जो फेरबदल किया गया है उसे मैंने समझ लिया है। मूल बात यह है कि प्रार्थना कभी त्रासरूप नही लगनी चाहिए। जिस तरह नीरोग व्यक्तिको भूख लगनेपर खानेकी जरूरत महसूस होती है उसी तरह जिस व्यक्तिकी आत्मा स्वस्थ है उसे भी, अपना एक भी दिन प्रार्थना किये विना जाये तो प्रार्थनाकी जरूरत महसूस होनी चाहिए।

प्रभुदासके सम्बन्धमे जैसा समुचित जान पड़े करना।

अब तो शंकरभाईके हाथकी पट्टी खुल गई होगी।

प्रेमाबहनको सक्षिप्त पत्र लिखनेके लिए कहना उचित नही लगता। उसे हृदय उँड़ेल देनेका अवकाश तो मिलना ही चाहिए। इन पत्रोमे वह अवश्य ही काफी समय देती होगी, लेकिन इससे उसे आत्मसतोष होता होगा।

मैथ्यूको पत्र लिख रहा हूँ, उसे पढना। विद्याभ्यासके सम्बन्धमे मेरे सुझावोको तुम स्वयं जितना समझ सके होगे उतना ही आश्रमवासी ग्रहण कर सकेगे।[1] यह ऐसी वस्तु है कि मेरे लेखोसे एकाएक समझी नही जा सकती। इसपर अमल करके ही यह बताया जा सकता है कि यदि यह चाबी हाथमे आ जाये तो विद्याभ्यास कितनी सहल वस्तु है और यह कैसे विना किसी आडम्बरके हो सकती है।

३१ जुलाई, १९३२

नर्मदाके बारेमे तो मैं अपने ३१[2]–७–१९३२ के पत्रमे लिख चुका हूँ। यह तुम्हे समयसे तो क्या मिला होगा! यहाँ अधिक कुछ लिखनेको नही है। शम्भुशंकरका पत्र वापस मिला है। यदि उसके सम्बन्धमे कुछ किया जा सकता होगा तो तुमने अवश्य किया होगा। इस बालाका शील अखण्डित रहे, ऐसा मेरा उसे आशीर्वाद तो है ही।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२४१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए "शिक्षा", १०-७-१९३२।

२. स्पष्टतः यहाँ भूलसे १६ के स्थानपर ३१ लिखा गया है; देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", १६-७-१९३२।

२९७. पत्र : मीराबहनको

३१ जुलाई, १९३२

चि० मीरा,

तुम अद्भुत हो। अत्यधिक कमजोरीके बावजूद तुम्हारी लिखावट हमेशाकी भाँति बिल्कुल सधी हुई और साफ है। मालवीयजीको मैंने तार भेजा था।[1] उन्होंने जवाब दिया है कि जब तक तुम अपनी शक्ति पुनः प्राप्त नहीं कर लेती तबतक वह तुम्हें वहीं रोक रखेंगे। और अगर वहाँकी जलवायु तुम्हें अनुकूल पड़े, तो इससे अच्छा कुछ नहीं हो सकता कि तुम शिवप्रसाद बाबूकी हार्दिक मेहमानदारीमें उनके घरमें रहो और मालवीयजीकी प्रेमपूर्ण देखभाल तुमपर रहे; और इससे मैं भी पूर्णतया चिन्तामुक्त रह सकूंगा। तो तुम तुलसीकी पत्तीकी 'चाय'[2] ले रही हो। मैंने स्वयं यह कभी नहीं ली। मैंने उसके अनेक गुणोंके बारेमें सुना है। मेरी रायमें गर्म पानी ही उसका प्रधान तत्व है। लेकिन मुझे अनेक चिकित्सकों और मरीजोंकी गवाहीको नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए। मैं तो सिर्फ तुम्हें पुनः पहले जैसा स्वस्थ देखना चाहता हूँ, और सो भी बिना हानिकारी कुनैन लिए। तुलसीकी पत्ती निश्चित ही अहानिकर है और उसमें एक अत्यन्त भीनी सुखद महक भी होती है।

वहाँ सभी मित्रोंको हमारा प्रेमाभिवादन कहना।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

मुझे आशा है कि तुम्हें मेरे पहलेवाले पत्र मिल गये होंगे। सरकारने उन्हें तुम्हारे पास भेजनेकी अनुमति दे दी है। शुरूमें कुछ विलम्ब होता था, लेकिन इधर पत्रोंको डाकसे रवाना करनेके लिए शीघ्र ही पास कर दिया जाता है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३२) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६६८ से भी।

१. २६-७-१९३२ को।

२. इसपर मीराबहनने टिप्पणी लिखी है: "शिवप्रसाद बाबूका बूढ़ा नौकर तुलसीकी पत्तियाँ, पारिजातकी एक-दो पत्तियाँ, काली मिर्च और मिश्री पानीमें [उबालकर] मेरे लिए एक विशेष पेय तैयार करता था जिसको पीनेसे पसीना आता था और बुखारमें आराम मिलता था।"

२९८. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

३१ जुलाई, १९३२

चि० रामेश्वरदास,

तुम्हारे दो पत्र मिले। रामको[1] तुमने विनोबाकी देखभालके लिए छोड़ दिया, यह ठीक किया। यह वियोग नहीं बल्कि संयोग है। अब उसे वहाँसे न हटाना। गंगादेवीको यदि अंग्रेजी सीखनेकी इच्छा हो तो उसे अवश्य सीखने देना चाहिए। पतिको पत्नीका विकास अवरुद्ध करनेका कोई अधिकार नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८३) से।

२९९. पत्र : अमीना जी० कुरेशीको

३१ जुलाई, १९३२

चि० अमीना,

मैं तेरे लम्बे पत्रकी आशामें हूँ। तबीयत कैसी है? उर्दूकी पढ़ाई कितनी हुई है? लिख सके तो थोड़ा लिखना। बच्चे कैसे लगते हैं? सब लोग तेरे साथ कैसा व्यवहार करते थे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६१) से।

१. रामेश्वरदास पोद्दारका पुत्र।

३००. पत्र : नारायण मोरेश्वर खरेको

३१ जुलाई, १९३२

चि० पण्डितजी,

ताई वहाँ आई है इसलिए यदि हम उनके स्वास्थ्यमे सुधार कर सके तो यह हमारे लिए एक अच्छी बात होगी। सुन्दर स्वास्थ्यकी कला ढूंढ़ निकालना। ताईसे मुझे पत्र लिखवाना, भले ही मराठीमे लिखे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २४१) से; 'सौजन्य : लक्ष्मीबहन एन० खरे

३०१. पत्र : निर्मला एच० देसाईको

३१ जुलाई, १९३२

चि० निर्मला (बुआ),

तुझे बुआ कहलाना अच्छा लगता है या नही? और तू बावला[1] की बुआ है या नही? हर पत्रमे नये किस्मके कागजकी क्या जरूरत है? नोट-बुकके कागजों का इस्तेमाल महँगा पड़ता है और नोट-बुक भी [खराब] होती है। और उसके बायी ओर जो हाशियाकी खड़ी लकीर होती है वह कागज...[2]। जो चीज जिस कामके लिए होती हैं बहुत करके उसका उपयोग उसी कामके लिए किया जाना चाहिए। यही उसका उचित उपयोग हैं। हर पत्रमें प्रश्न पूछे ही जाने चाहिए, ऐसी कोई बात नही है। पत्रमे तो सप्ताहमे जो-कुछ पढ़ा [और समझा हो] उसका सुन्दर वर्णन दिया जा सकता है।

स्त्रीको अथवा किसी भी व्यक्तिको रक्षाके लिए बाहरी हथियारकी जरूरत नही है। कई बार तो वह हथियार स्वयं उसके विरुद्ध ही इस्तेमालमे लाया जाता है। और फिर जो स्त्री अहिंसाको ही धर्म समझती है वह मर कर भी अपनी रक्षा करेगी, मार कर नही। हर स्त्रीको सीता अथवा द्रौपदीके समान यह विश्वास होना चाहिए कि ईश्वर उसकी पवित्रताकी रक्षा करेगा। ईश्वर हममें अपने गुणोंके रूपमें

१. महादेव देसाईका पुत्र।

२. मूल प्रतिमें यहाँ कुछ अस्पष्टता है।

वास करता है और हमारी रक्षा करता है। यह बात [समझमें] आती है या नहीं ? महादेवको तेरा पत्र मिला था। उसका जवाब तुझे मिला या नहीं ?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७३) से। सी० डब्ल्यू० १००१ से भी; सौजन्य : निर्मलाबहन आई० मेहता

३०२. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

३१ जुलाई, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

तू अपने वचनका अक्षर रूपमें तो ठीक पालन कर रही है, लेकिन सही अर्थमें वचनका पालन तभी माना जायेगा जब उसकी आत्माको भी हम ग्रहण करें। मुझे यह शिक्षा देनेका अधिकार नहीं है, क्योंकि दूधके सम्बन्धमें मैंने अपनी प्रतिज्ञाका अक्षर रूपमें पालन करके ही संतोष माना। मेरी प्रतिज्ञाका भाव तो यही था कि मुझे गाय-भैंसका ही नहीं अपितु किसी भी जानवरका दूध नहीं लेना। जीनेकी इच्छासे ही मैंने इस भावको तोड़ा। ऐसे अपरिपक्व व्यक्तिसे यदि तू कोई शिक्षा ग्रहण कर सके तो कर। मैंने तो तुझे वचनमुक्त कर ही दिया है। लिखना तभी जब लिखनेका मन हो। प्यारेलालके बारेमें तूने समाचार जान ही लिया होगा। मैं तुझे पहले ही यह लिख चुका हूँ कि मैं हरिलालके पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४४) से।

३०३. पत्र : रमाबहन जोशीको

३१ जुलाई, १९३२

चि० रमा (जोशी)[1],

यदि तूने पत्र नहीं लिखा है तो अब झगड़ा होगा। मुझे तो ब्योरेवार पत्र चाहिए— व्यक्तिगत तथा सामाजिक दृष्टिसे। विमू और धीरूके क्या हाल हैं ? आश्रम पहले जैसा था वैसा ही लगता है अथवा पहलेसे बेहतर अथवा खराब लगता है ?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३३५) से।

१. छगनलाल जोशीकी पत्नी

३०४. पत्र : वनमाला एन० परीखको

३१ जुलाई, १९३२

चि० वनमाला,

सुरेन्द्रजीका पेड़ कैसे उखड़ गया? वहाँ दूसरा बो देना। वीरमती और चंचलसे पत्र लिखनेके लिए कहना। केशूके समान महीन सूत तू क्यों नहीं कात सकती?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७८) से। सी० डब्ल्यू० ३००१ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

३०५. पत्र : रामचन्द्र एन० खरेको

३१ जुलाई, १९३२

चि० रामभाऊ,

तुम बालक लोग अब जवाबदारी समझने लायक तो अवश्य हो गये हो और इसीलिए ऐसे काम उठाने लगे हो। यह उचित भी है। तुम अंग्रेजीमें क्या लिखते हो? अपनी अंग्रेजीकी लिखावटका नमूना भेजना। एक छोटा-सा निबन्ध लिखना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९४) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन एन० खरे

३०६. पत्र : निर्मला बी० मशरूवालाको

३१ जुलाई, १९३२

चि० निर्मला, (टोपीवाला बँगला)

तेरे पत्रकी मैं बाट जोह रहा था। 'गीतामंथन'[1] के प्रूफ मिले (अभी-अभी ही मिले हैं), लेकिन तेरा पिछला पत्र मुझे अभीतक तो नहीं मिला। मेरे पत्रोंकी स्थिति कुछ अस्त-व्यस्त हो गई थी। अब कहीं जाकर उसमें कुछ सुधार हुआ है।

तूने मुझे लिखा, सो बहुत अच्छा किया। लिखनेके लिए तो तेरे पास बहुत सारी चीजें हैं। तू यदि सबका समाचार मुझे देगी तो मुझे सचमुच बहुत खुशी होगी।

१. किशोरलाल मशरूवाला द्वारा रचित।

बाबूकाका[1] का पत्र मुझे मिला था। मैंने उन्हें लम्बा उत्तर भी दिया था।[2] कदाचित् उन्हे वह अब मिल गया होगा। गोमतीको मेरा आशीर्वाद कहना। हम तीनों ही मजेमे हैं। वहाँ सबको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २८८५) से; सौजन्य: निर्मलाबहन शराफ

३०७. पत्र : महेन्द्र वी० देसाईको

३१ जुलाई, १९३२

चि० मनु,

इस बारकी तेरी लिखावट अपेक्षाकृत ठीक कही जा सकती है। नमूनेके अक्षरोंकी जो कापी होती है उसे सामने रखकर चित्रकी तरह देख-देखकर अक्षर लिखनेसे लिखावट अच्छी होती है। तू पहले गुजराती, थोड़ी संस्कृत और गणित सीख ले और कताईकी सारी क्रियाओंको जान ले। तो बादमे मन करे तो अंग्रेजी भी जरूर सीखना। तेरा वजन खूब बढ़ना चाहिए। यदि तू अच्छी मात्रामे दूध-घीका सेवन करे और कसरत करे तो वजन अवश्य बढ़ेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७६०) से; सौजन्य: वालजी गो० देसाई

३०८. पत्र : भगवानजीको

३१ जुलाई, १९३२

'ईशोपनिषद्'में एक मन्त्र है। उसका अर्थ यह भी किया जा सकता है, "तुम्हारे सम्मुख जो कार्य है उसपर तुम ध्यान दो"। ऐसा करते हुए अवश्यमेव ईश्वरसे साक्षात्कार होगा। ईश्वर तो सर्वत्र विद्यमान है। 'मेरे' काममे भी है। जिसे मैं 'अपना' मानता हूँ वह उसीका है। यदि इस कार्यपर ध्यान दूंगा तो मैं इसे उसीका कार्य मानूंगा। जो स्वामीका कार्य करता है वह स्वामीको प्राप्त करता है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. किशोरलाल जी० मशरूवाला।
२. १-७-१९३२ को।

३०९. पत्र : शारदा सी० शाहको

३१ जुलाई, १९३२

चि० शारदा,

कह सकते है कि तेरा पत्र अच्छा है। रक्षाके सम्बन्धमे निर्मलका पत्र पढ़ना।[1] जिसका मन पवित्र है उसे विश्वास रखना चाहिए कि पवित्रताकी रक्षा ईश्वर अवश्य करेगा। शस्त्र पर निर्भर रहना तो गलत है। यदि कोई शस्त्र छीन ले तो? अहिंसा-धर्मका पालन करनेवाला व्यक्ति शस्त्रपर विश्वास नही रखता, उसका शस्त्र तो उसकी अहिंसा ही होती है, उसका प्रेम होता है।

सत्यके प्रसगमें यदि किसीके मनको कष्ट पहुँचता है तो उसमे हिंसा नही है। हम किसीको कष्ट नही पहुँचाना चाहते फिर भी यदि उसे कष्ट पहुँचे तो उसमें हिंसा नही है। मै तुझसे गायके दूधकी माँग करूँ, पर क्योंकि मैंने उसे न लेनेका व्रत लिया है, इसलिए यदि तू मुझे न दे और इससे मुझे कष्ट पहुँचे तो उसमे तू हिंसा नही करती, बल्कि अपने धर्मका पालन करती है।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१२) से; सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

३१०. पत्र : एक बालिकाको[2]

३१ जुलाई, १९३२

किताबोंमें जो-कुछ लिखा हुआ मिलता है उसे वेदवाक्य नही माना जा सकता। जो नीति-विरुद्ध हैं, अमानुषिक हैं, ऐसी बाते चाहे किसी भी पुस्तकमे क्यो न लिखी हों, हमे स्वीकार नही करनी चाहिए। जबतक हममे सच-झूठ परखनेकी बुद्धि नही आती तबतक हमे पढ़ी हुई बातके विषयमे अपने बड़े-बूढोंका, जिनपर हमे पूरा-पूरा विश्वास हो, कहना मानना चाहिए।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. देखिए "पत्र : निर्मला एच० देसाईको", ३१-७-१९३२।

२. उक्त बालिकाने अपने पत्रमें गांधीजीसे पूछा था : पुस्तकोंमें मीराबाईके चमत्कारोंका जो वर्णन मिलता है यदि हम उनपर विश्वास न करें तो फिर क्या उनके बारेमें लोग जो-कुछ कहते है हमें उसपर यकीन करना चाहिए, और यदि पुस्तकोंमें लिखी बातका विश्वास न करें तो अपने वीरों और वीरांगनाओंके सम्बन्धमें जाननेका और क्या साधन है?

३११. एक पत्र[1]

३१ जुलाई, १९३२

तुम्हारे अन्दर सूक्ष्म गर्व और आत्मसंशय दोनोंकी ही भावनाएँ एक साथ काम कर रही हैं। जिन इतने सारे मनुष्योंके भाग्यको तुमने अपना भाग्य बना लिया है उनके बीच रह कर भी तुम अकेलापन कैसे अनुभव कर सकते हो, जबकि उनमें से प्रत्येक व्यक्तिको तुम्हारी सेवाकी आवश्यकता है? तुम किताबोंसे घिरे हुए हो और फिर भी तुम उनको छूते तक नही। तुम हिन्दी-भाषी स्त्री-पुरुषोंके बीच रहते हो और फिर भी उनसे बोलते नही। तुम कार्यकर्ताओंके बीच रहते हुए भी काममे नही कूद पड़ते और जहाँ एक तिनका उगता था वहाँ दो तिनके नही उगाते, जहाँ कल तक एक गज कपड़ा बुना जाता था वहाँ दो गज कपड़ा नही बुनते। यदि हमारा दर्शन तुरन्त दूसरोंकी प्रेमपूर्ण सेवामे कार्यान्वित नही किया जाता तो वह धूलके समान व्यर्थ है। तुमने अपने-आपको जिस महान ध्येयमें समर्पित कर दिया है उसके बीच तुम अपने लघु अहंको भूल जाओ। तुम्हे अपने इस आलस्यको झाड फेंकना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३१२. पत्र : एक बालिकाको[2]

३१ जुलाई, १९३२

आश्रममे न जानेका तुमने क्या सुन्दर कारणबताया है! यदि सब लोग ऐसा ही करेंगे तो? क्या तुमने काजी और उसके कुत्तेका किस्सा सुना है? काजी बहुत विख्यात था। उसके कुत्तेके मर जानेपर लाशको ले जानेके लिए बहुत बड़ा जुलूस निकाला गया। उसमे सारा गाँव गया। लेकिन जब काजीकी मृत्यु हुई तब उसकी लाशको कन्धा देनेके लिए भी लोग न मिल सके। तुमने भी ऐसा ही किया है न? अथवा 'देहीनां स्नेही सकल स्वारथियां अंते अलगां रहेशे रे', अर्थात् प्राणीके सारे स्नेही स्वार्थी हैं और अन्तमे वे सारे अलहदा हो जायेंगे। इस भजनका तो हम सब अनुसरण करते है न? देहसे आत्माके निकल जानेपर हम उसे जला डालते हैं। लेकिन तुमने . . .? इस वाक्यको तुम ही पूरा करना। तात्पर्य यह कि व्यक्तिका

१. यह पत्र जिसे लिखा गया था उसने गांधीजीको लिखा था कि मैं बहुत अधिक एकाकी अनुभव करता हूँ और किसी भी कामका आदमी नहीं हूँ।

२. उक्त बालिकाने लिखा था कि चुम्बक शक्तिके अभावमें अर्थात् गांधीजीकी अनुपस्थितिमें उसकी आश्रम जानेकी इच्छा नहीं होती।

मोह नहीं रखना चाहिए। व्यक्तिके गुणोंके प्रति मोह हो सकता है लेकिन यह तो शुद्ध प्रेमजनित है। हर व्यक्तिके गुणोकी किसी-न-किसी कार्यमे परिणति होती है। यदि हम उसके गुणोंको अच्छा समझते हों तो उससे जो कार्य मूर्तिमन्त हो हमें उसे प्रोत्साहन देना चाहिए। इसलिए तुम आश्रममें जाना। इतनी बालाओंमें से तुमने थोड़ी बहुत बालाओंके साथ तो मैत्रीकी ही होगी। उनकी सार-सँभालका कार्य अपने ऊपर लेना। कभी-कभी प्रार्थनामें शामिल होना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३१३. तार: कमला नेहरूको

१ अगस्त, १९३२

कमला नेहरू
आनन्द भवन
इलाहाबाद

तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमें अखबारोंमे चिन्ताजनक समाचार देखे। हालतका ठीक विवरण तारसे भेजो।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फ़ाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ३८३।

३१४. पत्र: विमलाबहन ए० पटेलको

१ अगस्त, १९३२

चि० विमला[1],

तेरा पत्र मिला। भक्तिबहनको तूने उपयोगी खबर भेजी है। उसे पहुँचाने की कोशिश करूँगा। कैदियोंसे कुछ निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। मुझे तू जब दुबारा पत्र लिखे तब बताना कि तूने पत्र पेंसिलसे क्यों लिखा? कोई विशेष कारण बिना जो पेंसिलसे पत्र लिखता है वह गलत काम करता है। यह हिंसा है, क्योंकि पेंसिलसे लिखे पत्र धुँधले हो जाते हैं और उससे पाठकको पढ़नेमें कठिनाई होती है। तू जितनी अच्छी है तेरी लिखावट भी उतनी ही सुन्दर है। लेकिन चूँकि तूने पेंसिलसे लिखा इसलिए अक्षर धुँधले पड़ गये हैं।

१. नरसिंहभाई ईश्वरभाई पटेलकी पुत्री।

हम तीनोंकी ओर से तुम सबको आशीर्वाद और यथायोग्य।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती विमला पटेल
पाटीदार मन्दिर
आणंद जंकशन

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२७६) से।

३१५. पत्र : मणिलाल गांधीको

३ अगस्त, १९३२

चि० मणिलाल,

तेरा पत्र मिला। तूने तारसे उत्तर माँगा है, लेकिन कैदी इस तरह झटपट तार नही दे सकता। सरकार तो कदाचित् तार भेज दे, लेकिन मुझे मर्यादाका पालन करना चाहिए। इसके अतिरिक्त तेरा पत्र लिखे लगभग एक महीना बीत गया, अतः यदि दूसरा महीना भी बीत जाय तो कोई हर्ज नही होगा, यही सोचकर मैंने तार भेजनेकी अनुमति नही माँगी। पट्टा सीधे ही दे देनेका वचन दिया गया। यह ठीक बात तो नही हुई, लेकिन अब बन सके तो उसे बहाल रखनेके लिए मैं श्री कैलनबैकको लिख रहा हूँ। पत्र इसीके साथ है।[1] मुझे उम्मीद तो यह है कि इस बीच तू ही उन्हे समझा सका होगा और मेरे पत्रकी जरूरत ही नही पड़ेगी।

फीनिक्स न्यासकी प्रति मुझे भेजना। बहुत सम्भव है कि वह आश्रममें कही हो। लेकिन यदि न मिले तो भी मेरे पास एक प्रति होनी चाहिए ताकि मुझे कुछ देखनेकी जरूरत पड़े तो मैं देख सकूँ।

अब तो मैं समझता हूँ, तू वहाँ अच्छी तरहसे टिक गया है। यदि ऐसा हो तो कोई हर्ज नही। वहाँ भी सेवा ही करनी है। लेकिन मुझे पत्र लिखनेमें आलस न करना।

देवदास जेलमे काफी बीमार रहा। इसीसे उसे एक महीना पहले छुट्टी दे दी गई। मीराबहन भी खूब बीमार रही। डाक्टर मेहता भी भयंकर बीमारी भोग रहे हैं।

हम तीनों मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९१) से।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

३१६. पत्र : प्रागजी के० देसाईको

३ अगस्त, १९३२

चि० प्रागजी,

तुम और पार्वती काममें इतने ज्यादा व्यस्त दीख पड़ते हो कि तुम्हें एक अक्षर लिखनेकी भी फुरसत नहीं मिलती। यहाँ तो सरदार, महादेव और मैं तुम दोनोंको याद करते हैं। अतएव किसी दिन समय निकाल कर पत्र लिखना।

हम आनन्दसे हैं। कताई तो चलती ही है। महादेव आजकल ७० अंकका सूत कात रहा है। सरदार कातनेके अलावा विद्यार्थियों-जैसे उत्साहके साथ संस्कृतका अध्ययन कर रहे हैं। उनको यह अभ्यास तीव्र गतिसे चल रहा है। महादेव फ्रेंच भाषाका अभ्यास कर रहा है। मैं थोड़ी-बहुत उर्दू [का अभ्यास] कर रहा हूँ। सरदार रद्दी कागजोंसे लिफाफे बनाते हैं। यह उनका विशेष धन्धा कहा जा सकता है। यह पत्र भी उन्हींके लिफाफेमें आयेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०३३) से।

३१७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३ अगस्त, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा १ तारीखका पत्र मिला। उम्मीद है छात्रावासमें होनेवाली भर्तीसे तू परेशान नहीं हो उठी होगी। लड़कियाँ अच्छी हों तो कोई तकलीफ नहीं होती। और यदि हमने अनासक्तिके पाठको अच्छी तरह हृदयंगम कर लिया हो तो भी कोई परेशानी नहीं होगी। तेरे शरीरके लिए दूसरे लोग तो बाह्य उपचार ही सुझा सकते हैं। अन्तरकी बात तो तू ही ज्यादा जान सकती है। मनोविज्ञानको जाननेवाले लोगोंपर मुझे अधिक विश्वास नहीं है। मनोवैज्ञानिक इस शास्त्रमें चाहे कितने भी पारंगत क्यों न हों फिर भी वे मनको कहाँ तक जान सकते हैं? तात्पर्य यह कि तेरी सेहतका मनके साथ जो सम्बन्ध है इसकी जानकारी तो स्वयं तुझे ही होनी चाहिए; और इसके लिए उपचार करना चाहिए। लेकिन इसी पत्रमें तू यह भी लिखती है कि भारी अथवा हलके कामका, नींदका अथवा उसके अभावका शरीरपर अवश्य असर होता है। इसलिए सच बात तो यह है कि आन्तरिक और बाह्य परिस्थितियोंका स्वास्थ्यके साथ अनिवार्य सम्बन्ध है। बाह्य साधनोंकी उपेक्षा

करके केवल मनसे कोई व्यक्ति अपने शरीरको नीरोग नही रख पाया है। इसलिए निद्रा, आराम और कामके सम्बन्धमें नारणदास जो कहे उसे सुनो और मनको टटोलो। चाहे जैसे भी हो, अपने शरीरको लोहेके समान बनाओ। मासिक-धर्मके दौरान गर्म पानीमे नही बैठना चाहिए, यह बात मुझे पहले ही लिख देनी चाहिए थी।

हृदयकी आवाज एक ऐसी वस्तु है जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। लेकिन कितनी ही बार हमे ऐसा महसूस होता है कि हमे अपने हृदयसे अमुक प्रेरणा हुई है। जिस समय मैंने इसे पहचानना सीखा वह समय मेरा नियमित रूपसे प्रार्थना करनेका समय कहा जा सकता है, अर्थात् १९०६ के आसपास। तू पूछती है, इसीसे याद करके यह लिखता हूँ। बाकी मुझे कभी ऐसी अनुभूति हुई हो कि 'अरे! आज तो कुछ नया अनुभव हुआ है,' सो ऐसा कुछ मेरे जीवनमे नहीं है। जैसे हमारे जाने बिना बाल बढते है, उसी तरह मेरे आध्यात्मिक जीवनमे भी वृद्धि हुई है, ऐसी मेरी मान्यता है।

नाम-स्मरणसे पापोंका परिष्कार इसी तरह होता है। शुद्ध भावसे नाम-स्मरण करनेवाले व्यक्तिके मनमे श्रद्धा अवश्य होती है। पापका परिष्कार अर्थात् आत्मशुद्धि। श्रद्धापूर्वक नाम जपनेवाला कभी नही थकता। तात्पर्य यह कि जो नाम-स्मरण जिह्वासे होता है वह अन्ततः हृदयमे बैठता है और उससे आत्मशुद्धि होती है। ऐसा अनुभव अपवाद रहित है। मनोवैज्ञानिक भी यह मानते है कि मनुष्य जैसा सोचता है वैसा हो जाता है। रामनाममे यही बात लागू होती है। नाम-स्मरण पर मेरी अटूट श्रद्धा है। नाम-स्मरणकी शोध करनेवाला व्यक्ति अनुभवी था और यह शोध अत्यन्त महत्त्वकी है, ऐसा मेरा दृढ़ अभिप्राय है। अनपढ़ व्यक्तिके लिए भी शुद्धिका द्वार खुला होना चाहिए। यह नाम-स्मरणसे सम्भव है। (देखो, गीता ९,२२; १०,१०) माला आदि तल्लीन होनेमे, गिनती करनेमे साधन रूप है।

विद्याध्ययन सेवाके लिए ही होता है। लेकिन सेवामे अपूर्व आनन्द है, अतः कह सकते है कि विद्याध्ययन आनन्दके लिए ही है। लेकिन आजतक किसी व्यक्तिको सेवा किये बिना केवल साहित्य विलाससे अखण्ड आनन्दकी अनुभूति होनेकी बात मै नही जानता।

कलापर किसी देशका अथवा व्यक्तिका एकाधिकार नही हो सकता। जिस चीजमे छिपाने लायक कोई बात है वह कला नही है।

प्रत्येक देशको अपने उद्योगोकी रक्षा करनेका अधिकार है और (यह)[1] उसका कर्तव्य है।

अनाश्रितको आश्रय प्रदान करना अहिंसकका धर्म है और अनाश्रित कौन है, यह तो प्रत्येककी परिस्थितियोको जाननेके बाद ही कहा जा सकता है।

जो बाहरसे खराब दीखता है वह अन्दरसे भी खराब ही होगा, ऐसा कोई नियम नही है। उर्दू पुस्तके बाहरसे खराब दिखाई देती है, लेकिन यह तो प्रकाशककी गरीबीका द्योतक है। लेकिन उसमे लिखे लेख क्या उत्तम नही हो सकते? कुछेक पुस्तकोके तो है। लेकिन इस तालिकाको तैयार करनेमे दिलचस्प अथवा नीरस होनेकी

बात कहाँ आती है? तालिका बनाई ही जानी चाहिए। इसलिए उसमें रस होना ही चाहिए, क्योंकि अपना कर्तव्य करनेमें रस है। और फिर यदि तू किसी समय उर्दू सीखनेका कष्ट करे तो तुझे उसमें आनन्द आने लगेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९७) से। सी० डब्ल्यू० ५७४८ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

३१८. तार: छगनलाल पी० मेहताको

४ अगस्त, १९३२

छगनलाल मेहता[1]
८, पगोडा रोड
रंगून

ईश्वरकी इच्छा बलवती है।[2] तुम और माताजी सान्त्वना धरो। आशा है तुम्हारे पिता व्यावसायिक ईमानदारी, उन्मुक्त आतिथ्य-सत्कार और महान उदारताकी जो परम्परा छोड़ गये हैं उन सबोंका तुम पूर्णतया निर्वाह करोगे। सरदार और महादेव भी मेरे साथ सम्वेदना भेजते हैं। जीवन भरके विश्वस्त मित्रके बिना मैं एकाकी अनुभव करता हूँ। मुझे सब चीजोंसे अवगत कराते रहना। तुम सबपर ईश्वरका वरद हस्त बना रहे।

गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १ तथा बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३), भाग २, पृष्ठ ४४१।

१. प्राणजीवनदास मेहताके ज्येष्ठ पुत्र।
२. डा० प्राणजीवन मेहताकी ३ अगस्तको मृत्यु हो गई थी।

३१९. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

४ अगस्त, १९३२

डा० मेहता नही रहे। मैंने जीवनभरका वफादार मित्र खो दिया है। लेकिन मरनेके बाद उनकी उपस्थितिको मैं और ज्यादा तीव्रतासे अनुभव करता हूँ, क्योंकि मै उनके अनेक गुणोंकी यादको अब और भी बहुमूल्य मानता हूँ। यह निधि अब एक पवित्र धरोहर बन गई है। साथमे मगनलालके लिए एक पत्र संलग्न कर रहा हूँ। मै तुमसे अपेक्षा करता हूँ कि तुम उसे उसके पिताका योग्य पुत्र बनाओगे। मैंने उसे सलाह दी है कि वह चिन्ता न करे और अपनी पढ़ाई जारी रखे। इधर हालमें हालाँकि डा० मेहता आर्थिक दृष्टिसे बरबाद हो गये थे, लेकिन मै आशा करता हूँ कि अपनी स्वभावगत सावधानी बरतते हुए उन्होंने मगनलालके लिए उपयुक्त आर्थिक प्रबन्ध कर दिया होगा। मगनलालको मालूम होगा। मुझे खेद है कि इस वक्त उनके परिवारके लोगोके पास मै नही हूँ। लेकिन मेरी नही, ईश्वरकी इच्छा ही पूरी हो, आज और हमेशा।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३२०. पत्र : एस्थर मेननको[1]

४ अगस्त, १९३२

बन्धुत्वकी स्थापनाका विचार तो फिलहाल एक दूरकी साध है। मेरी दृष्टिमें तो यह सच्ची आध्यात्मिकताकी कसौटी है। जबतक हम सभी प्राणियोके साथ एक जीवन्त समानता नही अनुभव करते तबतक हमारी प्रार्थनाएँ, उपवास और व्रतादि बिल्कुल व्यर्थ है। लेकिन अभी हृदयसे अनुभव करनेकी बात तो दूर रही, हमने बौद्धिक स्तरपर भी इस बातको नही स्वीकारा है। हम तो आज भी चुनावकी वृत्ति रखते है। चुने हुए लोगोका भ्रातृ-समाज एक स्वार्थपूर्ण साझेदारी है। बन्धुत्वमे किसी प्रकारके प्रतिफल या प्रतिक्रियाकी अपेक्षा या आवश्यकता नही होती। यदि ऐसा होता तो हम जिन स्त्री-पुरुषोको दुष्ट मानते है उन लोगोसे प्रेम नही कर पाते। कलह और ईर्ष्याके वातावरणमे बन्धुत्वकी भावना रख सकना अत्यन्त कठिन काम है। इसके बावजूद सच्चा धर्म हमसे इसीको माँग करता है। अत. दूसरे लोग क्या

१. एस्थर मेननने पूछा था : "बापू, कगावा, अल्बर्ट स्वीट्जर और अन्य लोगों द्वारा उदाहरण प्रस्तुत किये जानेके बावजूद बन्धुत्वकी भावना राष्ट्रोंके बीच घर क्यों नहीं कर पाई है?" (द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१)

करते हैं इसको न देख कर हममें से प्रत्येकको इस सत्यकी प्रतीति करनेका प्रयत्न करना है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३२१. पत्र: मणिलाल आर० झवेरीको

४ अगस्त, १९३२

चि० मणिलाल[1],

डाक्टरका स्वर्गवास होनेका तार मुझे अभी-अभी मिला। मुझे रोज तार आया करते थे। तुम्हें भी मिले होगे। पता नही तुम्हें रंगून जाना होगा अथवा नही। छगनलालको मैंने तार दिया ही है। डाक्टरका नाम स्थायी बना रहे, वैसा काम करनेमें तुम कितना योगदान दे सकते हो सो बताना। डाक्टर कोई वसीयत छोड़ गये है या नही, सो मै नही जानता। रंगूनमें फिलहाल छगनलालके पास कौन-कौन लोग हैं, यह तुम्हे मालूम हो तो लिखना। ऐसेमे मगनका क्या होगा? यह सुन्दर घोंसला अब बिखर जानेवाला है। तुम सबको डाक्टरका वियोग अवश्य खलेगा। लेकिन मेरी स्थिति विचित्र है। इस संसारमे डाक्टरसे बढ़कर मेरा अन्य कोई मित्र नही था। मेरे लिए तो वे जीवित ही है। लेकिन मै यहाँ बैठे-बैठे उनके नीड़को अविच्छिन्न रखनेमे लगभग कोई भाग नही ले सकता, यह बात मेरे लिए अत्यन्त कष्टदायक है। तुमसे जो-कुछ हो सके सो तुम करना। मैं छगनलालके साथ निरन्तर पत्र-व्यवहार करता रहूँगा। तुम मुझे अभी नियमपूर्वक पत्र लिखते रहना। नानालाल[2] इस समय कहाँ हैं? साथका पत्र[3] उन्हे पहुँचा देना। उम्मीद है, तुम दोनो कुशलतापूर्वक होगे। तिलक कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

खीमचन्दका पत्र[4] भी पढ़ जाना और उसे पहुँचा देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०४५) से; सौजन्य: धीरूभाई झवेरी। **महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १** से भी।

१. रेवाशंकर जगजीवन झवेरी (प्राणजीवन मेहताके भाई) के पुत्र।

२. नानालाल के० जसाणी, डा० प्राणजीवन मेहताके व्यापार-प्रबन्धक और साझेदार।

३. देखिए अगला शीर्षक।

४. पत्र उपलब्ध नहीं है।

३२२. पत्र : नानालाल के० जसाणीको

४ अगस्त, १९३२

डाक्टरका निधन होनेसे मेरी स्थिति तुम सबसे ज्यादा विषम हो गई है। मेरा सबसे पुराना साथी, मित्र अथवा जो भी कहे वह चला जाये और मैं पिंजरेमें पड़ा उसके पीछे कुछ न कर सकूं, यह बात मुझे कचोटती है। लेकिन इसके पीछे भी ईश्वरका कोई उद्देश्य है; कृपा भी हो सकती है। डाक्टरके नीड़को आबाद रखनेकी तुममें कितनी शक्ति है, यह मैं नहीं जानता। जितनी हो, उसका उपयोग करना। अब तो हमें यह देखना है कि डाक्टरका नाम निष्कलंक रहे और उनके गुण उनके लड़कोंमें आयें।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३२३. पत्र : बबलभाई मेहताको

४ अगस्त, १९३२

बबलभाई,

तुम्हारा पत्र मिला।[1] मेरा अनुभव तो यह कहता है कि समस्त संसार ठीक ढंगसे कैसे चले इसका विचार करनेसे बेहतर तो यह है कि हम स्वयं ठीक ढंगसे कैसे चल सकते हैं, इसका विचार किया जाये। संसार सरल गतिसे चलता है कि उल्टा, सो हम नहीं जानते। लेकिन यदि हम सीधा चलते हैं तो अन्य लोग भी हमें सीधे चलते जान पड़ेंगे अथवा सीधा चलनेका मार्ग खोज सकेंगे।

आत्मानुभूति करना अर्थात् शरीरकी सुध खो देना अर्थात् शून्यवत हो जाना। जो शून्यवत हो गया है उसने आत्म-साक्षात्कार कर ही लिया है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४४९)से।

१. इस पत्रमें बबलभाई मेहताने लिखा था: "संसार तो हमेशा जैसा है वैसा ही रहा है; पर सुधरेगा कब?" (*द डायरी ऑफ महादेव देसाई*, खण्ड-१)

३२४. एक पत्र[1]

४ अगस्त, १९३२

चि० . . .,

तू पितृविहीन हो गया लेकिन हम सबके पिताके पिता जीवित है, यह याद रखना। डाक्टर तो दुःखसे मुक्त हो गये। मै कामना करता हूँ कि तू उनके समान सज्जन और बुद्धिमान बने। उनके समान बुद्धि और विद्वत्ता तुझमें नही आ सकती, लेकिन उन-जैसी भलमनसाहत, उदारता, सचाई आदि तो तुझमें अवश्य आ सकती है और यही गुण उपयोगी भी होते है। डाक्टरकी जो लोग वन्दना करते है सो उनकी विद्वत्ताके लिए नही, अपितु उनके गुणोके कारण करते है। तू अधीर मत होना। यदि तू रंगून नही गया है तो जानेकी कोई जरूरत नही। अपने हिस्सेके सम्बन्धमें चिन्ता नही करना। मै छगनलालको लिख रहा हूँ।[2] उसपर विश्वास करना। अविश्वास करनसे तेरा कुछ बननेवाला नही है। मुझे लिखते रहना। तू सारी बात समझ गया है, ऐसा मै माने लेता हूँ। ईश्वर तेरी रक्षा करे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
भावनगर समाचार, १७-१२-१९५५

३२५. पत्र : छगनलाल पी० मेहताको

४ अगस्त, १९३२

तुमने डाक्टरका स्वर्गवास होनेके महत्त्वको अच्छी तरह समझ लिया है, यह बात अब भविष्यके तुम्हारे आचरणसे स्पष्ट दिखाई देनी चाहिए। डाक्टरके अनेक गुण ही उनकी सच्ची वसीयत हैं। वही तुम्हारी विरासत है। तुम ऐसा कुछ भी नही करो जिससे छोटे भाइयोंको तनिक भी क्लेश हो। . . .[3] मेरे जीवन-भरका साथी चला गया और मै अपंग हूँ, असहाय हूँ, यह बात मुझे कचोटती है। अन्यथा इस समय मै तुम्हारे निकट खडा होता और कदाचित् डाक्टरका सिर मेरी गोदमे होता और उनका अन्तिम श्वास छूटता। लेकिन ईश्वर हमारा मनचाहा कभी पूरा

१. यह पत्र सम्भवतः डा० प्राणजीवन मेहताके पुत्र रतिलाल मेहताको लिखा गया था।
२. देखिए अगला शीर्षक।
३. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द छूटे हुए है।

नही होने देता। इसलिए पत्र-व्यवहार द्वारा जो-कुछ कर सकता हूँ, उतना भर करना मेरे वशकी बात रही।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१

३२६. पत्र : नारणदास गांधीको

[४ अगस्त, १९३२][1]

चि० नारणदास,

इसके साथ रतुभाईको लिखा पत्र[2] है। लगता है, यहाँसे भेजी जानेवाली डाक अब नियमित हो गई है। यह ऐन मौकेपर हुई है। अब जरूरत जान पड़े और तुम्हें मुझे रोज लिखना पडे तो रोज लिखना। तुम जो जानकारी प्राप्त कर सको सो करना।

डाक्टरका नवम्बरमे वहाँ आनेका इरादा था, लेकिन भगवान कब किसीकी इच्छा पूरी होने देता है।

बापू

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो-९ : श्री नारणदास गांधीने, भाग-१। सी० डब्ल्यू० ८२४४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३२७. पत्र : रतिलाल सेठको

४ अगस्त, १९३२

भाई रतिलाल[3],

डाक्टरका वियोग सबसे ज्यादा कदाचित् मुझे खलेगा, क्योंकि डाक्टरके कार्यको बनाये रखनेमें मैं कोई भी भाग नही ले सकता। डाक्टरके मनमे छगनलालके कामको लेकर आशंका थी। इस भयको मिथ्या सिद्ध करनेमे कदाचित् तुम भाग ले सकते हो। लीलावती[4] का छगनलाल पर पूरा अधिकार है, यह बात मैंने तब देखी थी जब मैं रंगूनमे था और यह मुझे अच्छी लगी थी। इस प्रभावका लीलावती सदुपयोग करती थी अथवा दुरुपयोग, इसका मैं कोई निश्चय नही कर सका था। मुझे सन्देह तो था। मैंने उसे चेतावनी भी दी थी। उसने मुझे अभयदान भी दिया था।

१ और २. देखिए अगला शीर्षक।

३. छगनलाल मेहताके ससुर।

४. छगनलाल मेहताकी पत्नी।

तथापि डाक्टरने मुझे यहाँ कई पत्र लिखे थे। उनमे उन्होंने उसके बारेमें बहुत निराशा व्यक्त की थी। रंगूनमे तो डाक्टर मेरे सामने रोये भी थे। लीलावती पर तुम्हारा कितना नियन्त्रण है सो मै नही जानता। डाक्टरका भय कहाँ तक सत्य था यह भी मै नही जानता। डाक्टरका नीड़ बिखरे नही, सब भाई मिलकर रहें, आपसमें झगडा न करें और व्यापार बना रहे, इतना सब करनेमें तुम जो योगदान दे सकते हो उसमे पीछे नही हटोगे, ऐसी मुझे तुमसे आशा है।

मुझे दिल खोलकर पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१६७) से। सी० डब्ल्यू० ४६६१ से भी; सौजन्य: चम्पा आर० मेहता।

३२८. तार: नारणदास गांधीको

५ अगस्त, १९३२

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

रतिलाल और चम्पाके साथ मेरी सम्वेदना है। उनको मेरी जोरदार सलाह है कि वे रंगून न जाये। मै रंगूनके साथ बराबर सम्पर्क में हूँ।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ८२४३) से; सौजन्य: नारणदास गाधी

३२९. पत्र: नेली सेनगुप्तको

५ अगस्त, १९३२

यह तुम्हारे पति[1] की बीमारीके बारेमे हम क्या सुन रहे है? कृपया मुझे सही हाल भेजो और उन्हें हमारा अभिवादन भेजना। तुम जानती ही हो कि सरदार और महादेव देसाई यहाँ मेरे साथी हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-८-१९३२

१. जे० एम० सेन-गुप्त।

३३०. पत्र : हरदयाल नागको

५ अगस्त, १९३२

प्रिय एच० डी० बाबू,

आपका पत्र पाकर हम सबोंको बहुत आनन्द हुआ। आपकी यह बात पढ़कर मुझे आपसे ईर्ष्या-सी होती है कि इस पकी हुई उम्र[1] मे आपने तकली चलाना सीख लिया है। यह जानकर बहुत खुशी हुई कि आपका वजन १६ पौंड बढ़ गया है। ईश्वर आपको बहुत वर्षों तक सेवा करनेका मौका दे। हम लोग अकसर आपकी आश्चर्यजनक शक्ति-स्फूर्तिके बारेमें चर्चा करते हैं।

हम सबोंके अभिवादन सहित।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३३१. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

५ अगस्त, १९३२

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। लगता है कि मैं अब पत्र लिख सकूंगा।

काकूने क्या किया था?

रमीबहनसे कहना कि वह मुझे पत्र लिखे। उसे क्या रोग है? रमीबहनको समझना चाहिए कि तुम परिवारकी व्यक्तिगत रूपसे सेवा करनेके योग्य नहीं रह गई हो। इतना त्याग उसे करना ही चाहिए। और फिर रमीबहन तो ज्ञानी है। उसे तो ईश्वरीय सहायताकी जरूरत होनी चाहिए। यह तो वह जहाँ भी जायेगी, मिलेगी।

काकूके बारेमें मैं तजवीज कर रहा हूँ। उसका मुझे एक पत्र आया था। हमें उसकी चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नहीं। हमसे जो-कुछ बन सके तो करना चाहिए। तुम मुझे पत्र तो नियमित रूपसे लिखती रहना।

बापू

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने। सी० डब्ल्यू० ८७९२ से भी; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१. पचासी वर्ष।

३३२. डा० प्राणजीवनदास मेहता[1]

७ अगस्त, १९३२

यदि मै आश्रममें होता तो इस पुण्यात्माके बारेमें अवश्य कुछ कहता। डाक्टर मेहता मेरे सबसे पुराने साथी थे। मै जब पहली बार इंग्लैंड गया[2] तब मेरी उनके साथ मित्रता हुई थी जो दिन-प्रतिदिन परिपक्व होती चली गई। इंग्लैंडमें सबसे पहले मेरी मुलाकात उन्हीसे हुई और तभीसे वह मेरा पथ-प्रदर्शन करने लगे। लेकिन यह तो 'आत्मकथा'[3] मे दिया है। यहाँ मै अपने निकट सम्बन्धके विषयमे नही लिखना चाहता। डाक्टरमें ऐसे कौनसे गुण थे जिनके लिए मै उन्हें पुण्यात्मा मानता हूँ, उन गुणोको जान लेने पर हम उनका अनुकरण कर सकें और वे जो कर सके सो हम भी कर सकते है, ऐसा मनमे विश्वास और श्रद्धा रख सकें।

डाक्टरको ग्रान्ट मेडिकल कालेजसे स्वर्ण-पदक मिला था। बादमे उन्होने इंग्लैंडमें अनेक परीक्षाएँ पास की और वे बैरिस्टर बने। लेकिन यह सब मै छोड़े देता हूँ। सब कोई विद्वान नही बन सकते। उसके लिए बाह्य सयोग होने चाहिए। व्यक्ति अपने अक्षर-ज्ञानके लिए नही अपितु अपने गुणोके कारण पूजे जाते है। डाक्टरमें मैंने दृढ़ता, वीरता, उदारता, पवित्रता, सत्यप्रियता, अहिंसा, सादगी आदि गुणोको उत्तरोत्तर बढते देखा। अमुक निश्चय करनेके बाद वे अपने निश्चयसे कभी पीछे नही हटते थे। इसीसे उनके वचन पर आसपासके लोगोमे विश्वास था। डाक्टर सदैव निर्भय थे। इंग्लैंडसे लौटने पर उन्होने देखा कि उनके स्वाभिमानकी रक्षा नही हो सकती। इसीसे उन्होंने अपना वतन मोरवी हमेशाके लिए छोड़ दिया। उनकी उदारताकी कोई सीमा ही न थी। उनका घर धर्मशाला था। कोई भी योग्य गरीब व्यक्ति उनके घरसे खाली हाथ नही लौटता था। उन्होंने अनेक लोगोंका निर्वाह किया था। डाक्टर द्वारा की जानेवाली सहायतामे कोई दम्भ न था। अपनी उदारताका डाक्टरने कभी ढिंढोरा नही पीटा। उनकी इस उदारतामें न्याति-जातिका अथवा प्रान्तका कोई बन्धन न था। सब प्रान्तके लोगोको, समस्त जातिके लोगोको और समस्त धर्मावलम्बियोको उनकी इस उदारताका लाभ मिला था। डाक्टरके पास विपुल धन था, लेकिन उन्हें इसका गर्व न था। डाक्टरने अपने उपभोगके लिए इस धनसे बहुत कम खर्च किया था। और यह कहा जा सकता है कि अपने विशाल बँगलेमे स्वय अपने लिए उन्होने छोटीसे-छोटी जगह रख रखी थी। अपने सुखोपभोगके लिए उन्होंने कोई पैसा खर्च किया हो, इसकी मुझे याद नही आती। डाक्टरने अत्यन्त दृढताके साथ एकपत्नीव्रत

१. यह लेख "पत्र: नारणदास गांधीको" २/७-८-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

२. अक्टूबर, १८८८ में।

३. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ३९-४०।

का पालन किया था, ऐसी मेरी मान्यता है। अनेक वर्षोंसे उन्हें ब्रह्मचर्य बहुत प्रिय था। अपने प्रारम्भिक जीवनमें डाक्टरको कदाचित् ही पुस्तकें पढ़नेका शौक था। लेकिन बादमे यह शौक बढ़ गया था। मुझे वे यहाँ जो पत्र लिखा करते थे उनमें अपनी पढ़ी हुई पुस्तकोका उल्लेख किया करते थे। वे सब धार्मिक पुस्तकें ही थी। डाक्टरने अपने व्यापारमे और वकालतमें, जहाँतक मै जानता हूँ, सत्यव्रतका पालन ही किया था। मै यह जानता हूँ कि असत्य और दंभके प्रति उन्हे बड़ी घृणा थी। उनकी अहिंसा उनके चेहरेसे लक्षित होती थी, उनकी आँखोमें उसे पढ़ा जा सकता था और उसमें दिन-ब-दिन वृद्धि होती जाती थी। ऐसे तो व्यक्तिकी आत्मा कभी नही मरती, लेकिन डाक्टर जैसे व्यक्ति तो अपने गुणोंसे विशेष रूपसे अमर हो जाते हैं। आश्रमके साथ उनका निकट सम्पर्क आश्रमकी धर्म-वृत्तिका पोषक था। हमें चाहिए कि हम इस पुण्यात्माके जीवनसे यथाशक्ति शिक्षा ग्रहण करें।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३३३. पत्र : नारणदास गांधीको

२/७ अगस्त, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक आज मिली है। नर्मदा बच जाये तो समझना कसाईके घरसे गाय बच गई। लीलाधर[1]की जो मदद की जा सकती है सो करना। उससे प्रेम दर्शानेसे कदाचित् वह व्यवस्थित-चित्त भी हो जाये। वह आश्रमसे बाहर है, ऐसा उसे कभी भी महसूस न होने दे। तथापि वह स्वतन्त्र है और हम भी स्वतन्त्र रहे। लडकियोके लिए उसे कुछ जिम्मेदारी लेनी ही चाहिए। इसमें उसीका भला है। उसको लिखा मेरा पत्र[2] पढ़ लेना।

जयसुखलाल[3]की लड़कियोके बारेमे जो करना उचित जान पड़े सो करना। यदि बड़ी लड़की अपनी इच्छासे वहाँ न रहना चाहे तो उसकी देखभाल करना मुश्किल होगा। इन्दुका पत्र तुमने पढा होगा। उसको मैंने उत्तरमे जो पत्र लिखा है[4] वह पढ़ना। मणिके बारेमें डाक्टर क्या कहता है? कुसुमके फेफडे यदि अच्छे हो गये हो तो इस बातका ध्यान रखना कि अब वह अधिक परिश्रम करके उन्हें बिगाड़े नही। इस ऋतुमे उसे अवश्य लाभ होना चाहिए। लेकिन उसकी दो शर्ते है – बहुत

१. वाडजके एक दूकानदार। जब उनकी पत्नी बीमार थीं तब उनका परिवार कुछ समयके लिए आश्रममें ठहरा था।

२. उपलब्ध नहीं है।

३. जयसुखलाल गांधी।

४. उपलब्ध नहीं है।

परिश्रम न करे, और दूध-घी नियमित रूपसे खाये। विद्यापीठके किसी भी व्यक्तिको जहाँ तक बन सके आश्रय देना। देवदासके बारेमें मुझे भी समाचार मिला है, उसी तरह डा० मेहताके सम्बन्धमें भी। डा० मेहताकी बीमारी इस बार सम्भवतः प्राणलेवा सिद्ध होगी। डा० मेहताने कैसी वसीयत लिखी होगी, यह मैं नहीं जानता। छगनलाल व लीलावतीकी ओरसे उन्हें काफी दुःख पहुँचा है, यह बात तो तुमने डाक्टरके पत्रोंसे जान ली होगी। रतुभाईकी स्थिति फिलहाल कैसी है? उन्हें फुरसत मिलती है या नहीं, यह तो तुम अच्छी तरहसे जानते होंगे। रतुभाई यदि वहाँ पहुँच जायें और इस बातका ध्यान रखें कि छगनलाल तथा लीलावतीसे कोई उलटा काम न हो तो बहुत ही अच्छा हो। रतिलाल अवश्य जाना चाहेगा। यदि वह जाये तो उसे रोकनेका प्रयत्न करना मैं व्यर्थ समझता हूँ। लेकिन इसके बारेमें तो तुम ही विचार कर सकते हो। नानालाल आजकल कहाँ हैं? हरिलालके बारेमें पढ़कर मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता। उसका पूरा जीवन कदाचित् ऐसे ही बीतेगा। रामजीको लिखा मेरा पत्र[1] पढ़ जाना। उसे हम जहाँ तक निभा सकते हैं वहाँ तक निभाना हमारा धर्म है। अन्त्यजोंके प्रति [किये गये अत्याचारोंका] यह अपना प्रायश्चित्त है। रामजी अथवा दूधाभाईके समान अच्छे व्यक्ति हमें शायद ही मिल सकते हैं।

४ अगस्त, १९३२

प्रार्थनाके जिस स्थल पर बाढ़ने आक्रमण किया है उसके बारेमें यदि वहाँके इंजीनियर श्री मलिकसे बात करोगे तो वह तुम्हारी मदद करेंगे। उन्हें कदाचित् तुम जानते होंगे। वे पहले आश्रममें आया करते थे। भाई मावलकरसे[2] कहोगे तो वह उन्हें भेजेंगे। बाढ़का भय पहलेसे ही था। इसीसे बुनाई-घर और हृदयकुंज जितनी दूर बनाये जा सकते थे उतनी दूर बनाये गये थे। यह कार्य कदाचित् बरसातमें तो हो भी नहीं सकता, लेकिन जैसा इंजीनियर कहे वैसा करना ही ठीक होगा। बंगालमें तो ऐसा हर साल होता है। वहाँकी नदियोंमें जमीनको चाट जानेकी बड़ी खासियत है।

७ अगस्त, १९३२

डाक्टरके बारेमें तुम्हारा तार और पत्र दोनों समयसे मिले। रंगूनसे तो मुझे नियमित रूपसे मिलते रहते थे। जिस दिन तुम्हारा तार मिला उसी दिन[3] मैंने तुम्हें, रतिलालको और चम्पा तथा रतुभाईको पत्र लिखे थे जो तुम्हें तुरन्त मिल गये होंगे। मेरा तार[4] भी मिला होगा। मृत्युके तारके बाद रंगूनसे अभी और कोई

१. उपलब्ध नहीं है।

२. गणेश वासुदेव मावलंकर।

३. ४-८-१९३२ को।

४. देखिए "तार: नारणदास गांधीको", ५-८-१९३२।

तार नही आया है जिससे चिन्ता होती है। आये, या न आये रतिलाल और चम्पाका हित न जानेमें ही दीखता है। उनके नसीबमे जो होगा सो होगा। मगनलालके बारेमे भी मेरी यही सलाह है।

मेरी खुराकमें पिछले आठ दिनोसे थोड़ा-सा परिवर्तन हो गया है। दोनो समय रोटी लेता था इससे कुछ कब्जकी शिकायत होने लगी थी। इसलिए अब एक समय चार केले लेता हूँ और साँझको केले न लेकर, पहले जैसे हरी सब्जियाँ लिया करता था वैसे लेता हूँ। फिलहाल तो मुख्यतः ग्वार [की फली] और शलगम लेता हूँ। उनमे दूध मिलाकर खाता हूँ। साथमे मोसंबी अथवा नारंगी तो होती ही है। सवेरे भी होती है। इससे कब्जमे थोड़ा लाभ हुआ है। अभी देख रहा हूँ। अब जो प्रयोग किये जायेंगे उनमे अधिकांशतः दूध तो रहेगा ही। इस बार मेरा वजन १०५ पौंड हो गया है। सब तरहसे तबीयत अच्छी ही कही जा सकती है।

कुल ३७ पत्र हैं। इनमे ९ पत्र डोरीसे बँधे हुए हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२४२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३३४. पत्र : मीराबहनको

७ अगस्त, १९३२

चि० मीरा,

मुझे दो पोस्टकार्डों और एक पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनी है। वल्लभभाईके बनाये लिफाफोंका स्टॉक निरन्तर बढ़ रहा है, और वह उनमें से सबसे अच्छे लिफाफो का चुनाव करता है। अतः यदि तुम उसकी कलाकी सराहना करो तो इसमे आश्चर्य की बात नही है। यह ऐसी कला है जो रद्दीको सम्पदामें बदल देती है।

मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि राजेन्द्र बाबू तुम्हारे साथ हैं। अगर मैं उन्हे न लिख पाऊँ तो उन्हे मेरा, वल्लभभाई और महादेवका भी प्रेम-भरा अभिवादन कहना। मुझे सन्देह नही है कि जहाँ सम्भव है वहाँ तुम हिन्दीमे बोलती हो।

अभी उस दिन तुमने मुझसे पूछा था कि यदि और जब तुम्हे समय हो तबके लिए तुम्हे कुछ किताबोंके नाम सुझाऊँ।[1] बाबू शिवप्रसादके पास चुनी हुई पुस्तकोका बड़ा अच्छा संग्रह है। वे और राजेन्द्र बाबू तुम्हे चुनाव करनेमे मदद दे सकते हैं। तुम्हे चूँकि 'रामायण' पसन्द है इसलिए शायद तुम्हे 'महाभारत' भी

१. मीराबहनने स्पष्ट करते हुए लिखा है: "यदि और जब मैं जेल जाऊँ तब पढ़नेके लिए।"

अच्छी लगेगी। यह काम कठिन है, लेकिन करने योग्य है। फिर 'वेद' और 'उपनिषद्' तो है ही। तुम वेदोंके चुने हुए अंश और सभी मुख्य उपनिषद् पढ सकती हो। इस अध्ययनसे तुम्हे हिन्दू विचारधाराका परिचय मिलेगा जो मूल्यवान होगा। हिन्दू-धर्मके प्रति तुम्हारा जो सहज प्रेम है उसे तब प्रबुद्ध मस्तिष्कका आधार मिल जायेगा। यह भी होसकता है कि तुमने जो धारणाएँ बनाई है उनमें से कुछको तुम्हे सुधारना पडे। मै चाहूँगा कि इस ज्ञानको संतुलित करनेके लिए तुम 'कुरान' और अमीर अली रचित 'स्पिरिट ऑफ इस्लाम' भी पढ़ लो। पिकथॉल द्वारा किया गया 'कुरान'का अनुवाद शायद सबसे अच्छा है। मै ठीक कह नही सकता लेकिन यदि वह नही तो डा० मुहम्मद अली द्वारा किया गया अनुवाद। मैंने अब तुम्हें पूरे एक वर्ष तक पढ़नेका अच्छा ठोस मसाला दे दिया है।

मै देवदासके बारेमे कुछ नही कह रहा हूँ, क्योंकि मै उसे अलगसे लिख रहा हूँ। बीमारीके बाद स्वास्थ्यलाभ करते हुए आदमीके लिए कड़ी चाय या काफी जहर है। चीनी ढगसे बनाई गई चाय शायद नुकसानदेह नही होगी। तुम जानती ही हो कि यह कैसे बनाई जाती है, कि नही ?

तुमने एस० सहाय और राजेन्द्र बाबूके जिन पत्रोका जिक्र किया है वे मुझे बिल्कुल नही मिले। वे वही रह गये होगे। फिलहाल कमसे-कम मेरी आनेवाली और जानेवाली दोनों डाके नियमित है।

पिछले हफ्तेसे मै चपातीकी जगह प्रतिदिन चार केले लेता हूँ। ऐसा मैंने कब्जसे बचनेके लिए किया, जो लगता था कि होने जा रहा है। म बेहतर महसूस करता हूँ। बेशक परिणाम यह है कि भोजनमे अब नमक बिल्कुल नही है। मै संतरे ले रहा हूँ। उसके साथ नमक नही लेता। मै एक सब्जी भी ले रहा हूँ। शामको इसीमे दूध डाल लेता हूँ।

हम सबोकी ओरसे प्रेम सहित।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३५)से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७०१ से भी।

३३५. पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको

७ अगस्त, १९३२

चि० मथुरादास,

तुम्हारा पत्र मिला। प्याला सम्बन्धी तुम्हारा पत्र मैंने सँभालकर रख लिया है।[1] फिलहाल तो हम तीनों व्यक्ति महीन सूत कातनेमें लगे हुए हैं। महादेव लगभग ८० अंक तक पहुँच गया है। सरदार और मैं तीस-चालीसके बीचमें हैं। हम अपनी सीमा तक पहुँच जायें तब प्यालेका उपयोग करके हम तुम्हें उसके परिणाम बतायेंगे।

याज्ञिक सिलाईके विषयमें इतना विचार कर लेना चाहिए: (१) कौनसी किस्म के कपड़े झट सिये जा सकते हैं; (२) कौन किस्मके कपड़ेकी सबसे ज्यादा खपत है; (३) स्त्रियाँ [सिलाईका] कौन-सा काम ज्यादा कर सकती हैं और पुरुष क्या कर सकते हैं; (४) इस आयोजनमें कढ़ाईका समावेश हो सकता है या नहीं; (५) इससे धनवान लोगोंकी आवश्यकताओंको पूरा करनेका प्रयत्न किया जायेगा अथवा मात्र गरीबोंकी; (६) मशीनकी सिलाई और हाथकी सिलाईका क्षेत्र, आदि-आदि। यह सारा विषय सुन्दर और उपयोगी है। उसमें खूब ध्यान देनेकी जरूरत है। लेकिन इस समय यदि तुम्हारा ध्यान कताई पर केन्द्रित है तो सिलाईको गौण स्थान देना। इनसब बातों पर फुरसतसे विचार कर जाना और अपने-आप प्रयोग करके देखना। इस दिशामें मीठूबहन और पेरीन बहनने बहुत बड़ा काम किया है। लेकिन तुम्हारी कल्पना इससे कहीं विशाल है, सो मैं जानता हूँ। यदि तुम्हारी कल्पनाको पूरी तरहसे व्यवहारमें लाया जाये और लोग उसे स्वीकार कर लें तो खादीके साथ कोई स्पर्धा कर ही नहीं सकता। लेकिन इस समय तुम्हारा धर्म सूतका सुधार करना है। इसमें सिलाईका जितना समावेश किया जा सके उतना समय ही इसे देना। एक कार्यमें एकाग्र होना मोक्षदायी है, बहुत सारे कामोंमें हाथ डालना स्वच्छन्दताका परिचायक है।

मोतीबहनके बारेमें सबसे पहले तो तुम्हे अपने मनको टटोलना चाहिए। क्या तुम्हें अभी विषयोपभोग करना है? और यदि विषयोपभोग न करनेका दृढ़ निश्चय ही कर लिया हो तो तुम्हे उसे मित्रों और मोतीबहनको बता देना चाहिए। इससे मोतीबहनको आघात तो अवश्य पहुँचेगा, लेकिन तुम्हारे दृढ़ निश्चयका उस पर बिजलीका-सा असर होगा। दृढ़तासे तात्पर्य यह है कि मोतीबहन पागल हो जाये अथवा मृत्युको प्राप्त हो जाये तब भी तुम्हें उसे सहन करना होगा। इसीमें तुम दोनोंका कल्याण है, यह बात भी तुम्हें स्पष्ट रूपसे प्रतीत होनी चाहिए। लेकिन तुम यदि इस हदतक अभी नहीं पहुँच पाये हो तो मोतीबहनसे इस विषय पर कोई

१. देखिए "पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको", ६-७-१९३२।

चर्चा न करना। अन्य लोग जिस प्रकार अपनी पत्नीके साथ रहते है तुम भी उसी तरह चुपचाप रहना और उस तरह संयमका जितना पालन किया जा सके उतना करना। ऐसा करोगे तो इसमें किसीको तुम्हारी निन्दा करनेका कोई अधिकार नही है। सब कोई अपनी शक्तिके अनुरूप ही आगे बढ़ सकते है। बीचमे लटके रहना, स्वयं अपनेको, अपने लोगोंको और संसारको धोखा देना तो निन्दनीय ही है। इस स्थितिसे बच निकलना; बस फिर कल्याण ही है। विचारोके भँवरमें अधिक न फँसना। विचारोंमे तो तुमने अनेक वर्ष गँवाये है। तुम्हे एकदम कोई निश्चय कर लेना चाहिए; बस इसी प्रकार तुम्हे शान्तिका लाभ प्राप्त होने लगेगा।

"व्यवसायात्मिक बुद्धिरेकेह कुरुनदन"[1] का अर्थ यही है। इस श्लोक पर और इसके बादके श्लोकों पर विचार कर जाना, इससे इस पत्र पर अधिक प्रकाश पडेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७५६) से।

३३६. पत्र : छगनलाल जोशीको

७ अगस्त, १९३२

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे नाम लिखा मेरा पत्र कैम्प[2] मे गया। तुम्हारे पाँवमे क्या हुआ है? इस बार रामदास और हरगोविन्द[3] जब मिले थे[4] तब उन्होने बताया था। बाहर रहकर अपनी सेहतको बिगाड़ना नही।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५०५) से।

१. गीता, २, ४१।
२. यरवडा सेन्ट्रल जेल कैम्प, जहाँ सत्याग्रही कैदियोंको रखा जाता था।
३. हरगोविन्द पण्ड्या।
४. ५ अगस्त, १९३२ को (द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१)।

३३७. पत्र : वनमाला एन० परीखको

७ अगस्त, १९३२

चि० वनमाला,

तेरा पत्र मिला। तेरा बायाँ हाथ जितना काम करता है उतना ही दायें हाथको भी करना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७७९) से। सी० डब्ल्यू० ३००२ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

३३८. पत्र : निर्मला एच० देसाईको

७ अगस्त, १९३२

चि० निर्मला,

तेरे बड़े भाई[1]की इच्छा है कि उन्हे राखीके दिन [राखी][2] न भेजकर तू जनेऊ भेजे। तेरा और आनन्दीका, दोनोंमे से जिसका सूत महीन हो—तकलीका कता हो तो ऐन बेहतर—सो पण्डितजीसे पूछकर वे [पण्डितजी] जितना माँगे उतना देना, और उनसे जनेऊ बनवाकर यदि तू नारणदासको देगी तो वह भेज देगा।

बड़े भाईका पत्र तुझे मिला होगा। इसके बाद उसने तेरी माँको भी पत्र लिखा है। ये दोनो पत्र उन्हे दे देना। माँकी पूरी कसौटी हुई, इससे तू डर तो नही गई न? अन्य लोग जो संकट सहन करते हैं उतने ही यदि हमे भी सहन करने पड़ें तो इसे हम अपना सौभाग्य ही मानेंगे न?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४७६) से।

१. महादेव देसाई।
२. मूलमें शब्द अस्पष्ट है।

३३९. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

७ अगस्त, १९३२

बालको और बालाओ,

एकादशीकी कथा रसमय है। लेकिन हमारी एकादशी इससे भिन्न है।

हमारी एकादशी तो स्वेच्छापूर्वक पालन किया जानेवाला व्रत है। उसमें मन और शरीर एक साथ काम करते हैं और उसका हेतु आत्मशुद्धि है। बीमार व्यक्ति खाना न खाये तो उसे उपवास नहीं कहा जा सकता, वह तो उपचार है। गरीब अन्नके अभावमें नहीं खाता, अतः वह भी उपवास नहीं करता।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३४०. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

७ अगस्त, १९३२

चि० नर्मदा,

तेरा पत्र मिला। मैं तो यही चाहता हूँ कि तू आश्रममें रहे और खूब तरक्की करे। मेहनत करके तू अपनी लिखावट सुधारना। तेरा निश्चय शुभ है अतः भगवान तेरी सहायता करेगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मुझे लिखती रहना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २७५८) से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक

३४१. पत्र : दूधीबहन वी० देसाईको

७ अगस्त, १९३२

चि० दूधीबहन,

यदि तुमने सोच-समझकर सूत दिया हो तो इसे मैं अच्छा मानता हूँ। वालजीको यदि अभी जेतपुरमें ही रहना पड़े तो तुम वहाँ जाओगी, यह मैं समझ सकता हूँ। उनके छूटनेके बाद बात ज्यादा साफ होगी। मनु अपनी लिखावट सुधारे, इस ओर ध्यान देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३४) से; सौजन्य : वालजी गो० देसाई

३४२. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

७ अगस्त, १९३२

चि० डाह्याभाई,

महादेवके चश्मेका एक शीशा टूट गया है, जिससे उसे बड़ी परेशानी होती है। यहाँ वह शीशा मिल नहीं सकता। यह चश्मा पिछले साल जून-जुलाईमें फोर्टमें स्थित व्हिटन कम्पनीमें डाक्टर भास्कर[1] ने बनवाया था। इसका नम्बर व्हिटन कम्पनी के पास है, और यदि वहाँ न मिले तो यह डाक्टर हीरालाल पटेलके यहाँसे मिल जायेगा, जिन्होंने महादेवकी आँखोंकी जाँच की थी और चश्मेका नम्बर दिया था। यदि तुम भास्करसे मिल सको तो उससे मिलकर व्हिटन कम्पनीसे नम्बर निकलवा कर और चश्मा बनवाकर तुरन्त भेजना। इस चश्मेके शीशे और डण्डीका माप भी कदाचित् उनके यहाँ होगा, लेकिन यदि न हो तो माप मैं साथके पत्रमें भेज रहा हूँ। भास्करके न होने पर यदि तुम डाक्टर हीरालालसे मिलोगे तो वह भी बनवा देंगे। भास्करको महादेवने पिछले सप्ताह एक रजिस्टर्ड पत्र भेजा था, वह कदाचित् उसे नहीं मिला है। करमचन्दकी पत्नी अब बिल्कुल ठीक होगी।

मणिबहनका पत्र अभी तो नहीं आया है। महादेवका काम चश्मेके बिना रुक गया है। इसलिए चश्मा जल्दी भेज देना।

उम्मीद है नन्हा मुन्ना ठीकसे होगा। हम तीनों मजेमें हैं।

बापूके आशीर्वाद

१. डा० भास्कर पटेल।
२. बम्बईके एक नेत्र विशेषज्ञ।

[पुनश्च :]

आज तुम्हारे पिताने तुम्हारे पते पर डा० अन्सारीको एक पत्र लिखा है। वह उन्हे पहुँचा देना। वे ११ तारीखको बम्बईसे रवाना होनेवाले है, इसलिए ९-१० तारीखको तो बम्बईमे ही होगे।

वे उस्मान सोभानीके[1] यहाँ ठहरे होगे। नही तो, जहाँ भी ठहरे होगे उसकी खबर उस्मानसे मिल जायेगी। खोजकर उन्हे पत्र पहुँचा आना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

३४३. पत्र : प्रभुदास गांधीको

७ अगस्त, १९३२

तुम नाम-जपके साथ मित्र-सम चिपके रहो। जब कहीसे भी सहायता नही मिलेगी तब भी इससे तो अवश्य मिलेगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१

३४४. पत्र : शारदा सी० शाहको

७ अगस्त, १९३२

चि० शारदा,

हरिलालसे तुम दोनों लड़कियाँ भयभीत नही हुईं और उसे साहसपूर्वक उत्तर दिया, यह बहुत अच्छा किया।

चिमनलालके आ जानेके बाद भी यदि छात्रावासमें रहना तुझे अच्छा लगता है और तेरी तबीयत ठीक रहती है, तो तू वही क्यो नही रहती?

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१३) से; सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

१. बम्बईके एक मिल-मालिक।

३४५. एक पत्र

७ अगस्त, १९३१

. . . का[1] शव देखने गई, यह ठीक किया। हम सबको किसी-न-किसी दिन इस स्थितिको प्राप्त होना है, और हमे कामना करनी चाहिए कि जब ऐसा समय आये तब हम प्रसन्नचित्त इस घरको छोड़े। जहाँ तक बन सके इसे स्वच्छ, पवित्र और स्वस्थ रखे। लेकिन जब यह छूट जाये तब इसे जाने दे। यह तो हमें इस्तेमाल करनेके लिए मिला है। देनेवाला जब इसे ले जाना चाहे तब भले ही ले जाये। हमे उसका उपयोग भी सेवाके लिए करना है, अपने सुखोपभोगके लिए नही।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१

३४६. एक पत्र[2]

७ अगस्त, १९३२

मै तुम्हारे दुखमे शामिल नही हो सकता। तुम्हारी पत्नी तो दुखसे छुटकारा पा गई है। उसकी मृत्यु ऐसे समय और इस ढंगसे हुई है जो स्पृहणीय है। तुम स्वयं अपनेको अनाथ कैसे मानते हो? अनाथ तो वही व्यक्ति अपनेको समझ सकता है, जिसके सिर पर ईश्वर न हो। लेकिन ईश्वर तो सबके सिर पर है। इसलिए अपने ही घोर अज्ञानके कारण हम खुदको अनाथ मानते है। तुम्हारा कवच न तो मणि थी और न तुम्हारी पत्नी। यह सब तो झूठे कवच है, सच्चा कवच हमारी श्रद्धा है। मानव-शरीरकी हस्ती तो काँचकी चूड़ीसे भी बहुत ओछी है। काँचकी चूड़ी सँभालकर रखनेसे सैकडो वर्षो तक बनी भी रह सकती है पर मनुष्य-शरीर तो चाहे कितने ही प्रयत्न किये जाये, एक निश्चित अवधिसे आगे जा ही नही सकता और उस अवधिके भीतर भी चाहे जब नष्ट हो सकता है। ऐसी चीज पर क्या भरोसा करना? तुम आश्रमके काममें तन्मय हो जाओ। इधर-उधरके विचारोमें मत पड़ो। छः वर्षकी मंगलाकी चिन्ता करने जैसी कोई बात ही नही है। तुम स्वयं ही उसे अच्छी तरह सँभालना। शान्ति और जेकोरको अपनी सँभाल रखना भी सिखाना। तुम कदाचित् नही जानते कि रुखीबहन[3] जब बिल्कुल बच्ची थी, तब हालाँकि सन्तोक जीवित थी, फिर भी वह मगनलालके हाथो बड़ी हुई है। उसके

१. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।

२. अनुमानतः यह पत्र शंकरभाई पटेलको लिखा गया था जो साबरमती आश्रमकी शालामें अध्यापक थे।

३. रुक्मिणी बजाज।

जीनेकी आशा बहुत कम थी। वह कदाचित् ही सांस ले पाती थी। इस बच्चीको मगनलाल नहलाया करता था, उसकी चोटी बनाता था, पास बैठकर उसे खिलाता था तथा अपने अन्य बच्चोंकी भी सँभाल करता था, तथापि वह अपनी नौकरीमें सबसे ज्यादा काम करता था। सबसे ज्यादा सुन्दर बाड़ी उसीकी थी, फीनिक्समें पहला गुलाब उसीने उगाया था। अपनी कुल्हाड़ीके साथ जब वह फीनिक्सकी कठिन भूमि पर आघात करता था, तब धरती काँपती-सी लगती थी। जो कार्य मगनलाल कर सकता था, वह सब कार्य तुम भी कर सकते हो। इसमें मैंने कोई मगनलालकी भारी कलाशक्तिकी अथवा उसके अक्षर-ज्ञानकी चर्चा नहीं की है। मगनलालको आत्मविश्वास था, अपने कार्यके प्रति श्रद्धा थी और ईश्वर ने उसे बलिष्ट शरीर भी दिया था। यह शरीर तो आश्रमके बोझसे, उसकी तपश्चर्यासे अन्तमें दुर्बल पड़ गया था। लेकिन मगनलालने अपने संक्षिप्त जीवनमें सौ वर्ष जितना अथवा सैकड़ों वर्षों जितना काम किया, ऐसा मैं मानता हूँ। मैंने तुम्हें मगनलालका उदाहरण दिया है, क्योंकि तुम मगनलालको जानते थे और उसके प्रेमभावके कारण ही तुम्हारा आश्रमका नाता जुड़ा था। मगनलालको याद करके ही तुम इस बातको भूल जाना कि तुम अपंग हो अथवा अन्धकारमें हो? जो सुविधाएँ तुम्हारे पास हैं वे सुविधाएँ इस देशमें लाखमें से एक व्यक्तिके पास भी नहीं होंगी, ऐसा मैं मानता हूँ।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१

३४७. एक पत्र

७ अगस्त १९३२

हमारे लिए हर उद्योग जो उपयोगी है, अच्छा है और करने योग्य है। अर्थात् चमारका काम, बढ़ईगिरी, पाखाना साफ करनेका काम, खेती-बाड़ी, बुनाईका काम, रसोईका काम, ढोर चरानेका काम अथवा ऐसे अन्य काम सब एक जैसे हैं। यदि मैं समाजको समझा सकूँ तो सब धन्धोंका, शिक्षित अथवा अशिक्षितका, क्लर्कका अथवा जमादारका, एक ही मूल्य आँका जाना चाहिए। यह तो कदाचित् तुम्हें मालूम ही होगा कि इसी दृष्टिसे जाँच करनेके लिए फिलहाल आश्रममें कामके घंटोंका हिसाब रखा जाता है। इसलिए यदि अच्छी बुनाईके कामके लिए तुरन्त ही आवश्यक सूत नहीं मिलता तो तुम्हें ऐसा कभी नहीं मानना चाहिए कि खेती आदि अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण काम करनेके कारण तुम निम्न स्तर पर उतर आये हो।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३४८. एक पत्र

७ अगस्त, १९३२

गाधी परिवारसे मैं यह आशा करता हूँ कि सब लोग पूरी तरहसे सेवाकार्य मे जुट जायें, जहाँ तक हो सके वहाँ तक संयमका पालन करें और धनके लोभका त्याग करें। विवाहका विचार छोड़ दे, जो विवाहित हों वे भी ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन करें और सेवा द्वारा अपनी आजीविका अर्जित करें। सेवाक्षेत्र इतना विशाल है कि उसमें असंख्य स्त्री-पुरुष समा जायें। इतनेमें सब-कुछ आ गया क्या?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३४९. पत्र : सरोजिनी नायडूको

८ अगस्त, १९३२

प्रिय बुलबुल,

डा० अन्सारीका एक पत्र संलग्न कर रहा हूँ, जिसे तुम पढ़ना चाहोगी। यह जितना हमारे लिए है उतना ही तुम्हारे लिए भी।

तुम्हारे प्रेमपूर्ण उपहारोंके बारेमें मेरा सन्देश तुम्हें मिल गया! यह पत्र मैं इसलिए नही लिख रहा हूँ कि तुम और उपहार भेजो। हम सब प्रकृतिके ऐसे दुर्ललित पुत्र हैं, जिन्हें शारीरिक सुविधाकी दृष्टिसे जो भी आवश्यक है वे सभी चीजें प्राप्त है।

यह पद्मजा[1] की शरारत है कि उसने मेरी इतने दिनोसे उपेक्षा कर रखी है। आशा है अब वह बेहतर है। क्या तुम्हें अपने दाढीवाले बेटेके पत्र मिलते हैं? उसे लिखना तो मेरा प्यार कहना।

वहाँ[2] की महिलाओने तुम्हें बताया कि नही कि सरदार गम्भीरतापूर्वक संस्कृतका अध्ययन कर रहे है। पिछले चार हफ्तोसे ही वह पढने लगे है और इतनेमे उन्होने बहुत प्रगति कर ली है। उनका अध्यवसाय तो ऐसा है कि किसी जवान विद्यार्थीको भी शर्मिन्दा कर दे।

हम सबोंकी ओरसे प्यार।

तुम्हारा,
नन्हा आदमी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५१२४) से।

१. सरोजिनी नायडूकी पुत्री।

२. बम्बईकी आर्थर रोड जेलमें, जहाँ सरोजिनी नायडू, मीराबहन और कमला चट्टोपाध्यायके साथ कैद थीं।

३५०. पत्र : प्रभाशंकर परीखको

८ अगस्त, १९३२

भाईश्री प्रभाशंकर[1],

आपका पत्र मिला। डाक्टरके देहान्तसे दुःख तो हुआ ही है। वे तो दुःखसे छुटकारा पा गये। मैंने तो अपनी सलाह दी है कि रतिलाल और चम्पाको रगून जानेकी जरूरत नही है। मै रगून पत्र तो लिख ही रहा हूँ। उनका [डाक्टरका] वसीयत-नामा है या नही, इसकी मुझे खबर नही है। छगनलाल पर ही विश्वास किया जाये, इसीमे सुरक्षा और शोभा है, ऐसी मेरी मान्यता है। तथापि, आप भाई नानालालकी अथवा किसी अन्य व्यक्तिकी सलाह लेना आवश्यक समझें, तो ले। सम्भव है, मेरे ये विचार आपको व्यवहारके विरुद्ध जान पड़े। मुझे तो यही व्यावहारिक लगते हैं।

मै चम्पाको और रतिलालको सुरक्षित मानता हूँ।

माताजीको आराम होगा। उनको मेरा प्रणाम।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७६५) से।

३५१. पत्र : जमनाबहन गांधीको

८ अगस्त, १९३२

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला। अनेक डाक्टरोका अनुभव यह है कि मीठा दही किसीको नुकसान नही पहुँचाता। मीठा दही वह होता है जिसमे तनिक भी खटास न हो। यह दही सबको पच सकता है। दहीमे लेशमात्र भी खटास हो तो थोड़ा-सा सोडा डालो। उससे फेन उठेंगे और खटास दूर हो जायेगी। ऐसा मै रोज करता हूँ। मीठे फल खानेसे भी कोई नुकसान नही होता। मोसम्बी हमेशा मीठी होती है। छोटेवाले अंगूर हमेशा मीठे होते है। इस तरह थोडी मात्रामे खाकर देखो। माफिक न आये तो छोड दो। सूर्यस्नान और हलका प्राणायाम तो करना ही चाहिए। जानकीबाईने गुजराती पढना शुरू करके अच्छा किया है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५७) से; सौजन्य: नारणदास गांधी

[1] १. रतिलाल मेहताके ससुर।

३५२. पत्र : प्रभावतीको

८ अगस्त, १९३२

चि० प्रभावती,

तुमको खत हि मेरे न मीले यह बड़ा आश्चर्य है। मैंने तो वहोत लिखे। इसके पहेलेका खत[1] हिंदीमे जान वुझकर लिखा। मेरा खत मिलनेसे मैं और लिखूंगा। हम तो आराममें हैं। मेरा वजन १०५ है, दूध लेता हुं। हाथकी कोई चिंता नहिं है। सरुप कृष्णा कान्ताको आशीर्वाद। तुमारे खत तो मिलते हैं।

बापुके आशीर्वाद

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४२१) से।

३५३. पत्र : अकबर हैदरीको

९ अगस्त, १९३२

प्रिय सर अकबर[2],

मैं उर्दू पढ़ रहा हूँ। इस समय मैं शिबली रचित पैगम्बर [मुहम्मद] की जीवनी पढ़ रहा हूँ। लेकिन मैं उसमानिया विश्वविद्यालय द्वारा जारी की गई पाठ्य-पुस्तकें तथा अन्य साहित्य देखना चाहूँगा। क्या आप कुछ चुनी हुई पुस्तकें भिजवा सकेंगे?

जहाजपर मेरी-आपकी जो भेंटें होती थी उनकी मुझे अकसर याद आती है।

लेडी हैदरी तथा परिवारके अन्य सदस्योंको कृपया मेरा अभिवादन कहें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (३) भाग ३, पृष्ठ १३।

१. सम्भवतः २ जून, १९३२ का।
२. हैदराबादके दीवान।

३५४. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको

९ अगस्त, १९३२

चि० माधवदास और कृष्णा,

तुम दोनोंके पत्र मिले। मुझे पूरा विवरण लिखा, यह बहुत अच्छा किया। हमारी कसौटी ही संकटके समय पर होती है। सकटसे कभी नहीं हारना चाहिए। गरीबीका स्वागत करना। मुझे लिखते रहना, मुझसे भले ही कुछ न हो सके। तुम दोनों हारे नहीं हो और दुःखको सुख मान सकते हो, यह बात मुझे शान्ति प्रदान करेगी। देवदासका पत्र तो आया होगा। रामदाससे मिला था। वह ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

३५५. पत्र : श्री० दा० सातवलेकरको

९ अगस्त, १९३२

भाई सातवलेकरजी,

सरदार संस्कृत सीख रहे हैं जानकर दूसरोंने भी सीखनेका विचार किया है। वे सब दूसरे स्थान पर रहते हैं। उनके लिये एक और सेट भेजनेकी कृपा करें। मैं नहीं जानता आपकी संस्था पुस्तकोंका दान कहां तक कर सकती है। यदि आवश्यक समझा जाय तो मूल्य भेजनेका प्रबंध करूंगा।

ईशोपनिषदादि ग्रंथ मिल गये थे। मैं दूसरे खतकी प्रतीक्षा कर रहा था इतनेमें यह खत लिखनेका अवसर आया। ईशोपनिषद् ध्यानसे पढ़ रहा हूं। कंठ कर लिया है। दूसरे ग्रंथ भी पढूंगा।

आजकल गंगाका वेदांक पढ रहा हुं। उसमे साहित्याचार्य महेन्द्र मिश्रने जो कुछ लिखा है उसमेंसे एक पृष्ठ भेजता हुं।[1] जिस जगह लाल पेंसिल लगाई हैं उसे

१. इसमें लेखकने वेदोंमें से उद्धरण देते हुए वैदिक कालमें गो-बलि और गो-मांस-भक्षणका प्रचलन दिखानेका प्रयत्न किया था। सातवलेकरने २० अक्टूबर १९३२ के पत्रमें इस दावेका विरोध किया था (एस० एन० १८५९०)।

देखें और कुछ प्रकाश डालें। ऐसी और बातें भी इस वेदांकमें देख रहा हूँ। परंतु मैं ज्यादा तकलीफ देना नहीं चाहता हूँ।

आपका,
मोहनदास

मूलकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७६४) से; सौजन्य : श्री० दा० सातवलेकर

३५६. पत्र : बनारसीलाल बजाजको

९ अगस्त, १९३२

चि० बनारसी,

तुमारा खत मिला। मेरे पत्रोंका कुछ गोलमाल हो गया था। अब ठीक हुआ है। पिताजीके[1] कभी खबर आते हैं? कैसे ह? माधवके साथ रुक्मिणी भी चली जाती तो अच्छा था। बहोत वजन गवाया है। शरीर संपत्ति अच्छी रहेगी तो सब प्रकारसे सुख मिला रहेगा। तुमारा स्वास्थ्य तो अच्छा है न? व्यापार कैसे चलता है? देवदासको मिलनेका रहता होगा।

बापुके आशीर्वाद

श्रीयुत बनारसीलाल
के २३/९६ पंचगंगा
बनारस

सी० डब्ल्यू० ९४४९ से; सौजन्य : बनारसीलाल बजाज

३५७. पत्र : ई० ई० डॉयलको

१० अगस्त, १९३२

प्रिय कर्नल डॉयल,

मेरे गत माहके २२ तथा २४ ता० के पत्रो तथा उत्तरमे आपके कृपापत्रके सिलसिलेमें निवेदन है कि तत्पश्चात् आपका कोई पत्र नही आया है और न ही काका कालेलकरका पत्र आया है, जिनके विषयमे आपने कहा था कि उनको अपने

१. रामेश्वरलाल बजाज।

स्वास्थ्यके सम्बन्धमें मुझे पत्र लिखनेकी अनुमति मिल जायेगी। इस विषय पर शीघ्र ध्यान देनेके लिए मैं आपका आभार मानूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, गृह विभाग, आई० जी० पी० फाइल नम्बर ९।

३५८. पत्र: मानशंकर जे० त्रिवेदीको

१० अगस्त, १९३२

चि० मनु,

तेरा पत्र मेरे हाथमें बहुत विलम्बसे आया।

अब तू पढाई करने लगा है तो इधर-उधरका विचार करनेके बजाय अपनी पढ़ाईको सांगोपांग पूरा कर। उसमें जहाँ-जहाँ घोर हिंसा निहित है उसपर गहराईसे विचार करके यदि सिद्ध कर सके तो अपना अध्ययन समाप्त करनेके बाद (सिद्ध) करना कि जीवित प्राणियोंपर ऐसे घातक प्रयोग करनेकी कोई जरूरत नहीं है। स्वयं डाक्टरोंने ही इस विषयपर परस्पर विरोधी प्रचार प्रकट किये हैं।

मैं देखता हूँ कि तू अपने समयका सदुपयोग कर रहा है। "भणतर मिथ्या बगर विचारे" (बिना विचार किये विद्याभ्यास करना मिथ्या है) में निहित तत्त्वका अनुसरण करना। केवल किताबोंको रटनेसे ज्ञान नहीं बढ़ता। ज्ञान तो ध्यानपूर्वक पढकर उसे आत्मसात् करनेसे बढता है।

हम तीनों आनन्दमें हैं। सरदार संस्कृतका अभ्यास कर रहे हैं। यह जानकर युवा लोगोंको कितना जोश आना चाहिए?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १००६) से।

३५९. पत्र : रामदास गांधीको[1]

११ अगस्त, १९३२

मेरा खयाल तो यह है कि तुमने अभी लौंग और दालचीनी छोड़नेका निश्चय नही किया है। मै नीमूको लिखनेका विचार करता हूँ। यदि उसने व्रत ले ही लिया होगा तो मै उसे तोड देनेका आग्रह नही करूँगा, केवल धर्म ही समझाऊँगा। इस तरहके व्रत छोड़नेका आग्रह नही करना चाहिए, ऐसी मेरी मान्यता है। ऐसा आग्रह करनेसे मनुष्य अपनी दृढता खो बैठता है और उसके मनमे दौर्बल्य आ जाता है। जैसा कि तुम लिखते हो, मै पहले जो सख्तियाँ किया करता था उसका मुझे कोई पश्चात्ताप नही है। उस समयको देखते हुए वह ठीक थी। आज मेरी तनिक-सी भी सख्ती हिमालयके समान भारी लगती है। जो कार्य आज मै झिडकी-भरसे ले सकता हूँ, उसके लिए पहले मुझे स्वय उपवास करना पडता था; और दूसरोको भी वैसी ही सख्ती बरतनी पड़ती थी। यदि मै पहलेकी तरह अब भी वैसा ही व्यवहार करूँ तो निर्दयी ठहरूँ। तब क्या इसका मतलब यह हुआ कि मैंने तरक्की की है और दूसरोने भी की है? ऐसा माननेका कोई कारण नही। लेकिन जो लोग मेरे सम्पर्कमे हैं उनपर मेरा प्रभाव काम करता ही रहता है, इसलिए कुछ विशेष करनेकी जरूरत नही रह जाती। तात्पर्य यह कि तुम्हे नीमूके प्रति सख्ती बरतने अथवा स्वयं कष्ट सहन करनेकी कोई जरूरत नही है क्योकि मै बडा चौकीदार बैठा हुआ हूँ। जब मेरा देहान्त हो जायेगा तब निश्चय ही तुम सबको बहुत सावधानीसे काम लेना होगा। वस्तुस्थितिके ऐसा होनेके कारण ही अनेक बार मेरी अनुपस्थितिमे ढील आ जाती है। संसारका नियम ही ऐसा है। इसलिए हमे शिक्षा तो यह लेनी है कि हमे अपने जीवनमे पूरी तरह जागरूक रहना चाहिए। आज हम भले ही लताकी तरह पेड़के सहारे खडे हो, लेकिन यह परतन्त्रता है। उससे मुक्त होकर अपने ही बलपर खडे रहना सीख लेना चाहिए। नीमूपर बिजलीके समान जो असर हुआ है, उसका कारण मैंने जो ऊपर बताया है वह है। तुम्हे मेरे जिस समयकी याद है वह समय ऐसा न था, क्योकि आसपासका वातावरण इतना अनुकूल नही था, और न इतना शुद्ध था। मै नीमूको कुछ सख्त बात लिखूँ तो वह सूख ही जाये। अब मेरी उदारता समझमे आई? मेरी पहलेकी सख्तीमे और आजकी उदारताके पीछे

१. द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१ में इस पत्रके बारेमें इस प्रकार लिखा है: "आज जो पत्र आये वे सभी कैदियोंके थे। इनमें से एक पत्र रामदासका था, जिसने शिकायत की थी कि वही बापू जो किसी समय अपराधके लिए प्रायश्चित करने और करानेके मामलेमें बहुत सख्ती करते थे, अब उदार रवैया अपनाने लगे है और लोग इस उदारताका अनुचित लाभ उठाते हैं। लगता है कि उसने दालचीनी और लौंग न लेनेका व्रत लिया था ... जिसका परिणाम यह हुआ कि उसकी पत्नी निर्मलाने दूध और घी का त्याग कर दिया था।"

भी यही शुद्ध प्रेम काम कर रहा था। बाकी तुम्हारा यह लिखना तो ठीक ही है कि मेरी उदारताका अनर्थ करके यदि कोई लापरवाह बन जाये तो यह निश्चय ही एक बुरी बात है। ऐसा डर बना रहता है, इसका कारण अलग है। मैं स्वयं अपने प्रति नरम रुख इख्तियार किये हुए हूँ। मेरी पहले जैसी अकड़ चली गई है। मैं जितना चाहता हूँ शरीर अब उतना काम नहीं करता, और जो मैं स्वयं नही करता वह अन्य लोगोसे करवाते हुए संकोच होता ही है। इसीलिए मैंने आश्रममें अनेक बार कहा है कि मैं अब आश्रम चलानेके योग्य नही रहा हूँ। आश्रमका दरबान जागरूक और बलवान होना चाहिए। पहले तो मैं हर काममे सबके साथ खडा होता था, इसलिए औरोंको भी मेरे साथ खडा होना पडता था। अब तो मेरा काम दर्शनीय नही रहा। केवल मेरे वचनोंके अनुरूप चलना भर रह गया। इसीसे तुम आसपासके वातावरणमें ढील देखते होगे। यह सब तुम अच्छी तरह समझ गये हो न?

तुम्हारी सावधानी मुझे अच्छी लगती है। इस बारेमें तुम नीमूसे सख्तीसे काम न लेना। पति-पत्नीके सम्बन्धके बारेमें मेरे विचारोंमें परिवर्तन तो अवश्य हुआ है। मै यह अवश्य चाहूँगा कि मैंने बा के साथ जैसा व्यवहार किया था वैसा व्यवहार तुम लोग अपनी पत्नियोंके साथ न करो। मेरी सख्तीसे बा ने कुछ खोया नही, क्योकि मैंने बा को कभी अपनी मिल्कियत नही माना। उसके प्रति मेरे मनमे प्रेम और सम्मान तो था ही। मै उसे उन्नत देखना चाहता था। लेकिन बा मुझपर क्रोध नही कर सकती थी, जबकि मै उसपर नाराज हो सकता था। बा को मैंने व्यावहारिक रूपसे अपने जितने अधिकार नहीं दिये थे, और बेचारी बा में उन्हें प्राप्त करनेकी शक्ति भी न थी। हिन्दू स्त्रियोंमे यह शक्ति होती ही नही है। यह हिन्दू समाजकी खामी है। इसलिए मै चाहूँगा कि तुम नीमूको अपने समान ही स्वतन्त्र मानो। मैंने उसे हँसी-हँसीमे एक पत्र[1] मे लिखा है कि वह अपनेको पराधीन मानकर हर बातमे तुम्हे परेशान न किया करे। जिसपर उसने लिखा था कि मै पराधीन तो हूँ ही, यह बात रामदास जानते है। भाषा मेरी है, लेकिन उसने जो लिखा था उसका भावार्थ यही है। यह पराधीनता दूर हो जानी चाहिए। नीमूको नौकरकी जरूरत हो तो वह तुमसे क्यों पूछे? वह नारणदाससे माँग सकती है, और लड़ने-झगडनेकी जरूरत हो तो वैसा भी कर सकती है। यह तो तुच्छ उदाहरण है। लेकिन इसके बारेमें उसे स्वतन्त्रता होनी चाहिए। तुम व्यभिचार करना चाहो तो नीमूका भय न खाओ। हाँ, उसका प्रेम तुम्हें रोके, तो यह अलग बात है। उसी तरह नीमूको व्यभिचार करना हो तो वह निडर होकर वैसा कर सकती है। परस्पर एक दूसरेका प्रेम दम्पतिको पापसे भले बचाये, लेकिन परस्पर भय कदापि नही होना चाहिए। यह शिक्षा देना मैंने आश्रममें ही सीखा है। साबरमतीमें बा के प्रति मेरा व्यवहार उत्तरोत्तर ऐसा ही होता गया है। इसीसे बा का विकास हुआ है। हो सकता है कि पहलेका भय अभी पूरी तरहसे दूर नही हुआ हो, लेकिन काफी दूर हो गया है। मनमें भी यदि बा के प्रति रोष होता है तो उसे मैं खुद पर ही निकालता हूँ। रोषका मूल मोह है। मुझमें यह जो परिवर्तन हुआ है

१. देखिए "पत्र : निर्मलाबहन गांधीको", ९-७-१९३२।

वह महत्त्वपूर्ण है और उसके सुन्दर परिणाम निकले हैं। मेरा प्रेम अब भी जितना निर्मल होता जायेगा उतना ही परिणाम भी अधिक सुन्दर होगा। असंख्य स्त्रियाँ मुझमें सहज ही विश्वास रखती हैं। उसका कारण मेरा प्रेम और आदरभाव है, ऐसा मुझे विश्वास है। ये गुण अदृश्य रूपसे काम करते ही रहते हैं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३६०. पत्र : अमतुस्सलामको

[१२ अगस्त, १९३२ से पूर्व][1]

प्रिय अमतुल,

मुझे खुशी है कि तुम आश्रम पहुँच गई हो और अपनी भतीजी[2] को साथ ले गई हो। आशा है वहाँकी जलवायु उसको अनुकूल पड़ेगी। तुम्हें अब स्वस्थ रहना चाहिए। मौसम तो काफी ठंडा होगा।

तुम्हारा उर्दू खत पढ़कर मुझे बहुत खुशी है। ऐसे ही लिखा करो। हिन्दी सीखनेका इरादा तो अच्छी बात है। और तुमको तो कुछ तकलीफ ही नही होगी। मेरे हर्फ़ पढ़नेमे कुछ मुश्किल होती हैं क्या?[3]

उम्मीद है कि तुम मेरी उर्दूकी लिखावट पढ़ सकती हो। मैं जानता हूँ कि वह खराब है। अगर तुम्हारी भतीजी लिख सकती हो तो उससे भी कहना कि मुझे लिखे। वह कितनी बड़ी है?

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५२) से।

१. बापूके पत्र–८: बीबी अमतुस्सलामके नाम-नामक पुस्तकमें यह पत्र १२ अगस्त, १९३२ के पत्रसे पहले दिया गया है; देखिए अगला शीर्षक।

२. ९ वर्षीय कुदसिया, जो अपनी माताकी मृत्युके बाद अमतुस्सलामके साथ रहती थी।

३. यह अनुच्छेद उर्दूमें है।

३६१. पत्र : अमतुस्सलामको

१२ अगस्त, १९३२

प्रिय अमतुल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे पत्रोमे किसीसे छिपाने जैसा कुछ नही था। मासिक बीमारीके बारेमे जो झूठी लज्जा है उसे मै चाहूँगा कि सब लडकियाँ छोड दे। शर्मकी बात उनके लिए हो सकती है जो वासना तृप्त करना चाहते हो और इस मासिक धर्मको यौन-सुखकी दृष्टिसे देखते है। लेकिन जो लोग सयमका जीवन व्यतीत करना चाहते है, वे जिस प्रकार अन्य बीमारियोकी चर्चा करते है उसी प्रकार उन्हे इस बीमारीकी भी चर्चा करनी चाहिए। अब इसका उपाय। पहली चीज तो यह कि मासिक शुरू होनेका लक्षण पाते ही तुम्हे पूर्ण विश्राम लेना चाहिए और जबतक तनिक भी स्राव होता रहे तबतक आराम करना चाहिए। अनावश्यक या तीन दिनसे ज्यादा रक्तस्राव या पीड़ा न हो, इसके लिए महीनेके शेष दिनोमे घर्षण-स्नान और कटि-स्नान करना चाहिए। मासिकके दौरान कोई पीडा नही होनी चाहिए। यदि इस उपचारसे लाभ न हो तो तुम्हें किसी डाक्टरसे गर्भाशयकी जाँच करानी चाहिए। इस मामलेमे तुम्हे श्रीमती लैजारससे परामर्श करना चाहिए और वह जैसा कहे वैसा करना चाहिए। वह तुम्हें बता सकेगी कि क्या करना चाहिए। तुम्हे प्रेमाबहनको भी हमराज बनाना चाहिए। वह इसके बारेमे ज्यादा नही जानती। लेकिन तुम दोनो मिलकर बात कर सकती हो और इस विषयका साहित्य पढ़ सकती हो। यदि तुम्हे न पता हो कि घर्षण-स्नान क्या है और प्रेमाबहन भी न जानती हो तो तुम्हे कुने की पुस्तक पढ लेनी चाहिए। यदि तुम इस बीमारीका रहस्य अच्छी तरह जान लो तो अन्य लड़कियोको भी उसकी जानकारी दे सकती हो। यह स्त्रियोंकी सभी बीमारियोका मूल स्रोत है। झूठी लज्जा लडकियोको इसे समझने और इसका उचित नियन्त्रण करनेसे रोकती है। इस चीजको छिपाना और फिर अनकथ तकलीफे भोगना पाप है। साथका पत्र डा० शर्मा[1] के लिए संलग्न कर रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

तुम्हारा उर्दू खत अच्छा है। जवाब दूसरे हफ्ते दूंगा। आज वक्त भर गया है।[2]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५३) से।

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. पुनश्च: के बादका अनुच्छेद उर्दूमें है।

३६२. पत्र : डा० हीरालाल शर्माको

१२ अगस्त, १९३२

प्रिय डा० शर्मा,

आपका पत्र पाकर खुशी हुई। प्राकृतिक उपचारका अध्ययन पूरा करनेके लिए आप यूरोप या अमेरिका जाये, इसके लिए मैं आपको जोरदार शब्दोमे मना करूँगा। आपको यही रहते हुए अपने अध्ययनको पूर्ण बनाना है और मौलिक अनुसन्धान करना है। इस क्षेत्रमे पश्चिममें जिन लोगोने कुछ भी किया है उन्होंने दूसरोसे नही केवल अपने अनुभवोंसे ही सीखा था। यह मानना तो बहुत बड़ी भूल है कि पश्चिम जाकर आप इस कलाके बारेमे बहुत-कुछ सीख सकते हैं। वहाँ भी यह कला अभी अपनी शैशवावस्थामे ही है। लेकिन सबसे पहली चीज आपको यह करनी है कि आप अपने आपको ठीक करें। यदि आपका शरीर ही टूटा हुआ है तो लोग आपकी बातपर कान नही देंगे। निश्चय ही आपके रोगको[1] धूप-सेवन और पथ्यापथ्यके कठोर नियमनसे लाभ होगा।

अपनी कुहनीके लिए मैं आपको कष्ट नही दूंगा। तथापि आपके सहायता-प्रस्तावके लिए धन्यवाद।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१५०) से। बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष से भी।

३६३. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१२ अगस्त, १९३२

भाई खम्भाता,

मैंने तुम्हें जान-बूझकर पत्र नही लिखा। मेरा विचार तुम्हारे तेलका इस्तेमाल करनेके बाद ही तुम्हे पत्र लिखनेका था। अब उसका इस्तेमाल करनेकी छूट मिली है। दस-एक दिन हो गये हैं, अभी कुछ फर्क नही पड़ा है। महादेव रोज मालिश करता है। हाथको अन्य कोई कष्ट नही है, अतः चिन्ता करनेका कोई कारण नही है। तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०१) से। सी० डब्ल्यू० ४३८७ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

१. डा० शर्माको तेज जुकाम हो गया था।

३६४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१२ अगस्त, १९३२

चि० प्रेमा,

निम्नलिखित पुस्तके परचुरे शास्त्रीके लिए चाहिए। इनमें से जो वहाँ हो सो भेजना। न हों तो अन्य जगहोसे मँगवा लूँगा। जरा जल्दी भेजे तो अच्छा होगा। मणिबहनको देना अथवा नदुबहनको[1] देना, वे डाह्याभाईको भेज देगी। परचुरे शास्त्री आश्रममे रहा करते थे। बहुत विद्वान है। यहीकी जेलमे है। इन्हे कुष्ठरोग हो गया है। इसीसे मुझे उन्हें पुस्तके देनेकी उतावली है। वे रोज कातते है। मै उनसे मिल तो नही सकता, लेकिन उन्हे पत्र लिख सकता हूँ। उनकी पत्नी भी बीमार पडी हुई है। वह बाहर है। पुस्तकोके नाम ये है: (१) 'इमिटेशन ऑफ क्राइस्ट', (२) 'वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द' (जो भी खण्ड हो), (३) 'वर्क्स ऑफ सिस्टर निवेदिता' (जो भी खण्ड हो), (४) 'एसेज ऑफ टॉल्स्टॉय', (५) 'व्याकरण-महाभाष्य' (६) 'यजुर्वेद-भाष्य', (७) 'डिस्पेन्सेशन्स ऑफ केशवचन्द्र सेन'।

चूंकि श्री शास्त्री आश्रममे रहे हैं, इसलिए लिखते है कि अन्तिम तीन पुस्तके आश्रममें है। लगता है, ये पुस्तकें उन्होने वहाँ पढ़ी थी।

तेरा पत्र मिला। तू ऐसा मानती जान पड़ती है कि अगर मैं चाहूँ तो दिलचस्प पत्र अवश्य लिख सकता हूँ। लेकिन अब अच्छी तरहसे समझ ले कि ऐसा कुछ भी नही है। और सच मानो कि कौन-सा पत्र दिलचस्प है और कौन-सा नीरस, मुझे सो भी मालूम नही होता। और फिर, जिस-जिस पत्रको तू दिलचस्प मानती है वह वस्तुतः दिलचस्प ही है, यह कौन कह सकता है? इसको मापनेका स्वतन्त्र पैमाना भगवानने अपनी सन्दूकचीमें तालेमें बन्द करके रखा जान पडता है। इसलिए फिलहाल तो इसको मापनेका सबके पास अपना-अपना पैमाना है। तेरे मापके अनुकूल उतरने का यदि मै प्रयत्न करूँ तो मेरी तो मुसीबत आ जायेगी न? और इसमे ही मेरा सारा समय चला जायेगा। इस भयसे कि कदाचित् तुझे वह पत्र नीरस जान पड़े, मै दूसरा पत्र और फिर तीसरा, इस तरह लिखता ही चला जाऊँ? और फिर, जिस तरह तुझे दिलचस्प पत्र लिखने चाहिए उसी तरह मुझे औरोंको भी लिखने चाहिए। तब तो मेरा दिवाला ही निकल जायेगा!!! इसकी अपेक्षा मैंने सीधी पद्धति अपनाई है। दिलचस्प और नीरसका खयाल किये बिना जो मनको सुझाई दे और जो भाषा आये उस भाषामें लिखना। लेकिन तू ठहरी मूर्ख और फिर अभिमानी। इतनी सीधी बात तेरी समझमे थोड़े ही आयेगी? और अब देखता हूँ कि तू तो सर्वज्ञ होनेका दावा करती है। मै जो भी ज्ञानकी बात लिखता हूँ उसे तू पहलेसे ही

१. अहमदाबादके डा० बलवन्तराय कानूगाकी पत्नी।

जानती दीख पड़ती है। लेकिन जरा ठहरना। जो व्यक्ति यह मानता है कि वह सब-कुछ जानता है लेकिन उसे व्यवहारमें नहीं रख सकता—वह वस्तुतः कुछ नहीं जानता अथवा जाननेके बावजूद नहीं जानता। इसलिए तू जबतक ऊटपटाँग लिखती रहेगी, क्रोध करेगी, अभिमान करेगी तबतक मेरे लिए तो तू मूर्ख ही रहेगी। इसका अर्थ यह नहीं कि तू अपने अभिमान, क्रोध अथवा पागलपनको ढँक कर मुझे लिख। जबतक ये सब तुझमें विद्यमान है तबतक तुझे अपने पत्रोंमें इन सबका जिक्र करना ही होगा, इसके सिवा और कोई चारा नहीं। तेरे पत्रोंका मूल्य जैसी तू है वैसी ही तुझे प्रस्तुत करनेमें है। तू भले ही मूर्ख बनी रहे लेकिन तुझे अपने क्रोधसे छुटकारा पाना ही होगा और अपने अहंकारमें कमी करनी होगी। इन सबको अपने मनसे बिल्कुल निकाल देना लगभग असम्भव है।

तूने नारद मुनिका उदाहरण दिया है। लेकिन क्या तू उनके वचन[1] के मर्मको समझती है? उनकी जैसी व्यक्तिपूजा अवश्य करो, यह तो अभीप्ट वस्तु है। जितने वैकुण्ठवासी भगवान ऐतिहासिक हैं, उतने ही उनके कृष्ण भी हैं। नारद मुनिके भगवान उनके मन-मन्दिरमें वास करते थे। वह नारद मुनि तो आज भी हैं और उनके कृष्ण भी हैं, क्योंकि वे दोनों हमारी कल्पनामें सदैवसे रहते आये हैं। मेरे विचारानुसार इतिहासकी अपेक्षा कल्पना श्रेयस्कर है। रामसे नाम ऊँचा है, ऐसा तुलसीदासने लिखा है। इसका अर्थ कदाचित् यही है।

तू व्यक्तिपूजाके चक्करमें पड़ी हुई है इसीसे तो मुझे परेशान करती है न? आश्रमके सम्बन्धमें तू मुझे निःशंक नहीं कर सकती। नारणदास कर सका है। ऐसे अन्य उदाहरण भी दे सकता हूँ। वे लोग भी व्यक्तिपूजक तो हैं ही। कौन नहीं है? लेकिन अन्तमें वे व्यक्तिको छोड़कर उसके गुणोंके अर्थात् उसकी कृतिके पुजारी बन जाते हैं। इस अमूल्य चीजको भुलाकर हमने अपने अज्ञानमें स्त्रियोंको सती होना सिखाया। यह है व्यक्तिपूजाकी पराकाष्ठा! जबकि पत्नीका धर्म तो यह है कि वह अपने पतिका कार्य करते हुए पतिको अमर बना दे। यदि हम पति-पत्नीसे विकार को तथा 'नर-नारीके भेदको' निकाल दें तो यह आदर्श समस्त संसारके लोगोंपर हर एक स्थितिमें लागू होता है। दूसरे शब्दोंमें यह प्रेम भगवानसे जाकर मिलता है। लेकिन अब इस विषयको यहीं छोड़ता हूँ।

बीरूके आनेकी खबर सुनकर तू उलझनमें क्यों पड़ गई है? उसे भी नियन्त्रणमें कर लेनेकी हिम्मत रख, इतना विश्वास रख। "प्रेम सब पर विजय प्राप्त कर लेता है", इस अमर वाक्यको अपने हृदयमें उतार। चाहे जो कोई भी आश्रममें आये, हमारा कर्तव्य है कि हम प्रसन्न रहें। हमें तो हमसे जितनी बन सके उतनी सेवा करनी ही होगी। इसके बिना छुटकारा कैसे हो सकता है? तू ऐसा क्यों नहीं मानती कि यदि अन्य लड़के सचमुच सुधर गये हैं तो वे बीरूको भी सुधारेंगे? सम्भावना तो इसी बातकी है कि बीरू अब समझदार हो गया होगा। मुझे तो उससे बहुत उम्मीदें हैं।

१. सा तु अस्मिन् परम प्रेमस्वरूपा—नारद भक्तिसूत्र।

लड़कियोंके लिए तो तुझे अपना जीवन समर्पित कर देना चाहिए। वे यदि किसीसे खुलकर बात नहीं करती तो वे सब अवश्य बीमार पड़ेंगी। आनन्दीको लिखा मेरा पत्र पढ़ना। वह यदि तुझे पत्र देती है तो जो लड़कियाँ समझदार हो गई है उन सबको यह पढ़नेके लिए देना चाहिए।

केलेसे वायु पैदा होती है, इस बातका अनुभव मुझे तो कभी नहीं हुआ। मेरे जितने केले कदाचित् ही किसीने खाये होंगे। अनेक वर्षोंतक केला मेरा मुख्य आहार था। दूध नहीं, रोटी नहीं, केला और जैतूनका तेल तथा मूंगफली और नीबू। लेकिन वायु-जैसी कोई चीज ही नहीं थी। अब बहुत वर्षों बाद फिरसे केला लेना शुरू किया है, लेकिन कोई खराब असर नहीं देखता। इसका एक नियम अवश्य है। या तो केले आगमे पकाये हुए हो अथवा बिल्कुल पके हुए होने चाहिए। कच्चे केलेमे शुद्ध स्टार्च होता है। स्टार्चयुक्त वस्तुओको बिना पकाये नहीं खाना चाहिए, यह बात मैंने गोपालरावके प्रयोगमे देख ली थी। इसलिए केला जबतक नरम न हो, पका हुआ न हो, तबतक नहीं खाना चाहिए। दो-तीन दिन पडे रहनेसे केले पक जाते है और यदि खानेकी जल्दी हो तो उन्हें भूनना अथवा उबालना चाहिए।

तूने जो पुस्तक पढ़ी है वह भले ही १९२४ मे प्रकाशित हुई हो, लेकिन उसमे कही गई बाते पुरानी हो गई है।

मेरे विरोधी पहले थे और आज भी है, लेकिन मुझे उनके प्रति कोई रोष नहीं है। स्वप्नमें भी मैंने उनका बुरा नहीं चाहा है। फलस्वरूप अनेक विरोधी मित्र बन गये है। किसी भी व्यक्तिके विरोधका आजतक मुझपर कोई असर नहीं हुआ है। तीन बार तो मेरी जानतक पर बन आई तथापि मै आज भी जीवित हूँ। इसका अर्थ यह नहीं कि विरोधीको कभी सफलता नहीं मिलेगी। सफलता मिले अथवा न मिले, इससे मुझे कोई ताल्लुक नहीं है। मेरा धर्म तो उनके भी हितकी कामना करना है और अवसर आनेपर उनकी सेवा करना है। इस सिद्धान्तपर मैंने यथाशक्ति अमल किया है। और मेरी मान्यता है कि यह मेरे स्वभावकी विशेषता है।

लाखो लोग मेरी पूजा करते है और इससे मै ऊब उठता हूँ। उनकी इस पूजासे किसी भी दिन मुझे खुशी नहीं हुई और न मुझे ऐसा ही लगा कि मै इन सबके योग्य हूँ। हाँ, मुझे अपनी अयोग्यताका निरन्तर आभास होता रहा है। मेरे मनमें कभी भी सम्मानकी भूख रही हो, यह याद नहीं पड़ता। लेकिन कामकी भूख हमेशा रही है। सम्मान देनेवाले व्यक्तिसे काम लेनेकी मेरी चेष्टा रही है और न मिलनेपर मै उससे दूर भाग खड़ा हुआ हूँ। मै कृतार्थ तो तभी होऊँगा जब मै वहाँ पहुँच जाऊँ जहाँ मुझे पहुँचना है। लेकिन ऐसा दिन कौन जाने कब आयेगा।

संसारका सामना करनेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिए अभिमान और द्वेषके भावका विकास करनेकी कोई जरूरत नहीं। ईसा मसीहने संसारका सामना किया, बुद्धने भी अपने युगका विरोध किया, प्रह्लादने भी ऐसा ही किया। वे सब नम्रताकी प्रतिमूर्ति थे। इसके लिए आत्मविश्वास और ईश्वरमे श्रद्धा होनी चाहिए। जो लोग अहंकारकी भावनासे संसारके विरुद्ध खड़े हुए उन्हें, अन्ततः पराजय मिली। तेरा

अभिमान और तेरा क्रोध कितनी ही बार ढोंग (मात्र) होता है। लेकिन यह ढोंग एक बुरी चीज है। ढोंग अन्तमें एक आदतका रूप धारण कर लेता है और अनेक बार व्यर्थ ही गलतफहमीका कारण बन जाता है। ऐसा न होने देनेके लिए मनुष्यको बहुत सावधानी बरतनेकी जरूरत होती है। अत्यन्त विनयशीलताके बिना मैं आखिरमें एकाकी टिके रहनेकी शक्ति प्राप्त करना असम्भव मानता हूँ। और ऐसी शक्ति आनेसे ही वह सच्ची चीज मानी जायेगी। इसीमें उसकी कसौटी है। अनेक ऐसे वीर हो गये हैं जिन्हें परखनेका अवसर समाजको मिला ही नहीं कि वे सचमुच वीर थे अथवा नहीं। अब अमतुलबहनको लिखा मेरा पत्र भी पढ़ लेना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९८)से। सी० डब्ल्यू० ५७५२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

३६५. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१३ अगस्त, १९३२

चि० परसराम,

भारतमें भी यदि कोई नेता दीर्घजीवी हो तो वह उच्च पदका उपभोग अवश्य कर सकता है। अरस्तूके लेख मैंने नहीं पढ़े हैं। प्लेटोको भी मैंने थोड़ा ही पढ़ा है। इसलिए इनके विचारोंके बारेमें मैं क्या कह सकता हूँ?

तुमने जिन गुणोंके बारेमें लिखा है, सार्वजनिक सेवाके लिए उन सबकी जरूरत है।

बच्चोंके लिए सत्संगकी जरूरत है। सत्संगकी व्याख्या तुलसीदासने की है।

'टाइम्स ऑफ इंडिया'का लेख मैंने नहीं देखा है।

मेरे सहवासमें जिसे मधुका अनुभव हुआ है वह जहाँ कहीं भी जायेगा उसे मधुका ही अनुभव होगा। क्योंकि उसे तो कड़वी चीज भी मधुर लगेगी।

अनन्तपुरकी रिपोर्ट मुझे मिली नहीं है। इसलिए तकलीकी बाबत भी वही हुआ। मैं तलाश करूँगा।

इमर्सन कौन था, यह मैं नहीं जानता। तुम्हें मालूम नहीं है कि मेरा अध्ययन एक अच्छे मैट्रिकुलेटसे भी कम है?

अपने हृदयसे सुख-सामग्री खोज निकालनेवाले व्यक्तिके लक्षण 'गीता'के द्वितीय अध्यायके स्थितप्रज्ञ-जैसे होने चाहिए। 'लालेग्रो'[1] और 'इल पेंसेरोजो'[2] भी मैंने नहीं पढ़ी हैं।

१ और २. जॉन मिल्टनकी कविताएँ।

मेरे अज्ञानकी खूब परीक्षा हुई। लेकिन इसका मुझे खेद नहीं है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५०५) से। सी० डब्ल्यू० ४९८२ से भी; सौजन्य: परशुराम मेहरोत्रा

३६६. पत्र: नर्मदाबहन राणाको

१३ अगस्त, १९३२

चि० नर्मदा,

तू अच्छी छूटी। अब निश्चिन्त होकर सब-कुछ सीखना। अक्षर-ज्ञान भी प्राप्त करना और दस्तकारी भी सीखना। प्रार्थना आदि ठीकसे समझना। तुझे तो बहुत तरक्की करनी है। मुझे लिखती रहना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७५९) से; सौजन्य: रामनारायण एन० पाठक

३६७. पत्र: लक्ष्मी जेराजाणीको

१३ अगस्त, १९३२

चि० लक्ष्मी (जेराजाणी),

तेरा पत्र मिला।

मेरा पत्र[1] कुछ गड़बड़में पड़ गया था इसीसे वह देरसे मिला।

तूने एक दिनका कार्यक्रम भेजा सो ठीक किया। तू क्या-क्या सीखती है? एक सुझाव दूं? तेरे कार्यक्रममें मैं प्रार्थनाका कोई स्थान नहीं देखता। सवेरे उठनेके साथ ही दातौन आदिसे फारिग हो, स्थिरभावसे बैठकर एकाग्रचित्तसे प्रार्थना करनी ही चाहिए, इसी तरह सोनेके समय भी। जैसे शरीरको अन्नकी आवश्यकता होती है उसी तरह जीवको प्रार्थनाकी जरूरत होती है। शरीर अन्नके अभावमें कुछेक दिन निभ सकता है। थोड़ा उपवास फायदा भी करता है, लेकिन प्रार्थनाका उपवास होता ही नहीं है। जिसे आत्मामें विश्वास है वह प्रार्थनाके बिना एक दिन भी नहीं रह सकता। विट्ठलदासका[2] समाचार देती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८१३) से; सौजन्य: पुरुषोत्तम डी० सरैया

१. २-७-१९३२ का।
२. लक्ष्मी जेराजाणीके चाचा।

३६८. वाचन और विचार[1]– १

१४ अगस्त, १९३२

हमें पाठशालामें सिखाया जाता है: 'भणतर मिथ्या वगर विचार' (बिना विचारे पढ़ना बेकार)। यह बात अक्षरशः सत्य है। हमें पढनेका शौक हो तो वह अवश्य अच्छा कहा जायेगा और जो आलस्यवश लिखते-पढते नही वे अवश्य मूढ माने जायेंगे, लेकिन जो व्यर्थ ही पढते रहते हैं और विचार नही करते वे भी लगभग मूर्ख ही रहते है। और फिर बदलेमे कुछ लोग आँखें खो बैठते हैं सो अलग। व्यर्थका वाचन अर्थात् बिना विचारका वाचन भी एक प्रकारका रोग ही माना जायेगा।

हममें अनेक लोग इस तरहकी पढ़ाई करनेवाले होते हैं। वे पढ़ते हैं लेकिन विचार नहीं करते। इसीसे पढ़ी हुई चीजका अनुसरण तो क्या करेंगे? फलतः हमें थोड़ा पढ़ना चाहिए, उसपर विचार करना चाहिए और उसे अमलमें लाना चाहिए। अमल करते हुए जो उचित न लगे उसे छोडकर आगे बढ़ना चाहिए। ऐसा करनेवाला व्यक्ति कम वाचनसे अपना काम चला सकता है, बहुत सारा समय बचाता है और मौलिक कार्य करनेकी जिम्मेदारी उठानेके योग्य बनता है।

जो विचार करना सीखता है उसे एक और लाभ भी होता है जो जानने योग्य है। हमेशा पढ़नेको नहीं मिल सकता और ऐसा देखा गया है कि जिन्हें पढ़नेकी आदत होती है यदि उन्हें पढ़नेको नही मिलता तो वे विक्षिप्त हो उठते हैं। लेकिन यदि विचार करनेकी टेव हो तो उनके पास विचारपोथी हर समय रहती है, इसलिए उनके पागल हो उठनेका कारण नही होता।

विचार करते हुए 'सीखना' इस शब्दका प्रयोग मैंने जानबूझकर किया है। सच्चे-झूठे, व्यर्थके विचार तो अनेक जन करते रहते हैं। यह तो पागलपन हुआ। कुछेक लोग विचारोके भँवरमें फँसकर निराश हो जाते है और आत्मघात भी करते हैं। मै यहाँ ऐसे विचारोंकी चर्चा नही कर रहा हूँ। यहाँ पर मेरी सलाह तो केवल यह है कि हमें पढे हुए पर विचार करना चाहिए। मान लीजिए कि आज हमने एक भजन पढ़ा अथवा सुना है। हमें चाहिए कि हम उसपर गम्भीरतापूर्वक विचार करें। उसमे क्या रहस्य है? उससे हमें क्या ग्रहण करना है और क्या नही, इसकी जाँच करनी चाहिए। उसमे कोई दोष हो तो देखो; अर्थ समझमे न आया हो तो समझो। यही सही विचार-पद्धति है। यह तो मैंने सरल-से-सरल उदाहरण दिया है। इसके आधारपर प्रत्येकको अपनी सामर्थ्यानुसार ग्रहण करके आगे बढ़ना चाहिए। ऐसा करनेवाला व्यक्ति अन्ततः आत्मानन्दका उपभोग करेगा और उसका वाचन भी फलीभूत होगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. यह लेख "पत्र: नारणदास गांधीको" ११/२५-८-१९३२ के साथ भेजा गया था।

३६९. एक पत्र

१४ अगस्त, १९३२

यह कह देने मात्रसे किसीका काम नही चलेगा कि मै तो जो हूँ सो हूँ। यह तो निराशाका रुदन हुआ। एक सत्यान्वेषी तो कहेगा "मुझे जो होना चाहिए मै वही बनूँगा।" तुमसे मेरी अपील है कि तुम अपने मनकी कोठरीसे बाहर निकलो और तुम्हारे चारों तरफ जितने चेहरे है उन सबमे अपने-आपको देखो। चारो ओर इतना जीवन होनेपर भी उसके बीच तुम एकाकी कैसे हो सकते हो? यदि हमारा दर्शन हमे अन्य मानवोके सम्पर्कसे आनन्द पाना और उनकी सेवा करना नही सिखाता तो फिर वह सबका-सब बेकार है।

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३७०. पत्र : गुलाबको

१४ अगस्त, १९३२

चि० गुलाब,

तेरा पत्र मिला। तेरा मन लग गया है, यह अच्छा हुआ। खूब सीखना। कसरत करके शरीरको भी अच्छा बनाना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२०)से।

३७१. पत्र : शामल आर० रावलको

१४ अगस्त, १९३२

चि० शामल,

जब भय लगे तब रामका नाम लेना चाहिए। उससे भय दूर हो जायेगा। सोनेके समय राम-नाम लेकर सोना चाहिए। तेरे पास कोई सोता है क्या? भगवान हमारे पास ही है, ऐसी श्रद्धा रखनी चाहिए और जिसके साथ भगवान है उसे भय काहेका?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४५)से। सी० डब्ल्यू० २८८० से भी; सौजन्य: शामल आर० रावल

३७२. पत्र : केशवको

१४ अगस्त, १९३२

चि० केशव,

तेरा पत्र मिला। अक्षर सुधारना। खूब सीखना। हमारे हाथसे यदि कोई साफ करनेके लिए बर्तन ले ले तो विवेकपूर्वक उससे कहना चाहिए कि वह हमें ही बर्तन साफ करने दे। यदि वह न माने तो उसे करने दे। जो पदार्थ मिर्चवाला हो उसे हमें छोड़ देना चाहिए। हमें चाहिए कि हम पहले ही मिर्चवाला पदार्थ परोसनेसे मना कर दें। रोटी, नमक या छाछ-जैसा जो-कुछ मिल् जाये उसी पर गुजारा करें। लेकिन यदि हमसे ऐसा न हो सके तो जो मिले थोड़ा बहुत खा लें।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२७९) से।

३७३. पत्र : पद्माको

१४ अगस्त, १९३२

चि० पद्मा,

तेरा पत्र बहुत दिनों बाद मिला। तुझे पत्र लिखना बाकी रह गया था, यह बात मेरे ध्यानमें ही नही रही। मैंने तो खूब पत्र लिखे हैं। तेरा स्वास्थ्य सुधर रहा है यह जानकर मैं प्रसन्न हूँ। खदलीका वर्णन देना। वहाँ कितने पेड़ हैं? पानी कहाँसे मिलता है? अल्मोड़ासे कितनी दूर है? शीला बहुत बड़ी हो गई है? तू दिन कैसे व्यतीत करती है? अपने हाथकी जाँच करनेके लिए मैंने कुछ दिन 'गाण्डीव' चलाया था। आजसे मैं फिर मगन चरखा चलाने लगा हूँ। मेरी गति प्रति घंटा सौ तारसे अधिक नही जान पड़ती। मुझे लिखती रहना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३५) से। सी० डब्ल्यू० ३४८७ से भी; सौजन्य : प्रभुदास गांधी

३७४. पत्र: भाऊ पानसेको

१४ अगस्त, १९३२

चि० भाऊ,

कब्जके लिए तुरन्त डा० तलवरकरके पास जाकर उनकी सलाह लेनी चाहिए। अर्थार्थी भक्त वह है जो अपनी विशेष इच्छाकी पूर्तिकी याचना करता है, ऐसा मुझे लगता है। यदि मै खादी-प्रवृत्तिकी सफलताके लिए रोज ईश्वरका भजन करता हूँ तो मै अर्थार्थी भक्त हुआ।

'अग्निर्ज्योति' वाला श्लोक[1] क्षेपक है, ऐसी अर्नाल्डकी मान्यता है। अगर ऐसा है तो भी ठीक है — यह तो मेरी भी मान्यता है। उसके शब्दार्थको लेकर मै उसके रहस्यको समझ ही नही पाता। भावार्थ तो सरल लगता है। पहला तो ज्ञान-मार्ग है, दूसरा उससे विपरीत है। षण्मास तो उदाहरण स्वरूप है। मेरे सन्तोषके लिए इतना काफी है। प्रार्थनामे तुम्हे जो विघ्न पड़ते है वे (आरम्भमे) सभीको पड़ते है, पर प्रयत्नपूर्वक लगे रहनेसे दोनो विघ्न दूर होते है। इन विघ्नोके बावजूद प्रार्थनामें लगे रहना चाहिए। किसी-न-किसी दिन तो प्रार्थनामे तल्लीनता प्राप्त होगी। विघ्न आते है, उसका कारण यह है कि जितनी हमे भोजनकी भूख लगती है उतनी प्रार्थनाकी भूख नही लगती। तात्पर्य यह है कि हमे आत्माके बारेमे इतनी प्रतीति नही है जितनी शरीरके बारेमे है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३४) से। सी० डब्ल्यू० ४४७७ से भी; सौजन्य: भाऊ पानसे

१. भगवद्गीता, ८, २४ और २५; देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ २५७-५८ भी।

३७५. पत्र : महेन्द्र वी० देसाईको

१४ अगस्त, १९३२

चि० मनु,

नोटबुकका कागज पाठ लिखनेके लिए है। लेकिन लिखनेके लिए कागज अगर (नोटबुकमें बँधे न होकर) खुले हों तो उनकी कीमत कम पड़ती है। सुन्दर लिखावटके लिए [सरकडेकी] कलम जरूर होनी चाहिए। कापी-बुक यदि ध्यानपूर्वक लिखी जाये तो लिखावटमें जरूर सुधार होगा। इस बारकी लिखावट ठीक कही जा सकती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३५)से; सौजन्य: वालजी गो० देसाई

३७६. पत्र : छगनलाल जोशीको

१४ अगस्त, १९३२

आश्रमकी मजदूरीके पीछे स्वतन्त्रताकी मान्यता रही है और दूसरेमें पराधीनता निहित है। हमारे लिए तो वस्तुतः दोनोंमें स्वतन्त्रता है। जो स्वयं ही दुख बटोरते हैं उन्हें मनमें भी दुखके प्रति शिकायत नहीं करनी चाहिए। इसके विपरीत उन्हें वह दुख भी सुखरूप भासना चाहिए। तेलकी कढ़ाईमें पड़नेपर सुधन्वा कैसे हर्षसे नाच उठा होगा! प्रह्लादने आगसे तपे लौहस्तम्भोंका किस प्रकारसे आलिंगन किया होगा? इसे हमें कपोलकल्पित नहीं समझना चाहिए, क्योंकि आज भी ऐसा हो सकता है। रिडली,[1] लेटिमर[2] और मन्सूर[3] के उदाहरण तो ऐतिहासिक हैं। अन्य उदाहरण तो तुम स्वयं याद कर सकते हो। हर बात मनपर निर्भर करती है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१

१ और २. प्रोटेस्टेंट मतावलम्बी शहीद।

३. एक सूफी शहीद।

३७७. पत्र : शारदा सी० शाहको

१४ अगस्त, १९३२

चि० शारदा,

यदि किसी दूसरे व्यक्तिके पत्रमें वही बात हो तो तू क्यों न पढ़ लेती?

तेरा वजन तीन पौंड बढा, यह तो अच्छी बात है। शकरीबहन[1] के आ जानेसे कहीं कम न हो जाना।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१४)से; सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

३७८. एक पत्र

१४ अगस्त, १९३२

. . .[2] की आत्माका अब हनन नही करना। उसके हठके प्रति मेरे मनमें आदरभाव है। जिसे वह धर्म मानती है उसके बीच हम लोग कैसे आ सकते हैं? हमें उसे प्रोत्साहन देना चाहिए। उसका भरण-पोषण करना तुम्हारा धर्म है। उस पर रोष किया ही नही जा सकता। किसी पराई स्त्रीके आचारके सम्बन्धमें जैसे हम रोष नही करते, वैसे ही इस प्रसगमें भी होना चाहिए। ऐसे अभेदमें ही आन्तरिक सुखकी कुंजी निहित है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड-१

१. शारदाबहनकी माता।
२. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिया गया है।

३७९. पत्र : एक बालिकाको

१४ अगस्त, १९३२

क्रोध आये तब क्या करें, ऐसा प्रश्न न पूछ कर तुम्हे यह पूछना चाहिए कि क्रोध न आये उसके लिए क्या करना चाहिए। क्रोध न आये, इसके लिए सबके प्रति उदार बनना चाहिए और हम सबमे है तथा सब हममे है, इस भावनाका विकास करना चाहिए। जिस तरह समुद्रके जलकी समस्त बूंदे भिन्न होनेपर भी एक ही है उसी तरह हम भी भवसागरमे पड़े है। अत. कौन किसपर क्रोध करे?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३८०. एक पत्र

१४ अगस्त, १९३२

आश्रममें न्याति-जातिको प्रश्रय नही दिया जाता, क्योकि जात-पांतमें धर्म नही है। इसका हिन्दू धर्मके साथ कोई सम्बन्ध नही। किसी भी व्यक्तिको अपनेसे उच्च अथवा हीन माननेमे पाप है। हम सब समान हैं। छुआछूत पापके प्रति हो सकती हैं, मनुष्यसे कभी नही। जो मनुष्य सेवा करना चाहता है उसके हृदयमे किसीके प्रति ऊँच-नीचकी भावना नही होती। ऊँच-नीचकी यह मान्यता हिन्दू धर्मपर कलंक है। उसे हमे दूर करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१

३८१. पत्र : एक बालिकाको

१४ अगस्त, १९३२

जहाँतक तेरा हृदय दोष न माने वहाँतक दोष नही समझना। अंतमें हमारे पास दूसरा कोई नाम नही है। इसीलिए हम हृदयको स्वच्छ रखनेकी कोशिश करते हैं। पापी मनुष्य पापको ही पुण्य मान लेता है, क्योकि उसका हृदय मलिन है। कुछ भी हो, जब तक उसे ज्ञान नही हुआ तब तक पापको ही पुण्य समझकर चलता रहेगा। इसलिए तेरे लिए अच्छा क्या है, वह और कोई नही बता सकता। मैं तो इतना ही बता सकता हूँ कि हमें सत्य और अहिंसाके पथपर चलना है। और ऐसा करनेके लिए यम-नियमादिका पालन आवश्यक है।

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३८२. एक पत्र

१४ अगस्त, १९३२

आत्मा, कुटुंब, देश और जगतके प्रति चार पृथक् धर्म नही हैं। अपना अथवा कुटुंबका अकल्याण करके देशका कल्याण नही हो सकता है। इसी तरह जगतका अकल्याण करके देशका कल्याण नही हो सकता। इसमेंसे फलितार्थ यह होता है कि हम मरके कुटुबको जिलावे; कुटुब मरके देशको, देश जगतको। परतु वलिदान शुद्ध ही हो सकता है। इसलिए सब प्रारंभ आत्मशुद्धिसे होता है। आत्मशुद्धि होनेसे प्रतिक्षणके कर्तव्यका पता अपने आप मिल जाता है।

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३८३. पत्र : नारणदास गांधीको

११/१५ अगस्त, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी डाक नियमपूर्वक मिल गई। आजकी डाकमे इटलीमें हमारी तरह ही एक आश्रममे रहनेवाली किसी महिलाका[१] अत्यन्त सुन्दर पत्र भेज रहा हूँ। वहाँ काम करनेवाली सब महिलाएँ ही हैं। ये लोग कितने भक्तिभावसे और कितने धैर्य से काम करती हैं और क्या करती हैं, इसका थोड़ा बहुत आभास तुम्हे इस पत्रसे मिलेगा। आश्रमके सब लोगोको, मुख्यत: महिलाओको इसका सार बताना। साथ ही यह भी बता देना कि सेंट फ्रान्सिस कौन थे। सेंट फ्रान्सिसका जीवन-वृत्तान्त महादेव ने 'नवजीवन'मे लिखा था। यह कदाचित् तुमने भी देखा होगा। मैंने इन बहनोसे सीधे आश्रमको एक पत्र लिखनेका अनुरोध किया है। वहाँ कदाचित् उनका पत्र आये तो उत्तर देना और साथके इस पत्रको पढनेके बाद यदि तुम्हारा उनको लिखनेका मन हो तो उनकी ओरसे पत्र मिले बिना भी तुम उन्हें लिख सकते हो। लिखना आवश्यक है, ऐसा न समझना। कदाचित् उन महिलाओने सीधे आश्रमको भी पत्र लिखा हो।

तुम्हारे यहाँ बहुत जोरदार बारिश हुई जान पड़ती है। यहाँ भी लगभग वैसी ही बारिश हुई है, लेकिन बहुत कम मात्रामे। अब बादल छँटने लगे हैं।

१. सियेना आश्रमकी कुमारी टर्टन।

आज मापनेपर पता चला कि मैं गांडीव चरखेपर ५३ अंकतक का सूत कात सका हूँ। महादेव ८० अंक तक पहुँचा है। वल्लभभाई भी ४० अंकतक तो अवश्य पहुँचे हैं। मेरी मान्यता है कि ऐसे परिणामोंकी अपेक्षा केवल गांडीवसे ही की जा सकती है। महीन सूत कातनेके लिए अभी गांडीवमे सुधार करनेकी गुंजाइश है। थोड़ा बहुत सुधार तो हम लोग यहीं जेलमें कर रहे हैं। महीन सूत कातनेवाले व्यक्तिको एकाग्रचित्त तो होना ही पड़ता है, पूनियाँ अच्छी रखनी ही पड़ती हैं। तात्पर्य यह कि हरएक वस्तु सावधानीके साथ की जाये तभी महीन सूत काता जा सकेगा। मुझे लगता है कि यदि हम अच्छेसे-अच्छा और महीनसे-महीन सूत कातें और बुनें तो अनेक शोध कर सकते हैं और सूतकी किस्ममें भी सुधार हो सकता है; हमारा अपना काम भी बहुत दुरुस्त हो जाये और सुघड़ता भी आये। और यदि ऐसा करना हो तो महीन कातनेवाले सब लोगोंको गांडीव चरखा अपनाना चाहिए। लेकिन इस बारेमें तो तुम सब लोग वहाँ इकट्ठे होकर ही किसी निर्णय पर पहुँच सकते हो और यही बेहतर भी है। यद्यपि गांडीवपर मेरा अनुभव काफी लम्बे समयका है तथापि मैं उसे बहुत महत्त्व नहीं देता। यदि गांडीवपर प्रयोग करनेवाले अन्य लोग भी दृढ़तापूर्वक मेरी इस बातका समर्थन करें तभी इसका महत्त्व है। अतएव अपने प्रयोगको मैं केवल मार्गदर्शक मानता हूँ। गांडीव चलानेसे अभीतक मेरे हाथको कोई नुकसान हुआ है, ऐसा नहीं जान पड़ता। जबतक वह काम देगा तबतक उससे काम लूँगा। नहीं तो वापस मगन चरखेपर चला जाऊँगा। तुम्हारे खुदके लिए तो गांडीव चरखा चलाना बिल्कुल आसान चीज है। तुम तार दाहिने हाथसे खींचते हो यह मैं जानता हूँ। गांडीव चरखेपर दाहिने हाथसे तार खींचनेमें कोई मुश्किल ही नहीं है। मोढ़ियाके खाँचेमें यदि टेढ़ापन न हो तब तो केवल तकुएकी दिशाको ही बदलना पड़ता है। और खाँच पड़ी हो तो बदली हुई खाँचकी दिशावाला मोढ़िया रखना चाहिए। चूँकि मेरे मोढ़ियामे टेढ़ी खाँच पड़ी हुई है इसलिए मजबूत सूत निकालनेमे लाभ होता है। पर जिस पूनीसे ५३ अंकका सूत निकाला है वह छक्कड़दासकी है। मैं यदि इस बार छक्कड़दासको न लिख सका तो उससे इतना कहना कि उसकी पूनीका खूब उपयोग किया जा रहा है।

आशा है, बीरसिंहका बुखार उतर गया होगा। अमतुलको भी आराम होगा।

छक्कड़दासकी पूनी, उर्दू पुस्तकें तथा फ्रेंच शब्दकोष मिल गये हैं। शंकरभाईका पलस्तर तो बहुत दिन चला। इससे लगता है कि उन्हें काफी चोट आई होगी। अब तो पलस्तर उतर गया होगा।

नर्मदाको तो सचमुच मुक्ति मिल गई। धीरसिंह किस जातिका है? ६५० रुपये कौन देगा? क्या नर्मदाके पीहरके लोग समर्थ हैं? यह सब मैं अपनी जानकारीके लिए पूछ रहा हूँ। नर्मदा तो सस्तेमें ही छूट गई।

डाक्टरके सम्बन्धमें यदि रतुभाईने कुछ कार्रवाईकी हो तो मुझे समाचार देना, चाहे वह दिन तुम्हारे लिखनेका न हो। रंगूनमें कौन-कौन हैं? यह खबर मिली हो तो यह भी बताना।

मेरे वजनमे एक-डेढ़ पौडकी कमती-बढ़ती होती रहती है। इसके लिए विशेष कारण ढूंढ़नेकी मैने कोशिश नही की है। कोशिश करने-जैसी कोई बात भी नही है। अपनी खुराकमें से मैंने दस-एक दिन पहले रोटीकी छुट्टी कर दी है, उसका कारण थोड़ा बहुत कब्ज था। तबसे एक बार चारसे छः केले और दूध तथा एक चमचा पिसे बादाम लेता हूँ। दूसरी बारके भोजनमें, जैसाकि लिया करता था, एक हरी सब्जी लेता हूँ तथा उसमे दूध मिलाकर खाता हूँ। और बहुत करके दोनो समय सन्तरा अथवा मोसम्बी लेता हूँ। इससे कब्ज दूर हो गया है। इस समय मेरा वजन १०४½ पौंड हो गया है। मतलब यह कि रोटी न खानेसे मेरा वजन कम नही हुआ है।

हाथ जैसाका तैसा है। केशू और अब्बासके सूत मिल गये। दोनो अच्छे हैं। मै दोनोंको यत्नपूर्वक सँभालकर रखूंगा। अब्बासने किस चरखेपर काता? यज्ञ विषयक टिप्पणीकी जाँच कर गया हूँ, बहुत बारीकीके साथ तो नही कर सका। यदि हम यह चाहते हो कि प्रशिक्षित लोग कमसे-कम २० अंकका सूत अवश्य कातें तो हमें काफी ज्यादा सीमा निश्चित करनी होगी। ऐसा करनेपर २० अंकसे नीचे कदाचित् ही कोई कातेगा। जो अन्तिम सीढ़ीसे नीचे नही उतरना चाहता उसे हमेशा पाँच-दस सीढ़ी आगे ही रहना चाहिए। स्थिरता-जैसी चीज तो इस ससारमे कोई है ही नही। इसलिए कोई भी व्यक्ति निम्नतम सीढीपर तो रह ही नही सकता और जो आगे नही बढ़ता उसे नीचे उतरना ही पड़ता है। विद्याभ्यासके लिए मैंने जो पद्धति बताई है[1] उसमे परस्पर एक-दूसरेके लिए समय निकालने-जैसी कोई बात नही है अपितु जहाँ ऐसा वातावरण हो वहाँ समय अपने-आप निकल आता है, ठीक उसी तरह जिस तरह खानेके लिए समय-विशेषकी जरूरत नही रहती; वह तो होता ही है। उसी तरह विद्याभ्यासके लिए एक-दूसरेको समय देना भी स्वाभाविक बन जाना चाहिए। जिसके पास जो सम्पत्ति हो उसे चाहिए कि वह सम्पत्ति अपने सम्पत्तिरहित पड़ोसीको दे। लेकिन जबतक हमे इसकी आदत न पड जाये तबतक, जैसा कि तुमने लिखा है, हमें परस्पर एक दूसरेके लिए समय निकालनेकी आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए जिसके पास देनेके लिए कुछ हो उसके लिए हमारे पास जो दैनिक पत्रक है, उसमे समय के उल्लेखका खाना होना चाहिए।

कृष्णदासको मदद देनेके बारेमें पुछवाया, यह बहुत ठीक हुआ। नीमूके बारेमे मै उसे लिखूंगा। मेरे पत्रको पढ़ जाना। यदि वह व्रत ले ही चुकी होगी[2] तो उसे तोड़ देनेका आग्रह नही करूँगा। उन लिए हुए व्रतोंको, जिनमे पाप न हो, तोड़नेसे व्यक्तिकी व्रत लेनेकी अर्थात् निश्चय करनेकी शक्तिका ह्रास होता है। 'अनासक्ति-योग' की प्रतियोंकी यदि माँग की जाती है तो जहाँ ठीक जान पड़े वहाँसे उसे प्रकाशित करवानेमे मै कोई हर्ज नही देखता। और यदि तुम इस माँगको पूरा नही कर

१. देखिए "शिक्षा", १०-७-१९३२।

२. देखिए "पत्र: रामदास गांधीको," ११-८-१९३२।

सकते तो फिलहाल शान्त रहना। मुझे लगता है कि प्रवचनोंको प्रकाशित करवानेमें कोई हर्ज नही है। लेकिन यदि प्रकाशित करवाये जायें तो उन्हें एक बार फिरसे अच्छी तरह देख जाना चाहिए। मैं भेजते समय उनकी अच्छी तरहसे जाँच नहीं कर पाता। इसके अतिरिक्त मेरी लिखावट भी खराब है जिससे अनपेक्षित भूलें रह जानेकी सम्भावना है। फिलहाल मैं जो प्रवचन भेजता हूँ वे आश्रमके छोटेसे समाजको ध्यानमें रखकर लिखे गये हैं। अप्पाने बहुत ही सुन्दर कार्य किया है। हरियोमलको छुट्टी देकर तुमने ठीक ही किया।

१४ अगस्त, १९३२

नारायणप्पाका पत्र देखनेमे नही आया। इसलिए यदि वह तुमसे मेरे उत्तरके बारेमे पूछे तो उससे कहना कि उसका पत्र ही नही मिला। बच्चोंके सम्बन्धमें आनन्दी और अमतुलको लिखे मेरे पत्रको पढ जाना।

बापू

महादेव कहता है कि वल्लभभाईके संस्कृतके अभ्यासके विषयमें मैंने अभीतक तुम्हे कुछ नही लिखा है। मेरा खयाल है कि लिखा है। वे तो फिलहाल संस्कृतके अध्ययनमें लवलीन हो गये है। चलते-फिरते भी उसीका पठन-मनन करते हैं। लगभग पाँच घंटे देते है। युवक विद्यार्थी भी उनके उत्साहके आगे लजा जाये। उन्होंने पण्डित सातवलेकरके पाँच भाग पढ़ लिए हैं, इसके अतिरिक्त वे अब रोज 'गीता' के पाँच श्लोक भी याद करते हैं। पहला अध्याय पूरा कर लिया है, दूसरा चल रहा है। संस्कृत पढ़नेका मूल कारण यह है। एक दिन राजाजीका पत्र आया था। उसमे उन्होंने सस्कृतका अभ्यास करनेकी बात लिखी थी। इससे सरदारको उत्साह हुआ। इस बातको अभी पाँच सप्ताह ही हुए है। संस्कृतके साथ ही चरखा भी शुरू किया। अब उसमें भी कातते समय एकाग्रचित्त हो जाते हैं। सूतमें रोज वृद्धि होती जाती है। लगभग ४० अंकतक पहुँचे हैं।

१५ अगस्त, १९३२

परसराम लिखता है कि अनन्तपुरकी रिपोर्ट तुम भेज चुके हो। यदि ऐसा हो तो उसके भेजनेकी तारीख लिखना। क्या उसे रजिस्टरमें दर्ज किया था ?

कुल ४४ पत्र हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२४५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३८४. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

१५ अगस्त, १९३२

प्रिय सत्यमूर्ति,

तुम्हें क्या हुआ है? मैं अखबारोंकी रिपोर्टोंका विश्वास नही करता। मैं आशा करता हूँ कि कोई गम्भीर बात नही है।

हम तीनों ठीक-ठाक हैं।

[अंग्रेजीसे]
एडवांस, २३-८-१९३२

३८५. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

१५ अगस्त, १९३२

चि० जानकीबहन,

कितना अभिमान? जेलमें हो आई तो क्या अब पत्र ही नही लिखोगी? जैसे तुम्हीं अकेली जा सकती थी न! तबीयत कैसी है? कमलनयन[1] कहाँ है? उसको मैंने खत लिखा है। लगता है, वह उसतक नही पहुँचा है।

बालकृष्ण कहाँ है? उसका इधर कोई खत ही नहीं आया। मदालसा भी मानो सो गई है। शिवाजी तथा राधाकृष्णके बारेमे लिखना। छोटेलालको पत्र लिखा है, उसका भी जवाब नही आया। मैं इन सबकी आशा तुमसे रखता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती जानकीबाई
मार्फत सेठ जमनालाल बजाज
वर्धा

[पुनश्च :]

हम तीनों मजेमें हैं।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८९९) से।

१. जमनालाल बजाजके पुत्र।

३८६. पत्र : विमलाबहन ए० पटेलको

१५ अगस्त, १९३२

चि० विमला,

इस बारका तेरा पत्र पास करता हूँ। यदि तुझे ३३१/३ प्रतिशत अंक अधिक चाहिए तो माँगना। अक्षर बारीक है, सो तो कोई बात नही; लेकिन अक्षर एक जैसे नही हैं। लिखावट पर रामदास[1] की एक कविता है, उसे तूने पढ़ा है? न पढ़ी हो तो आश्रमसे मँगा लेना। मेरे पास यहाँ नही है। पुस्तक सुन्दर है। स्याहीसे लिखे पत्रकी भी कारबन पेपरसे नकल उतारी जा सकती है, यह बात तू जानती है? इसके लिए खास किस्मका कारबन पेपर आता है। मैंने तेरा सन्देश भक्तिबहनको तुरन्त पहुँचा दिया था। पर तो भी उसमें विलम्ब हुआ। डाह्याभाई उससे मिल गये थे।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती विमलाबहन
पाटीदार मन्दिर
आणंद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२७७) से।

३८७. पत्र : भुस्कुटेको[2]

१५ अगस्त, १९३२

मैं दोनों ईश्वरको मानता हूँ, जिसके पाससे हम सेवा लेते हैं, और जिसकी हम सेवा करते हैं। ऐसा तो हो ही नही सकता कि हम सेवा करें और किसी प्रकारकी सेवा न लेवे। लेकिन दोनों ईश्वर काल्पनिक हैं। उसके नजदीक तो वही चीज सच्ची है। जो ईश्वर सचमुच है वह कल्पनातीत है। वह न सेवा करता है, न सेवा लेता

१. महाराष्ट्रके एक संत-कवि।

२. "ईश्वर दो हैं। एक तो वह जिसमें सब लोगोंका विश्वास है, और जिसे कभी-कभी उन लोगोंकी बड़े परिमार्जित ढंगसे सेवा भी करनी पड़ती है; सम्भवतः उन्हें मात्र मनकी शान्ति प्रदान कराके। इस ईश्वरका अस्तित्व नहीं होता। लेकिन जिस ईश्वरकी हम सबको सेवा करनी है, उसका अस्तित्व है और वही हमारे जीवन और जो-कुछ हमें दृष्टिगोचर होता है उसका कर्ता है।" टॉल्स्टॉयके इन शब्दोंका उल्लेख करते हुए भुस्कुटेने यह पूछा था कि "गांधीजी इन दोनोंमें से कौन-से ईश्वरको मानते हैं, क्योंकि यदि कोई व्यक्ति दूसरे ईश्वरको मानता है तो फिर उसके लिए प्रार्थनाका कोई महत्त्व नहीं है।"

है। उसके लिये कोई विशेषण भी नही है, क्योंकि ईश्वर कोई बाह्य शक्ति नही है, लेकिन वह हमारे भीतर ही है। और क्योंकि हम जानते नही है कि ईश्वर किस तरहसे काम करता है, इसलिये कल्पनातीत शक्तिका स्मरण करना ही चाहिये। और जब हमने स्मरण किया वैसे ही हमारा कल्पनामय ईश्वर पैदा हुआ। अन्तमे बात यह है कि आस्तिकता बुद्धिका प्रयोग नही है, वह श्रद्धाकी बात है। बुद्धिका सहारा बहुत कम इस बातमे मिल सकता है। और जब हमने ईश्वरको माना तब विश्वके व्यवहारकी बातका झगड़ा छूट जाता है, क्योंकि पीछे हमको मानना होगा कि ईश्वरकी कोई कृति बगैर हेतु नही हो सकती। इससे आगे नही जा सकता हूँ।

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३८८. पत्र : साथी कैदियोंको

१५ अगस्त, १९३२

जो लोग एकाग्रचित्त होकर अध्ययन नही कर सकते उनके लिए यह दवा है: बाहरकी दुनियाको बिल्कुल भूल जाओ। शरीर रूपी इस चोलेको छोड़ते समय यदि जीवका ध्यान इस संसारमे बना रहता है, तो वह अधोगतिको प्राप्त होता है और इस तरह अपनेको तथा दूसरोंको भी पीड़ा पहुँचाता है; कैदियोंको भी ऐसा ही समझना चाहिए। उन्हे चाहिए कि वे बाह्य जगतका ध्यान ही न करें, क्योंकि [जेलमे रहनेके कारण] उनकी तो [सिविल डेथ] सांसारिक मृत्यु हो गई है। और यदि सांसारिक मृत्युको प्राप्त मनुष्यका जीव संसारमे ही मन लगाये रहे तो वह स्वयं भी पागल-जैसा जान पड़ता है और अपने आसपासके लोगोको भी पागल बना डालता है। मैं जो यह लिख रहा हूँ सो कोई नई बात नही है। [जॉन] बनियन यदि बाह्य ससारका विचार किया करता तो वह अपना अमर ग्रन्थ[1] नही लिख पाता, और लोकमान्य [तिलक] 'गीता रहस्य' न लिख पाते।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. द पिल्ग्रिम्स प्रोग्रेस।

३८९. एक पत्र

१५ अगस्त, १९३२

प्रार्थना और ब्रह्मचर्य दोनों एक ही तरहकी चीजे नही है। ब्रह्मचर्य पांच महाव्रतोमे से एक है, और प्रार्थना उसतक पहुँचनेका एक साधन है। ब्रह्मचर्यकी आवश्यकताके बारेमे तो मैंने बहुत-कुछ कहा है, लोगोको बहुत समझाया है। लेकिन उसतक कैसे पहुँचा जाये, इसका विचार करते हुए प्रार्थनाका एक बहुत बडा साधन हमारे हाथ लगा है। जो प्रार्थनाके महत्त्वको समझ सकता है और समझकर प्रार्थनामे लीन हो सकता है, उसके लिए ब्रह्मचर्य सहल हो जाता है।

मेरे मतानुसार आदर्श डाक्टर वह है जो अपने धन्धेके लिए ज्ञान प्राप्त करे और जनताको बिना पैसेके उस ज्ञानका लाभ दे। अपनी आजीविकाके लिए या तो वह कोई सामान्य धन्धा करे अथवा जो थोड़ा-बहुत जनता उसे दे उससे अपना निर्वाह करे, लेकिन उसे कभी भी अपने कामकी फीसके रूपमें न माने। आदर्श स्थितिमे मैं इन सेवकोके लिए वार्षिक शुल्क तय कर दूंगा और उसके बाद वह धनवान अथवा गरीबसे कुछ ले न सकेगा।

जहाँतक मैं समझ सका हूँ, जपयज्ञका अर्थ है नामस्मरण।

मिताहारका परिमाण बताना मुश्किल है, अल्पाहारका सहज ही बताया जा सकता है, क्योकि अल्पाहारका अर्थ है निश्चयपूर्वक आवश्यकतासे कम खाना, और इसीका चुनाव श्रेयस्कर भी है।

जो व्यक्ति सत्यका पालन करना चाहता है, उसके मनमे एक भी ऐसा विचार नही आना चाहिए जिसे गुप्त रखना पड़े। उसके बेहूदे विचारोको भी यदि ससार जान जाये तो उसे चिन्ता नही करनी चाहिए। चिन्ता तो कलुष विचारोकी होनी चाहिए, पापकी होनी चाहिए। मेरी डायरी कोई देख लेगा तो क्या होगा, इस भयके मूलमे कारण यह है कि हम जो है, उससे अच्छे दीखना चाहते है। और समस्त संसार द्वारा किसी व्यक्तिकी डायरी देख लेनेपर भी जिसे चिन्ता न हो वह अपनी पत्नीसे तो कोई चीज क्यो छिपाना चाहेगा?

व्रतकी मर्यादा केवल हमारी अशक्ति ही हो सकती है।

जबतक दो मित्रोके बीच भी परस्पर मेरे और तेरेका भेद है, जो भेद पति-पत्नीके सम्बन्धमें भी है और जो शरीरधारीके लिए अनिवार्य है, तबतक उन्हे चाहिए कि वे एक-दूसरेकी अनुमतिके बिना कदापि एक-दूसरेकी कोई चीज न ले। यह विचार कि बादमें अमुक वस्तुको यथास्थान रख देंगे इसमें सहायक नहीं होता। उसका एक बहुत बड़ा कारण तो यह है कि ऐसा निश्चय करनेवाले व्यक्तिको स्वय क्या खबर है कि दूसरे क्षण वह जीवित भी रहेगा या नहीं, अथवा उसके हाथमें आनेके बाद वह वस्तु चोरी चली जायेगी या नहीं। इस नियमका पालन करनेमें

यदि कोई पाखण्डी होनेका अथवा इससे भी बुरा आरोप लगाता है, तो उसे सहन कर लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३९०. एक पत्र[1]

१५ अगस्त, १९३२

आचारका अर्थ केवल बाह्याचार है और बाह्याचार समय-समयपर बदल सकता है। आन्तरिक आचार तो सदैव एक ही होता है, अर्थात् सत्य और अहिंसाका पालन करना, और ऐसा करते हुए बाह्याचारोको जहाँ-जहाँ बदलना पड़े वहाँ-वहाँ बदला जा सकता है। आचार प्रथम धर्म है — ऐसा शास्त्रोंमे कहा गया है, यह कहकर अथवा मानकर हमें किसी वस्तुसे चिपके रहनेकी कोई जरूरत नही है। संस्कृतमें व्यक्त किये गये समस्त विचार कोई शास्त्र नही है। 'मानव धर्मशास्त्र' के नामसे प्रसिद्ध ग्रन्थ भी सही अर्थोमे शास्त्र नही है। शास्त्र पुस्तकोमें लिखी हुई चीज नही है। यह तो सजीव वस्तु होनी चाहिए। अतएव चारित्र्यवान्, ज्ञानी अथवा जिसकी करनी और कथनीमें भेद न हो, ऐसे व्यक्तिका वचन ही हमारा शास्त्र है। यदि हमारे हाथमे ऐसा कोई प्रकाश-स्तम्भ न हो और यदि हमें विरासतमें संस्कार मिले हो तो हमे जो सत्य प्रतीत हो वही हमारा शास्त्र है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३९१. पत्र : एफ० मेरी बारको

१६ अगस्त, १९३२

प्रिय मेरी[2],

तुम्हारा पत्र आज मिला। मै सोच रहा था कि तुम्हे क्या हो गया है। मेरे पत्रके[3] उत्तरमे मुझे तुम्हारा पत्र नही मिला। कृपया अपने प्रश्नोको दुबारा लिखकर भेजो। मेरा खयाल है कि वह मुझे सही-सलामत मिल जायेगा। हम सब विभिन्न चीजोके अध्ययनमे और कताईमे लगे हुए है, और मजेमे हैं। हमारे पास आवश्यकतासे ज्यादा पुस्तकें हैं।

१. पत्र-लेखकने "आचारः प्रथमो धर्मः" का उल्लेख करते हुए गांधीजीसे उसका सही अर्थ पूछा था।

२. हैदराबादके मिशन बोर्डिंग स्कूलकी अध्यापिका; बापू : कॉनवरसेशन्स ऐंड कॉरसपॉन्डेंस विद महात्मा गांधी नामक पुस्तककी लेखिका।

३. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ ६७।

हम सबोंकी ओरसे प्यार सहित,

बापू

[पुनश्च :]

मैं देखता हूँ कि तुम उस धर्म-समाजमें शामिल हो गई हो, जो प्रति शुक्रवारकी शामको "लीड काइंडली लाइट" भजन गाता है।

कुमारी मेरी बार
करीम नगर
हिज एग्जॉल्टिड हाइनेस निजामका राज्य

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९८२) से। सी० डब्ल्यू० ३३१० से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

३९२. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१६ अगस्त, १९३२

भाईश्री खम्भाता,

आपका पत्र मिला। आपका इलाज छोड देनेकी खातिर मैंने पत्र नही लिखा था, बल्कि यह बतानेके लिए लिखा था कि मुझे तेलका कब्जा मिल गया है। दर्द मिटे न मिटे, इसकी मुझे चिन्ता नही। लेकिन इस तेलके पीछे तुम्हारा प्यार छिपा हुआ है, मैं यह जानता था इसीलिए मुझे उसका उपयोग करना था। बोतल खत्म होने तक मैं तेल मलवाऊँगा ही, तुरन्त नही छोडूंगा। सूर्यकी किरणें अभी तो कहाँसे लाऊँ? लेकिन जब सूर्य अच्छी तरहसे निकलेगा तो अवश्य लूँगा। ठण्डी पट्टियाँ तो नही रखी, लेकिन ठण्डे पानीमे मिट्टीका लोंदा बनाकर रखा था। उससे लाभ नही हुआ। मूल बात तो यह है कि दर्दका ठीक-ठीक कारण मालूम नही हो सका है, इसलिए सही इलाज भी नही हो पा रहा है। मेरी मान्यता तो यह है कि यह बुढापेकी निशानी है। यदि ऐसा हो, तो उपचार निरर्थक है। तथापि, आपका उपचार तो बिल्कुल निर्दोष है, इसलिए इसे नही छोड़ूँगा। आपको बुलानेका मन तो बहुत होता है, लेकिन चूँकि मैंने मुलाकातें बन्द कर दी हैं इसलिए आपको खास हड्डीके वैद्यके रूपमे ही बुलानेकी अनुमति प्राप्त करनी होगी। वैसा करनेकी इच्छा नही होती, क्योंकि इसमे तो मेहरबानी [के लिए याचना]का भाव दिखाई देता है। अतएव इस समय तो जो चल रहा है, उसीको चलने देना मैं उचित मानता हूँ।

मेरे दायें हाथकी कुहनीमे अभी कोई तकलीफ नही है। दायें हाथका तो अँगूठा लिखते समय दर्द करता था। मुझे लगता है कि वह आराममे ही ठीक हो गया। फिर दुखेगा तो उसे आराम दूंगा। उसकी भी महादेव रोज मालिश करता है। यह

पत्र मेरे दर्दकी कथासे भर गया। दर्दमें ऐसी कोई [विशेष] बात नही, लेकिन मैं जानता हूँ कि तुम्हे यह कथा सुनना अच्छा लगता है, इसीसे पत्र भर दिया।

एन्ड्रयूज गुरुदेवके पौत्र[1] को देखनेके लिए जर्मनी गये थे। वह तो चला गया।

आपके लम्ब्रेगो [एक प्रकारका गठिया] की दवा तो मुझे करनी चाहिए न? उसके लिए उपवास, भाप और कटिस्नान ही है। इतनेमे यदि यह रोग न जाये तो कभी नही जाता, ऐसा अनुभव है। उपवास करना तो एक कला है। पूनामे मेहताको उसका अनुभव है। उनमे आप मिले है? मुझे इसका निजी अनुभव तो नही है, लेकिन उनके पास मैंने एक सिन्धीकी पत्नीको भेजा था, उसका अनुभव है। वह रोग तो कुछ दूसरा ही था। लेकिन यह तो पत्रको भरनेकी बात हुई। उपवास, कटिस्नान आदि करते हुए भी अन्तिम उपाय तो भगवत शरण ही है।

– बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५५१) से। सी० डब्ल्यू० ५०२६ मे भी; सौजन्य: तहमीना खम्भाता

३९३. पत्र: रेहाना तैयबजीको

१६ अगस्त, १९३२

बेटी रेहाना,

फिर तुम्हारा खत नही है। उम्मीद है तुम्हारी सेहत अच्छी तो होगी। तुमको मैंने लिखा है कि मैंने जोहराको उर्दूमे खत[2] लिखा था। डाक्टर अनसारीको इसका पता लगा। मैंने उनको लिखा ये सब रेहानाकी कारवाई है। इस परसे खुश होकर लिखते है कि रेहानाको लव भेजो। याद रखो मेरी गलतियोंके लिए जिम्मेवारी तुम्हारी है। गालिबकी यह गजलके माने भेजो:

कफसमें हूं तो अच्छा भी
न जाने मेरे शेरों को
मेरा होना बुरा क्या है
नवासंजाने गुलशन को
न नीकला आंखसे तेरी
एक आंसु इस जुदाहत पर
किया सिनेमें जिसने खून
चोकन भीझगा सोजनको

१. नितिन, जिसकी क्षयरोगके कारण जर्मनीमें मृत्यु हो गई थी।
२. ७ जुलाई, १९३२ को।

शहादत थी मेरी किस्मतमें
जो दी थी यह खू मुझको
जहां तलवारको देखा
झुका देना था गरदनको
सुखन क्या यह नहीं सीखे
कि जरियां हो जवाहिरके
जिगर क्या हम नहीं रखते
कि खोवें जा के [कमरू][1]

इसके मतलब समझ गया हूं, लेकिन हरएक लफसके माने ठीक मालूम नही है। अब्बाजान अम्माजानको हम सबकी तरफसे, बहुत आदाब। हमिदा आ गई? खुदा हाफिज।

बापू

[पुनश्च :][2]

इतना लिखनेमें बहुत समय चला गया। मुझे उम्मीद है कि तुम्हें पढ़ पानेमे कोई परेशानी नही होगी। तुम न लिख सको तो हमीदासे, अथवा जो कोई तुम्हारे पास हो उससे दो पंक्तियां ही सही लिखवा भेजना। पाठ न मिले तो उसकी परवाह नही।

बापूके आशीर्वाद

उर्दू और/ गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६८०) से।

३९४. एक पत्र[3]

१६ अगस्त, १९३२

तुम्हारा यह लिखना बिल्कुल ठीक है कि जो व्यक्ति विश्वासपात्र नही है उसका विश्वास नही किया जा सकता। मेरे लिखनेका उद्देश्य यह था कि हमें किसीको सन्देहकी दृष्टिसे नही देखना चाहिए। जैसे हम चाहते हैं कि संसार हमारे वचनोंका विश्वास करे, वैसे ही हमें दूसरे व्यक्तिके वचनोका विश्वास करना चाहिए। जब वह विश्वासपात्र न निकले तब हम पश्चात्ताप न करें। विश्वास रखनेवाले व्यक्तिने आजतक जगतमे कुछ खोया नही है, लेकिन विश्वासघात करनेवाला व्यक्ति तो करोड़ोकी प्राप्ति करता हुआ भी खोता ही है। जब हमारी आत्मा

१. मूलमें यहाँ अस्पष्ट है।
२. इसके बादका अंश गुजरातीमें है।
३. सम्भवतः यह पत्र डा० प्राणजीवन मेहताके किसी सम्बन्धीको लिखा गया था।

भ्रष्ट हो जाये तब समझो कि हमने खोया। धन-दौलत तो आनी-जानी है। वह जाये तो उसका कदापि शोक न करे।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

३९५. पत्र : रामेश्वरलाल बजाजको

१७ अगस्त, १९३२

भाई रामेश्वरदास,

तुमारा पत्र महादेवपर था। वह मैंने पढा। मैंने तो किसके लिये मेरी नाराजी जाहेर नहिं की है न किसीके लिये हे। मेरा परिचय भी सिर्फ बनारसीसे है। और उसको मैं अच्छा, विनयी, सादा, सत्यप्रिय नवयुवक समझता हू। मुझे उसके बारेमे कोई असंतोष नहिं है। उसके पत्र भी मेरे पास बराबर आते रहते हैं। जो कोईने तुमसे लिखा वह कुछ जानता हि नहिं। क्यों लिखा वह मेरी समझके बहार है।

तुमारे जितने पत्र आये उसका मैंने ठीक उत्तर भेजा है।

हां तुमसे मेरा असंतोष है सही। वहां[1] पड़े हो और सब बेच कर यहां नहिं आ जाते हो। गरीबीका डर क्यो? यहां आ कर साझदारमे धार्मिक जीवन व्यतीत करो। वहां जीवन बरबाद होता है।

रुक्मिणी तो लिखती रहती है।

हम सब अच्छे हैं। मेरे हाथको कोई चिंता नहिं है। तुमारा प्रेम हर घड़ी याद आता है।

बापुके आशीर्वाद

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०६३) से। सी० डब्ल्यू० ९४४७ से भी; सौजन्य : बनारसीलाल बजाज

१. इंग्लैंडमें।

३९६. पत्र : रैमजे मैक्डोनॉल्डको

१८ अगस्त, १९३२

प्रिय मित्र,

'दलित वर्गों' के प्रतिनिधित्वके सवालपर मैंने ११ मार्चको जो पत्र[1] सर सैमुअल होरको लिखा था, मुझे कोई शक नहीं है कि उन्होंने उसे आपको और मन्त्रिमण्डलको दिखा दिया है। उस पत्रको इस पत्रका ही एक अंश समझना चाहिए और उसे इस पत्रके साथ मिलाकर पढा जाना चाहिए।

अल्पसंख्यक जातियोके प्रतिनिधित्वके सवालपर ब्रिटिश सरकारका फैसला[2] मैंने पढ़ा है और उसपर शान्त मनसे मनन किया है।[3] मैंने सर सैमुअल होरको जो पत्र लिखा है, और सेंट जेम्स पैलेसमें गोलमेज सम्मेलनकी अल्पसंख्यक जाति समितिमे १३ नवम्बर, १९३१ को मैंने जो घोषणा[4] की थी उसको दृष्टिमे रखते हुए मुझे आपके फैसलेका प्राणोंकी बाजी लगाकर विरोध करना है।

ऐसा मैं एक ही ढंगसे कर सकता हूँ और वह यह है कि मैं आमरण अनशन करूँ और केवल नमक और सोडा मिला हुआ या बिल्कुल सादा जल ही लूं। यह अनशन उस समय समाप्त हो जायेगा जब अनशनके दौरान ब्रिटिश सरकार अपनी ही इच्छासे या लोकमतके दबावके कारण, अपने फैसलेपर पुनर्विचार करे और 'दलित' वर्गोंके लिए साम्प्रदायिक मताधिकारकी योजनाको वापस ले ले। दलित वर्गोंके प्रतिनिधियोंका निर्वाचन सामान्य मताधिकारके अन्तर्गत आम मतदाताओं द्वारा होना चाहिए, भले ही सामान्य मताधिकार कितना ही व्यापक क्यों न हो।

१. देखिए खण्ड ४९, पृष्ठ १८१-४।

२. १७ अगस्त १९३२ को ब्रिटिश प्रधान मन्त्री सर रैमजे मैक्डोनॉल्डने अल्पसंख्यकोंके प्रतिनिधित्वकी एक अंतरिम योजनाकी घोषणा की थी, जिसे "कम्यूनल अवार्ड" के नामसे जाना जाता है। इस योजनामें प्रान्तीय विधानमण्डलोंमें अल्पसंख्यक जातियों और मुसलमानोंके लिए सीटोंकी संख्या निर्धारित की गई थी और बंगाल तथा पंजाबमें, जहाँ मुसलमान स्पष्ट ही बहुमतमें थे, वहाँ भी अल्पसंख्यक जातियों और मुसलमानोंके लिए पृथक निर्वाचनकी व्यवस्था की गई थी। उन प्रान्तोंके मुसलमानोंको जहाँ वे अल्पसंख्यामें थे तथा पंजाबके सिखों और हिन्दुओंको भी अधि-प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया था। दलित वर्गोंको अल्पसंख्यक जातियोंके रूपमें मान्यता प्रदान की गई थी और पृथक मतदानका अधिकार दिया गया था। दलितवर्गोंके लिए विशेष रूपसे सुरक्षित निर्वाचन क्षेत्रोंकी स्थापनाके साथ ही उन्हें यह भी अधिकार दिया गया था कि वे सामान्य सीटोंपर भी चुनाव लड़ सकते हैं। योजनामें यह व्यवस्था की गई थी कि बीस वर्ष बाद विशेष मतदान सूचियाँ और सुरक्षित स्थानोंकी व्यवस्था अपने-आप समाप्त हो जायेगी।

३. गांधीजीने यह पत्र १७ तारीखको लिखना आरम्भ किया था और १८ तारीखको इसे पूरा किया था। इस पत्रसे सम्बन्धित वार्तालापोंके लिए देखिए परिशिष्ट।

४. देखिए खण्ड ४८, पृष्ठ ३३१।

यदि उक्त फैसलेको ऊपर दिये गये सुझावोंके अनुसार बदला नहीं गया, तो मेरा प्रस्तावित अनशन आगामी २० सितम्बरकी दोपहरसे आरम्भ हो जायेगा।

मैं अधिकारियोंसे यहाँ कह रहा हूँ कि वे इस पत्रका पाठ आपको तारसे भेज दें ताकि आपको पर्याप्त पूर्व-सूचना मिल जाये। लेकिन किसी भी हालतमें इसका ध्यान रख रहा हूँ कि सर्वाधिक विलम्बवाले रास्तेसे भेजे जानेपर भी यह पत्र आपको समय रहते मिल जाये।

मैं यह भी चाहता हूँ कि इस पत्रको और सर सैमुअल होरको लिखे अपने जिस पत्रका मैंने उल्लेख किया है उसे जल्दीसे-जल्दी प्रकाशित कर दिया जाये। जहाँतक मेरा सवाल है, मैंने जेलके नियमका सावधानीसे पालन किया है और अपने दो साथियों, सरदार वल्लभभाई पटेल और श्रीयुत महादेव देसाई, को छोड़कर मैंने अपनी यह इच्छा अथवा उक्त दोनों पत्रोंमें कही गई बातें किसीको भी नहीं बताई है। लेकिन यदि आप सम्भव कर सकें तो मैं लोकमतको अपने पत्रसे प्रभावित करना चाहूँगा। उन्हें शीघ्र प्रकाशित करानेका मेरा अनुरोध इसी निमित्त है।

मैंने जो फैसला लिया है, उसका मुझे खेद है। लेकिन मैं अपनेको एक धर्म-प्रिय आदमी मानता हूँ, और उस नाते मेरे सामने और कोई रास्ता नहीं है। जैसा कि मैंने सर सैमुअल होरके नाम अपने पत्रमें कहा है, यदि ब्रिटिश सरकार अपने आपको अटपटी स्थितिमें पड़नेसे बचानेके लिए मुझे छोड़ भी देगी तो भी मेरा अनशन जारी रहेगा। कारण, मुझे अब सरकारके फैसलेका अन्य किसी उपायसे प्रतिरोध कर सकनेकी उम्मीद नहीं रह गई है। मुझे अपनी रिहाईके लिए किसी ऐसे तरीकेका उपयोग करनेकी इच्छा नहीं है, जो सम्मानजनक न हो।

यह हो सकता है कि पृथक निर्वाचनको 'दलित' वर्गोंके लिए तथा हिन्दू-धर्मके लिए भी हानिकारक समझकर मैं बिल्कुल गलती कर रहा हूँ और मेरी समझ विकृत हो। यदि ऐसा हो, तो फिर मेरे जीवन-दर्शनके जो अन्य हिस्से हैं उनमें भी मैं सही नहीं हो सकता। वैसी दशामें अनशन करते हुए मेरा मर जाना मेरी गलतीका प्रायश्चित्त स्वरूप भी होगा और उन असंख्य स्त्री-पुरुषोंके ऊपरसे एक बोझ हटने जैसा भी होगा, जिनको मेरी समझदारीमें बच्चों-जैसासरल विश्वास है। दूसरी ओर, यदि मेरा निर्णय सही है, और मुझे कोई सन्देह नहीं है कि वह सही है, तब मेरा यह प्रस्तावित कदम जीवनकी उस योजनाकी पूर्ति-जैसा है, जिसे मैंने एक चौथाई शताब्दीसे अधिक समयतक काफी सफलताके साथ आजमाया है।

आपका विश्वसनीय मित्र,

मो० क० गांधी

सेवामें
द राइट ऑनरेबिल जे० रैमजे मैक्डोनॉल्ड
प्रधान मन्त्री, लन्दन

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-९-१९३२

३९७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१८ अगस्त, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

राखी मिली, दो दिन विलम्बसे। लेकिन मैंने तो उसे सोमवारको ही मिली माना।

केला यदि तुझे अनुकूल नही बैठता है तो उसे जबरदस्ती लेनेसे कोई फायदा नही। हर व्यक्तिके पेटकी अपनी विशेषता होती है।

तेरे क्रोधका मैंने अच्छी तरह विश्लेषण किया है। तू उसपर विजय पायेगी। मुझे विश्वास है कि तू ऐसा अवश्य कर सकेगी। अपने पत्रमे जो हिस्सा तूने काटे विना छोड़ दिया है, उसके पीछे निहित अर्थको मै समझा हूँ। न काटना ही उचित था। अपनेको यदि किसी चीजकी आवश्यकता हो तो उसको न कहनेमे भारी अभिमान और अन्याय है, और इससे प्रियजनोंपर भारी बोझ आ पडता है। हमारी विनयशीलता और निरभिमान प्रियजनोको हमारी आवश्यकताओंको जाननेके कष्टमे बचा लेते है। यह तो विनयका पहला पाठ है। इसे अब सीखो।

कृष्ण नायरको लिखना कि मै तो बहुधा उसका स्मरण करता हूँ।

तू राजकोट गई, यह तो ठीक ही हुआ। ऐसा लगता है कि तेरी तबीयत इतना [आराम] तो अवश्य माँगती है।

सार्वजनिक रायका अर्थ यह हुआ कि जिस समाजके मतकी हमे परवाह है उसकी राय। और यह राय जबतक नीति-विरुद्ध न हो तबतक उसको मान्यता प्रदान करना हमारा धर्म है।

धोबीके किस्सेसे शुद्ध निर्णय करना मुश्किल है। हमे तो वह आज कतई अच्छा नही लग सकता। ऐसी टीकाको सुनकर अपनी पत्नीका परित्याग करनेवाला व्यक्ति निर्दयी और अन्यायी ही माना जायेगा। लेकिन 'रामायण' मे कविने किस भावनासे प्रेरित होकर इस घटनाका वर्णन किया है सो मै नही कह सकता। इस झंझटमे पड़ना हमारा काम नही है। मै तो कमसे-कम इस झमेलेमे न पड़ूं। 'रामायण' जैसी पुस्तकोको मै इस दृष्टिसे नही पढ़ता।

लड़कियोके साथ मै जो छूट लेता हूँ उससे यदि आश्रमवासियोंको आघात पहुँचता है तो ऐसी छूट मुझे नही लेनी चाहिए, ऐसी मेरी मान्यता है। इस छूटको लेनेमें कोई स्वतन्त्र धर्म नही है और न लेनेमे ही नीतिका भंग होता है। लेकिन मेरे ऐसी छूट न लेनेका यदि लड़कियोपर बुरा असर होता है तो मै आश्रमवासियोको समझाकर यह छूट लूंगा। लेकिन यदि लड़कियाँ ही मुझे न छोड़े तो ऐसी स्थितिमें क्या करना चाहिए, यह देखना मेरा काम होगा। मै जो छूट जिस प्रकार भी लूं,

उसका कोई किसी भी रूपमे अनुकरण नही कर सकता। यह तो एक स्वाभाविक क्रिया होनी चाहिए। 'आजसे मुझे छूट लेनी है' ऐसा मनमें विचार करके कृत्रिम भावसे भी कोई छूट नही ले सकता, और ले तो यह गलत बात होगी। नारणदासको जो उचित लगे उसे करनेके लिए वह स्वतन्त्र है। मुझे उसकी टीका करनेकी इच्छातक नही होती। सच बात तो यह है कि जो व्यक्ति विकारवश अत्यन्त निर्दोष छूट भी ले, तो वह स्वयं खाईमें गिरता है और साथमे दूसरोंको भी ले डूबता है। हमारे समाजमे जबतक स्त्री-पुरुषका सम्बन्ध सामान्य नही हो जाता तबतक सावधानीके साथ चलनेकी जरूरत है। इस सम्बन्धमें जो सबपर लागू हो सके ऐसा राजमार्ग नही है। तेरे अपने व्यवहारमे बहुत-सी खामियाँ हैं। तेरी स्वाभाविक निर्दोषता ही तेरी रक्षा करती है, लेकिन तू इसका अभिमान करे और हठपूर्वक उससे चिपकी रहे, यह उचित नही है। यह तेरी विचारहीनता है। उससे होनेवाले नुकसानसे आज तू परिचित नही है। लेकिन किसी-न-किसी दिन तुझे अवश्य पछताना पड़ेगा। अभिमान किसीका नही टिका है। समाज द्वारा निश्चित सीमाएँ खराब ही है, ऐसा कहकर समाजपर कुठाराघात नही किया जा सकता। अब समझी कि सार्वजनिक रायका अर्थ क्या है?

धुरन्धरसे कहना कि मेजरने जो कहा है उसे याद रखे। आसनोंके प्रचारके लिए उसे स्वयं चलता-फिरता विज्ञापन बनना पड़ेगा।[1]

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२९९) से। सी० डब्ल्यू० ५७४५ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

३९८. पत्र : मीराबहनको

१९ अगस्त, १९३२

चि० मीरा,

तो अब तुम फिर अपनी माँदमें पहुँच गई हो।[2] मुझे उम्मीद है कि तुम खोई हुई शक्ति और स्फूर्ति फिरसे प्राप्त कर लोगी। और तुम अकारण ही चिन्ता भी नही करोगी। तुम केवल कताईपर और ऐसे अध्ययनपर ध्यान केन्द्रित करो, जो तुम आसानीसे कर सको। हम सब मजेमे हैं। हम सबोंकी ओरसे प्यार। ईश्वर तुम्हारे साथ रहे।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९६९९ से भी।

१. धुरन्धर योगासन किया करते थे और वे जहाँ-जहाँ जाते थे इनका प्रचार किया करते थे।

२. मीराबहनको एक वर्षकी कैद हो गई थी।

३९९. पत्र : गुलाबको

१९ अगस्त, १९३२

चि० गुलाब,

मनमे जो विचार उठें वे यदि अच्छे हों, तो कोई हर्ज नही। निकम्मे विचार हो तो रामनाम लेकर उन्हें निकाल बाहर करना चाहिए और अपने कामका ही विचार करना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२१) से।

४००. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

१९ अगस्त, १९३२

चि० पुरुषोत्तम,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनोंके बाद मिला। प्रार्थनाके लिए आश्रममें जो समय निर्धारित है तुम उसका पालन नही कर पाते, इसमे चिन्ताकी कोई बात नही। तुम और जमना दोनों शरीरकी दृष्टिसे कमजोर रहे हो। जिनसे जल्दी उठा ही नही जाता, उनसे जोर-जबर्दस्ती नही की जा सकती। जल्दी उठनेकी कुंजी जल्दी सोनेमें है।

पीलियाके लिए मुझे लगता है कि कटिस्नान, सूर्यस्नान और फलाहार अथवा जितना हजम हो सके, उतना दूध लेना रामबाण उपचार सिद्ध होगा। खुली हवा तो चाहिए ही।

आरोग्य पुस्तकमे[1], मुझे जिन-जिन रोगोंका अनुभव हुआ है, उन-उन रोगोंकी ही चर्चा की गई है।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०४) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. आरोग्यकी कुंजी; देखिए खण्ड ११ और १२ में प्रकाशित "आरोग्यके सम्बन्धमें सामान्य ज्ञान" लेखमाला।

४०१. पत्र : नानालाल के० जसाणीको

१९ अगस्त, १९३२

भाई नानालाल,

जेठ-आषाढ़मे हम जिस तरह मेघराजकी बाट जोहते है, उसी तरह मैं तुम्हारे पत्रकी बाट जोह रहा था। जिस दिन मुझे डाक्टरकी चिरनिद्राका तार मिला उसी दिन मुझे तुम्हारी याद आई और मैंने तुम्हे पत्र भी लिखा।[1] मनमे इच्छा हुई कि यदि तुम पास होते तो कितना अच्छा होता, लेकिन तुम पास ही थे यह मुझे मालूम न था। कहाँ होगे इसकी भी मुझे कोई खबर न थी, इसीलिए मैंने मणिलालको पत्र लिखा[2] तथा उसके पत्रमे ही मैंने तुम्हारा और खीमचन्दका पत्र रखा और उसी पत्रमे तुम्हारी मदद माँगी। खीमचन्दको सावधान किया। उसके पत्रमे खीमचन्दके प्रति अपने अविश्वासका उल्लेख भी किया, अन्य लोगोके अविश्वासकी बात भी लिखी। लेकिन मैंने यह भी लिखा कि डाक्टरको उसपर बहुत विश्वास था और यह इच्छा प्रकट की कि वह उस विश्वासका घात न करे। मगनलाल जब इग्लैंड गया था उन्ही दिनों उसने खीमचन्दके बारेमे दो लम्बे पत्र लिखे थे, जिनपर से मैंने डाक्टरको भी लिखा था। लेकिन डाक्टरने मुझे आश्वासन दिया कि खीमचन्दने नया पन्ना बदला है अर्थात् वह बदल गया है, अत: उसपर अविश्वास करनेका कोई कारण नही है। अब तुम्हे वहाँ हस्तक्षेप करनेमे तनिक भी सकोच नही करना चाहिए। अब तुम्हारा धर्म यह है कि तुम्हे किसीके निमन्त्रणकी राह नही देखनी चाहिए। तुम्हारे प्रति डाक्टरको कितना विश्वास था, यह तो उनके अन्तिम पत्रमे स्पष्ट रूपसे दीख पड़ता है। छगनलाल मुझे लिखता रहता है। उसने सुन्दर पत्र लिखा है। मै जैसा कहूँ वैसा करनेकी उसने प्रतिज्ञा की है। अपने विचार भी प्रकट किये हैं, लेकिन उनपर अमल करनेके बारेमे उसका किसी प्रकारका आग्रह नही है। मेरे पत्र वहाँ [अगले माहकी] १३ तारीखतक पहुँच पायेंगे, ऐसा नही जान पड़ता। इसलिए मेरी अपेक्षाओको जाने विना उसने उस लेखकी नकल मुझे भेज दी है; जो तुमने उसे भेजा था। डाक्टरके जानेके बाद आजतक जो-जो पत्र और तार छगनलालकी ओरसे आये हैं वे ऐसे हैं जिन्हे पूरी तरहसे सन्तोषजनक कहा जा सकता है। इसके पीछे यदि कोई और उद्देश्य रहा हो तो तुम मुझे बताना। मै तो छगनलालके ऊपर विश्वास रखकर काम कर रहा हूँ। रतिलाल देसाईको[3] [ऐसा विश्वास] नही है, ऐसा उसने लिखा है। हिसाब-किताब ठीक करनेके अलावा अभी मैंने और कोई सुझाव नही दिया है।

१. देखिए "पत्र : नानालाल के० जसाणीको", ४-८-१९३२।

२. देखिए "पत्र : मणिलाल आर० झवेरीको", ४-८-१९३२।

३. डा० प्राणजीवन मेहताके दामाद।

इस समय तो मैं सारी जानकारी इकट्ठी कर रहा हूँ। रतिलाल, चम्पा और मंजुलाको मैंने तार[1] द्वारा उस ओर दौड़कर जानेसे रोका है। मेरी इच्छा तो मगनलालको भी रोक लेनेकी थी, लेकिन मुझे पूरा यकीन था कि वह इतना ज्यादा धीरज नही रख सकता। उसे छगनलालका विश्वास नही है, यह बात भी मैं जानता था। मेरा विचार तो सदासे यह रहा है कि तीनों भाइयोंका भाग अलग-अलग हो जाना चाहिए। जैसा छगनलालने लिखा है, उसके मुताबिक मैं डाक्टरकी जितनी मिल्कियत समझता था उससे बहुत कम निकली है। छगनलालने लिखा है कि नकद रुपया तो बिलकुल नही हैं तथा उसने मायाशंकरके[2] प्रति अपना अविश्वास भी व्यक्त किया हैं। मैं समझता हूँ कि डाक्टरकी अन्तिम लिखावटको हमें वसीयतनामा मानकर काम करना चाहिए। लेकिन जैसा कि छगनलालने लिखा है, यदि उतनी ही सम्पत्ति है और नकदी भी कुछ नही है तो डाक्टर द्वारा निश्चित रकम अब कहांसे दी जा सकती है? इन सबके बारेमे मुझे निःसकोच होकर और विस्तारपूर्वक लिखना। इस समय मैं बन्दी हूँ, यह बात मुझे अखर रही है। लेकिन हमारा सोचा इस जगतमें होता नही है। इसलिए जिस स्थितिमें हम हों उसीमें रहते हुए, हमसे जितना हो सके अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४६२) से।

४०२. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

२० अगस्त, १९३२

चि० जानकीमैया,

खूब! आखिर पेंसिलसे दो सतरें लिखनेकी तकलीफ की तो। जेल जाकर भी आखिर आलस्य नही गया न? 'अ' वर्ग देनेमे ही भूल हुई। 'क' वर्ग देकर खूब काम कराना चाहिए था। आलस्यकी तो खैर कोई बात नही, परन्तु अब शरीरकी हालत ठीक कर लेना। विनोबाके शिकंजेमे खूब फँसी हो। पत्र बराबर नहीं आयेंगे तो सजा मिलेगी। तुमने जिस पुरानी कमलीको खादीके साथ सीकर फिरसे बनाया था वह राजमहल[3] में हो आई, यह बात मैं कह चुका हूँ न?[4] यहाँ तो वह है ही। अभी तो वह बहुत चलेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९००) से।

१. देखिए "तार: नारणदास गांधीको", ५-८-१९३२।
२. मायाशंकर मजलाल देसाई, डा० प्राणजीवन मेहताके व्यवसायमें साझेदार
३. बकिंघम पैलेस।
४. देखिए "पत्र: मथुरादास पुरुषोत्तमको", ६-७-१९३२ भी ।

४०३. पत्र : लीलावती आसरको

२० अगस्त, १९३२

चि० लीलावती,

मेरा सन्देश तो तुझे मिला होगा। अब तेरा दुःख कुछ कम हुआ होगा। दूसरे अध्यायका स्मरण करना।

तू अपने धनकी व्यवस्था नारणदासको सौंप दे और वह जैसी व्यवस्था करना चाहे वैसी करने दे, यह बात मुझे सबसे अच्छी लगती है। वह जो प्रबन्ध करे सो तू जान लेना। रसीद आदि लेकर सँभालकर रखना अथवा असल प्रति नारणदासको सँभालनेके लिए दे देना। इस सम्बन्धमें विशेषतः नारणदाससे जानकारी लेना। मैं उसे लिख रहा हूँ। यहाँसे मुझे इससे ज्यादा नहीं सूझ पड़ता। उम्मीद है, तेरी तबीयत अच्छी होगी। कामका हिसाब लिख भेजना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७०) से। सी० डब्ल्यू० ६५४२ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

४०४. पत्र : छगनलाल जोशीको[1]

२० अगस्त, १९३२

शरीरको रुग्ण बनानेके अनेक कारणोंमें से एक कारण अधीरता है। पहले मन अधीर बनता है, बादमें शरीर बनता है। लेकिन यह एक अनुभव वाक्य है कि 'अधीरा सो बावरा धीरा सो गंभीर'। यदि संसार जल रहा हो तो क्या हम अधीरतासे उसकी आगको बुझा सकते हैं? और हमें बुझानेकी जरूरत भी क्या है? क्या तुम जानते हो कि जब आगकी बड़ी-बड़ी लपटें उठ रही हों, उस समय आग बुझानेवाले लोग लपटोंपर पानी नहीं डालते। वे आसपासके हिस्सेकी ही देखभाल करते हैं और यदि वे इतना भी कर पायें तो कर्मकुशल अर्थात् योगी माने जायें। यदि हम अपना कर्तव्य करते रहें तो वह सारी आगको बुझानेके समान ही होगा। देखनेमें भले ही ऐसा प्रतीत न हो, लेकिन उसे बुझा हुआ ही समझना चाहिए। सत्यकी शोध करते-करते मुझे तो इसके अतिरिक्त और चीज हाथ नहीं लगी और भविष्यमें कुछ हाथ आयेगा, ऐसा भी प्रतीत नहीं होता। यदि यह ठीक न हो तो सत्याचरण

१. छगनलाल जोशीके पत्रमें आसपासके वातावरणसे उत्पन्न निराशा और अनेक कार्योंको पूरा करनेकी अधीरताका वर्णन था।

और सत्य पर आग्रह, दोनों असम्भव हो जाये। आग्रह उसीका हो सकता है जो सम्भव हो। जो व्यक्ति चन्द्रमाके पर्वतोंकी हवाका आग्रह रखे वह शेखचिल्ली ही माना जायेगा, क्योंकि यह असम्भव है। यही बात हमारे कर्त्तव्यके सम्बन्धमें भी लागू होती है। और वस्तुतः देखा जाये तो सबका कर्त्तव्य स्पष्ट होता है; इसके लिए लम्बी नजर डालनेकी जरूरत ही नहीं है। उसे केवल नाकके आगे ही देखनेकी जरूरत है। पैरोंके आगे पड़े हुए कचरेको ही फेंकनेकी जरूरत है। जैसे-जैसे हम कचरा निकालते जायेंगे वैसे-वैसे और कचरा उभर कर हमारे सामने आयेगा और हम उसे भी साफ करेंगे, भले ही जीवनके अन्ततक वह खत्म हुआ न लगे। जीवनका अन्त कहाँ है? अन्त तो शरीरका है, लेकिन उसकी क्या चिन्ता? और यदि जीवनका अन्त नहीं है तो हमें यह देखकर हार नहीं बैठना चाहिए कि कचरेका तो कोई अन्त ही नहीं है। दर्जीका लड़का जबतक जीता है तबतक सीता है। यदि अन्तिम श्वास लेते समय भी उसके हाथमें सुई हो तो वह कर्तव्यपरायण समझा जायेगा।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड–१

४०५. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२० अगस्त, १९३२

अब तो तू रिहा हो जायेगी। लेकिन मुझसे नहीं मिल पानेका तुझे दुख होगा, मुझे तो है ही। तेरे लिए भी मुक्त होनेका मन होता है। लेकिन यह तो तू भी मानती होगी कि यह शोभाकी बात नहीं होगी। हमारा जीवन त्यागसे ही गढ़ा गया है। इसलिए शान्ति रखना। मुझे बराबर लिखती रहना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४०६. पत्र : बालकृष्णको[1]

२० अगस्त, १९३२

मायाको शंकराचार्य किस तरहसे मानते थे, यह मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता। मेरी मान्यता यह है: हम जिस तरह जगतको मानते हैं, देखते हैं, वह आभास-मात्र है, हमारी कल्पना है। लेकिन जगतका अपना अस्तित्व तो है ही। वह कैसा है, यह हम नहीं जानते। ब्रह्म है, ऐसा कहनेके साथ ही हम उसका वर्णन 'नेति, नेति' कहकर करते हैं। जगत भी ब्रह्म ही है। वह ब्रह्मसे भिन्न नहीं है और जो भिन्नता हमें दिखाई देती है वह आभास-मात्र है।

१. सम्भवतः बालकृष्ण भावे, विनोबा भावेके भाई।

मेरे कहनेका अभिप्राय यह है कि हमारी आयुका माप छोटा या बड़ा हो सकता है। वस्तुतः प्रत्येक देह अपने समग्र स्वधर्मोके साथ ही उत्पन्न होती है। वे क्या हैं, यह हम नही जानते, जाननेकी आवश्यकता भी नही।

काल-विभाग मनुष्यकृत हैं और कालचक्रमें वे रजकणसे भी लघु हैं। हम अपनी गिनतीके करोड़ों हिमालयोंको इकट्ठा करें तो भी वे कालचक्रसे छोटे हैं। इसलिए मनुष्यके हाथमे जो है वह नहींके समान है। वह स्वयं भले ही अपने मन मुस्कराता रहे।

स्वप्नके भौतिक कारण तो असंख्य हैं। स्वप्नमें भी स्वप्नके मिथ्या होनेकी बात देखी जा सकती है। यह कदाचित् जागृति और स्वप्नावस्थाका सन्धिकाल होता है। स्वप्नदोष कई बार केवल शारीरिक कारणोसे बिना विकारके होता है। उसका निवारण खुराक सम्बन्धी रद्दोबदलसे किया जा सकता है। बहुधा उसका कारण कब्ज होता है। दूधसे स्वप्नदोष होता है। उसमे बहुत करके विकार भी कारण रूप होता है, क्योकि दूध विकारोत्तेजक है। लेकिन यह बात तुम पर लागू नही होती। तात्पर्य यह कि जिनके शरीर दुर्बल हो गये हैं उनके शरीरमें दूध विकार पैदा नही कर सकता, फिर भले ही वह दूध विकारी पुरुषने पिया हो। जिनके शरीर दुर्बल हो गये हों उनका पोषण करनेमें ही दूधकी सारी शक्ति चली जाती है। डाक्टर रजब अली जो कहते हैं वह किसी हदतक सही है। लेकिन जिनका शरीर और मन बिल्कुल नीरोग है उन पर डा० रजब अलीका कथन लागू नही होता।

ज्ञानी पुरुषके स्वभावमें लोकसंग्रहकी भावनाका होना आवश्यक है। इसका कोई अपवाद हो ही नही सकता।

मैं अपने मनको कितने समयतक विचारोंसे मुक्त रख सकता हूँ सो नही बता सकता, क्योंकि मैंने कभी इसका माप नही निकाला। लेकिन इतना जानता हूँ कि मेरे मनमें व्यर्थके विचारोको अवकाश नही है। यदि वे मनमें आ भी जायें तो उन्हें चोरकी तरह भाग जाना पड़ता है।

दम्भ तो केवल असत्यका आवरण है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४०७. पत्र : मथुरादासको[1]

२० अगस्त, १९३२

यान्त्रिक सिलाईकी कल्पना गरीबोको खादीके वस्त्रोकी सिलाईका काम देनेके विचारसे नही की गई है अपितु उसके पीछे विना किसी नुकसानके गरीबो द्वारा बुनी हुई खादीकी तुरन्त खपतकी व्यवस्था करनेका भाव है; महँगी दीख पड़नेवाली खादीको सस्ता करनेके लिए इस यन्त्रका आयोजन किया गया है। . . .[2]

विकारका भी चिन्तन न करना। अमुक वस्तुका निश्चय करनेके वाद उसे पूरा हुआ समझना चाहिए। व्रतका अर्थ ही यह है कि जिस वस्तुका हमने व्रत लिया है उसके वारेमे मनने सोचना ही वन्द कर दिया है। व्यापारी अमुक वस्तुका सौदा करनेके वाद जिस तरह उसका विचार नही करता और अन्य वस्तुके वारेमे सोचता है, उसी तरह व्रतके वारेमें भी समझना चाहिए।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४०८. पत्र : मदालसा वजाजको

२० अगस्त, १९३२

चि० मदालसा,

तेरा पत्र मिला। तू भले ही माने कि तेरे अन्दर ईर्ष्या, अभिमान वगैरा भरे पड़े हैं, पर मैं नही मानता। ये दोप तूने कहाँसे लिये होंगे? जमनालालमें तो ये है ही नही, जानकीवहनमे भी नही हैं। न तुझे कोई कुसग हुआ, न तुझे किसी चीजकी कोई कमी है। हाँ, क्रोध है; यह तो मैं भी देखता था। वह जानकीवहनमे भी है। फिर तेरा शरीर भी कमजोर है; लेकिन तू समझदार है, इस कारण विचारपूर्वक इस क्रोधको निकाल डाल। जैसे हम हैं वैसे ही सव हैं। सवमें एक ही जीवात्मा है। इसलिए किसी पर क्रोध करना अपने ऊपर ही क्रोध करनेके समान है। और जिसके अन्दर जीवमात्रकी सेवा करनेकी लगन पैदा होती है उसमें दोप रह ही नही सकते। तू अपनी सेवा-वृत्तिको वढाना।

मुझे नियमित रूपसे लिखे तो अच्छा होगा।

वापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको वापूके आशीर्वाद

१. सम्भवतः मथुरादास पुरुषोत्तम; देखिए "पत्र : मथुरादास पुरुषोत्तमको", ७-८-१९३२।
२. इसके वाद खुराकके विषयमें की गई चर्चाका साधन-सूत्रमें कोई उल्लेख नहीं मिलता।

४०९. पत्र : उमादेवी बजाजको

२० अगस्त, १९३२

चि० ओम,

तेरा पत्र मिला। तेरी लिखावट तो बहुत सुधर गई है। तेरा वजन यदि तेरी स्वस्थ देहकी वजहसे है तो उसको कम करनेकी क्या जरूरत है? यदि तू कद्दावर और बलिष्ठ है और इसके साथ तेरा मन भी उतना ही बलिष्ठ है तो तू सेवाके अधिक योग्य बनेगी। यदि किसी रोगके कारण शरीर फूल गया हो तो उसे निश्चय ही कम करनेका प्रयत्न करना चाहिए। क्या तुझे कोई रोग है? मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद

४१०. वाचन और विचार – २[1]

२१ अगस्त, १९३२

"उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है?"

अरे मुसाफिर उठो, सुबह हो गई है। अब रात कहाँ है जो तुम सोये हुए हो। इसके अर्थको जानकर भी जो उस पर अमल न करे, चुपचाप हाथपर-हाथ धरकर बैठा रहे तो समझना चाहिए कि उसने उपर्युक्त पंक्तिको पढ़ा तो अवश्य है, लेकिन उस पर मनन नहीं किया है। क्योंकि वह मनुष्य प्रभातमें उठेगा और अपनेको कृतार्थ हुआ मानेगा। लेकिन जो इस पर विचार करना चाहेगा वह अपने आपसे पूछेगा 'मुसाफिर, अर्थात् कौन? सुबह हो गई से कविका क्या अभिप्राय है? रात बीत गईका क्या मतलब? सोनेके क्या मानी हैं?' यदि वह इस तरह विचार करेगा तो एक पंक्तिमें से अनेक अर्थ निकलेंगे और वह समझेगा कि मुसाफिर अर्थात् प्राणि-मात्र। जिसे ईश्वर पर आस्था है उसके लिए तो हर दिन सुबह ही है। रातका अर्थ अज्ञान भी हो सकता है। और जो व्यक्ति जरा भी गाफिल – लापरवाह – रहता है उस पर यह पूरी तरह लागू होता है। जो झूठ बोलता है वह भी सुप्तावस्थामें है। यह पंक्ति उसे भी जाग्रत करनेवाली है। और इस तरह इस पंक्तिका व्यापक अर्थ करके उससे

१. यह लेख "पत्र: नारणदास गांधीको", २०/२१-८-१९३२ के साथ भेजा गया था।

आश्वासन प्राप्त किया जा सकता है। दूसरे शब्दोंमें, इसी पंक्ति पर अच्छी तरह मनन करनेसे यह मनुष्यकी आध्यात्मिक यात्राके लिए पर्याप्त पाथेयका काम दे सकती है। और चारों वेदोंको कण्ठस्थ करनेवाले और उनका अर्थ भी समझनेवाले व्यक्तिके लिए यही पंक्ति भाररूप भी बन सकती है। यह तो मैंने, जो ध्यानमें आ गया, वही एक उदाहरण दिया है। यदि सब अपनी दिशा निर्धारित करके विचार करने लग जायें तो वे अपने जीवनसे नये-नये अर्थ खोज निकालेंगे और नित्य नये आनन्दका आस्वादन करेंगे।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४११. पत्र : नारणदास गांधीको

२०/२१ अगस्त, १९३२

चि० नारणदास,

तुम्हारी बहुत भारी डाक मिली है। चम्पाकी ओरसे एक कटु पत्र आया था। उसे मैंने एक पोस्टकार्ड लिख दिया है, वह तुम्हें रविवारको अथवा सोमवारको मिल जाना चाहिए। नर्मदा बच गई इसलिए उसके प्रति हमारा विशेष कर्तव्य है। ऐसा जान पड़ता है कि उसकी पढाई बहुत कच्ची है, लिखावट भी ढंगकी नही है और यदि उसके नसीबमें अखण्ड ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन करनेकी बात लिखी होगी तो, ऐसा लगता है कि, उसके साथ उसे ज्ञानकी प्राप्ति भी होनी चाहिए। इसलिए समयकी कुछ ज्यादा सुविधा करके उसे कुशल बनाया जा सके तो बनाना। मिले हुए समयका यदि दृढ़तापूर्वक वह सदुपयोग न करे तो तुरन्त बन्द कर देना। लीलाधरके बारेमें तुमने जो किया है वह उचित जान पडता है। यदि सम्भव हो तो तुम जयसुखलाल-की लड़कियोंके मनसे अमरेलीकी यादको भुला देना। इन्दुके मामा कौन है? पाली-तानामें वह क्या करते हैं? कुसुम जबतक क्षयरोगके भयसे मुक्त नहीं हो जाती तबतक उससे नर्सिगका काम नहीं लिया जा सकता। यदि वह जाये और महीने दो महीनेमे वापस लौट आये तो यह बहुत बुरी बात होगी। नर्सिगमें बहुत मेहनत करनी पड़ती है, यह बात उसे अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए। सच्चे दिलसे काम करने-वाली सेविकाको सारा दिन खड़े रहना पड़ता है। खानेके लिए भी वह मुश्किलसे ही समय बचा पाती है।

रतुभाईकी स्थिति दयाजनक है। कर्ज होनेके बावजूद वह लड़कोंको किस लिए कालेजमें पढाता है? वह रंगून नही जा सकता यह बात तो मैं अच्छी तरहसे समझ सकता हूँ। क्या उसके बच्चोमे ऐसा कोई नही है जो आश्रममें आकर रह सके? सत्यवादी, उद्यमी और नीरोगी लड़के जीवनमें जितना ऊँचा जाना चाहे वे आश्रममे रहकर अपने इस लक्ष्यको प्राप्त कर सकते है। यह बात सही है कि वे आश्रममें कालेज-जैसी शिक्षा प्राप्त नही कर सकते, लेकिन कालेजकी शिक्षामें रखा क्या है?

तुम रतिलालको जानेसे रोक रहे हो, यह निःसंदेह बहुत अच्छी बात है। छगनलालने मुझे सुन्दर पत्र भेजे हैं जिससे मैं उसकी ओरसे अपेक्षाकृत निश्चित हो गया हूँ। नानालाल और मणिलालके पत्र भी मिले है। मंजुलाके पत्र तो आते ही रहते है। मंजुलाका मूल्य मेरी दृष्टिमे नित्यप्रति बढ़ता जाता है।

मुझे अपनी खुराकके सम्बन्धमें विचित्र अनुभव हो रहे हैं। केले लेते हुए मैंने जबतक दूध लेना बन्द नही किया तबतक कब्जकी शिकायतको पूरी तरहसे दूर न कर सका था। इसलिए अब दूध छोड़कर खाली केले लेने लगा हूँ। साँझको रोटी और हरी सब्जियाँ। इससे कब्जकी शिकायत कुछ कम तो हो गई। लेकिन चूँकि मुझे यह याद था कि १९३० में 'सी' वर्गके कैदियोंकी खुराककी नकल करनेके लोभमे आकर मैंने बाजरेकी रोटीका प्रयोग किया था जिससे मेरा कब्ज दूर हो गया था, इसलिए पिछले दिनों तीन दिनोसे साँझको हरी सब्जीके साथ बाजरेकी रोटी लेता हूँ। परिणामतः कब्ज बिलकुल दूर हो गया है। पिछली बार बाजरा जारी रखनेसे कब्ज तो दूर हो गया था, लेकिन उसके और परिणाम भी हुए जिसके फलस्वरूप मैंने बाजरा छोड दिया था। इस बार भी वैसा ही होनेकी सम्भावना है। फिलहाल दूध कतई न लेनेका आग्रह तो नही है इसलिए कब्जकी तरफसे बिलकुल निश्चिन्त हो जानेके बाद मेरा इरादा बाजरेके साथ दूध लेनेका है। मैंने इतना सब जो लिखा उसका कारण तो यह है कि वहाँ यदि कोई कब्जके निराकरणके लिए यह प्रयोग करना चाहे तो करके देख सकता है। लेकिन इसके मूलमे एक बात यह है कि जब कोई व्यक्ति कब्ज दूर करनेके लिए यह प्रयोग करे तब सब्जीके साथ अथवा बाजरेके साथ न तो तेल लिया जाये, न दूध और न घी ही। १९३० मे जब मेरी कब्जकी शिकायत दूर हुई थी उस समय मैं केवल हरी सब्जियाँ और बाजरा ही लेता था। फल भी नही लेता था और बादाम भी नही। कब्ज दूर होनेके बाद बादाम लेना शुरू किया था। खट्टे नीबू अवश्य लेता था। सब्जियोंमे कुछ हरी सब्जियाँ होना जरूरी है।

यदि डाक्टर कहे तो परसरामको आपरेशन करवा लेना चाहिए।

यह अच्छा है कि तुम प्रेमाबहनको समय-समय पर जाने देते हो। उसे स्थिर होनेमें समय लगेगा और फिर मेरे पत्र भी उसे आश्वासन देनेके लिए होते ही है।

दार्जिलिंगसे मिले तारका आशय मैं भी नही समझ सका हूँ। तुमने इसके सम्बन्धमें कोई कदम न उठाकर ठीक ही किया। इस तारकी थोडी जानकारी महावीरको देना और उससे उसका आशय पूछना। अगमगिरिको भी लिखकर पूछना कि तार भेजनेके पीछे उसका क्या अभिप्राय है?

'व्रतविचार'[1] का यदि कोई जर्मन भाषामे अनुवाद करना चाहे तो उसे कहना कि हम किसी भी पुस्तकका कापीराइट (सर्वाधिकार सुरक्षित) नही रखते अर्थात्

१. यह पुस्तक गांधीजीने १९३० में यरवडा सेन्ट्रल जेलसे साप्ताहिक चिट्ठियोंके रूपमें सत्याग्रह आश्रमको लिखी थी। बादमें इसका नाम बदलकर **मंगलप्रभात** हो गया था; देखिए खण्ड ४४।

यदि वह अनुवाद करना चाहे तो कर सकता है। लेकिन ऐसी पुस्तकोंके लिए यह जरूरी है कि अनुवाद करनेवाला व्यक्ति कोई गड़बड़-घोटाला न करे।

शंकरभाईके हाथका उपचार लम्बा चलेगा, इसका अर्थ कहीं यह तो नहीं कि हमेशाके लिए कोई दोष रह जायेगा? अथवा उसका कोई और परिणाम निकलनेकी आशंका है? कोई समय-समय पर हाथकी जाँच करता है या नहीं?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२४६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४१२. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

२१ अगस्त, १९३२

चि० रामेश्वरदास,

मुझे लिखनेमें कोई कष्ट नहीं होता। जब कुछ ज्यादा लिखनेको होता है तब मैं महादेवसे लिखवा ही लेता हूँ। तुमने कौनसे व्रत लिये हैं, मुझे याद नहीं है। यदि तुम्हें भी उनकी याद न हो तो भूल जाना और समझना कि एक भी व्रत नहीं लिया है। तुम्हारा जीवन अभी ऐसा नहीं है कि तुम व्रत सहन कर सको। लेकिन धीरे-धीरे [इनका] निश्चय करना चाहिए। जिन व्रतोंका तुम्हें स्मरण है और जिनका पालन आजकल करते हो उनका उल्लेख करना। कुछ भी न किया जा सके तो भी रामनाम तो रटते ही रहना चाहिए। किसी दिन एकाएक तुम्हें अन्धकारमें प्रकाशके दर्शन होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०४) से।

४१३. पत्र : गुलाबको

२१ अगस्त, १९३२

चि० गुलाब,

कातनेकी और पूनी बनानेकी रफ्तार बढ़ गई है, ऐसा कहनेसे तो दूसरा व्यक्ति कुछ जान नहीं पाता। लेकिन १५० के बदले १६० तार निकलते हैं और ५ तोलाके बदले प्रति घंटा ७ तोलाकी पूनियाँ बनती हैं, यह कहनेसे पता चलता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७२२) से।

४१४. पत्र : मणिबहन एन० परीखको

२१ अगस्त, १९३२

चि० मणिवहन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें अव नरहरिकी चिन्ता तो नही सताती ना? जब हमने चिन्ता करनेका काम भगवानको सौंप दिया है तो फिर हम किसलिए चिन्ता करें? और हमारी चिन्ताका परिणाम भी क्या होगा?

वनमालाको फिर लिखूंगा।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९७१) से। सी० डब्ल्यू० ३२८८ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

४१५. पत्र : चम्पाबहन आर० मेहताको

२१ अगस्त, १९३२

चि० चम्पा,

मैंने तुझे कार्ड लिखा था, वह पहुँच गया होगा। तू तनिक भी घवराना मत। ईश्वर सब अच्छा ही करेगा। तूने प्रभाशंकरको जो पत्र लिखा था उसकी नकल उन्होंने मुझे भेजी है। लेकिन जैसा कि मैंने लिखा, हम दोनोंका मेल नही बैठेगा, यह तेरे लिए दुखकी वात है। मुझे तो जो उचित लगेगा सो करूँगा और तुझसे कहता रहूँगा। ईश्वर तुझे धीरज दे।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७५३) से। सी० डब्ल्यू० १०४१ से भी; सौजन्य: चम्पावहन आर० मेहता

४१६. पत्र : मथुरी एन० खरेको

२१ अगस्त, १९३२

चि० मथुरी,

बहुत दिनों बाद तेरा पत्र मिला। कार्यक्रम अच्छा है। वजन कितना हुआ? प्रार्थनामें यदि तुझे नींद आती है तो उसकी तुझे छूट है। नींदमें भी भगवानका नाम लिया जा सकता है, यह बात तू जानती है ना?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन एन० खरे

४१७. पत्र : रामचन्द्र एन० खरेको

२१ अगस्त, १९३२

चि० रामचन्द्र,

तेरी अंग्रेजीकी लिखावट तो बहुत अच्छी है। हिज्जेमें जरूर कच्चा है। अर्थ ठीक-ठीक समझता है क्या?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९५) से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन एन० खरे

४१८. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२१ अगस्त, १९३२

चि० जमना,

बहुत दिनों बाद पत्र लिखा। थोड़े समयके लिए राजकोट जाकर रहना होता है यह अच्छा ही है। खुशालभाईकी तबीयतमें इतना जो सुधार हुआ यह तो चमत्कार ही है। जमनादाससे कहना कि वह पत्र लिखनेमें आलस्य न करे तो बेहतर होगा।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५८) से; सौजन्य: नारणदास गांधी

४१९. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

२१ अगस्त, १९३२

चि० नर्मदा,

तुझे अपने अक्षर सुधारने चाहिए। पत्रका हाशिया सलामत हो, शब्द अलग-अलग हों और पंक्तियाँ सीधी हो। कलमका इस्तेमाल करे तो अच्छा है।

तू सब चीजोंमें होशियार हो, ऐसी मेरी इच्छा है। लडकोकी पोशाकसे तेरा क्या अभिप्राय है। तनिक ब्योरेसे लिख। कितने वर्षोंसे ऐसी पोशाक पहनती है और किसके कहनेसे?

अपना कार्यक्रम लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २७६०) से; सौजन्य: रामनारायण एन० पाठक

४२०. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

२१ अगस्त, १९३२

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। रमीबहन[1] यदि वहीं अच्छी हो जाये तो बहुत अच्छा होगा। मेरे सारे पत्र तुम्हें मिले होंगे। खोये हुए वजनको वापस ले लेना। जो आवश्यक हो वह खुराक मुक्तभावसे लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६: गं० स्व० गंगाबहेनने। सी० डब्ल्यू० ८७९४से भी; सौजन्य: गंगाबहन वैद्य

१. रमीबहन कामदार, गंगाबहन वैद्यकी बहन।

४२१. पत्र : विद्या आर० पटेलको

२१ अगस्त, १९३२

चि० विद्या,

तू तो बहुत व्यस्त दिखाई देती है। यह अच्छी बात है। लेकिन तुझे अपने अक्षर सुधारने चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३०) से; सौजन्य: रवीन्द्र आर० पटेल

४२२. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२१ अगस्त, १९३२

बालक और बालिकाओ,

आजकल तुम्हारे पत्र नीरस होते हैं। सात दिनोंमें कोई ऐसी खास बात न हो जिसका जिक्र किया जा सके, ऐसा तो कभी नहीं हो सकता।

पत्रमें वनस्पति, ढोर-डंगरका वर्णन किया जा सकता है। अपने उपद्रवोंके बारेमें लिख सकते हो, कौन आलस्य करता है, कौन सबसे ज्यादा सावधान रहता है, कौन-कौन-सी किताबें पढ़ी आदि-आदि। चाहो तो अनेक वस्तुओंके बारेमें लिख सकते हो। तुम्हारे पत्रमें [यह सब][1] जो होना चाहिए वह क्यों नहीं है?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. मूल पत्रमें अस्पष्ट है।

४२३. पत्र : कमलनयन बजाजको

२१ अगस्त, १९३२

चि० कमलनयन,

तुम्हारा धर्म मुझको जेलसे निकलते हि लिखनेका था। मैंने खत लिखा था वह मिला था? तुमने तो खूब अनुभव लिये। विलायत जानेके पहेले तुमारा पत्र था ऐसा कुछ स्मरण आता है। मैंने प्रश्नका उत्तर दिया था ऐसा भी कुछ खयाल रह गया है। अब तो प्रश्न भूल गया हूँ। मुझे दोबारा लिखो।

नर्मदा बेडोल चित्र देकर ठीक निकल गई। यह आलस्यकी निशानी है।

बापुके आशीर्वाद

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०४८) से।

४२४. पत्र : अमतुस्सलामको

२१ अगस्त, १९३२

माई डियर अमतुल, (अंग्रेजीमें),

तुमने कुरानके बारेमें ठीक पूछा है। मैं किसी किताबके लिए नही मानता हूं कि वह फरिश्तोंने किसीको खुदाकी तरफसे दिया। लेकिन पैगम्बरोंको अन्दरूनी आवाज आया। हमारे लिए इतना काफी होना चाहिए। कुरानके मानी अच्छी तरह समझ लेनेका तुम्हारा इरादा अच्छा ही है। दोनों किताबे पढ़नेका मतलब तो यह है कि हमें पता चले कि इसमें क्या लिखा है और हमारे दिल पर इसका क्या असर होता है।

कुदसियाको उर्दू मालूम ही नही ऐसा क्यों। क्या तुम्हारे घरमें सब अंग्रेजी ही जानते है? थोडी तुम्हारे कबीलेकी हिस्ट्री दो। असल कहाँके रहनेवाले? उर्दूका शौक कबसे छूट गया और क्यों। अब तुमको अच्छा रहता होगा। हदसे ज्यादा मेहनत मत करो। किसी बातके खयालोंको न किया करो। खुशमिजाज रहो और जितना खुदा करनेदे उसे गनीमत मानो। डा० शर्माको खत भेजा होगा। बता दो मेरा यह खत आसानीसे पढ़ सकी? उर्दू खतसे तुमको सन्तोष मिले तो मै उर्दूमें ही लिखना पसन्द करूँगा। हर हफ्ता तुम्हारे मेरी गलतियाँ बताते रहना। अगर तुमको अंग्रेजी खत ज्यादा पसन्द है, तो बिला शुबा मुझे लिखो। मेरा मतलब तुमको खुश रखनेका

हैं। हां, जब हिन्दी सीख लेगी तब हिन्दीमें लिखेगी। तू मुझे उर्दूमें लिखा करेगी तो अच्छा है, लेकिन साफ हरफ निकालना होगा। नहीं तो मैं नहीं पढ़ सकूंगा।

बापू

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २५४) से।

४२५. पत्र : शारदा सी० शाहको

२१ अगस्त, १९३२

चि० शारदा,

तूने जो श्लोक उद्धृत किया है उसमें विद्वानका अर्थ गुणवान है। पहले विद्वान का अर्थ वेदविद् अर्थात् वेदको जाननेवाला होता था और ऐसा माना जाता था कि वेद जाननेवाला व्यक्ति जरूर गुणवान होता है। मेरे कहनेका अभिप्राय तो यह था कि डाक्टरकी पूजा उसके गुणके कारण होती है। उसका मतलब यह नहीं कि विद्वत्ताकी पूजा ही नहीं की जाती। लेकिन हम जानते हैं कि कई लोग बहुत अधिक पढ़े-लिखे होते हैं फिर भी उनकी कोई कद्र नहीं होती।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१५) से; सौजन्य : शारदाबहन जी० चोखावाला

४२६. पत्र : मणिलाल गांधीको

२२ अगस्त, १९३२

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम दोनों ज्वरमुक्त हो गये यही बहुत बड़ी बात है। स्वास्थ्य अब पहले-जैसा हो गया होगा। प्रागजीके सम्बन्धमें दुख होता है। मुझे श्री रिच का पत्र आया है। उससे तो प्रगट होता है कि फीनिक्स आश्रमको भंग नहीं किया जा सकता। वे प्रागजीके बारेमें तो कुछ नहीं लिखते लेकिन तुम्हारी सहज ही शिकायत करते हैं। लिखते हैं कि तुम सोराबजीके फन्देमें पड़ गये हो और पैसा गँवा बैठे हो। भगवान करे, यह बात सच न हो। तुम्हारे पास जो-कुछ है वह तो ट्रस्टकी मिल्कियत है। इसमें से अपनी आजीविका उपरान्त तुम कुछ नहीं ले सकते, यह तो जानते हो न? न तो किसीको उधार दे सकते हो, न भेंटमें कुछ दे सकते हो, और न उस पर कोई कर्ज ले सकते हो। पहले २५ बीघा भी 'इंडियन ओपिनियन' के लिए पट्टेपर दिये गये, ऐसा मैं समझा हूँ और वह भी भूल तो हुई ही। यह तो खुद तुमने भी महसूस किया, इसलिए उसके बारेमें क्या कहना?

प्रागजी केवल अपना स्वार्थ ही देखते हैं। और तुम्हें इस बातकी प्रतीति हो गई है तो मैं समझता हूँ कि तुम्हे 'इंडियन ओपिनियन' के लिए उनका उपयोग नही करना चाहिए। यदि तुम चाहो तो प्रागजीको मैं लिखनेको तैयार हूँ।

हम तीनों मजेमे हैं। देवदास ठीक हो गया है। अभी तो आराम करेगा। प्यारेलाल छूट गया है। मणिबहन फिर जेलमे गई है, सवा वर्षके लिए। रामदास ठीक है। बा अब छूटनेवाली है। उसका शरीर कुछ ढल गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९३) से।

४२७. पत्र : सुशीलाबहन गांधीको

२२ अगस्त, १९३२

चि० सुशीला,

तुझ आलसीको दो पृष्ठोका अपना पत्र लम्बा लगता है जबकि मुझे तो बहुत छोटा जान पड़ता है। तुझे पता है कि मैं अपने भाईको जब इंग्लैंडसे पत्र लिखा करता था तब वह बीस-पचीस पृष्ठोका होता था और तो भी मुझे वह पत्र छोटा लगता था। भाईको भी वह पत्र लम्बा जान पड़ेगा और उन्हे पढ़नेमें तकलीफ होगी, ऐसा मनमे कुछ नही होता था। अपितु मनमें इस बातका विश्वास होता था कि उन्हे अच्छा लगेगा। सप्ताह-भरमे जो-कुछ किया, जिनसे मिले हो, जो दोष किये हो, उन सबका वर्णन करनेमे यदि पृष्ठ भर जाये तो इसमे आश्चर्यकी क्या बात है? और फिर वह भी एक भाईको ही लिखना है। इसलिए जितना हो सके उतना उसमे भर देता था।

लेकिन तू ठहरी एक ही पंक्तिमे सब-कुछ कहनेवाली। खुले अक्षरोवाली पचास पक्तियाँ लिखे तो वह तो बहुत ज्यादा लगेगा ही। वाह री शहजादी! खैर, तू वहाँ मणिलाल पर अंकुश रख, यही काफी है। मणिलाल भोला है, तू गम्भीर है। ऐसा जानकर ही तो तुझसे उसका विवाह किया है। मेरी मान्यता है, लोगोकी तेरी कसौटी खरी है। हाल जरा ज्यादा अकुश रखना। यह न सोचना कि वह पति ठहरा, उसे कह देना-भर काफी है। अच्छी पत्नी पतिका कान पकड़ कर गड्ढेमे गिरनेसे रोकती है। मैं समझता हूँ यह सब गुण तुझमे हैं। मणिलालके साथ मेरा यह करार है कि वह तुझे दासी नही मानेगा, बल्कि तुझे सहचरी, सहधर्मिणी, अर्धांगिनी मानेगा। इसलिए तुम दोनोका परस्पर एक-दूसरे पर एक समान अधिकार है। तुझमे अन्तर्ज्ञान ज्यादा है, इस दृष्टिसे इस क्षेत्रमे तेरा अधिकार विशेष है। मणिलालको प्रेसकी मशीन चलानेका अधिक ज्ञान है — इसलिए उसमे उसका अधिकार विशेष है। पानीके उपचारके बारेमे उसे ज्यादा जानकारी है, इससे उसमे भी उसका पलड़ा

भारी है। मणिलालको लिखा मेरा पत्र पढने पर तुझे मालूम होगा कि मैंने यह सब क्यों लिखा है? तेरा कान कैसा है? ताराकी चिट्ठी आती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९२) से।

४२८. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२२ अगस्त, १९३२

भाई खम्भाता,

तुम्हारा पत्र मिला। मलहम जरूर भेजना। उसका उपयोग करके देखूंगा। लेकिन इतना जान लो कि मैंने आयोडिनका काफी उपयोग किया है। इस मलहममें अन्य उपयोगी वस्तुएँ हो तो ठीक है। मेरी स्मरणशक्ति इतनी खराब है कि तुम्हारी मार्फत मैंने विद्याका जो इलाज करवाया था उसे भूल गया। सच है कि बुढ़ापेमें कोई रोग नही होना चाहिए। लेकिन यह बात तो उसपर लागू होती है जिसका जीवन हमेशा भोगोंसे मुक्त रहा हो। मैंने कौन-से भोग नही भोगे हैं? एक रह गया था कि मालिश करवाकर और हाथ दबवाकर कभी नही सोया। इसीलिए रोज रातको तुम्हारी याद आ जाती है।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ६६०२) की फोटो-नकलसे। सी० डब्ल्यू० ४३८८ से भी; सौजन्य: तहमीना खम्भाता

४२९. पत्र : त्र्यम्बकलालको

२२ अगस्त, १९३२

चि० त्रंबकलाल,

छगनभाईको तुमपर पूरा विश्वास है। डाक्टरको भी था। डाक्टरका परिवार अखण्डित रहे इसके लिए तुमसे जितना बन सके उतना तो तुम करते ही होगे। मुझे लिखना। रास्तेमें जो मुश्किलें आयें उनसे मुझे अवगत कराना और यदि तुम्हारे पास कोई सुझाव हो तो वह भी बताना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३६) से।

४३०. पत्र : रेहाना तैयबजीको

२२ अगस्त, १९३२

बेटी रेहाना,

तुम्हारा खत आज मिला। अब्बाजानका भी। जिसमें दागकी गजल थी, वह खत मिला था। लेकिन बहुत देरसे। मेरा कुछ खयाल रहा है कि मैंने तुमको एक खतकी पहुँच लिखी थी। [वो] गजल अच्छी लगी। तुम्हारे सब खत मेरे पास मौजूद हैं। गालिबकी गजलके बारेमें तुमने अम्माजानको क्यो तकलीफ दी? और तुमको भी मैं इतनी तकलीफ देना नही चाहता हूँ। आसानीसे जितना मुझे दे सकते हैं उतना मेरे लिए काफी होगा। अब मेरे पास उरदू किताबें भी काफी हो गई हैं। पुरोहितजी ठीक छूटे। भाईजीका अफगानिस्तान जानेका क्यों छूट गया। महादेव फ्रेंच और उर्दू पढ़ रहा हैं। बाबाजान इसे फ्रेंच सिखाते थे। तबसे महादेवने फ्रेंच छोड़ा नही है। इतना कर लेवे इसके बाद टीबटुकी जबानका देखा जायेगा। लेकिन तुम्हारे सिखाना होगा। इस जबान जाननेवाली तो तू एक ही तो इस दुनियामें होगी। बाबाजानको अलग नही लिखता। बड़ोको लिखनेमे खतरा रहता है। बाबाजान अम्माजानको आदाब। औरोको बन्देमातरम। तुमको थप्पड़।

बापू

[पुनश्च :]

इतना लिखनेमे मुझे आधा घंटा लग गया है। यह सब तुम्हारा ही दोष है ना? मुझे जल्दी लिखना क्यो नही आता? [1]

बापूके आशीर्वाद
दुआ आदि

उर्दू/गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६७१) से।

१. यह अनुच्छेद गुजरातीमें है।

४३१. पत्र : मीराबहनको

२३ अगस्त, १९३२

चि० मीरा,

मैंने तुम्हारे नये पतेपर एक पत्र[1], बल्कि एक पोस्टकार्ड लिखा है।

मैंने निश्चय कर लिया था कि यदि तुम फिरसे बीमार पडी तो मैं तुम्हे अपने मनमे भी नही झिडकूँगा। जब मैंने काशीसे तुम्हारी बीमारीका हाल सुना तो मैंने मनमें सोचा कि तुम्हारे बीमार पड़ने पर हर बार तुम्हे ही दोष देनेसे काम नही चलेगा। निःसन्देह हम अपनी ही गलतियोंके कारण बीमार पड़ते है। लेकिन कठिनाई यह है कि हम हमेशा अपनी गलतियोंको पहलेसे ही नही जान सकते। दूसरी कठिनाई यह है कि यदि हम उनको जानते हों तो भी हमेशा उनसे अपना बचाव नही कर सकते। इसलिए इस सत्यको जानना ही पर्याप्त है कि हम अपनी भूलोसे तकलीफ पाते हैं और बीमार पड़ जाने पर हमे हमेशा अपनी भर्त्सना नही करनी चाहिए। इसलिए तुम्हारी सबसे हालकी चूकसे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ है। जो परिस्थितियाँ तुमने बताई उनमे वह अवश्यम्भावी ही थी। ईश्वरका शुक्र है कि तुम्हारी ये बीमारियाँ बिना कोई बुरा प्रभाव छोड़े ठीक हो जाती हैं। प्राकृतिक उपचारसे रोगके कीटाणुओंको दूर करनेपर अकसर शरीर ज्यादा शुद्ध और शक्तिवान हो जाता है। तुम्हें जो विश्राम मिल रहा है वह बड़े भाग्यकी बात है। और अगर तुम्हें मुलाकातियोंसे मिलने या चिट्ठियाँ लिखनेकी अनुमति न मिले तो चिन्ता मत करना। सिर्फ ५० साल पहलेकी बात है कि कैदी लोग न तो मुलाकातियोंसे मिल सकते थे और न चिट्ठी लिख सकते थे। साधारण जेल-जीवनकी आजकल सारी भयंकरता समाप्त हो चुकी है। हॉवर्डने[2] जो आन्दोलन चलाया वह एक महान आन्दोलन था। आज तो वह केवल अपनी प्रारम्भिक अवस्थामे है। वह दिन दूर नही जब जेलोंका नव-संस्कार किया जायेगा और वहाँ लोगोंको केवल इसलिए नजरबन्द रखा जायेगा कि वे अपने-अपने राज्यकी धारणाके अनुसार नैतिक, सामाजिक या राजनीतिक, जो भी मर्यादाएँ हों, उनकी दृष्टिसे कोई अपराध न कर सके। लेकिन जेल-जीवनकी जो भी दशाएँ हों, हमे उनमे प्रसन्न रहना है और साथ ही इस बातकी बराबर कोशिश करनी है कि जहाँ सम्भव हो वहाँ राहत प्राप्त की जाये।

अब मेरे भोजनकी बात सुनो। तुम्हे याद होगा कि यहाँ यरवडामें मैं दूध और रसीले फलोंको लेकर कब्जसे छुटकारा नही पा सका था और दूध छोड़नेके बाद ही मुझे उससे छुटकारा मिल सका था। इस बार भी मैंने दूध छोड़ दिया था,

१. १९ अगस्त, १९३२ का पत्र, जो मीराबहनको जेलके पतेपर भेजा गया था।

२. जॉन हॉवर्ड, अंग्रेज लोकोपकारक और जेल-सुधारक।

क्योकि मै दूध और फलोके बलपर अपनेको चुस्त नही रख पा रहा था। इस बार मैंने दूधके साथ केला लेना शुरू किया। इससे कुछ थोड़ा-सा सुधार हुआ, लेकिन वह काफी नही था। अतः मैंने कुछ दिनोके लिए दूध छोड़ दिया है और गेहूँकी जगह बाजरेकी चपाती ले रहा हूँ। इससे अद्भुत फायदा है। पिछली बार जब जेलमे था[1], उस समय बाजरेने ही मेरा कब्ज दूर किया था और मै जेलमे अपने शेष दिन रोटी, सब्जियाँ और पिसा बादाम लेकर काट सका था। मेरा विचार दूध फिर शुरू करनेका है और देखना है कि बाजरेके साथ लेते रहनेपर कब्जसे बचा जा सकता है या नही। मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। और तुम देख ही सकती हो कि मै बिना किसी तकलीफके दाहिने हाथसे लिख रहा हूँ। बायी कुहनीकी ज्यादा अच्छी सुरक्षाके लिए मैंने फिरसे मगन चरखा अपना लिया है और इस बार उससे तीस अकका सूत निकाल लेता हूँ। मै इससे सन्तुष्ट हूँ। प्रति घंटे जितना सूत निकलता है, उसकी मात्रा अच्छी नही है। मुश्किलसे प्रति घंटे १०० फेरे होते है।

वल्लभभाई संस्कृतमे बहुत तेजीसे प्रगति कर रहे है। महादेव फ्रेंच और उर्दू, दोनो पढ़ रहे है। इस तरह हमारा समय बहुत उपयोगी ढगसे व्यतीत हो रहा है। यहाँ मौसम सहसा ही बहुत धूपदार और बहुत गरम हो गया है, जो वर्षके इन दिनोमे असामान्य है। मै आशा करता हूँ कि तुम्हारे यहाँका मौसम खराब नही है।

उम्मीद है कि तुम्हारे पास मच्छरदानी है।

हम सबोकी तरफसे प्रेम सहित,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७०० से भी।

४३२. पत्र: वसुमती पण्डितको

२३ अगस्त, १९३२

चि० वसुमती,

अब तो तुझे स्वतन्त्र रूपसे पत्र लिखा जा सकता है। तू महादेवसे मिल तो नही सकी। तेरा पत्र तुरन्त आयेगा, मैंने यह आशा रखी थी। कदाचित् मेरे उस पत्रके पहुँचनेसे पहले ही मुझे तेरा पत्र मिल भी जाये। सारे अनुभव लिखना। जिन-जिन बहनोसे जो-कुछ सीखनेको मिला, जो विचार मनमे आये, क्या कुछ पढ़ा आदि-आदि सब। [जिलमें] स्वास्थ्य कैसा रहा? मराठीका कुछ ज्ञान प्राप्त किया?

१. १९३०-३१ में।

जो खुराक मिलती थी क्या उससे उत्साह बना रहता था? नानी बहनका अभीतक कोई पत्र नही आया, यह कैसे? हम तो मजेमे ही हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३३१) से। सी० डब्ल्यू० ५०७६ से भी; सौजन्य: वसुमती पण्डित

४३३. पत्र: प्रेमलीला ठाकरसीको

२३ अगस्त, १९३२

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र और सर विट्ठलदास[1] का जीवन-चरित्र मिले हैं। मैं उसे पढ जाऊँगा।

हम तीनोंकी तबीयत तो अच्छी ही रहती है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२३) से; सौजन्य: प्रेमलीला ठाकरसी

४३४. पत्र: दरबारी साधुको[2]

२३ अगस्त, १९३२

यह कहना मुझे उचित नही जान पडता कि ऐसा क्रम है कि मनुष्य थोड़ा-बहुत समय व्यर्थके विचारोमें बिताता है। यदि इसमे एक भी अपवाद है तो यह निश्चित क्रम है, सो नही कहा जा सकता। और अपवाद तो हमारी दृष्टिमे अनेक आते हैं। इतना अवश्य है कि असंख्य व्यक्ति अनेक प्रकारके मनसूबे बांधते हैं, अर्थात् उनके मनमे व्यर्थके विचार उठते रहते हैं। ऐसा न हो, तो एकाग्रता आदिपर जो जोर दिया जाता है उसकी आवश्यकता ही न रहे। हमारे लिए इस समय कामकी

१. प्रेमलीला ठाकरसीके पति।

२. दरबारी साधुने अपने पत्रमें लिखा था कि "व्यर्थके विचार वाकई भारस्वरूप होते हैं, लेकिन ऐसा मालूम होता है कि सत्यशोधकको भी अस्थिर विचारोंकी स्थितिमें से गुजरना होता है। यह सच है कि निष्काम कर्मसे चित्तकी शुद्धि होती है; लेकिन कुछ शुद्धि हो जानेके पश्चात साधकको शान्त होकर भीतरी क्रियाका अवलोकन तो करना ही पडता है न? या सिर्फ निःस्वार्थ कर्मसे ही मामला हल हो जाता है? बुद्धने इसी प्रकारका कोई उद्देश्य सामने रखते हुए कर्म और चिन्तन के सामंजस्यका उपदेश दिया है। बापू कर्मको प्रधान मानते हैं जो कि उनके अनुसार आत्मोत्कर्षका राजमार्ग है। लेकिन क्या सिर्फ इसीसे मनुष्य आत्माकी क्रियाको समझ जाता है?" (द डायरी ऑफ महादेव देसाई, खण्ड-१)।

जो चीज है वह यह है। हम स्वयं अनेक प्रकारके हवाई-किले बनाते है, अनेक प्रकारके विचार करते हैं, उनमे से बहुत तो याद भी नहीं रहते। इन सारे विचारोंको व्यभिचारकी संज्ञा दी जा सकती है। सामान्य व्यभिचारसे जिस तरह मनुष्य अपनी शारीरिक शक्तिका नाश करता है, उसी तरह विचार-व्यभिचारसे भी मानसिक शक्तिका ह्रास होता है; और जिस तरह शारीरिक दौर्बल्यका मनपर असर होता है, उसी तरह मानसिक दुर्बलताका भी शरीरपर असर होता है। इसीलिए मैंने ब्रह्मचर्यकी व्यापक व्याख्या करके निरर्थक विचारोको भी ब्रह्मचर्यका भंग करनेवाला माना है। ब्रह्मचर्यकी सकुचित व्याख्या करके हमने उसे अपेक्षाकृत कठिन वस्तु बना दिया है। व्यापक व्याख्याको स्वीकार करके यदि हम इन्द्रियमात्रका, ग्यारहों इन्द्रियोंका संयम करें तो एकेन्द्रिय-सयम अपेक्षाकृत अत्यन्त सहल हो जाये। तुम मन-ही-मन ऐसा मानते दीख पड़ते हो कि वाह्य कर्मको करते हुए आन्तरिक शुद्धिके पर्यवेक्षणका काम अधूरा रह जाता है, अथवा कम हो जाता है। मेरा अनुभव इससे बिल्कुल विपरीत है। बाह्य कर्म आन्तरिक शुद्धिके बिना निष्काम भावसे हो ही नहीं सकता। इसीसे आंतरिक शुद्धिका मापदण्ड बहुधा बाह्य कर्मकी शुद्धिसे ही जाना जा सकता है। जो व्यक्ति बाह्य कर्मके बिना आन्तरिक शुद्धिको प्राप्त करनेका प्रयत्न करता है, उसके भ्रममे पड़ जानेकी बराबर आशंका रहती है। ऐसे तो मैंने अनेक उदाहरण देखे है। एक प्राकृत उदाहरण ही देता हूँ। जेलमे मैंने अनेक साथियोको अनेक प्रकार के शुभ निश्चय करते देखा है और बाहर जाते ही प्रथम आघातपर ही उन्हे टूटते भी देखा है। जेलमें तो उन्होने यह निश्चित रूपसे मान लिया था कि वे अपने निश्चयसे कभी नही डिगेगे, उनकी आन्तरिक शुद्धिकी प्रक्रिया पूरी हो गई है, पर्यवेक्षण शान्ति-पूर्वक किया है, और प्रार्थनामे एकाग्रता आ गई है। लेकिन जेलकी चारदीवारीसे बाहर निकलते ही मैंने इन सबको स्वप्नवत् होते देखा है। गीताजीके तीसरे अध्यायका पाँचवाँ श्लोक अत्यन्त चमत्कारक है। एकाधिक वैज्ञानिकोने सिद्ध कर दिखाया है कि इसमे जो सिद्धान्त कहा गया है वह सर्वव्यापक है। उसका अर्थ तो यह है कि कोई भी व्यक्ति एक क्षणके लिए भी कर्म किये बिना नही रह सकता। कर्म अर्थात् गति, यह जड़-चेतन सबके लिए सर्वव्यापक नियम है। मनुष्य इस नियमका निष्काम भावसे अनुसरण करे, यही उसका ज्ञान है और यही उसकी विशेषता है। 'ईशोपनिषद्'मे दो मन्त्र है[1], जो इसी सत्यका प्रतिपादन करते है। ये मन्त्र भी उतने ही चमत्कारिक हैं। बुद्ध भगवानकी मेरे-जैसे लोग क्या आलोचना करे? और फिर मैं तो उनका भक्त हूँ। लेकिन बुद्ध भगवानने स्वयं (संघों)की रचना की अथवा उनके अनुयायियोने की? चाहे जैसा हुआ हो, लेकिन जिन सघोकी स्थापना हुई थी वे सब इस सर्व-व्यापक नियमका पालन करते हुए ही जडवत् बन गये और अन्तमें आलस्यका घर बन गये। आज भी लंकामे, बर्मामे, तिब्बतमे बौद्ध साधु ज्ञानहीन और आलस्यके पुतले-जैसे दिखाई देते है। हिन्दुस्तानमे भी साधुओंके रूपमे माने जानेवाले लोग साधु शब्दको चरितार्थ नही करते। इसलिए मुझे तो ऐसा लगता है कि सच्ची और

१. १ और २।

शाश्वत चित्तशुद्धि तो मनुष्य कर्म करते हुए ही साध सकता है। यहाँ फिर 'गीता' का वचन उद्धृत करनेका मन हो आता है। 'गीता' के चौथे अध्यायके १८वें श्लोकका अर्थ यह है कि जो व्यक्ति कर्ममें अकर्म और अकर्ममें कर्म देखता है वही बुद्धिमान है, वही योगी है, वही पूरा कर्मी है। लेकिन यह तो मैंने अपने अनुभवकी बात लिखी है। मैंने 'गीता' का श्लोक इसलिए उद्धृत किया है, क्योंकि इसमें निहित शिक्षाका मुझे अनुभव हुआ है। जिन्हें मैंने अनुभवसे न परखा हो, ऐसे शास्त्र-वचनोंको मैं उद्धृत नही करता। दूसरोंका अनुभव मुझसे भिन्न हो सकता है और वे कदाचित् 'गीता' से विरोधी वचनोंको भी उद्धृत कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, मैंने जिन श्लोकोंको उद्धृत किया है, उन्ही श्लोकोका वे अपने अनुभवके समर्थनमें दूसरा अर्थ भी लगा सकते है। यह सब सम्भव है। इसलिए मेरे अनुभवको स्वीकार किया ही जाना चाहिए, इसके बारेमे मेरा कोई आग्रह नही है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४३५. पत्र : ननी और अन्य बच्चोंको

२४ अगस्त, १९३२

मेरी प्रिय नन्ही मित्रो, ननी[1], अन्ना[2], गिलियन[3] और लीडिया[4],

तुम्हारे मधुरपत्र और तुम लोगोके बनाये हुए मजेदार चित्र पाकर मुझे बहुत आनन्द आया। तुम सबोके नाम एक ही पत्र भेजनेका तुम लोग बुरा न मानना। आखिरकार तुम लोग मनसे तो एक ही हो, शरीरसे न भी हो तो क्या। हाँ, यह तुम्हारे-जैसे नन्हे बच्चे ही हैं, जो सब लड़ाइयोंको रोकेंगे। इसके मतलब है कि तुम लोग अन्य लड़के-लड़कियोंसे या आपसमें लड़ाई-झगडा कभी न करो। अगर तुम लोग खुद ही छोटी-छोटी लड़ाइयाँ करोगे, तो बडी लड़ाइयोंको नही रोक सकते।

मेरा कितना मन है कि ननी और अन्नाका जन्मदिवस मनानेके लिए मैं भी तुम लोगोके साथ होता। ईश्वर उन्हे और तुम सबको खुश रखे। तुम सबोको मेरे चुम्बन, बशर्ते कि तुम मुझे चूमने दोगी, और ननी मेरा प्यार एस्थर तक पहुँचा देगी। नही ?

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (नं० २) से; सौजन्य : भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. एस्थर मेननकी पुत्री।

२, ३ और ४. इन तीनों बच्चोंसे गांधीजी सेली ओकमें उस समय मिले थे जब वे १९३१ में गोलमेज सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए गये थे।

४३६. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

२४ अगस्त, १९३२

प्रिय प्रेमी[1],

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। चूँकि तुमने 'कुरान' का कोई जिक्र नही किया है, अतः उसे किसी औरने भेजा होगा। वह तुम्हारे डिब्बोंके साथ आ गया था। ऐसी बात नही है कि तुम्हारी भेजी मिठाइयाँ सरदारको पसन्द नही हैं। लेकिन वह यहाँ रहते हुए मिठाई नही खाना चाहते थे। यही वजह है कि दोनों डिब्बे सरोजिनी देवीको भेज दिये गये थे। तुम हिन्दी कब सीखोगी? अपने पिताके बारेमे मुझे सब-कुछ लिखना। हम सब अच्छे हैं।

तुम्हारी माताजी, अर्जुन[2] और तुम्हें हम सबोंका प्यार।

तुम्हारा,
बापू

श्री प्रेमीबहन
प्रेमभवन, मार्केट रोड
हैदराबाद, सिन्ध

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९२४३) से; सौजन्य: जयरामदास दौलतराम

४३७. पत्र : गोविन्ददासको

२४ अगस्त, १९३२

आपकी पत्नीकी बीमारीके बारेमे हमने अखबारोंमे पढ़ा। ईश्वर उनको पूरी तरह स्वस्थ करे। सरदार और महादेव मेरे साथ है, और हम लोग अकसर आपकी याद करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-८-१९३२

१. जयरामदास दौलतरामकी पुत्री।

२. जयरामदास दौलतरामके पुत्र।

४३८. पत्र : हरिइच्छा एस० कामदारको

२४ अगस्त, १९३२

चि० हरिइच्छा[1],

मैं तुझे पाँच मास तक कुछ न लिखूं तो चलेगा न? तू इतनी आलसी निकलेगी, ऐसा मैंने कभी नहीं सोचा था; और फिर पता भी पूरा नहीं देती। मुझे आश्रमकी मार्फत पत्र भेजना होगा। अब आलसको दूर करना। तबीयतको ऐसा क्या हुआ था? रसिक[2]से मिलनेके बाद मुझे उसकी पूरी खबर देना। तारा, वसन्त किस स्कूलमें जाते हैं?

मेरे साथ सरदार वल्लभभाई तथा महादेव हैं।

दिन कैसे बीतता है तेरा? कुछ पढ़ती है? कातती है?

रेहानाबहनसे परिचय हुआ? आँख कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४७०) से। सी० डब्ल्यू० ४९१६ से भी; सौजन्य: हरिइच्छा एस० कामदार

४३९. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

२४ अगस्त, १९३२

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। राधाका भी मिला है। तू खोया हुआ वजन हासिल कर लेना। 'देवदाससे मिली, यह ठीक हुआ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत बनारसीदास
के० २३/९६ पंचगंगा
बनारस सिटी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४०) से।

१. वालजी गोविन्दजी देसाईकी भतीजी।

२. हरिइच्छाके भाई।

४४०. पत्र : मनुबहन गांधीको

२४ अगस्त, १९३२

चि० मनुडी,

तेरा पत्र मिला। तू हरिलालके लिए अभी भी क्यों रो उठती है? हमारा कर्तव्य तो यह है कि हम उसके कल्याणके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करे। तुझे मुझे नियमपूर्वक लिखते रहना चाहिए। उम्मीद है, तू अब क्रोध नही करती होगी और अच्छी तरहसे पढती होगी। इस बार तूने खराब अक्षर लिखे है। रामीबहनके[1] सब बच्चे अब ठीक होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५१५) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला

४४१. पत्र : बलीबहन वोराको

२४ अगस्त, १९३२

चि० बली,

तेरा पत्र बहुत दिनोंके बाद मिला है। ऐसा आलस्य न करे तो अच्छा हो। हरिलालके नाम कोई बिल आये तो वह तुझे निश्चित रूपसे वापस भेज देना है। वह तो कदाचित् अहमदाबादमें है, ऐसा सुनता हूँ। दिन-ब-दिन उसके सुधरनेकी आशा क्षीण होती जाती है। वह और हम सब ईश्वरके हाथमे है।

मेरे हाथमे कोई ज्यादा दर्द नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५१६) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला

1. मनुबहन गांधीकी बहन।

४४२. पत्र : निर्मला बी० मशरूवालाको

२४ अगस्त, १९३२

चि० निर्मला,

तेरा पत्र मिला। 'गीतामंथन' के प्रूफ मिलते रहते हैं। १० अध्यायसे १३ अध्यायतकके प्रूफ मिले हैं। लेकिन १३ वें अध्यायके अभी पूरे नही मिले हैं। दसवें अध्यायसे पहलेके क्यों नही मिले? ये प्रकरण कब लिखे गये और प्रूफ कौन देखता है? पुस्तक कबतक प्रकाशित होगी? गोमतीके[1] साथ कौन है? दिन कैसे बिताती है? अब यह रहा किशोरलालके पत्रका जवाब। 'गांधी विचार दोहन'[2] अभी हाथमे नही ले सका। इस समय पत्रोंकी बहुत भरमार रहती है और डाक्टर मेहताके देहावसानके बाद तो यह बहुत ज्यादा हो गई है। यहाँसे दी जा सके तो सलाह देनेमें और उसके लिए जानकारी प्राप्त करनेमें खूब पत्र लिखने पड़ते हैं, इसलिए बहुत कम समय बच पाता है। परेशानी उठाकर, रातका जागरण करके कुछ करनेकी इच्छा नही होती। दिनमें भी थोड़ी नीद अवश्य चाहिए, उसमें भी विघ्न डालकर कुछ नही करता। फलतः जो समय अनिवार्य कार्योंसे बचता है उसमें ही पढ़ा जा सकता है। उस बचे हुए समयमे मैं उपनिषद्का थोड़ा अभ्यास कर लेता हूँ और खगोलकी पुस्तक देख जाता हूँ। इस सप्ताहमें तो उर्दू पुस्तकको हाथ भी नहीं लगा सका, हालांकि आजतक उसका अध्ययन कमोबेश चलता रहा है। आश्रमका इतिहास[3] जो लगभग लिखा जा चुका है, यह भी आजकल मुल्तवी है। ज्योतिषियोंने मेरे बारेमें समय-समयपर जो भविष्यवाणी की है यदि वह सच हो जाये, तब तो मेरा यह सारा किया-धरा व्यर्थ हो जाये। लेकिन ग्रह उन्हें दगा दे जाते हैं, इसलिए जिस तरह मृत्युका विचार मात्र किये बिना हम आगे बढ़ते जाते हैं, उसी तरह ज्योतिषियोके कथनको अनसुना करके मैं आगे बढ़ता जाता हूँ। हम तीनों ही चल रहे हैं। आरोग्यकी पुस्तक अभी मुझे किसीने नही भेजी है। यह मिल जाये तो मैं इसे तो अवसर मिलते ही सबसे पहले देख जाऊँ। उसमे संशोधन-परिवर्धन करनेकी खूब जरूरत है। कताई-सम्बन्धी प्रयोग अच्छे चल रहे हैं। महादेव ८० अंक कातता है। सरदार ४० अंकतक पहुँचे है। वह अभी और आगे जायेंगे। ये दोनों प्रयोग गांडीव पर चल रहे हैं। मैं मगन चरखा चलाता हूँ। उसपर ३० अंक सूत निकलता है और ४० तक पहुँचनेकी आशा है। सरदारका संस्कृतका अभ्यास घुड़दौडके घोड़ेकी गतिसे चल रहा है। सातवलेकरकी पाठमालाका छठा भाग चल रहा है। उसके बाद रोज 'गीता' के पाँच श्लोक करते हैं। खूब

१. किशोरलाल मशरूवालाकी पत्नी।

२. किशोरलाल मशरूवालाकी रचना।

३. देखिए "सत्याग्रह आश्रमका इतिहास", ११-७-१९३२।

समय देते हैं। तू कन्नड़ सीख रही है, यह तो बहुत अच्छी बात है। लिपि एक हो तो समय बहुत बच जाता है, सो तो है ही। लेकिन वह चीज तो रामराज्यमे देखेंगे। तथापि, मेरा यह अनुभव जरूर है कि दो-तीन लिपियोंका अभ्यास हो जानेके बाद अन्य अनेक लिपियाँ त्रास नही देती, क्योकि उनके बीच [समानताका] एक सिलसिला निकल आता है। 'गीतामंथन' के जितने प्रूफ मिले हैं, उतने पढ गया हूँ। भाषा अच्छी लगी है। मूलके आधारपर एक नई 'गीता' ही रच दी है। उसमे संशोधन-परिवर्धन करनेके चक्करमे मै नही फँसा, क्योकि वैसा करना मुझे अनुचित लगता है। किशोरलालने विचारपूर्वक जैसी रचना की है, उसे ज्योका-त्यो रहने देना मुझे ठीक लगा है। मेरी बायी कुहनी जैसी थी वैसी ही है। कोई दुःख नही देती। हम तीनो आनन्द कर रहे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २८८४) से; सौजन्य: निर्मलाबहन गराफ

४४३. पत्र: मणिलाल झवेरीको

२४ अगस्त, १९३२

चि० मणिलाल,

तुम्हारे पत्रकी मुझे खूब प्रतीक्षा करनी पड़ी, लेकिन अन्तमें मिल गया। इस समय तो सबके पत्र आने शुरू हो गये हैं। छगनलालके पत्र बहुत सन्तोषजनक है। लेकिन जेकी[1], माणेक बाई[2] तथा रतिलाल देसाई अपना-अपना असन्तोष व्यक्त करते हैं। छगनलालके पत्रसे अविश्वासका कोई कारण नही दिखाई पडता। तथापि, मैंने छगनलालसे स्पष्ट प्रश्न किये है। आवश्यकता हुई, तब तो तुम्हें रंगून जाना पड़ेगा। मुझसे जहाँतक सम्भव होगा, मै तुम्हें उसमे नही घसीटूँगा। नानालालका पत्र आ गया है। तुम्हारी समझमे यदि कोई बात आये, अथवा यदि तुम कुछ सुझाव देना चाहो तो वैसा करनेमे सकोच न करना। काम निःसन्देह बहुत नाजुक तो है ही। डाक्टरके पुण्यके फलस्वरूप सब-कुछ ठीक होगा, ऐसी हमे उम्मीद करनी चाहिए।

मंजुला आ गई होगी, यह सोचकर मै उसे पत्र नही लिख रहा हूँ। मैंने उसे पत्र लिखा था कि वह जेतपुर पहुँचे। गुलाबका, मगनलालका और तिलकका पत्र इसके साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०४३) से; सौजन्य: धीरूभाई झवेरी

१. जयकुँवर, डा० प्राणजीवन मेहताकी बडी लड़की तथा मणिलाल डाक्टरकी पत्नी।
२. डा० प्राणजीवन मेहताकी पत्नी।

४४४. पत्र : गुलाबको

२४ अगस्त, १९३२

चि० गुलाब,

ऐसा क्या हो गया था कि इतने वायु-परिवर्तनकी जरूरत दिखाई दी? मुझे विस्तारपूर्वक लिखना। अब तो सब-कुछ ठीक हो गया होगा। धीरूभाईकी चिट्ठी आती है? वे दोनों कैसे चल रहे हैं? तिलक कैसे रहता है? उसके रहनेसे क्या कोई असुविधा होती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०४७) से; सौजन्य: धीरूभाई झवेरी

४४५. पत्र : बनारसीलाल बजाजको

२४ अगस्त, १९३२

चि० बनारसी,

तुमारा खत मिला है। पिताजीका खत मुझको मिला था उसमे लिखा था कि किसीने उनको लिखा था कि मैं तुम लोगोंसे नाराज हुं और ऐसा खत मिलनेसे उनको बहोत दुःख हुआ। मैंने उनसे लिखा है[1] कि मुझे कभी तुम लोगोके तरफसे नाराज होनेका कारण नहि मिला है। ऐसी गलत बात कौन लिख सकता है?

बापुके आशीर्वाद

श्रीयुत बनारसीदास
के० २३/९६ पंचगंगा
बनारस सिटी

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१४०) से। सी० डब्ल्यू० ९४५० मे भी; सौजन्य: बनारसीलाल बजाज

१. देखिए "पत्र: रामेश्वरलाल बजाजको", १७-८-१९३२।

४४६. पत्र : बेगम मुहम्मद आलमको[1]

२४ अगस्त, १९३२

प्यारी बहन,

आपका खत मिलनेसे मुझे बहुत खुशी हुई। डाक्टर साहबका खत मुझे मिल गया था। आपका इनसे और कल पता मिला। मेरी उम्मेद है कि डाक्टर साहबको आराम होता होगा।[2] मुझे खबर देती रहियो। सरदार, महादेव और मेरे तरफसे डाक्टर साहबको बन्दे मातरम दीजिए। खुदाकी मेहरबानीसे हम सब अच्छे हैं। मैं उम्मेद रखता हूं कि यह खत पढ़नेमें आपको तकलीफ नहीं हुई।

आपका,
गांधी

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २५) से।

४४७. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

२५ अगस्त, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

तेरा पत्र मिला। जिस पत्रमें तूने मेरे प्रश्नोंका उत्तर देनेका प्रयत्न किया था, उसके उत्तरमें मैंने लिखा था कि अन्य पत्रोंके आनेपर ही मैं काम हाथमें लूंगा। 'अन्य पत्रोंसे' मेरा तात्पर्य है, जो प्रकाशित किये जानेवाले हैं वे पत्र। उन्हें मैं [एक बार] देख जानेकी जरूरत समझता हूँ। तेरे संकोचने मेरा काम कठिन कर दिया है। हरिलालके साथ तेरे इस सम्बन्धका जबतक स्पष्टीकरण नहीं किया जा सकता, तबतक उन पत्रोंका कोई मूल्य नहीं है। यह स्पष्टीकरण तो तूने जो मुझे लिखा और तुझसे जो मैंने सुना तथा उस समयके उसके पत्रोंसे जो तथ्य प्राप्त हुए, उनके आधारपर ही किया जा सकता है। जैसा कि मैंने सोचा था, यह काम उससे कहीं अधिक कठिन है। तथापि, इसे पूरा करनेकी कोशिश करूँगा। मेरी मनोवृत्ति इस समय ऐसे कामोंकी नहीं है। यह निश्चय ही मेरे मार्गमें एक विघ्न है। तथापि, यदि ईश्वरकी इच्छा हुई तो वह मुझे करने देगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४५) से।

१. डा० मुहम्मद आलमकी पत्नी।

२. डा० आलम लाहौर सेंट्रल जेलमें बीमार थे।

४४८. पत्र : महालक्ष्मी एम० ठक्करको

२५ अगस्त, १९३२

चि० महालक्ष्मी,

जेलसे छूटनेसे पहले तुमने जो पत्र लिखा था वह मुझे मिला था। इससे पहले कि यह पत्र तुम्हे मिले, मुझे तुम्हारे सब अनुभवोसे युक्त पत्र मिल जाना चाहिए। बच्चोंके बारेमें जो समाचार मिले हों, वे भी देना। जेलमें जो-कुछ पढा हो, मनन किया हो सो भी लिखना। इतनी सारी बहनोंके बीच अच्छा लगा, सारी बहने किस तरहसे व्यवहार करती थी, यह सब भी बताना। माधवजी[1] का जो समाचार हों वह देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८२०) से।

४४९. पत्र : तारा एन० मशरूवालाको

२५ अगस्त, १९३२

चि० तारा,

तेरा पत्र मिला। हम [जेलमें] नीचेसे-नीचे वर्गका अनुसरण करें, यह निश्चय ही एक अच्छी बात है। लेकिन 'सी' वर्गका अनुसरण करते हुए भी हमारा शरीर जो खुराक माँगे वह हमें प्राप्त हो सकती हो, तो उसे प्राप्त करना चाहिए। 'सी' वर्गके अनेक लोगोको दूध मिलता है। यह कोई आश्चर्यकी बात नही है। स्वाभिमानकी रक्षा करते हुए यदि हमें उचित खुराक मिले तो ठीक है, और यदि न मिले तो भी असन्तुष्ट हुए बिना हमें निर्वाह करना चाहिए। अत्यन्त संक्षिप्त डायरी लिखनेकी आदत हमारी अनेक बुरी आदतोंको दूर करती है। जो सत्यका आचरण करना चाहता है, उसके लिए तो डायरी चौकीदारका काम देती है। अब यदि डायरी लिखनेका विचार किया ही है तो उसपर दृढ़ रहना। माथेपर जो चोट लगी थी अब वहाँ कुछ नही है न?

[राजनीतिक बन्दियोंके] वर्ग खड़े करनेसे द्वेष होना स्वाभाविक था। उसका उपाय यही है कि हमें उससे अलिप्त रहना चाहिए और ऊपर लिखे अनुसार उच्च वर्गके प्रलोभनोंसे स्वयंको यथाशक्ति अलग रखना चाहिए।

१. महालक्ष्मी ठक्करके पति।

नानाभाईकी तबीयतको क्या हुआ?

मणिलाल और सुशीलाने मुझे भी पत्र लिखा था। मणिलाल थोड़े कष्टमें है। प्रागजीके साथ नही निभी है, ऐसा लिखता है। कदाचित् वहाँ भी लोगोको यह मालूम है।

किशोरलाल और गोमतीका समाचार निर्मला देती रहती है। मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

हम तीनो मजेमें है। कदाचित् तू यह नही जानती कि सरदार बहुत त्वरित गतिसे संस्कृत सीख रहे है। ४० अंकका सूत कातते है। महादेव ८० अकतक पहुँच गया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२१) से। सी० डब्ल्यू० ४९९७ से भी; सौजन्य: कनुभाई मशरूवाला

४५०. पत्र: महेन्द्र वी० देसाईको

२५ अगस्त, १९३२

चि० मनु,

जो बच्चा प्रार्थनामें हँसता है उसे पागल तो नही, लेकिन अविवेकी कहा जायेगा। टिकट किसका? मनुष्योमे नाम इसलिए रखे जाते है ताकि उन्हे पहचाना जा सके। यदि तेरा नाम न हो और अन्य बालकोंके बीचमे से तुझे ही बुलाना हो, तो किस तरहसे बुलाया जाये?

जो अपनी पढ़ाईका उपयोग नही करता, उसे तो अनपढ़ ही कहा जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३६) से; सौजन्य: वालजी गो० देसाई

४५१. पत्र : भाऊ पानसेको

२६ अगस्त, १९३२

चि० भाउ,

विनोबाने श्लोकोंका जो अर्थ किया है, वह भेजकर तुमने ठीक किया। लेकिन लेखकका अर्थ भी यही था, ऐसा माननेका कोई कारण नही। और जैसा कि मैंने 'अनासक्तियोग' की प्रस्तावना[1] मे बताया है, कवियोके कथनके अर्थमें हमेशासे क्रान्ति होती आई है, और होनी भी चाहिए। विनोबाने जो अर्थ किया है, उन्हें वैसा करनेका अधिकार है। लेकिन यदि तुम्हे उस अर्थसे सन्तोष न हो तो जो अर्थ मैंने किया है उसपर विचार करना[2], और यदि वह भी अनुकूल न बैठे तो ऐसे किसी भी बुद्धि-ग्राह्य अर्थकी कल्पना कर लेना, जो 'गीता' के उद्देश्यका विरोधी न हो। और यदि यह भी न हो तो इतना मानकर सन्तोष कर लेना कि इन श्लोकोको फिलहाल नही समझा जा सकता। इन श्लोकोका सन्तोषजनक अर्थ न मिलनेसे 'गीता' के अध्ययनमें खलल पहुँचे, ऐसी कोई बात नही। तुम्हारा कार्यक्रम ठीक है। लेकिन इसमे आरामका कोई अवकाश नही है। तुम्हें सिरदर्द दूर करनेके उपाय करने चाहिए। उसके लिए तुम्हें फिलहाल यज्ञ-कार्यको छोड़कर अन्य कार्य बन्द कर देने चाहिए और आराम करना चाहिए। तुम्हे बिस्तरपर लेटे रहना चाहिए और माथेपर मिट्टीकी पट्टी बाँधनी चाहिए। एक सप्ताह ऐसा करनेसे सिरदर्द शान्त हो जाना चाहिए। डा० तलवलकरकी गोलीका असर भी होना चाहिए। सिरदर्द एक स्वतन्त्र वस्तु नही है, अपितु यह दूसरे रोगका परिचायक है, अथवा उसकी पूर्व-सूचना या चेतावनी है। अभी थोड़ा आराम करनेसे तुम लम्बा आराम करनेकी परेशानीसे बच जाओगे। अध्ययन कम कर देना। सवेरे ४-४५ से ६-३०, ९-३० से १०-३०, और ११-४५से दोपहर १२-३० तकका समय तुमने 'गीता' और समाचारपत्रके लिए रखा है। इसे बन्द करके अब तुम आराम करना। इससे भी यदि दर्द कम न हो तो बढ़ईका काम कुछ कम कर देना। लेकिन इस दर्दको दूर करना तुम्हारा कर्तव्य है, ऐसा समझकर इसके पीछे पड़ जाना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७३५) से। सी० डब्ल्यू० ४४७८ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे

१. देखिए खण्ड ४१।
२. देखिए "पत्र : भाऊ पानसेको", १४-८-१९३२।

४५२. पत्र : पद्माको

२६ अगस्त, १९३२

चि० पद्मा,

यह पत्र केवल तेरे लिए है। तुझे शिकायत है कि मैं तुझे पत्र नही लिखता, लेकिन मैंने तुझे कुछेक पत्र अवश्य लिखे हैं। नारणदासको तूने जो हिसाव भेजा है, वह उसने मुझे भेजा है। उसमे तूने ३० रुपये फुटकरमे जो लिखे हैं, वह ठीक नही है। फुटकरमे क्या-क्या शामिल है, यह लिखना चाहिए। सीतला सहायने जितना मुझे लिखा था, उससे खर्च वढ़ा हुआ लगता है। सोच-समझकर चलना। फुटकरके बारेमे ब्योरा भेजना। अपने पिछले पत्रमें[1] मैंने नई जगहके बारेमें जानना चाहा है तथा तेरे और सरोजिनी देवीके कार्यक्रमके बारेमे पूछा है। मैं शीलाके बारेमे भी जानना चाहता हूँ। वह क्या खेलती है? कितनी बड़ी हुई है? उसकी ऊँचाई कितने फुट और कितने इंच है? क्या वह कुछ सीखती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३६) से। सी० डब्ल्यू० ३४८८ से भी; सौजन्य: प्रभुदास गांधी

४५३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२६ अगस्त, १९३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मुझसे विशेषण प्राप्त करनेकी खातिर कहीं तू उन विशेषणोंके अनुरूप जुदा-जुदा गुण तो प्रकट नही करती न? यदि तू ऐसा करने लगे तो विशेषणोका कुछ मूल्य ही न रह जाये।[2]

काठियावाड़मे जो द्वेषभाव दिखाई देता है, वह किसी अन्य स्थानमे दिखाई नही देता। इसलिए जब तूने इसका प्रदर्शन भी देखा तो मुझे कोई आश्चर्य नही हुआ। इसका प्रदर्शन वहाँ किसी तैयारीके विना देखनेमे आता है। इससे . . . जैसा व्यक्ति भी किंकर्तव्यविमूढ़ हो सकता है, लेकिन . . . राजकोटमे होनेके बावजूद . . . की ग्लानि दूर नही कर सकती, यह आश्चर्यकी बात है। रक्षाबन्धनके दिन उसने उसे

१. १४ अगस्त, १९३२ के।

२. अगले दो अनुच्छेदोंमें नाम नहीं दिये गये हैं।

राखी तो बाँधी ही होगी। लेकिन क्या वह सूतका तार पर्याप्त सिद्ध हुआ? . . .के दुःखके मूलको जानकर उसे दूर करना . . .की शक्तिसे बाहर नहीं होना चाहिए। . . . अपनी पत्नी . . .की पूजा करता था। मेरी धारणा यह है कि दोनों विवाहित होनेपर भी ब्रह्मचर्यका पालन करते थे। . . .के जानेसे . . .को बहुत आघात पहुँचा। . . .की मन ही मन कदाचित् विवाह करनेकी इच्छा हो। अपनी इस स्थितिको वह स्वयं नहीं जान सकता। लेकिन उसे अपने विचारोंवाली ही स्त्री चाहिए। तथापि, इसके एवजमें यदि उसे आदर्श बहन मिल जाये तो कदाचित् वह खिल उठे और खुल जाये। . . .की मैंने पूर्ण ब्रह्मचारिणीके रूपमें कल्पना की है। उसमें . . .के प्रति मैत्रीका भाव है। उसके भी आदर्श विचार है। चूँकि तूने . . .की खिन्न मनःस्थितिके बारेमें लिखा था, इसलिए मैंने यह सब लिखा है। . . .को मैंने अच्छी तरह पहचान लिया है, यदि तुझे ऐसा लगे और यह भी लगे कि उपर्युक्त कार्य उसकी शक्तिके बाहर नहीं है तो यह पत्र सुखसे उसे भेजना। यदि यह कार्य उसकी शक्तिके अथवा सीमाके बाहर लगे तो इतने भागको भूल जाना। . . . शुद्ध प्रेमका भूखा है। लेकिन . . . राग और विरागसे परिपूर्ण है। वह बहुत थोड़े व्यक्तियोंको ही चाह सकता है इसीलिए मन ही मनमें कुढता रहता है। ऐसे व्यक्तिको पत्नीकी जरूरत कम रहती है। लेकिन [विवाहोपरान्त] वह सारा समय पत्नीमें ही अनुरक्त रह सकता है। उसके लिए तो विकारशून्य बहन चाहिए; वह मिले तभी . . .का जीवन सुधर सकता है।

हमारी महिलाएँ विकारशून्य होनेके गुणका विकास नहीं करतीं। उन्हें पत्नी बनना तो आता है, बहन होना नहीं आता। बहन होनेमें भारी त्यागवृत्तिकी आवश्यकता है। यह बात मुझे स्वयंसिद्ध दिखाई देती है कि जो पत्नी होती है वह कभी बहन हो ही नहीं सकती। कोई भी स्त्री समस्त संसारकी बहन हो सकती है। पत्नी तो स्वयंको एक पुरुषको सौंप देती है। पत्नी-गुणका होना आवश्यक तो है लेकिन उसका विकास नहीं करना पड़ता, क्योंकि वहाँ विकार-शान्तिको अवकाश है। जगतकी बहन होनेका गुण कष्टसाध्य है। वह तो उसीसे सम्भव हो सकता है जिसके लिए ब्रह्मचर्य सहज है और जिसमें सेवा-भाव उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त हो गया है। . . . इतने ऊँचे पहुँच गई है, इसका मुझे एहसास न था। लेकिन उसमें इतनी दूर तक पहुँचनेकी शक्ति है, ऐसा मुझे अवश्य लगा है। हो सकता है कि इसके लिए तू स्वयं कारणभूत हो। अब तो मेरे मनमें जो आया वह सब मैं यहाँ लिख चुका हूँ। तू स्वयं ऐसी आदर्श बहन बने, ऐसा मेरा प्रयास तो है ही। यह कार्य कठिन है। लेकिन ईश्वरको करना होगा तो करेगा।

तूने प्रदर्शनीका ठीक-ठीक वर्णन दिया है। तेरे दिये विवरण हमेशा पढ़ने और विचार करने लायक होते हैं।

जन्माष्टमीके लिए तू आश्रममें पहुँची, यह अच्छा हुआ। देख, क्रोधपर विजय पाना। जानती है, धीरू किसी भी सूरतमें तेरे साथ जानेको तैयार नहीं हुआ? धीरू पर कदापि क्रोध न करना। वह बच्चा है, तू बच्ची नहीं है। धीरूको जीतनेमें तेरी जीत है, उसे न जीतनेमें तेरी पराजय है।

अच्छे संस्कारवाले माँ-बापकी परीक्षा कौन कर सकता है? जब बालक गर्भमें आता है उस समय माँ-बापकी स्थिति कैसी थी, सो कौन कह सकता है? इससे मुझे लगता है कि अच्छेका फल अच्छा ही होता है, इस निरपवाद नियमको माननेमें ही सार है। यदि हम हर समय अमुक व्यक्तिके बारेमें इस नियमको सिद्ध नही कर सकते तो उसका कारण अपना अज्ञान हो सकता है, नियमकी अपूर्णता नही।

यदि मैं किस्मतको मानूं[1] तो भी उसे मिथ्या सिद्ध नही किया जा सकता। किस्मत अर्थात् पूर्व कर्मोका प्रभाव।

वेश्याओका उद्धार करनेके लिए पुरुषोके भीतरके पशुका नाश करना होगा। जबतक जगतमे पुरुष-पशु रहेगे तबतक वेश्याओंका रहना भी लाजिमी है। वेश्या अपना धन्धा छोड़ दे और सुधर जाये तो उससे 'कुलीन' कहे जानेवाले पुरुष अवश्य विवाह कर सकते है। एक बार जो स्त्री वेश्या बन गई वह हमेशा वेश्या ही रहेगी, ऐसा नियम नही है।

फौजके लिए लड़कियोंको भगाया जाता है, यह मान्यता मुझे अतिशयोक्तिपूर्ण जान पड़ती है। सुव्यवस्थित राज्यमे ऐसा कदापि नही हो सकता।

मलाबारके किनारे रहनेवाले लोग उस वातावरणको छोड़नके बाद भी नारियल हजम कर सकते है, ऐसा मानना भूल है। तांदलजा[2] मे नारियल मिलाकर तुमने तांदलजाके असरको ही कम किया। मैंने स्वयं तो नारियलके बहुत प्रयोग किये हैं। मुझे वह माफिक नही आया। लेकिन जहाँ नारियल पैदा होता है वहाँ अन्य खाद्य वस्तुओके साथ उसका होना आवश्यक है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३००) से। सी० डब्ल्यू० ५७४७ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

१. प्रेमाबहन कंटकने बापुना पत्रो-५: कु० प्रेमाबहेन कंटकनेमें लिखा है कि "मैंने गांधीजीसे पूछा था कि क्या आप किस्मतको मानते हैं।" इसका उत्तर सम्भवतः यह होना चाहिए: "यदि मैं किस्मतको न मानूँ . . ."।

२. एक प्रकारकी वनस्पति।

४५४. पत्र : रामचन्द्र एन० खरेको

२६ अगस्त, १९३२

चि० रामभाउ,

तूने हिन्दी अपने-आप लिखी है अथवा परसरामजीकी मददसे? लिखावट तो ठीक है। यदि हिन्दी तूने अपने-आप लिखी हो तो अच्छी कही जा सकती है। मैं तुझसे जन्माष्टमी मनाये जानेके बारेमें विस्तृत वर्णनकी अपेक्षा रखता हूँ।

यदि तू कुछ अंग्रेजीके वाक्य लिख भेजे तो मुझे मालूम हो जायेगा कि उस भाषामें तूने कितनी तरक्की की है।

बापू

[पुनश्च :]

तूने काटकर जो 'ॐ' बनाया है वह ठीक है, लेकिन वह आसानीसे पढ़ा जा सकता हो, ऐसा मुझे नही लगता। इसमें कितना समय लगा होगा?

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९६) से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन एन० खरे

४५५. पत्र : मणिबहन पटेलको

२६ अगस्त, १९३२

चि० मणि,

तेरे कैद होनेके बाद[1] तूने किसीको भी कोई पत्र नही लिखा, ऐसा क्यो कर? कैद होनेके तुरन्त बाद पत्र लिखनेका अधिकार तो है न? अब यदि वहाँसे आजतक न लिखा हो तो पत्र लिखना। हो सके तो इस बार अपने शरीरको सुधार लेना। जो खुराक आवश्यक हो उसे लेनेमें अथवा माँगनेमें संकोच न करना।

मेरी राय है कि तू अपने विद्याभ्यासको अच्छी तरहसे व्यवस्थित करके, जो विषय कच्चे हों उन्हे पक्का कर ले। यदि तू गुजराती व्याकरणको पक्का करे, और भाषापर अधिक अधिकार प्राप्त करे तो अच्छा होगा। और चूंकि तुझे अंग्रेजी आती ही है, इसलिए उसे भी पक्का किया जा सकता है। इसमें कमलादेवी [चट्टोपाध्याय]की मदद ली जा सकती है। संस्कृतमें लीलावतीबहन (मुंशी) मदद कर सकती है। साथमें मराठी भी ज्यादा अच्छी कर सके तो बेहतर होगा। स्त्रियोंसे सम्बन्धित विशेष ज्ञान प्राप्त कर लेनेकी भी आवश्यकता है न? लेकिन यह तो मेरा

१. मणिबहन पटेल ११ अगस्त, १९३२ को गिरफ्तार हुई थीं और उन्हें १५ मासकी कैद हुई थी।

सुझाव हुआ। इसमें से यदि तुझे जो पसन्द न आये, तो जो अच्छा लगे सो करना। इसमे यदि कुछ भी अच्छा न लगे तो कोई नई चीज हाथमें लेना। मेरे कहनेका तात्पर्य केवल इतना ही है कि यह जो सुन्दर अवसर मिला है उसका पूरा सदुपयोग ज्ञानवृद्धिके लिए कर लेना। कातनेकी छूट हो तो कातना तथा प्रार्थना और दैनन्दिनी लिखनेकी बातको कभी न भूलना।

हम तीनो मजेमे है। तेरे बापूका संस्कृतका अभ्यास इतने वेगसे चल रहा है कि यदि तू देखेगी तो तुझे आश्चर्य होगा। किताब हाथसे छूटती ही नही है। नौजवान विद्यार्थियोंमें भी ऐसा उत्साह देखनेमे नही आता। सूत कातते है, लेकिन ४० अंकका ही; और लिफाफे बनानेका काम तो है ही। महादेवका ८० अंकका सूत कातना जारी है। इसके अतिरिक्त फ्रेंच और उर्दू है। मेरी धीमी गाड़ी मगन-चरखेपर चलती है। अभ्यास तो टूटा-फूटा चलता ही है। पत्र लिखनेमे ही बहुत समय चला जाता है। . . .[1]

यदि कभी पत्र भेजनेकी गुंजाइश हो और तेरी इच्छा हो आये तो मुझे पत्र लिखना। हम सबकी ओरसे आशीर्वाद।

बापू

मणिबहन पटेल
प्रिजनर
बेलगाँव

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने

४५६. पत्र: द० बा० कालेलकरको

२६/२७ अगस्त, १९३२

चि० काका,

बहुत दिनोंके बाद और कर्नल डॉयलकी कृपासे मै तुम्हारा तारीख १ [६-८-१९३२][2] का पत्र प्राप्त कर पाया हूँ। तुम आज ही अहमदाबाद पहुँच चुके होगे, यह समाचार भी कर्नल डॉयलने मुझे आज दिया और साथ ही साथ यह भी कहा कि पीठके दर्दके कारण तुम्हें एकदम चरखा चलाना छोड़ देना चाहिए। मैंने उनसे कहा है कि इस बारेमें मै तुम्हे लिखूँगा और जबतक दर्द हो तबतक चरखा छोड़नेके लिए कहूँगा। इसलिए फिलहाल चरखा चलाना ही छोड़ देना। खड़े-खड़े और बिना परिश्रम जैसे तुम यहाँ तकली चलाया करते थे वैसे तकली चला सको तो चलाना, अन्यथा इसके लिए भी [मेरा] आग्रह नही है। अभी तो मेरा मुख्य आग्रह

१. यहाँपर कुछ पंक्तियाँ जेल-अधिकारियों द्वारा काट दी गई थीं।
२. मूलमें यहाँ अस्पष्ट है।

यह है कि तुम अपना स्वास्थ्य ठीक बनाओ और पीठमे जिस भागमे दर्द होता हो वहाँ हलकी मालिश तो करवाओ ही। तुम ठंडे पानीका स्नान ले सकते हो, यह बड़ी अच्छी बात है। (अब वहाँ तुम्हारे साथ कौन है, यह लिखना) . . .[1]

खगोलकी पुस्तकके बारेमें मैं हीरालालको लिख रहा हूँ। आपने जिन पुस्तकोंकी तालिका तैयार की है, उनमें से तीन तो हीरालालने मुझे भेज दी है। ये निम्नलिखित हैं: 'स्टेलर मैप्स,' 'खगोलचित्रम्' और 'हिन्दू ऐस्ट्रॉनॉमी'। ये तीन पुस्तके मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। इन पुस्तकोंमे से 'खगोलचित्रम्' के पीछे एक इतिहास है। वह जब यहाँ आई तब उसके पृष्ठ फटे हुए थे। . . .[2] मेरे पास तो खगोल-विद्या-सम्बन्धी पुस्तकोका एक अच्छा खासा भण्डार हो चला है। इसमें जीन्सकी तीन पुस्तकें हैं। ये पढने लायक हैं। तुमने न पढ़ी हो तो उनमें से कुछ मैं तुम्हे भेजूं? हीरालालने तुम्हारे सुझाव पर मेटरलिंककी पुस्तक भेजी है। यह दो-तीन दिन पहले ही मिली थी। चूंकि यह तुम्हारे सुझावपर भेजी गई है, अतः तुमने तो इसे पढा ही होगा। लेकिन यदि तुम्हे चाहिए तो तुम इसे भी मँगवा लेना, मैं भेज दूंगा। तुमने सवेरेके नक्षत्रोंके जो नाम दिये हैं उन्हें मैं सहज ही पहचान सकता हूँ। तुम यों तो अनेक तारोंके नाम बताया करते थे, लेकिन वे सब तो उस समय नाम मात्र थे। अब तो उनमे से बहुतोंको मैं पहचान सकता हूँ। इस विषय पर थोड़ा-बहुत तो रोज पढ़ता हूँ। तुम्हारे अध्यायोंको मैं एक नजर देख गया हूँ। उनमे गहरे उतरे बिना भी मैं एक अभाव तो देखता ही हूँ। पश्चिमके खगोलशास्त्रियोके नाम और उनके संक्षिप्त जीवन-चरित्र, जिनमें से कुछेक तो बहुत साहसिक और पुण्यवान हैं, जैसा कि तुम स्वयं भी लिखते हो, दिये जाने चाहिए। यह मुझे बॉलकी 'स्टोरी ऑफ द स्काई' नामक पुस्तकमें सर विलियम हर्शलका संक्षिप्त जीवन-वृत्तान्त देखनेके बाद महसूस हुआ। 'ज्योतिर्विलास' में कुछ हदतक यह प्रयत्न किया भी गया है। हमारी खगोल सम्बन्धी पुस्तक यथासम्भव सम्पूर्ण होनी चाहिए और उसमें आजतक हुई खोजोंकी जानकारी होनी चाहिए। जीन्सकी पुस्तके पढ़नेके बाद ऐसा अवश्य लगता है कि थोड़ी-बहुत भौतिकीका ज्ञान भी होना चाहिए अर्थात्, यह साहस थोड़ा विशेष माना जायेगा। यह तो मैंने अपना सुझाव-भर दिया है। तुम वहाँ बैठे-बैठे यह सब करो, ऐसी आशा मै नही रखता। यह कदाचित् तुम्हारी सामर्थ्यसे बाहर भी है, इसलिए मैं तुम्हारे लिखे प्रकरणोंका बहुत ज्यादा विश्लेषण नही करना चाहता। और फिर, हमारी पुस्तकें ऐसी भी नही होनी चाहिए कि केवल बहुत पढ़े-लिखे लोग ही उन्हें समझ सकें। गाँवके लोगोंको ध्यानमें रखकर ही पुस्तक लिखी जानी चाहिए। पुस्तक-लेखनके इस प्रयासको भी अपने स्वास्थ्यके आगे गौण समझना। स्वास्थ्यको सुधारकर ही ऐसा काम किया जाना चाहिए, उसे बिगाड़कर नहीं।

पुण्डलीकको[3] कैसे नही जानता? वह तो तुम्हारे साथ नही आया होगा। [उसे जो रोग है] वह तो भयंकर है। मेरे उपचारमें तो ऐसे रोगके लिए उपवास,

१ और २. यहाँपर एक-दो पंक्तियाँ जेल-अधिकारियों द्वारा काट दी गई थीं।

३. पुण्डलीक कातगडे, गंगाधरराव देशपाण्डेके भक्त।

ठंडे पानीसे कटिस्नान और एनीमा, इन सबके अलावा और कुछ नहीं है। नीचेकी अँतडियोको बिल्कुल आराम मिलनेसे ही यह रोग कुछ शान्त हो जाता है। गुजरातीमे इसे 'आँतका छिटकना' कहते हैं। एनीमाका उपयोग यह है कि इससे आँतोके छिटके बिना पेटमें जो-कुछ हो वह पानीके वेगके साथ ही निकल जाता है, और चूँकि उसने कुछ खाया नही होगा इसलिए आँतोको कुछ काम नही करना पड़ेगा और आँत भी बाहर नही आयेगी।

मेरा खयाल है कि यह पत्र तुम्हारे पास जल्दी पहुँच जाना चाहिए। वल्लभभाईकी संस्कृत उच्चैःश्रवाकी गतिसे चल रही है। कातनेसे फुरसत मिलते ही संस्कृतकी किताब हाथमे होती है। सातवलेकर [की ग्रंथमाला]के छः भाग और 'गीता' के दो अध्याय पूरे हो गये हैं। रोज पाँच-पाँच श्लोक होते हैं। कातनेमे भी वे इसी तरह तन्मय हो जाते हैं। ४० अंकतक पहुँच गये हैं। विद्यापीठके विद्यार्थियोमे मुझे ऐसा कोई विद्यार्थी नही दीखता जो उनके उद्यमका मुकाबला कर सके। महादेवकी फ्रेंच और उर्दूकी पढ़ाई चल रही है। वह ८० अंकतक पहुँच गया है। मैं स्वयं भी गांडीव चरखे पर ५३ अंकतक पहुँच गया था, परन्तु बायी कुहनीको आराम देनेकी खातिर वापस मगन चरखेपर हूँ। इसपर ३० अंकसे आगे नही जा सका। खगोलशास्त्रके अध्ययनके बाद उर्दूकी पढ़ाई ठीक-ठीक चल रही है। पत्र-व्यवहारमे मेरा खासा समय जाता है। डा० मेहताके निधनके बाद उनके परिवारके साथका पत्र-व्यवहार काफी बढ गया है। डा० मेहताके बारेमे तुम्हे मालूम ही होगा। उन्हे कॉंच चुभ गया था और उससे पाँवमे जहर फैल गया, जिससे पैर कटवाना पड़ा। आपरेशन तो ठीक हो गया था, लेकिन बादमे डबल निमोनिया हो गया और वह प्राणलेवा सिद्ध हुआ। उनकी मृत्यु हुए यह चौथा सप्ताह चल रहा है।

मगनलाल (डा० मेहताका पुत्र) आज बम्बई उतरा होगा। वह इंग्लैंड गया हुआ था। . . .[1]

बापूके आशीर्वाद

२७ अगस्त, १९३२

. . .[2] मैंने आश्रमका इतिहास लगभग समाप्त कर लिया है। दुबारा पढ़नेके बाद आगे चलनेवाला ही था कि मुझे रुकना पड़ा। तबसे उसके लिए समय नही मिल पाया है। समय निकालनेकी कोशिशमें हूँ। जितना तुम चाहते हो उतना विस्तारसे तो नही लिख पाया हूँ। तथापि, मेरा खयाल है कि इसमें संक्षेपमें सारे विषयोंपर मेरे विचारोका समावेश हो जायेगा।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८८) से; सौजन्य: द० बा० कालेलकर

१. यहाँपर जेल-अधिकारियोंने ७½ पंक्तियाँ काट दी थीं।
२. यहाँ पहली पंक्ति काट दी गई थी।

४५७. पत्र : सुलोचनाको

२७ अगस्त, १९३२

चि० सुलोचना,

तेरा पत्र मिला। मानना होगा, तूने अच्छी तरक्की कर ली है। पीजना भी जल्दी सीख लेना। तेरे पत्रोमें भूलें रह जाती हैं। दुबारा पढ़नेकी आदत डालनी चाहिए और किसीसे भूल सुधरवा लेनी चाहिए। थोड़ी मेहनतसे लिखावट भी सुधर सकती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३७) से।

४५८. पत्र : विमला जोशीको

२७ अगस्त, १९३२

चि० विमु,

तेरे अक्षर तो बहुत ही खराब हैं, तो भी तेरा पत्र मुझे अच्छा लगता है। अब अपनी आँखोंको जल्दी ठीक कर डालना। आँखोको क्या हुआ है? अब तो तू आश्रममें ही रह जाये तो बहुत अच्छा हो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३११) से।

४५९. पत्र : छगनलाल जोशीको

२७ अगस्त, १९३२

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला है। अब तो आश्रममें तुम्हे काफी दिन हो गये हैं। तुम मेरे माँगे बिना अपनी निरीक्षणकी रिपोर्ट लिख भेजोगे ऐसी मुझे उम्मीद थी, लेकिन वह आजतक तो मिली नही। रमाने मुझे इस सम्बन्धमें थोड़ा-बहुत लिख भेजा था, जिसकी एवजमें उसने मेरी ओरसे लम्बा पत्र पाया। वह तो तुम पढ़ोगे ही। मुझे तुम्हारा ब्योरेवार विवरण चाहिए। अच्छा-बुरा जैसा भी हो, उसकी कोई चिन्ता नहीं। मुझे तो, तुम्हारे हृदयपर जो छाप पड़ी है, उसका ब्योरा चाहिए।

विमूकी आँखके बारेमें लापरवाही न करना[1]। आँखके दर्दको उठनेके साथ ही दवा देना चाहिए। वह अभी भी वैसी ही शैतान है कि कुछ गम्भीर बन गई है? धीरू आ जाये तो अच्छा होगा। उसने अपना समय किस तरह बिताया?

विद्यापीठकी लाइब्रेरी तुमने देखी है? अमीनाको क्या हुआ है? कब्र देखी?

आशा है, तुम पूंजाभाईसे मिले ही होगे। लगता है, वह अब थोड़े ही समयके मेहमान हैं।

मैं शंकरलालसे मिला था। वह पश्चात्ताप करता दीख पड़ता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५०६) से।

४६०. पत्र : चम्पाबहन आर० मेहताको

२७ अगस्त, १९३२

चि० चम्पा,

तेरे सारे पत्र मिले। डाक्टरके निर्देशोंकी एक प्रति मुझे मिली है। उसमें उनके हस्ताक्षर नहीं हैं। लेकिन उनपर अमल होगा, ऐसी मेरी मान्यता है। तू किसलिए घबराती है? मेरे लिए यह सम्भव ही नहीं कि मैं तेरा त्याग कर सकूँ। तू चाहे तो मेरी सलाहको अस्वीकार कर सकती है। यदि तू ऐसा करेगी तो भी मुझे उसका दुःख नहीं होगा। मैं तो पिता बननेका प्रयत्न ही कर सकता हूँ, लेकिन प्रभाशंकर तेरे जन्मदाता पिता हैं। मेरी सलाहसे ज्यादा तुझे उनकी सलाह पसन्द आयेगी ही, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं। लेकिन इसमें तो अपनी बुद्धिके अनुसार चलना चाहिए। और यदि बुद्धि कुछ न कहे, तो जो तेरे पिता कहे उसके अनुसार चलना चाहिए। मैं इस बातका प्रयत्न तो अवश्य करता हूँ कि मैं और प्रभाशंकर परस्पर सहमत हो सकें। लेकिन प्रभाशंकरको मैं अच्छी तरहसे पहचान नहीं पाया हूँ। उनका कुछ-एक व्यवहार मुझे पसन्द नहीं आता, अथवा मैं उन्हें समझ नहीं पाता। उनके कुछेक विचार मुझे सीधे नहीं जान पड़ते हैं। मैं उन्हें समझानेका प्रयत्न कर रहा हूँ, पत्र-व्यवहार करता हूँ। हमारा मेल मिल जाये तब तो ठीक ही है, और नहीं मिलता तो भी तेरे लिए घबरानेका कोई कारण नहीं है। जो तेरा है उसे कौन ले जा सकता है? ईश्वरपर विश्वास रख। अभी तो तुझे कोई कदम उठानेकी आवश्यकता नहीं है। तू शान्तिसे बैठी रह। बच्चोंको सँभाल। जो बीमार थे वे अब ठीक हो गये होंगे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७५४) से। सी० डब्ल्यू० १६२२ से भी; सौजन्य : चम्पाबहन आर० मेहता

१. देखिए पिछला शीर्षक।

४६१. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

२७ अगस्त, १९३२

चि० नर्मदा,

तू बहुत लोभी जान पड़ती है। तुझे एक पत्र लिखना होता है, इसलिए तू लम्बा लिख सकती है। पर मुझे तो अनेक पत्र लिखने होते हैं और अगर लम्बे-लम्बे लिखने बैठूं तो कब पूरे करूँ? लेकिन मुझे तेरा लोभ अच्छा लगता है।

मुझे जो कहना होता है वह तो सब कह देता हूँ। अपनी लिखावट सुधारना। पंक्तियोंमें अन्तर रखना, शब्द भी अलग-अलग लिखना।

तू दृढ़ रहेगी और विवेकसे काम लेगी तो सारे सम्बन्धी अनुकूल हो जायेंगे।

कम बोलना ही ठीक है। मौनके लिए तूने नारणदासकी अनुमति ली होगी। तुझे गुजराती कौन सिखाता है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २७६१) से; सौजन्य: रामनारायण एन० पाठक

४६२. पत्र : शारदा सी० शाहको

२७ अगस्त, १९३२

चि० शारदा,

तेरे पत्र हमेशा अच्छे होते हैं। राजाजीके प्रवचनोंका जो सार तूने भेजा है, वह अच्छा है।

तेरी कमरमें दर्द क्यों होता है, सो मैं जानता हूँ। इसके बारेमें आनन्दीको लिखा मेरा पत्र पढ़ जाना और मुझे विस्तारसे लिखना।

पूनी खराब क्यों होती है? इसके बारेमें तू नारणदाससे कहती क्यों नहीं है?

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९१६) से; सौजन्य: शारदाबहन जी० चोखावाला

४६३. पत्र : नारणदास गांधीको[1]

२५/२८ अगस्त, १९३२

चि० नारणदास,

२५ तारीखकी तुम्हारी डाक मंगलवारको मिली है। पार्वतीका[2] पत्र हृदयद्रावक है। बुवाभाई[3] यदि समझते ही न हो तो तुम क्या कर सकते हो? मैं जान-बूझकर पार्वतीको नही लिखता। तुम जितनी सान्त्वना दे सको उतनी देना। यदि तुम चाहो कि मुझे दोनोंको या दोनोंमे से किसी एकको लिखना चाहिए तो लिखूंगा।

कुसुमके पत्रसे देखता हूँ कि आजकल तुमपर कामका काफी बोझ रहता है। चाहे कितना भी बोझ क्यों न हो, लेकिन नीद पूरी लिया करो और दोपहरको भी कमसे-कम आधा घंटा विश्रामके लिए निकाल ही लिया करो। राजाजी आ गये हैं और मीराबहन भी, यह बहुत ठीक हुआ। अमीना दूध, घी, शक्कर क्यो नही खा सकती? उसे क्या रोग हुआ है? उम्मीद है, आश्रमकी बहने उसकी देखभाल अच्छी तरहसे करती होंगी। मैंने बा के लिए पिछले सप्ताह जो पत्र[4] लिखा था वह उसको रिहा होनेके बाद देना, यह बात तुम समझ गये होगे। मुझे कुछ ऐसा खयाल पड़ता है कि बा आज-कलमे छूटनेवाली है। क्या पार्वती पतकी स्थायी तौरपर खामगाँव ही रहेगी। यह हास्यास्पद है कि इटलीसे प्राप्त पत्र[5] के बारेमे मैंने जो लिखा था वह तुम्हें तुरन्त ही समझमे नही आया। ऐसा कई बार हो जाता है।

अब हम महीन सूत कातने लगे हैं, इसके लिए हमारे पुरुषार्थकी अपेक्षा चरखा, तकुआ और पूनियाँ ही ज्यादा जिम्मेवार हैं। महीन सूत कातनेकी दिशामे प्रयोग किये जानेके बाद अब आश्रममे खराब पूनियाँ होनी ही नही चाहिए। जो लोग कातते हैं, वे अपनी-अपनी पूनीपर कातते है अथवा सबकी पूनियाँ परस्पर मिल जाती है? मुझे लगता है कि यदि सब-कोई अपनी-अपनी पूनीसे काते तो पीजनमे बहुत सुधार हो सकता है। महीन सूतकी हम जो व्याख्या करते है यदि हम उसे केन्द्रबिन्दु बनाये तो कपास बोनेसे लेकर कपड़ा बुननेतककी समस्त प्रक्रिया पूर्णताको पहुँचे बिना नही रहेगी। फिर तो हमे अच्छेसे-अच्छा बीज तैयार करना चाहिए, जमीन तैयार करनी चाहिए, खादकी जाँच करनी चाहिए, कपास चुननेमें सावधानी रखनी चाहिए, आदि-आदि। महीन सूतसे हमारा तात्पर्य उस सूतसे है जो कमसे-कम ४०

१. यह पत्र "सविचार कार्य और विचाररहित कार्य", २८-८-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

२ और ३. एक दम्पति जो आश्रमके समीप रहते थे।

४. २० अगस्त, १९३२ को।

५. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", ११/१५-८-१९३२।

अंकका हो और एकसार हो, जो कि मिलके उसी अंकके सूतका मुकाबला कर सके और बुनकर बिना किसी परिश्रमके उसे बुन सके। अपनी इस व्याख्यामें मैंने ४० अंकका सूत पसन्द किया है। उसका कारण यह है कि इससे कम अंकका सूत कमजोर पूनीसे जैसे-तैसे काता जा सकता है, परन्तु ४० अंकका सूत ऐसे नही काता जा सकता। तुम्हारी यह मान्यता है कि गांडीवपर बैठकर कातनेसे कुछ असुविधाएँ होती हैं; उनके बारेमें मुझे बताना। गांडीवके अनेक गुणोंमें एक गुण मैंने यह माना है कि इसे अनेक स्थितियोंमें रखकर काता जा सकता है। तुम तिपाई अथवा कुर्सीपर बैठकर एक पेटी अथवा बेंचपर गांडीवको रखकर सुविधाके साथ चला सकते हो। इसे एक ओर रख कर भी चलाया जा सकता है और सामने रखकर भी। ट्रेनमे जिस बेंचपर मै बैठा होता हूँ उसीपर इसे रखकर चलाता हूँ। छक्कड़दासकी पूनी देरसे आये तो भी कोई हर्ज नहीं। केशूकी पूनी यदि तुमने पहले न भेजी हो तो उसपर निशानी लगाकर तुम उसे छक्कड़दासकी पूनीके साथ भेजोगे तो भी चलेगा। अब्बास किस नम्बरका सूत कातते हैं? उनके तकुएकी लम्बाई और घेरा लिख भेजना। तुम्हारे हाथसे २०-२२ अंकसे अधिकका सूत नहीं निकलता, इसकी कोई चिंता नही। अच्छीसे-अच्छी पूनी और पतलेसे पतले तकुएपर जितना सूत निकल सकता हो उतनेसे मैं सन्तोष मानूंगा।

इस बार भी अनन्तपुरकी रिपोर्ट मेरे हाथमे नहीं आई है। तुम्हारे पास जो रसीद है उसपर किसके हस्ताक्षर हैं? परसरामको जो कहना उचित जान पडे सो कहना। प्यारेलाल वहाँसे इतनी उतावलीमें क्यों चला गया? पद्माको फुटकर खर्चका ब्योरा भेजना ही चाहिए। मैंने उसे जो पत्र लिखा है[1] वह पढ़ना। महावीरके चाचा को तुमने ठीक ही लिखा है। जीवनलालकी भाभी आ गई है, यह अच्छा हुआ। क्या वह कुछ पढ़ी-लिखी है?

दत्तात्रेय मन्दिरके सम्बन्धमें तुमने उचित ही प्रश्न किया है। इसे मैं मन्दिर ही नहीं मानता। मुझे लगता है कि यह एक प्रकारकी समाधि है। सार्वजनिक मन्दिर के रूपमें तो इसका उपयोग नही किया जा सकता। इसे खानगी मन्दिर बनाये रखनेमें भी मेरी रुचि नही है, लेकिन यदि कोई व्यक्ति वहाँ जाकर पूजा करता है तो उसे रोका नही जा सकता, ऐसा मुझे लगता है। इस सम्बन्धमें पंडितजीकी क्या इच्छा है और वह क्या मानते हैं, यह जानना और मुझे बताना। इस बारेमें हाल ही मे क्या कोई प्रश्न उठ खडा हुआ है?

कौन लिखता है कि त्रिवेदीके[2] यहाँ कुछ रकम रखी जानी चाहिए? अब तो वहाँ बहुत कम बहनें रह गई हैं। रकम रखनेकी बात त्रिवेदीको पसन्द नही आयेगी। लेकिन कुछ रकम रखना आवश्यक जान पडे तो त्रिवेदीसे पूछकर रखी जा सकती

१. २६ अगस्त, १९३२ को।

२. पूनाके कृषि विद्यालयके प्रोफेसर जयशंकर पीताम्बर त्रिवेदी, जो यरवडा जेलमें रखे गये आश्रम-वासी कैदियोंकी जरूरतोंको पूरा करते थे।

है। मुझे स्वयं ऐसी आवश्यकता नही दीख पड़ती। यदि किसी समय कोई खास जरूरत जान पड़े तो आश्रमको लिखा जा सकता है, और इसके लिए त्रिवेदीसे माँगने मे भी मैं संकोचका कोई कारण नही देखता। अभी तो वहाँ रमाबहन, वसुमती आदि होंगी। इनके विचार भी जानना।

लीलाधरको लिखा मेरा पत्र पढ़ना। तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा ही करना। राजकोटकी प्रदर्शनीकी कल्पना किसकी थी? क्या सारा बोझ जमनादासपर ही था?

२६ अगस्त, १९३२

मंजुलाका कान यदि अवी भी बहता है तो डा० तलवलकरको दिखाना और वे जो उपचार बतायें वह करना। अगम गिरिसे तुम सीधे ही यह प्रश्न पूछना कि क्या उसे गिरि कुटुम्बसे कोई असन्तोष है? अथवा उसके पास सुझाव देने लायक कोई चीज है? क्या तुम्हे नियमपूर्वक महावीरके पत्र आते हैं? मुझे तो नही ही आते। जब शिकायत करनी थी तब तो बराबर आया करते थे।

२७ अगस्त, १९३२

काका वहाँकी जेलमें आ गये हैं। उनसे मिलनेकी माँग करना। बा को इस बार मैंने आज सीधे ही पत्र लिखा है। बा १६ पौंड वजन खो बैठें, इसपर विश्वास ही नही होता। यदि वह इतना वजन खो बैठें तब तो कंकाल मात्र रह जायें। तुमने बा को देखा है? इस बारेमें जरा ज्यादा जाँच करना। बा कितना दूध पी सकती है? और क्या-क्या खाती है?

अनन्तपुर-रिपोर्टकी रजिस्टरीकी रसीद रजिस्टर करवाकर जेल-अधीक्षकको भेजना। उसकी एक प्रति अपने पास रख लेना। जब भेजो तब मुझे भी लिखना। ये कागजात इस बार भी मुझे नही मिले हैं।

इन्दुको लिखा मेरा पत्र पढ़ना। कनु, मंगला, निर्मला और उसके बीच कुछ अनबन जान पड़ती है, सो क्या बात है? जरा खोजबीन करना। इन्दुको अंग्रेजी सीखनेका लोभ हुआ है। यदि वह कुछ न मीखती हो और यदि अंग्रेजी सीखनेमें उसका मन लगता है तो उसे लगाने देना ही मुझे ठीक लगता है।

तुम्हारा अलगसे २५ तारीखको लिखा हुआ पत्र मुझे मिला है। चार पशु अर्थात् गाय अथवा बैल? उसमें कितना नुकसान हुआ? इन्जेकशन कौनसे और किसलिए लगाये गये थे? नारायणप्पाको तुमने जानेकी अनुमति देकर ठीक ही किया। उसकी ओरसे हमने बहुत-कुछ सहन किया है। लगता है कि उसके बारेमें भगवानजी का निर्णय ठीक ही था। लेकिन इससे उसका विश्वास करनेमें हमसे कोई भूल हुई है, ऐसा मैं नही मानता। किसी भी जिम्मेदार व्यक्तिको चाहिए कि वह किसी व्यक्तिको दूसरेके कथनके आधारपर अयोग्य न ठहराये। इससे अच्छा परिणाम यही निकला कि नारायणप्पा अपने ही हाथों अयोग्य सिद्ध हुआ।

कुसुम जरा भी घबराई हुई तो नही है न? इसमें घबरा उठनेका कतई कोई कारण नही है।

जन्माष्टमीका पारायण अच्छा हुआ। फिलहाल आश्रममें कितने लोग उपस्थित हैं? उनमें कितनी स्त्रियाँ हैं? कितने पुरुष हैं? १६ वर्षकी वयसे नीचेके कितने लड़के-लड़कियाँ हैं? मजदूर कितने हैं?

२८ अगस्त, १९३२

नीमूका पत्र पढ़ना और उसे घी लेनेके लिए मजबूर करना। रामदासकी दलील सही है। मेरी खुराक अभी यही है — बाजरा, केला, बादाम, नारंगी और हरी सब्जियाँ। कब्ज तो दूर हो ही गया है। दूसरी तरहसे भी शरीर ठीक रहता है। तिसपर भी मैं दूध लेकर देखूँगा। इसे लेते हुए भी बाजरा कब्जको दूर करनेमें मदद करता है या नहीं — यह भी देखना है। इसके साथ-साथ मैं यह भी देखता हूँ कि साफ पाखाना लानेमें हरी सब्जियोंका योगदान बहुत ज्यादा है।

पूनी उत्तमसे उत्तम हो, इसकी व्यवस्था तुरन्त कर ही डालना। अभी यदि उनकी मात्रामें कमी आ जाये तो उसकी चिन्ता न करना, लेकिन पूनी साफ, महीन और उत्तम हो इस दिशामें, और कचरा कम हो, इस ओर अधिक ध्यान देना।

कुल ५४ पत्र हैं।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८२४७ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

४६४. सविचार कार्य और विचाररहित कार्य[1]

२८ अगस्त, १९३२

'वाचन और विचार' के बारेमें तो मैं पहले ही लिख चुका हूँ।[2] आज कार्य और विचारके सम्बन्धमें कुछ लिखूँगा। मेरे मतानुसार विचार करनेकी कला ही सच्ची शिक्षा है। यदि यह कला हाथ आ जाये तो बाकी सब उसके पीछे सुन्दर ढंगसे व्यवस्थित हो जाये।

जिस स्त्रीने नेवलेका रक्तसे भरा मुँह देखकर उसके सिरपर अपना जलसे भरा घड़ा दे मारा था उसने बहुत ही अविचारपूर्ण कार्य किया था और अन्तमें उसे अपने बालकके रक्षकका वध करनेके लिए खूब पश्चात्ताप हुआ और वह इस कलंकको जीवन भर न मिटा सकी। और जो घड़ा फूटा, पानी व्यर्थ गया, उसकी तो चर्चा करना ही व्यर्थ है, इतना भारी अपराध उसने किया था।

यह तो चरम उदाहरण हुआ। लेकिन इससे हमारा ध्यान मूल समस्यापर ठीक-ठीक बैठ पायेगा। आश्रममें, हम जितने काम करते हैं, यदि उन सबको हम

१. यह लेख "पत्र: नारणदास गांधीको", २५/२८-८-१९३२ के साथ भेजा गया था; देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए "वाचन और विचार", १४-८-१९३२ तथा २१-८-१९३२।

विचारपूर्वक करें तो शान्तिकी वृद्धि हो, कार्य करनेवालेकी दक्षता बढ़े, बहुत सारा समय बचे, और काम करनेमे नित्य नये आनन्दकी प्रतीति हो। बैलोके द्वारा हम रहट चलाते है। बैल बहुत मजदूरी करते है, लेकिन उनके ज्ञानमे कोई वृद्धि नही होती, उस कार्यमे उन्हे कोई आनन्द नही आता। यदि उनके सिरपर व्यक्ति न बैठा हो तो बैल रहट नही घुमायेंगे। लेकिन हम तो मनुष्य है। मनुष्यसे ही मानस शब्दकी उत्पत्ति हुई। मनुष्य अर्थात् विचार करनेवाला, ज्ञानवान्। हमे चाहिए कि हम पशुकी तरह न रहें, उसके समान आचरण न करें।

हम पाखाना साफ करते है। यदि बिना विचार किये करेगे तो वह काम तुच्छ लगेगा, खराब लगेगा और निरन्तर ऐसा लगेगा कि कब उससे छुटकारा मिलेगा। यदि विचारपूर्वक करेगे तो जानेगे कि यह कार्य करना हमारा धर्म है। साफ करनेका तात्पर्य यह है कि बिल्कुल अच्छी तरहसे साफ करना, पाखानोंको ठीक तरहसे पूरना, सफाईके औजारोको साफ रखना और पाखानेकी जाँच करना। उसमे खून हो, बदबू हो, कीड़े हो तो हमे समझना चाहिए कि कोई बीमार है। और वह व्यक्ति कौन है, यह ढूंढ़ निकाले। प्रत्येक टट्टीका इस्तेमाल कौन-कौन व्यक्ति करता है, यह तो हमे मालूम ही होता है। और फिर यदि पाखाना साफ करते हुए हमे मालूम हो कि पाखानेको मिट्टीसे ठीक तरहसे ढाँका नही गया है, टट्टी बाहर भी पड़ी हुई है, पेशाब भी नीचे पड़ा हुआ है, तो हम उस दोषी व्यक्तिको खोज निकाले और उसे विनयपूर्वक समझाये। यह सब तो वही व्यक्ति कर सकता है जो सेवा-भावसे इसे करे। अन्य शब्दोमे, हम जैसे-जैसे विचारपूर्वक अपना कार्य करेगे वैसे-वैसे उसमे सुधार होता जायेगा, वह आसान होता चला जायेगा और मन उचटनेके बजाय हमे उसमें रस आने लगेगा। यहाँ मैंने सब सम्भव उपायोसे पाखाना-घरोको साफ रखनेकी बातपर विचार नही किया है। यह तो मैंने केवल उदाहरण-भर दिया है।

कताई यज्ञको ही लें, तो उसके सम्बन्धमें भी यदि विचारपूर्वक काम किया जाये तो हमे उससे रसके घूंट मिलें और कातनेकी कलाकी प्रगतिकी भी कोई सीमा न रहे। यदि सब लोग विचारपूर्वक काते तो हम अनेक नई शोध कर सकते है और अच्छेसे-अच्छा सूत कात सकते है।

यही बात प्रार्थनाके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। प्रार्थना क्या है? हम प्रार्थना किसके लिए करते है? मौन कैसे रखते है? प्रार्थना संस्कृतमे ही क्यों है, गुजराती अथवा मराठी अथवा हिन्दीमे क्यों नही? — आदि अनेक प्रकारसे विचार करके हम प्रार्थनाको प्रचण्ड शक्तिमे परिणत कर सकते है, जबकि लगता है, हम उसके विषयमें कमसे-कम विचार करते है।

'योगः कर्मसु कौशलम्'[१] 'गीता' का यह विचार अत्यन्त प्रौढ़ है। योग अर्थात् जुड़ना। ईश्वरके साथ जुड़नेका नाम योग है। वह कर्म-कौशलसे सहज ही साधा जा

१. गीता, २, ५०।

सकता है, ऐसा गीता माताने सिखाया है। कौशल प्राप्त करनेवाले व्यक्तिको अपने कर्ममें तन्मय अर्थात् विचारमय बनना ही चाहिए। तकलीपर कातते हुए किसी व्यक्तिने सोच-विचारकर चरखेकी महान खोज की। चरखा चलानेवालेने सोच-विचार कर हजारों तकलियोंवाला यान्त्रिक चरखा (मिल) बनाया? मेरी दृष्टिमें उनमें बुद्धि तो खूब चली, लेकिन हृदय न चल पाया। इसीलिए विचार भी सद्विचार हों, धार्मिक भावनासे अनुप्रेरित हो! तथापि विचार-शून्य होनेकी अपेक्षा तो यन्त्रकी खोज करनेवालेकी विचारशक्ति भी पूजा करने योग्य ही है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४६५. पत्र : एलिजाबेथ एफ० हॉवर्डको

२८ अगस्त, १९३२

प्रिय बहन,

तुमने मुझे 'मित्र' सम्बोधित करके बिल्कुल ठीक किया है। मैं तुम्हें 'बहन' ही कहता हूँ। शायद इसमें 'मित्र'की अपेक्षा ज्यादा आत्मीयता है। लेकिन तुम्हें जो ज्यादा अच्छा लगे वही कह सकती हो।

तुमने अपनी बैठकका संक्षिप्त विवरण देकर बहुत अच्छा किया। यह फेलोशिप'[1] कठिन चीज है। जीवनके हर क्षेत्रमें और सभी जातियों और राष्ट्रोंके लोगोंके बीच पारस्परिक अनवरत व्यवहार द्वारा ही बन्धुत्वकी यह भावना उत्पन्न हो सकती है।

महादेव देसाईको जो पत्र तुमने भेजा था उसे मैंने पढ़ा है। तुमने जो सुन्दर छन्द उसमें उद्धृत किये हैं उन्हें मैंने सँभालकर रखा है।

महादेव तुम्हें अभिवादन भेजनेको कहता है।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९३) से।

१. अनुमानतः "फेलोशिप ऑफ रिकंसिलिएशन"।

४६६. पत्र : सुन्दरबहन भागवतको

२८ अगस्त, १९३२

चि० सुन्दरबहन[1],

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें और देशपाण्डेको[2] हम तीनोका आशीर्वाद। हमे ऐसी आशा है कि तुम दोनोका संयुक्त जीवन सुखी होगा, तुम दोनो पूरी आयुको प्राप्त होगे और नित्य सेवापरायण रहोगे। तुम्हारा सम्बन्ध तभी योग्य और सफल माना जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१६९) से।

४६७. पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

२८ अगस्त, १९३२

चि० परसराम,

तुम्हारी नौ पृष्ठोंकी छोटी-सी पुस्तिका मिली। मै तो हँसते-हँसते लोटपोट हो गया हूँ। इतना तो, जवानीमे एक दिन मैंने भाँग पी थी तब हँसा था, ऐसा याद पड़ता है। लेकिन इसका अर्थ यह नही कि तुम ऐसी पुस्तकें भेजते ही रहो। 'स्टाप' के बदले 'स्थिर' अथवा 'खड़े हो' सिखाना तो तुम्हारा काम है।[3] तुम्हारे पत्रके नशेमे गुजरातीके साथ हिन्दी मिल जाती है। इन बच्चोंको कैसे समझाया जा सकता है, यह मै यहाँसे नही बता सकता। तुम्हारे प्रेमका अथवा ज्ञानका उनपर इतना प्रभाव तो पडना ही चाहिए जिससे वे 'स्टाप' के बदले हिन्दी अथवा उर्दू शब्दका इस्तेमाल करने लगे। जैसे-जैसे तुममे सरलता और मधुरता बढेगी, नम्रता आयेगी वैसे-वैसे हिन्दी सीखनेवालोमे हिन्दीके प्रति प्रेमभाव पैदा होगा। जो लडका अथवा लड़की बिल्कुल छोटे बच्चोंको हिन्दी सिखानेके लायक हो उसे अवश्य बच्चोका वर्ग सौपा जा सकता है।

'महाभारत' मे अर्जुन भी क्लान्त हो उठता है और अन्तमे कोई भी जीवित नही रहता, इसका वर्णन करके महाभारतकारने शस्त्रयुद्धकी मूर्खता सिद्ध की हैं।

१. अब सुशीलाबाई।

२. पाण्डुरंग गणेश देशपाण्डे।

३. यह वाक्य हिन्दीमें है।

'गीता' मे भगवानने अपना वर्णन किया है, इसका तात्पर्य यह है कि गीताकारने भगवानके मुखसे वह सब कहलवाया है। बाकी भगवान तो अरूप हैं; वे बोलते-चालते नही। अतः प्रश्न यह उठता है कि भगवानके मुखमें ऐसे वचन रखे जा सकते हैं अथवा नही? मुझे लगता है कि अवश्य रखे जा सकते हैं। भगवान अर्थात् सर्व-शक्तिमान, सर्वज्ञ। सर्वज्ञके मुखसे जो वचन निकलते हैं वे तो केवल सत्य ही हो सकते हैं, इसलिए (मिथ्या) बड़प्पनका सवाल ही नही उठता। चूँकि मनुष्य अपनी शक्तिका ठीक-ठीक अन्दाज नही लगा सकता, इसलिए उसके मुखसे ऐसा वर्णन शोभा नही देगा। लेकिन प्रसग खड़ा होनेपर यदि कोई मनुष्य अपनी ऊँचाईके बारेमें ठीक-ठीक बताता है तो इसमें शेखी बघारने-जैसी कोई बात नही है अपितु यह तो सत्य है। पाँच गज ऊँचा व्यक्ति यदि अपनेको चार गज ही बताये तो इसमें नम्रता नही है। यह तो घोर अज्ञान अथवा दम्भ होगा।

बिल्ली बहन और उसके बच्चे मजे लूटते हैं और खानेके समय अपना हिस्सा लेनेके लिए नियमपूर्वक उपस्थित हो जाते हैं। जो वस्तु उन्हे नही दी जाती उसे वे छूते भी नही।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०२) से। सी० डब्ल्यू० ३४२४ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा

४६८. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२८ अगस्त, १९३२

भाई खम्भाता,

तुम्हारा पत्र और मलहम मिला। मलहम लगाना शुरू कर दिया है। परिणाम सूचित करूँगा।

तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०३) से। सी० डब्ल्यू० ४३८९ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

४६९. पत्र : प्यारेलाल नय्यरको

२८ अगस्त, १९३२

वल्लभभाई अरबी घोडेके वेगसे दौड रहे हैं। संस्कृतकी किताब हाथसे छूटती ही नही है। मैंने ऐसी उम्मीद कभी नही की थी। लिफाफे बनानेमे तो कोई उन तक पहुँच ही नही सकता। वे लिफाफे बिना मापके ही बनाते हैं और आँखोके अंदाजसे ही कागजको ठीक-ठीक काटते हैं, फिर भी उसमे बहुत समय चला गया है, ऐसा नही लगता। उनकी व्यवस्था आश्चर्यजनक है। जो काम करना हो उसे कलपर उठा नही रखते, जिससे याद करनेकी जरूरत हो। आया कि तुरन्त ही निपटा दिया। जबसे कातनेके कामको हाथमे लिया है तबसे कातनेके समयका बराबर ध्यान रखते है। फलतः सूतकी किस्म और गतिमे निरन्तर सुधार होता जाता है। हाथमें लिये हुए कामको वे भूलते तो कदाचित् ही हैं। जहाँ इतनी व्यवस्था हो वहाँ गड़बड तो हो ही कैसे सकती है?

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४७०. पत्र : श्री० दा० सातवलेकरको

२८ अगस्त, १९३२

भाई सातवलेकर,

आपको तीन पत्र लिखे उनका उत्तर न होनेसे कुछ चिंता होती है।[1]

आपका,
मोहनदास

[पुनश्च :]

एकमे संस्कृत शिक्षिकाकी दूसरी सेट भेजनेका भी लिखा है।

सी० डब्ल्यू० ४७६५ से; सौजन्य : श्री० दा० सातवलेकर

१. सातवलेकरको ओरसे उत्तर न मिलनेकी वजह उनके लड़केकी लम्बी तथा गम्भीर बीमारी थी।

४७१. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ अगस्त, १९३२

बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारी मनाही नही होगी तबतक मै उर्दूमें ही खत लिखना पसन्द करूँगा। मासिक धर्मके वक्त पूरा आराम लेनेसे अच्छा ही रहेगा। और दिनोंमे जितना नारणदास कहें उतना ही करना। जिसका दिल साफ है और विकार-रहित है उसे इस जगतमें कुछ भी छुपानेका है ही नही। तुम्हारे दर्दके बारेमें कोई किताबका नाम मै नही जानता। मैं तलाश करूँगा।

बेगम लाजर्ससे पूछो। उसे मालूम होना चाहिए। डा० शर्माको मेरा खत पहुँच गया होगा। तुम्हारे हिन्दी हरफ अच्छे है। ऐसे ही थोड़ा थोड़ा लिखा करो। कुदसियाँ कहाँतक रहनेवाली है?

बापू

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २५५) से।

४७२. पत्र : एक बालिकाको

२८ अगस्त, १९३२

तू यदि आजन्म ब्रह्मचारिणी रह सके तो यह बात मुझे तो निश्चय ही अच्छी लगे। लेकिन मैंने अनेक लड़कों और लड़कियोंको अपने-आपको धोखा देते हुए देखा है। जो व्यक्ति पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहता है, उसमे पूर्ण सत्य होना चाहिए और उसे किसीसे कुछ छिपाना नही चाहिए। ब्रह्मचर्य क्या है, इसका भी उसे पूरा ज्ञान होना चाहिए। विकारोंको वशमे रखना, यह बडी बात है। जो व्यक्ति ऐसा करना चाहे उसे भोगमात्रका त्याग करना चाहिए। तात्पर्य यह कि वह जो करे सो भोगके लिए नहीं, अपितु यह जानकर करे कि ऐसा करना आवश्यक है। इसीलिए जो आवश्यक न हो उसे कदापि न करे। यों खाने-पीने, बैठने-उठने, पहनने-ओढ़नेकी समस्त क्रियाएँ इसी भावसे प्रेरित होनी चाहिए। यह सब करनेकी यदि तुझमें शक्ति हो तो बहुत अच्छा है। न हो, तो नम्रतापूर्वक इसे स्वीकार कर लेना चाहिए और जैसे अन्य सब लड़कियाँ करती हैं वैसे तुझे भी करना चाहिए। उसमे कोई दोष नहीं माना जायेगा। शक्तिसे बाहर कुछ नही किया जा सकता।

[गुजराती]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४७३. पत्र : एक बालिकाको

२८ अगस्त, १९३२

जिसके साथ तुम्हारी सगाई हुई है, तुम्हे उसका विगत इतिहास जान लेना चाहिए। और यदि वह तुम्हें पसन्द न हो तो तुम्हें [अपने अभिभावकोसे] सगाई तोडनेका अनुरोध करना चाहिए। विवाह करनेसे स्पष्ट रूपसे इनकार करनेमें संकोच नही करना चाहिए। लेकिन तुम यदि यह सब करना चाहती हो तो तुम्हे झूठी लज्जाका परित्याग करना चाहिए। विनयभावको न छोडना और जो कष्ट आ पड़ें, उन्हें सहन करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। ऐसा करनेवाले व्यक्तिमे इतनी पवित्रता होनी चाहिए कि वह दूसरोको प्रभावित किये बिना न रहे।

तुम्हे जब गुस्सा आये तो चुप हो जाना चाहिए और रामनाम लेकर उसे निकाल देना चाहिए।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४७४. एक पत्र

२८ अगस्त, १९३२

साँझकी प्रार्थनामे पाँच मिनटका [मौन रखनेका] मेरा सुझाव था। दोनो समय यदि इतना मौन रखा जा सके तो यह निश्चय ही ज्यादा अच्छी बात है। सब लोग यदि एकाग्रचित्त होकर इस मौनमे शामिल हों तो आवाज अवश्य बन्द होगी। बच्चोको भी इतने समयके लिए मौन-पालन करनेकी आदत पड़ जायेगी। मैं तो ऐसी प्रार्थना सभामे भी गया हूँ, जहाँ आधे घटेतक मौन रखा जाता है। यह विलायतकी बात है। हमारे यहाँ मौनकी बडी महिमा है। समाधि भी मौन है। मुनि शब्दकी व्युत्पत्ति भी इसी शब्दसे हुई है। मौनके समय पहले-पहल नींद आती है, मनमे अनेक विचार आते हैं, यह सब सच है। इन्हें दूर करनेके लिए मौनकी जरूरत है। हम लोगोको बहुत बोलनेकी और आवाजें सुननेकी आदत पड़ गई है। इसीसे मौन कष्टसाध्य लगता है। थोडा-सा अभ्यास करनेपर मौन अच्छा लगेगा और अच्छा लगनेपर जो शान्ति मिलेगी वह अलौकिक होगी। हम लोग सत्यके उपासक हैं, इसलिए मौनका अर्थ जानकर उस अर्थके अनुसार मौन-पालन करनेका प्रयत्न करें। मौनमे भी रामनामका जप तो किया ही जा सकता है। मूल बात यह है कि हमारा मन मौनके लिए तैयार रहना चाहिए। तनिक भी विचार करनेपर उसके महत्त्वको समझा जा सकता है। क्या हमें सभामे पाँच मिनटतक स्थिर होकर बैठना नही आता? तुम किसी दिन नाटकमें गये हो? अनेक नाट्यशालाओमे बात करनेकी मनाही होती है। मेरे

जैसा रसिक व्यक्ति तो समयसे एक घंटा पहले ही जाकर बैठ जाये। नाटकके प्रति हमारी रुचि हमें एक घंटेका मौन रखनेके लिए बाध्य करती है। लेकिन इतना ही काफी नही है। नाटक तो चार-पाँच घंटेतक चलता रहता है। उस सारे समय भी देखनेवालेको क्या मौनका पालन नही करना पड़ता? लेकिन यह तो उसे अच्छा लगेगा। क्योंकि नाटक देखना उसके मनके अनुकूल है, इसलिए उसे मौन बुरा नहीं लगता। तब ईश्वरके प्रेमके निमित्त पाँच मिनटका मौन रखना भारी क्यों लगता है? यदि मेरे इस दृष्टिकोणमें तुम्हें कोई भूल दिखाई दे तो मुझे बताना, अन्यथा रसपूर्वक मौन धारण करना और जो लोग मौनके विरुद्ध हैं, उनसे मेरी ओरसे वकालत करना।

लेकिन हमें यह नही मानना चाहिए कि हममें जो दोष हैं, सिर्फ वे ही सहन किये जाने योग्य हैं। मेरी राय तो ऐसी है कि जो सुधरनेकी कोशिश करनेवाले हों हमें उन सबके साथ अच्छे सम्बन्ध रखने चाहिए। तुलसीदास हमें यह सिखाते हैं कि जो अपने दोषोंका पुजारी है अर्थात् दोषोंको गुण समझता है, उससे तो ईश्वर भी दूर भागता है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४७५. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

२८ अगस्त, १९३२

आश्रमसे जो-कुछ सीखनेको मिलता है सो सब अच्छी तरह सीख लेना। लेकिन इतना याद रखना कि सबसे बड़ी शिक्षा तो सत्यकी है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

४७६. पत्र : सुशीलाबहन गांधीको

२९ अगस्त, १९३२

चि० सुशीला,

तेरा पत्र मिला, लेकिन मणिलालका नही। तूने प्रश्न पूछा सो ठीक किया, लेकिन इस तरह हर बातमें बड़ोंसे पूछकर कदम उठानेकी जरूरत नही है। [जीवनके] मूलभूत सिद्धान्तोंको मैं जहाँतक समझ पाया हूँ, सो मैंने तुझे बता दिये थे। तुम दोनों उन्हें जितना ग्रहण कर सके हो उतना याद रखकर, जैसा उचित लगे, सो करना। मुझसे कहाँतक पूछोगे? पूछना तो वस्तुतः अपनी अन्तरात्मासे चाहिए। ऐसा करते हुए तुम्हारे अन्तरसे जो आवाज आये उसके अनुरूप कार्य करना अथवा यथाशक्ति जितना पालन किया जा सके उतना करना। तेरा प्रश्न खादीको लेकर था, यह तो याद है न?

पट्टेका प्रश्न अबतक हल हो गया होगा। मेरे सारे पत्र मिले होंगे। श्री रिचका पत्र पानेपर मैंने एक और पत्र लिखा था। वह भी मणिलालको मिल गया होगा।

देवदास फिलहाल तो ठीक हो गया, ऐसा कह सकते है। हम तीनों मजेमे है। सरदारकी संस्कृत तेजीके साथ आगे बढती जा रही है।

मुझे पत्र लिखनेमे अगर मणिलाल आलस्य करे, तो भी तू न करना।

तू महाराजकुँवर और उसके परिवारसे मिली होगी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७९४)

४७७. नानाभाई इ० मशरूवालाको

२९ अगस्त, १९३२

भाई नानाभाई,

तुम्हारा और सुशीलाका पत्र मिला। मैंने उसे लिख दिया है कि इन विषयोंपर बडोंसे पूछनेकी कोई जरूरत नही। दोनोकी अन्तरात्मा जो कहे उसके अनुसार यथाशक्ति करना चाहिए। मणिलालका पत्र तो नही मिला है। कदाचित् आश्रमकी डाकके साथ आये। हम तीनो मजेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८५) से। सी० डब्ल्यू० ४३३० से भी; सौजन्य: कनुभाई मशरूवाला

४७८. पत्र: हीरालालको[1]

२९ अगस्त, १९३२

मै अपने-आपको मन्दबुद्धि मानता हूँ। अनेक वस्तुओंको समझनेमें मुझे दूसरोसे ज्यादा समय लगता है। लेकिन इसकी मुझे कोई चिन्ता नही। बुद्धिके विकासकी सीमा होती है, लेकिन हृदयके विकासका अन्त नहीं।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड – १

१. संभवतः हीरालाल शाह।

४७९. पत्र : फूलचन्द बापूजी शाहको

३० अगस्त, १९३२

भाईश्री फूलचन्द,

आपका २१ तारीखका पत्र मिला। मैं देखता हूँ कि मेरा ३ जुलाईका पत्र १४ अगस्तको आपके हाथ आया। यदि इस बीच सारा समय मेरा पत्र वहाँ पड़ा रहा हो तो बेहतर यह होगा कि आप अपने पत्र किसी अन्य कैदीके नाम मँगवाये, जिसकी बारी जल्दी आती हो और जिसके नाम औरोंके पत्र न आते हों। ऐसा करनेसे आपको मेरे पत्र जल्दी मिलेंगे। यहाँसे तो मैं आप लोगोंमें से चाहे जिस किसीका पत्र आये, उसका तुरन्त उत्तर दे देता हूँ। यदि हम सारे देशको अपना मानते हों — और मानते भी हैं — तो इस देशके किसी भी भागमे पानीकी एक बूंद अथवा घासका तिनका भी जो दिखाई देता है सो हमारा है। यह बात सबके हृदयमे अच्छी तरह पैठ जानी चाहिए और ऐसा होनेपर यदि किसी भी स्थानपर कोई भी चीज हमारे हाथमें आयेगी तो हम उसका मर्यादापूर्ण ढगसे उपयोग करेंगे, फिर भले ही उसपर अधिकार किसी औरका हो। हमारे अधिकारमें आई हुई वस्तु भी इस देशकी सम्पत्तिकी उपज है। इस बातकी अनुभूति होनेपर कि सारा देश हमारा है, हम अपनी वस्तु और दूसरेकी वस्तुके उपयोगमे कैसे भेदकर सकते हैं? इस [जेलमे] एकान्तवासके समयमे सब भाइयोको चाहिए कि वे इसपर बार-बार विचार करें और इसे अच्छी तरह हृदयंगम कर लें, और यह बहुत जरूरी भी है। आपके यहाँ बालकोंकी संख्या बहुत ज्यादा है, इसलिए बड़ोंकी जिम्मेदारी बढ़ जाती है। आपको इतनी सारी साहित्यिक पुस्तकें किसने दी हैं? वहाँ लोग नई भाषाएँ और नये धन्धे सीख रहे हैं, यह तो बहुत अच्छी बात है। सब लोगोंका उत्साह बढ़ानेकी खातिर मैं इतना कहता हूँ कि यहाँ सरदार नवयुवकोंके-से उत्साहके साथ संस्कृत सीख रहे हैं। उन्होंने सातवलेकरकी [संस्कृत] पाठमालाके छः भाग पूरे कर लिये हैं, और 'गीता'के हर रोज पाँच-पाँच श्लोक याद करते हैं। अभी तीसरा अध्याय चल रहा है। उन्हे जितना समय मिल पाता है वह सारा-का-सारा 'गीता'के अध्ययनमे बिताते हैं; इसमें आश्चर्यजनक प्रगति हो रही है। साथ ही कातना भी जारी है और इसमे दोसे ढाई घटे देते हैं। वे ४० अंकका सूत कातते हैं। इसके अतिरिक्त रोज लिफाफे बनानेका काम तो होता ही है। जितने भी एक ओरसे कोरे कागज अथवा अन्य फेंक देने लायक कागज हाथमे आते हैं, उन सबके वे लिफाफे बना डालते हैं। इस तरह हमें पिछले तीन अथवा चार महीनोंमे लिफाफों पर एक भी पैसा खर्च नही करना पड़ा है। यह मिट्टीको सोना बनाना हुआ। चाहे जितनी नगण्य क्यों न हो, फिर भी देशकी दौलत ही बढ़ी। इसी तरह अन्य चीजोंके उपयोगमें भी ऐसी सावधानी बरती जाती है। महादेव फ्रेंच और उर्दू सीख

रहा है, और ४० अंकका सूत कातता है। ब्रेलवी[1] फ्रेंच सीख रहा है और संस्कृत सीखनेका इरादा भी रखता है। वह खुद अपने साथ रहनेवाले कुछेक मराठी भाइयोंको उर्दू सिखाता है। गंगाधरराव गुजराती सीख रहा है। किशोरलाल नासिक[जेल]में कुछ कन्नड़ भाइयोंसे कन्नड सीख रहा है। आप काम तो वहाँ सुन्दर कर रहे हैं। आपके उस कार्यमे प्रोत्साहन प्रदान करनेके विचारसे ही मै यह सब लिख रहा हूँ।

आश्रमके बालकोसे यदि आदर्श व्यवहारकी आशा न की जाये तो और किससे की जाये? इसीलिए जब आप उन्हे प्रमाणपत्र देते हैं तो मुझे आश्चर्य नही होता। विट्ठल अब जेलसे छूट चुका होगा, लेकिन यदि न छूटा हो तो उससे कहना कि मेरे विचारसे तो उसकी माँ दुःखसे मुक्त हो गई है इसलिए उसका उसे शोक नही करना चाहिए। और विट्ठल तो समझदार है तथा मृत्यु मित्र है, यह जानना भी उसने सीख लिया है। रविशंकरकी सेवा तो भारी होनी ही चाहिए। उसका कब्ज दूर हो गया कि अभी है? रविशंकरका जो लड़का वेडछीमे था, उसका क्या हुआ? वह कहाँ है? हम बहुत बार आप सबकी बाते करते हैं और याद करते हैं।

सब भाइयोंको बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४४५-ए) से; सौजन्य: चन्द्रकान्त एफ० शाह

४८०. पत्र: ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

३० अगस्त, १९३२

चि० ब्रजकिसन,

क्यों? अब तक तुमने क्यों नहिं लिखा। मुझे तुमारे पत्र मिले थे। तुमको मेरे नहिं मिले थे ऐसा कुछ लगता है। एक पत्र तो बहोत लंबा लिखा था। उसमें तुमारे प्रश्नोंका उत्तर था। शरीर प्रवृत्ति कैसी है? साथीयोका अनुभव कैसा हुआ? कृष्ण नेर कहां है? सरदार और महादेव याद करते हैं।

बापुके आशीर्वाद

मूलकी फोटो-नकल (जी० एन० २३९३) से।

१. सम्भवतः एस० ए० ब्रेलवी, बॉम्बे क्रॉनिकलके सम्पादक।

४८१. पत्र : मीराबहनको

३१ अगस्त, १९३२

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारा नियमित पत्र आज मिला। मुझे खुशी है कि तुम्हारा शरीर अब स्वस्थ है। तुम्हारा नुसखा मेरे कामका नही है। उसमे बकरीके दूधका मक्खन प्राप्त करनेकी जरूरत है। मै यह जहमत नही उठाना चाहता। मुझे जरूरत भी नही है, क्योंकि उसके बगैर भी मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा चल रहा है। इसलिए उसको माँगनेका कोई बहाना भी मेरे पास नही है। हमें स्वादकी खातिर व्यंजन नही बनाने चाहिए। मै कई वर्षो तक वैसा कर चुका हूँ। तुम्हे परिवर्तनकी आवश्यकता है, विशेष रूपसे वहाँ। मुझे जो चीज शरीरके लिए आवश्यक लगती है, उसे प्राप्त करनेमे मै संकोच नही करता। आज मैने दूध लिया है। लेकिन मेरा इरादा बाजरा लेना जारी रखनेका है ताकि देखूँ कि दूधके साथ लेनेपर वह मेरा पेट अब जैसा ही साफ रखता है या नही। बिना दूधके इसने बहुत अच्छे परिणाम दिये है। यह बात सभी लोगोंपर शायद ठीक न उतरे। मैने देखा है कि प्रत्येक व्यक्तिके शरीरकी अपनी विशेषताएँ होती है, जिनका पता चलाना पड़ता है।

नन्ही लक्ष्मीसे कहना कि उसके जेलमे बन्द किये जानेसे पहले मुझे उसका छोटा-सा पत्र[1] मिला था। मै चाहता हूँ कि उसे अब जो समय मिला है उसका वह अच्छेसे-अच्छा उपयोग करे। मुझे इसकी भी खुशी है कि शान्ताबहन और गंगाबहन भी तुम्हारे साथ है। उनसे कहना कि वे अपनी गुजराती पूरी करें और अपनी हिन्दीको पक्का करें। और हम सबोंकी ओरसे उनको प्यार कहना।

मै इस खबरके लिए बिलकुल तैयार था कि तुम्हे वहाँसे हटाया नही जायेगा। तुम्हें वहाँ भी ठीक रह सकना चाहिए। तुमने जो घी और खजूर भेजनेको कहा था, उसके बारेमे नारणदासने मुझे लिखा था। आशा है तुम्हे दोनो चीजे मिल गई होगी। मैने खजूर लेना छोड दिया क्योकि मुझे अच्छे और घुन-रहित खजूर नही मिल सके। तुम छुहारे खा सकती हो, जो कि सख्त और सूखे होते है। मै नही खा सकता।

मै आशा करता हूँ कि तुम्हे कमसे-कम कुछ मित्रोंसे मुलाकात कर सकनेकी अनुमति मिल जायेगी। लेकिन न भी मिले, तब भी अजनबी तो आखिर कोई भी नही है। अजनबी, अपराधी और जेलर-सहित सभी मित्र है। यहाँ हमने पशुओंमें भी मित्रोंकी पहचान करना सीखा है। यहाँ एक बिल्ली है, जो हमारे लिए रहस्यका उद्‌घाटन करती है। और अगर हमारे पास पर्याप्त सूक्ष्म दृष्टि

१. जिसमें कहा गया था: "आखिरकार, बापू, मैं भी स्वतन्त्रताके मन्दिरमें प्रवेश कर रही हूँ।..."

होती तो हम पेड़ों और पौधोंकी भाषाकी भी कद्र कर पाते और उनकी मैत्रीका मूल्य समझ पाते।

हम सबोंकी ओरसे प्यार-सहित,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२३६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७०२ से भी।

४८२. पत्र: कुसुमबहन देसाईको

३१ अगस्त, १९३२

चि० कुसुम (बड़ी),

तेरा पत्र मिला। तुझे मेरा वह पत्र मिल गया होगा, जिसमे मैंने लिखा है कि मेरा अभिप्राय किन पत्रोंसे है। तेरी अस्थिरताको मै यहाँ बैठे-बैठे देख सकता हूँ। लेकिन इस अस्थिरतासे किसी-न-किसी दिन स्थिरता अवश्य आयेगी, मै अपने इस विश्वासको कभी नही छोड़ूँगा।

क्या तू कभी खुर्शीद बहनको[1] लिखती है? हम तीनों मजेमें है। सरदारका संस्कृतका अभ्यास खूब जोर-शोरसे चल रहा है, यह सब तो तुझे मालूम ही होगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८४६) से।

४८३. पत्र: वासुदेव गणेश जोशीको[2]

३१ अगस्त, १९३२

भाई वासु काका,

नारणदासको आपने जो पत्र लिखा था, वह उसने मुझे भेजा है। उसमें आपका प्रेम छलक रहा है। लेकिन मै उस प्रेमका उपयोग नही कर सकता। मेरे और आपके दर्दमे बहुत फर्क है। मुझे वैसे तो कुछ भी महसूस नही होता। अमुक ढंगसे हाथ घुमाने पर ही दर्द होता है। दर्द बढ़ता भी नही है और मुझे किसी तरहकी तकलीफ भी नही है। डाक्टर लोग हाथको आराम देनेकी बात ही कहते है। ऐसी स्थितिमें, यदि मै चाहूँ तो भी डा० देशमुखको बुलानेकी अनुमति कदाचित् नही मिलेगी। किसी किस्मका भय हो तभी जेल अधिकारी बाहरसे डाक्टर बुलानेकी इजाजत देते

१. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

२. पूनाकी चित्रशाला प्रेसके मालिक तथा लोकमान्य तिलकके निकट सहयोगी।

है। मेरे विषयमें ऐसी तो कोई बात है नहीं, और मेरी तबीयत यों सब तरहसे ठीक ही रहती है। इसलिए अभी तो आपके प्रेमको सहेज कर रखूंगा। आवश्यकता जान पड़ी तो उसका उपयोग करूँगा। डा० देशमुखने आनेके लिए जो तत्परता दिखाई है, उसके लिए मेरी ओरसे उन्हें धन्यवाद देना।

आप यहाँ थे, तभी सरदार आपके बारेमें बात किया करते थे और मिलनेके लिए भी उत्सुक थे। लेकिन वह तो कैसे हो सकता है?

पाँवमें इतना कष्ट होनेपर भी आपने उसकी परवाह नहीं की, यह पढ़कर हम सब बहुत प्रसन्न हुए। भगवान करे, आप दीर्घायु हो।

आपको यह जानकर बहुत खुशी होगी कि सरदार बहुत लगनसे संस्कृतका अध्ययन कर रहे हैं।

आपके द्वारा भेजे गये मोजोको मैंने उपहारके रूपमें सँभालकर रखा है।

हम सबकी ओरसे वन्देमातरम्। गुजरातीमें क्या आपने ही लिखा है?

मोहनदास

[पुनश्च :]

आपके पत्रकी शीर्ष-पंक्तिमे "Tipe printers" लिखा है। "Tipe" तो भूल है न? पत्रकी शीर्ष-पंक्तिमें ऐसी भूल नहीं होनी चाहिए।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६१६) से।

४८४. पत्र : शान्ता एस० पटेलको

३१ अगस्त, १९३२

चि० शान्ता (पटेल),

छूटनेसे पहले जो चिट्ठी तूने लिखी थी, वह मुझे मिली। जैसा कि तूने लिखा है, तेरे पत्रकी राह देखूंगा। तू किसके साथ रहती है? अपना सारा हिसाब ब्योरेवार लिखना। अपनी मानसिक और शारीरिक अवस्थाके बारेमे बताना। पढने-लिखनेका क्या किया? किसके साथ मिला-जुला करती थी और क्या-क्या सोचा करती थी, सो सब लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०६५) से। सी० डब्ल्यू० १६ से भी; सौजन्य : शान्ताबहन पटेल

४८५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३१ अगस्त, १९३२

चि० प्रेमा,

इस बार तुझे क्या नया विशेषण दूं, यह मुझे नहीं सूझ पड़ता। तू जो माँगेगी वही दूंगा।

परचुरे शास्त्रीके लिए पुस्तकें अभी नही मिली है, लेकिन अब मिल जायेंगी।

मैं नही समझता कि उन दो बहनोके आनेसे यह कहा जा सकता है कि अब पढी-लिखी बहने आने लगी है। ऐसे तो भूली-भटकी कोई आ ही जाती है। लेकिन उनमे से किसीको हम यहाँ रख नही सके है। बशर्ते कि तुझे पढ़ी-लिखी महिला माने तो भले ही माने। लेकिन यह तो अपवाद हुआ। किसी एक मुर्गेके बोलनेका यह मतलब यह नही कि सवेरा हो गया।

रामभाऊके बारेमे मुझे अफसोस है। उसे क्लाससे निकाल कर तूने ठीक ही किया। लेकिन उसे भुला मत देना। उसपर नजर रखना और यदि उसे सीधे रास्ते ला सके तो लाना। धीरूके सम्बन्धमे तेरी परेशानीको मै समझता हूँ। तुझमे यदि उदारता और हिम्मत हो तो तुझे रमाबहन और जोशी[1] से उसकी बात करनी चाहिए और उसके हितके लिए कोई रास्ता निकालना चाहिए। हम अपने मार्गमे स्वयं ही काँटे रोपते हैं और फिर उनके दंशकी शिकायत करते हैं। हम अपनी शक्तिके भरोसे कही जाये तो कदाचित् सफल न हो, लेकिन ईश्वरकी शक्तिके साथ जाये तो घोर अन्धकारमे भी उजाला देखेंगे। "मुझमे ऐसा प्रेम नही है"—यदि तू यह तर्क रखेगी तो तुझे मेरा कुछ कहना ही व्यर्थ है। और फिर मै यह मानता हूँ कि मुझमे प्रेम है, फिर भी मै अनेक लोगोको कैसे नही जीत सका हूँ? "तो फिर मुझे तुझे कुछ कहनेका क्या अधिकार है", मुझसे यह कहकर यदि तू अपना हृदयद्वार बन्द कर ले, तब भी मै विवश हो जाऊँगा। मै अपनी अपूर्णताको स्वीकार करता हूँ, लेकिन तू इसका अनुकरण क्यों करती है? अपने अनुभवसे मै तुझे जो [सलाह] दूं, तू उसे ग्रहण कर। साथीके दोषोका हमे संग्रह नही करना चाहिए अपितु उन दोषोसे हमे बचना चाहिए और उसमे जो गुण हो उन्हे ग्रहण करना चाहिए। इसके अतिरिक्त मै तेरे समान हार कर नही बैठ जाता, बल्कि कठोरतम हृदयके भी ईश्वरकी कृपासे पिघलनेकी आशा रखता हूँ और इसीलिए प्रयत्नशील रहता हूँ।

यदि तू रसोईमे अखबार पढती-सुनाती है और हँसी-मजाक करती है तो इसे मै खराब बात ही मानूंगा। रसोईमे तो मौन रखा जाना चाहिए। वहाँ कुछ

१. छगनलाल जोशी।

पढ़कर क्यों सुनाया जाये? और फिर, नारणदासका ध्यान चारों ओर होगा। वहाँ तू कुछ पढ़े और पढकर सुनाये, यह मैं ठीक नही समझता। और यदि तू रसोईमें कुछ पढ़ना ही चाहे तो ऐसा तुझे गम्भीरतापूर्वक करना चाहिए। इसलिए तू इतना परिवर्तन तो कर ही डालना। यदि तू रसोईमे हँसी-ठट्ठा और नखरे करेगी तो इसका बालको पर क्या प्रभाव होगा? यदि वे सब वैसे ही करने लगें, तब तो रसोईघरमे धमाचौकडी ही मच जायेगी और अनुशासन भग हो जायेगा। यह सब 'स्मार्ट लिटिल गर्ल'के 'स्मार्ट' भेजेमे आया अथवा उसकी सारी 'स्मार्टनेस' आश्रममें खत्म हो गई है।

इस समय इससे ज्यादा नही।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०१) से। सी० डब्ल्यू० ५७५४ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कटक

४८६. पत्र: नारायण मोरेश्वर खरेको

३१ अगस्त, १९३२

चि० पण्डितजी,

तुम्हारा पत्र मिला। जिस तरह आनन्दीको 'गीता'में आनन्द आने लगा है, उसी तरह धीरे-धीरे अन्य लोग भी उसमे दिलचस्पी लेने लगेंगे, बशर्ते कि हमारी अपनी रुचि उसमे बनी रहे। तुम्हारे प्रयत्न करने पर भी रामभाऊके सुधरनेकी कोई सम्भावना मुझे दिखाई नही देती। उसे खरे-खोटेके भेदकी कोई समझ ही नही है। पर मुझे उम्मीद है कि किसी-न-किसी दिन उसकी आँख खुलेगी।

आनन्दीको दूध पीने और आराम लेनेके बारेमे लिख रहा हूँ। उसके कार्यक्रमके विषयमे मैं यहाँसे अभी कुछ नही लिख सकता। बिना परिश्रमके उसे जो कार्य अच्छा लगे वह उसे करे, यही पर्याप्त है। जो कमजोर हैं, उन्हे ऐसा कोई काम नही दिया जाना चाहिए जो उन्हे भाररूप जान पडे।

लक्ष्मीबहनकी दाढमे चाँदी किसने भरी? यह काम बहुत नाजुक है। दाढका गड्ढा जबतक पूरी तरह साफ न हो तबतक उसे भरा नही जाना चाहिए। थोडी-सी भी असावधानी हो तो अन्दर सडाव हो जाती है, जो नुकसान करती है।

मोहन आदिने जो पत्र लिखवाये है वे अच्छे है। इनसे यह प्रकट होता है कि अक्षर-ज्ञानका बुद्धिके विकासके साथ बहुत थोडा सम्बन्ध है। बुद्धिके विकासको अक्षर-ज्ञानके साथ जोडनेसे बहुत जड़ता पैदा हो जाती है। हम यदि बच्चोंको मुँहज़बानी जितना ज्ञान दिया जा सकता हो उतना ज्ञान दिया करें और अक्षर

लेखनकी कला भी सिखा दे, तो अन्ततः खुद-बखुद पुस्तकें पढ़कर ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

[पुनश्च :]

काका के बारेमें मुझे मालूम है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २३२)से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन ना० खरे

४८७. पत्र : मथुरी एन० खरेको

३१ अगस्त, १९३२

चि० मथुरी,

तेरा पत्र मिला। तुझसे जितनी मेहनत हो सके उतनी मेहनतके लिएही मैंने तुझे लिखा है, यह याद है न? तेरी पीजनेकी रफ्तार तो अच्छी है। लेकिन क्या रफ्तारके मुताबिक ही पूनियाँ अच्छी होती है? जितना करो उतना सुन्दर और बढ़िया होना चाहिए, फिर भले ही रफ्तार कम हो। रफ्तार तो धीरे-धीरे ही बढ़ती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६७)से; सौजन्य : लक्ष्मीबहन एन० खरे

४८८. दैनन्दिनी, १९३२[1]

(१-६-१९३२से ३१-८-१९३२ तक)

१ जून, बुधवार, यरवडा मन्दिर[2]

२०८ तार काते। पत्र — आनन्दानन्दको। जया, राधा, रणछोड, गजानन, लक्ष्मीबहन, मथुरी, रमा आकर मिल गये। कीर्तिकरका 'वेदान्त'[3] शुरू किया।

२ जून, बृहस्पतिवार

२७८ तार काते। पत्र — मीरा, भोगीलाल व्यास, शान्ति, हेमप्रभा देवीको। गंगाबहनका पत्र आया। 'हिन्दू एस्ट्रॉनॉमी' पूरा किया। सर जेम्स जीन्सकी खगोलशास्त्रपर पुस्तक आरम्भ की है।

१. इसके पूर्वांशके लिख देखिए खण्ड ४९।

२. दैनन्दिनीमें हर तिथिके साथ इसका उल्लेख है, लेकिन यहाँ बादकी तिथियोंमें इसे दोहराया नहीं गया।

३. स्टडीज इन वेदान्त।

३ जून, शुक्रवार

२१४ तार काते। पत्र—तिलक, प्यारअली, फीरोजा तलयारखाँ, नानासाहब, प्रभावतीको।

४ जून, शनिवार

२२४ तार काते। पत्र—गंगाबहन, परचुरे शास्त्री, काकाको। आज डाह्याभाई और मणि मिलने आये। मैं उनसे मिलने नहीं गया। और मीराबहनके सम्बन्धमें यह उत्तर आया कि उसने सविनय अवज्ञा आन्दोलनका संचालन किया था।

५ जून, रविवार

२२२ तार काते। आज डाक्टर मेहताने बायें हाथमें खपचियाँ बाँधी। वीसापुरसे अमृत नानावटीका पत्र आया।

६ जून, सोमवार

२४८ तार काते। पत्र—जाल नौरोजी, रमणलाल शाह, मारी पीटर्सनको।

७ जून, मंगलवार

१९१ तार काते। पत्र—आश्रमको—२९, जिसमें "'तितिक्षा' और 'यज्ञ' के विषयमें" नामक लेख भी शामिल है; अमृतलाल नानावटी (वीसापुर), करसनदास, नागरदास, शंकरलालको पत्र लिखे। जेल-अधीक्षकका विचार था कि हाथ पर खपचियाँ जिस तरह बाँधी गई है उसका कोई असर नहीं होगा। इस कारण उन्हें खोलकर मजबूतीसे बँधवाया, जिससे सारा दिन हाथ खुला रहा।

८ जून, बुधवार

२१२ तार काते। दुर्गा, आनन्दी, बाबलो आकर महादेवसे मिल गये। आज त्रिवेदीकी ओरसे दूरबीन आई।

९ जून, बृहस्पतिवार

२२५ तार काते। पत्र—बालकृष्ण कोलते (फतहपुर), सावित्री (लुधियाना), प्रभाशंकर (राजकोट), मीरा, पोलक, घनश्यामदास, कर्नल डॉयल और रेहानाको।

१० जून, शुक्रवार

२१२ तार काते। पत्र—हरजीवन कोटक, रामकृष्ण डालमियाको। जेठालाल गांधी (अध्यापक), और बिन्दु माधव गुरले[1] मिला। आजसे पट्टीसे छुट्टी पाई। वासुदेव कीर्तिकरका 'वेदान्त' पूरा किया।

१. साथी कैदी।

११ जून, शनिवार

२०६ तार काते। पत्र — छगनलाल जोशीको, भट्टाचार्यको (विपिनबाबूकी पुस्तकके बारेमें)। लेडी रामनाथनकी 'रामायण'को पढ गया। डाह्याभाई वल्लभभाईसे आकर मिल गया। घनश्यामदासके पत्रक पढ़ना शुरू किया।

१२ जून, रविवार

२१६ तार काते। आजसे अलोना भोजन शुरू किया है। हाथकी खपचियोंसे कोई लाभ नहीं हुआ, इससे मीरा खूब दुखी होगी। उसके सन्तोषके लिए और परिणाम देखनेके लिए ही अलोना भोजन आरम्भ किया है। साथमें रोटीमें सोडा डालना बन्द कर दिया है। घनश्यामदासका छोटा-सा पत्रक पूरा किया।

१३ जून, सोमवार

१८८ तार काते। पत्र — सकलातवाला, नानाभाई, कुरेशी, कर्नल डॉयलको; आश्रम को ३८ पत्र लिखे। चूंकि कल छुट्टी है, इसलिए आश्रमकी डाक आज दे दी।

१४ जून, मंगलवार

२४० तार काते। पत्र — भारती, विट्ठल, गंगाबहनको। गंगाबहनको अटेरन, 'लोकशिक्षण', 'पुरुषार्थ', और 'चन्द्रकान्त' भेजे। आज कर्नल डॉयल मिल गये। दोपहरको आश्रमकी डाक आई।

१५ जून, बुधवार

१९९ तार काते। पत्र — तारामती, महावीर, नारणदासको। आज पतली टट्टी हुई, इसलिए रोटी और बादाम नहीं लिये; अच्छा रहा; वजन १०४½ [पौंड] हो गया है।

१६ जून, बृहस्पतिवार

२१५ तार काते। पत्र — देवदास, सुमंगल, बली, अगाथा, एन्ड्र्यूज, एमा हारकर, शंकर कालेलकरको। हनुमानप्रसादको तथा देवदासको तार। उर्दू चौथी [पुस्तक] पूरी की।

१७ जून, शुक्रवार

२११ तार काते। पत्र — विट्ठलदास, मीरा, उदित मिश्रको। देवदासके बारेमें उसका अपना और हनुमानप्रसादका तार मिला।

१८ जून, शनिवार

२१९ तार काते। पत्र — सरोजिनी नायडू, छगनलाल जोशी, अमतुलको। देवदासके बारेमें सयुक्त प्रान्तके गवर्नरको तार दिया। मीराका पत्र कर्नल डॉयलको भेजा।

१९ जून, रविवार

२०४ तार काते। कल शामको मर्न[1] की बनाई अलोनी रोटी खाई, लेकिन कदाचित् वह पची नहीं। आज शामको नहीं खाई। ढेर-सारे पत्र लिखे। शाहकी मुद्राशास्त्र-सम्बन्धी पुस्तक जारी है। 'शहीद लड़का' नामक उर्दू नाटक समाप्त किया। 'खेती' नामक पुस्तक शुरू की है।

२० जून, सोमवार

१९८ तार काते। पत्र – व्रजलाल, मथुरादास, नानाभाई (अकोला), शर्मा, मणिलाल, लॉरी सॉयर, दामोदरदास, वैंकर, श्रीराम शर्मा, वझे, राघा, शंकर जिलानी, नरसिंहनको।

२१ जून, मंगलवार

२११ तार काते। आज पेटमें मरोड़के हलके आसार दिखाई दिये, जिससे केवल अंगूर ही लिये।

पत्र – आश्रमको (३२ पत्र लिखे, जिनमें प्रार्थना-सम्बन्धी लेख और तोतारामजीका पत्र भी शामिल है)। इसके अलावा हेमप्रभादेवी, रेहाना, नवीन, कार्ल हीथ, एरिस्टार्शी, लालवाणी, कमला नेहरू, ललिता, रोहिणी, जानकीबहन, लक्ष्मीराजाको भी पत्र लिखे।

२२ जून, बुधवार

२२३ तार काते। पत्र – गंगाबहन, खम्भाता, ग्लैडिज रिगवेल, देवी, पोलक, मगनलाल, हनुमानप्रसाद, तिलक, शान्ता पटेल (आणंद) और त्रिवेदीको।

आज मेजरने मुझसे दूध-रोटी लेनेका बहुत आग्रह किया। वजन डेढ़ पौंड कम हुआ। मोसंबी आई, दूध भी आया। दोनो लिये।

२३ जून, बृहस्पतिवार

२१० तार काते। पत्र – मीरा और देवदासको। आज दूधमें रोटी ली। मीराबहनके मेरी पत्रमें तबीयतसे सम्बन्धित अंग जेल-अधीक्षकको अच्छा न लगनेके कारण बदल दिया।

२४ जून, शुक्रवार

२०८ तार काते। पत्र – होरेस अलेक्जेंडरको। टॉमस[2] और कर्नल डॉयल आये। यहाँकी आजकी मुलाकातमें मोरारभाई, मराठे, डा० फाटक थे।

२५ जून, शनिवार

२२० तार काते। घनश्यामदासकी ओरसे खादी आई। मीराबहनने शहद भेजा। डाह्याभाई और मणिबहन आकर वल्लभभाईसे मिल गये। 'किमियागर' शुरू की।

१. एक स्कॉटलैंडवासी जो गांधीजीके साथ यरवडा जेलमें कैद था।

२. बम्बई सरकारके गृहसदस्य।

२६ जून, रविवार

२२४ तार काते। आज नई धोतियाँ निकाली। अंगूरोंकी दो पेटियाँ और आईं।

२७ जून, सोमवार

२०७ तार काते। पत्र – आश्रमको (३१ पत्र लिखे, जिनमें "अहिंसाका पालन कैसे किया जाये" शीर्षक लेख भी है), कर्नल डॉयलको।

२८ जून, मंगलवार

२२२ तार काते। पत्र – गंगाबहन, जोशीको; कर्नल डॉयलको मीराके पत्रके सम्बन्धमें और अपने दाँतोके बारेमें दो पत्र लिखे। आश्रमकी डाक आई।

२९ जून, बुधवार

२३३ तार काते। पत्र – बिड़ला, खम्भाता, रेहाना, लक्ष्मीदास, माधवदास, बलवन्तराय, छगनलाल जोशी, मीरा, दामोदरदास, प्रेमकुँवरको।

आज वजन १०४ पौंड हुआ।

३० जून, बृहस्पतिवार

२१७ तार काते। पत्र – जायजी, मीठूबहन, शीरीबहन और देवदासको।

१ जुलाई, शुक्रवार

२०३ तार काते। हीरालाल, श्रीमती लिण्डसे, मीरा, प्रिवा, सातवलेकर, क्रेसवेल (उसकी चार पुस्तकें), स्वामी आनन्द और किशोरलालके पत्र मिले।

२ जुलाई, शनिवार

२४४ तार काते। पत्र – किशोरलाल, स्वामीको। डाह्याभाई और मणि आये।

३ जुलाई, रविवार

२१२ तार काते। पत्र लिखे। आश्रमका इतिहास लिखा।

४ जुलाई, सोमवार

२१२ तार काते। पत्र – आश्रमको (३२ पत्र लिखे, इनमें "सत्यका पालन कैसे करें" शीर्षक लेख भी शामिल है), मंजुला, माताप्रसाद, दिनकर, राधा, लेडी विट्ठलदास, फूलचन्द बापूजी, रावजीभाई, मगनभाई चतुरभाई, हरजीवन कोटकको। आश्रमका इतिहास लिखा।

५ जुलाई, मंगलवार

२३४ तार काते। त्रिवेदीको दूरबीन वापस भेजी। देवदासकी ओरसे पापाके पति वरदाचारीकी मृत्युका तार आया। पापाको और राजाको तार भेजे।

६ जुलाई, बुधवार

२०० तार काते। पत्र—देवदास, बिड़ला, सरलादेवी, भाई परमानन्दको। डॉयल आये—मेरे दाँतों और मीराको पत्र लिखनेके सम्बन्धमें बातचीत कर गये। वजन १०५½ पौंड हो गया—तीन दिन बादाम लेनेके बाद।

७ जुलाई, बृहस्पतिवार

२२५ तार काते। पत्र—फीरोजाबहन तलयारखाँको। सातवलेकरने संस्कृत पाठावली भेजी। वल्लभभाईने संस्कृतका अभ्यास शुरू किया।

८ जुलाई, शुक्रवार

२२३ तार काते। पत्र—रेहाना, जोहरा, लक्ष्मी और पापाको।

आज मेजरने मुझे सूचना दी कि मेरे नाम आनेवाले पत्र और मैं जो पत्र भेजता हूँ वे अबसे सरकारके पास जाया करेंगे। इस सप्ताहकी आश्रमकी डाक वहाँ गई है। कुरेशी, मोहनलाल, मूलशंकर दवे और हरिदास मिले।

९ जुलाई, शनिवार

२३६ तार काते। पत्र—कर्नल डॉयल, गोकीबहनको। आज आई० जी०[1] के यहाँसे जो थोड़ी डाक आई उसमें कृष्णदास और बाबू मोतीलाल रायके पत्र थे। आज मोसबी यहींसे मँगवाई।

१० जुलाई, रविवार

२१५ तार काते। आजसे वल्लभभाईने कातना शुरू किया। १२५ तार एक घंटेमें काते। आज 'किमियागर' और 'वैदिक विनय' समाप्त किये। 'गंगा' का वेदांक और प्रेमचन्दजीकी 'रामचर्चा' शुरू की।

११ जुलाई, सोमवार

२१० तार काते। पत्र—आश्रमको (३३ पत्र लिखे; इनमें "शिक्षा" नामक लेख भी शामिल है)।

१२ जुलाई, मंगलवार

२०८ तार काते। जेल-अधीक्षकने मुझसे कहा कि यरवडाके कैदियोंके नाम जो पत्र लिखे जाते हैं, वे भी सरकारके पास भेजे जाने चाहिए। बादाम आये।

१३ जुलाई, बुधवार

२२७ तार काते। पत्र—कर्नल डॉयल, गंगाबहन, जोशीको। नये बादाम खाने शुरू किये।

१. इंस्पेक्टर जनरल ऑफ प्रिज़न्स।

१४ जुलाई, बृहस्पतिवार

२४५ तार काते। शाहकी 'बैंकिंग' नामक पुस्तक और न्युकमकी 'ऐस्ट्रॉनॉमी' (खगोलशास्त्र) पूरी की। आयरकी 'फॉरिन एक्सचेंज' (विदेशी मुद्रा), खरासकी 'ऐस्ट्रॉनॉमी' (खगोलशास्त्र) —और 'स्वाध्याय संहिता'[1] शुरू की।

१५ जुलाई, शुक्रवार

२४५ तार काते। पत्र —खाँ, वेलुसामी, मीराबहन, सु० कु० सेनगुप्तको। डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट निरीक्षणके लिए आये। सोमा रिहा हो गया।

१६ जुलाई, शनिवार

२३२ तार काते। आश्रमकी और दूसरी डाक आज आई।

१७ जुलाई, रविवार

२०८ तार काते। आश्रमकी डाक पूरी की।

१८ जुलाई, सोमवार

२२५ तार काते। पत्र —आश्रमको (१६ पत्र लिखे, साथमें "व्यक्तिगत प्रार्थना" शीर्षक लेख भी), देवदास, हामिदअली, लक्ष्मो, खोड़ीदासको।

'द वे ऑफ द क्रॉस' तथा 'पैगम्बरका पश्चिमको सन्देश' ('द प्रॉफेट्स मेसेज टु द वेस्ट') पढ गया।

१९ जुलाई, मंगलवार

२२९ तार काते। आज गांडीव पर थोड़ी पूनियाँ काती।

पत्र —म्यूरियल, एरिस्टार्शी, मोतीलाल राय, कृष्णदास, वॉशबर्न, एस्थर, नरहरि देवशर्मा, अली हुसेन, गणेशदत्त गौड़, शैलेशचन्द्र मजमुदार, नित्यानन्दम्, आदिगल, सिडनी नीलीको। क्लेटन मिलनेके लिए आये। गंगाबहनकी ओरसे पुस्तकें आईं।

२० जुलाई, बुधवार

२३२ तार काते। पत्र —सातवलेकर, नटवरलालको।

२१ जुलाई, बृहस्पतिवार

२२३ तार काते। पत्र —नरगिस, शीरी और खुर्शेदको। खुर्शेदके बारेमें लाहोरके सुपरिंटेंडेंटको तार।

आज छगनलाल, मुकुन्द डाक्टर और शंकरसे मिला। शंकरको हीरालालके सम्बन्धमें उलाहना दिया। आज मेजरने डायोथर्मीका उपचार किया। देवदासके फिरसे अस्वस्थ होनेका तार मिला।

२२ जुलाई, शुक्रवार

२२१ तार काते। पत्र —देवदास, मीराको। आज भी डायोथर्मीका उपचार किया। पुस्तकें आईं। आज कुछेक पत्रोंके डाकमें रवाना होनेकी तालिका मिली। उसमें अधिकांश १९ तारीखके पत्र हैं।

१. वैदिकमुनि हरिप्रसाद रचित।

२३ जुलाई, शनिवार

२१३ तार काते। पत्र—कर्नल डॉयल, महाराज राघवदास, रोहिणी, लाला मोहनलालको।

२४ जुलाई, रविवार

२१० तार काते। सारा दिन आश्रमके पत्र लिखनेमें, कर्नल डॉयलको लिखे जानेवाले पत्रके मसविदेको तैयार करनेमें और पढ़नेमें गया।

२५ जुलाई, सोमवार

२०७ तार काते। पत्र—आश्रमको (१९ पत्र लिखे, शीर्षकमें 'देखरेखकी अनावश्यकता' शीर्षक लेख भी शामिल है), काका, कर्नल डॉयल, मेजर भंडारीको।

२६ जुलाई, मंगलवार

२३६ तार काते। पत्र—पोलक, तारामती, मथुरादास, हॉयलैंड, देवदास, रमणीकलाल, मीराबाई, रेहाना, हमीदाको। मालवीयजीको तार।

२७ जुलाई, बुधवार

२१७ तार काते। पत्र—हीरालाल, लिली, राजगोपालाचारी, शौरी, सुवैया, ललिताको। आज वजन १०४ पौंड हो गया। डेढ़ पौंड कम हुआ। कारण फलका अभाव लगता है।

२८ जुलाई, बृहस्पतिवार

२५० तार काते। पत्र—हरजीवन कोटक, खुर्शेद, लक्ष्मी, वेंकटरत्नम्, राधा, मीराबहन, बा को। वाजपेयीको तार। आश्रमकी डाक आई। आज लोकेयर की 'ऐस्ट्रॉनॉमी' (खगोलशास्त्र) शुरू की। तीन दिनोंसे 'सीरत-उन-नबी' शुरू की हुई है। नाडकर्णीकी पुस्तिका भी।

२९ जुलाई, शुक्रवार

१९७ तार काते। पत्र—नरगिस, निर्मला।

३० जुलाई, शनिवार

२२८ तार काते। पत्र—नाजुकलाल, नगीनदास, अमृतलाल, देवदास गांधी। छगनलाल प्राणजीवन और देवदासको तार।

३१ जुलाई, रविवार

२१६ तार काते। आश्रमकी डाक पूरी की। उसमें काफी समय दिया। आज बहुत दिनोंके बाद केले लिये।

१ अगस्त, सोमवार

२१६ तार काते। पत्र—आश्रमको (३६ पत्र लिखे, जिनमें "'गीता' कण्ठस्थ करें" नामक लेख भी है), बिड़ला, ब्रजकिशन, श्यामकिशन, सुभाषबाबू और मीराको। कमलाको तार दिया।

२ अगस्त, मंगलवार

२०७ तार काते। पत्र – भक्तिबहन, प्रभाशंकर, दामोदरदास, विमला, मोहनलाल भट्ट, प्रभावती, जेठालाल, जीवाभाईको।

३ अगस्त, बुधवार

२१६ तार काते। पत्र – कृष्णदास, जगन्नाथ बजाज, जवाहरलाल, हनुमानप्रसाद, मोदी, देवदास, शिवप्रसादको। मेजरने सूचना दी कि सरकारी आदेश प्राप्त हुआ है, जिसके अनुसार बाहर भेजी जानेवाली डाककी जाँच भी अबसे वे ही करेंगे।

४ अगस्त, बृहस्पतिवार

२२५ तार काते। पत्र – कमला नेहरू, वरदराजुलू, मणिलाल, कैलेनबैंक, सुशीला, प्रागजी, नारणदास, रतिलाल मेहता, चम्पा, मंजुला, रतिलाल सेठ, छगनलाल मेहता, माणेकबाई, लीलावती, जेकी, रतिलाल, मणि, मणिलाल, नानालाल, खीमचन्द, मगनलाल, पोलकको। छगनलालको तार दिया। शिवप्रसादको पत्र लिखा।

५ अगस्त, शुक्रवार

२०५ तार काते। पत्र – मंजुला, एस्थरको। छगनलाल, मंजुला, नारणदासको तार। आज ब्रेलवी, जमनादास, हरगोविन्द पण्डचा और रामदाससे मुलाकात की।

६ अगस्त, शनिवार

२१२ तार काते। पत्र – ब्रेलवी, छगनलाल मेहता, तारामती, श्रीमती सेनगुप्त, हेमप्रभा, हरदयाल नागको। गोखले और सुगणेन्द्र उपवास कर रहे हैं। उनके सम्बन्धमें बातचीत करते हुए अन्ततः उनसे मेरा मिलना तय हुआ। उनसे मिला और उन्होंने कहा कि यदि नियमके अनुसार कैदियोंको ब्राह्मणके हाथका बना खानेका अधिकार न हुआ तो वे अपना आग्रह छोड़ देंगे। इसपर नियमोंकी जांच की और मैंने उन्हें समझाया, जिसपर उन्होंने उपवास छोड़नेकी बात स्वीकार की। इस काममें आज काफी समय गया।

७ अगस्त, रविवार

१९६ तार काते। आश्रमके पत्र लिखनेमें समय बिताया।

८ अगस्त, सोमवार

२०४ तार काते। पत्र – आश्रमको (३७ पत्र लिखे, जिनमें डाक्टर मेहता विषयक लेख भी है), मंजुला, अन्सारी, मीरा व राजेन्द्रबाबू, देवदासको। छगनलालको तार दिया।

९ अगस्त, मंगलवार

२३२ तार काते। पत्र – मोहनलाल भट्ट, भक्तिबहन, नरसिंहन, जयदेवी कोठारी, प्रभाशंकर, बलवन्त, रमणीक, आनन्दशंकर, प्रभावती, सरोजिनी नायडूको। छगनलालका तार आया।

१० अगस्त, बुधवार

२१७ तार काते। मगनलालको तार दिया। [पत्र] – उमीया, मानवन्लेकर, हैदरी, सुरेश बनर्जी, मंजुला, छगनलाल मेहता, बनारसी, विट्ठलदास पुरुषोत्तम, केनाकर, करसनदास, माधवदास, लक्ष्मी, पापा, हैरिसन, कर्नल डॉयल को।

११ अगस्त, बृहस्पतिवार

२०८ तार काते। पत्र – परचुरे शास्त्री, शंकर, ठक्करबापा, मियेना आश्रमकी बहनोंको, देवदास, सोरिला मेरीया, लेनार्ड स्किफ, त्रिवेदी, मनु, जोहाना, फिनमाइन, इन्द्रसेन, वेरियरको।

१२ अगस्त, शुक्रवार

२१६ तार काते। पत्र – रामदास गांधी, प्रेमी जयरामदास, शास्त्रीको।

आज वल्लभभाईकी और मेरी बतीसीके लिए कर्नल डॉयल डाक्टर दलालको लाये।

मेजरके साथ अन्सारीके सम्बन्धमें अनपेक्षित रूपसे आज तीखी वार्ता[1] हुई।

१३ अगस्त, शनिवार

२०६ तार काते। पत्र – देवदास गांधी, बहराम खम्भाताको। मुझे आज भी डा० दलालके पास जाना पड़ा। आज आलू खाये।

१४ अगस्त, रविवार

२२३ तार काते। आज भी डाक्टर दलालके यहाँ गया। सरोजिनीकी पधाने अंगूर आदि भेजे। अंगूर खाये। आज मगन चरखेपर कातना शुरू किया। चूंकि कुहनीमें कुछ ज्यादा दर्द होता था इसलिए काफी महीनोंके बाद आज गांडीव पर बायें हाथसे एक पूनी कातनेकी कोशिश की; अच्छा रहा।

१५ अगस्त, सोमवार

२१४ तार काते। पत्र–आश्रमको (४४ पत्र लिखे, इनमें "वाचन और विचार [–१]" शीर्षक लेख भी शामिल है), विमला पटेल, नरगिस, कमला सोनावाला, सत्यमूर्ति, जानकीबहनको।

कब्ज होनेके बावजूद और भूख लगनेके कारण मैंने आज मूर्खतावश दोपहरको खा लिया। फलस्वरूप उलटी हो गई। इस बार उलटी बिना परिश्रमके अपने-आप हुई।

१६ अगस्त, मंगलवार

२०२ तार काते। पत्र — पद्मजा, भक्तिबहन, मोहनलाल भट्ट, मीरा।

आज नई बतीसी मिली। बादाम आये। कैम्पके लिए 'डेन्जर्स ऑफ ओबिडियन्स' और विपिन पालका वृत्तान्त भेजा। 'वेदमां अध्यात्म' कल पूरा किया। हर्पल और दूसरी कमेटियोंकी रिपोर्टें शुरू की।

१. वार्ताकी रिपोर्टके लिए देखिए महादेवभाईनी डायरी, भाग–१।

२९ अगस्त, सोमवार

२२७ तार काते। पत्र — आश्रमको (५४ पत्र लिखे, इनमें "सविचार कार्य और विचाररहित कार्य" शीर्षक लेख भी शामिल है), खम्भाता, अभ्यंकर, नौतमलाल, पापा, लक्ष्मी, एलिजाबेथ हॉवर्ड, सुन्दर भागवत, एन्ड्रयूज, सावित्री, पद्मजाको।

आज गेहूँकी रोटी खाई। बिल्लीके एक बच्चा हुआ। आज आश्रमके इतिहासका प्रथम वाचन पूरा किया।

३० अगस्त, मंगलवार

२०३ तार काते। पत्र — लिली, हीरालाल, देवी वेस्ट, नन्दुबहन, रेवाशंकर, मेघजी, शास्त्री, सुशीला, मणिलाल, नानाभाई, शारदा मेहता, नूरबानू, कर्नल डॉयल को। बतीसीकी फिर जाँच करवाई।

३१ अगस्त, बुधवार

२०९ तार काते। आजसे दूध शुरू किया। पत्र — दामोदरदास, राधा, व्रजकिशन, सन्तोक, बेलाबहन, मगनलाल मेहता, मणिलाल, रामदास, नीमू,' फूलचन्द, भक्तिबहनको।

मूल गुजराती (एस० एन० १९३३७) से।

परिशिष्ट

परिशिष्ट

साम्प्रदायिक निर्णयपर बातचीत[1]

१७ अगस्त, १९३२

साम्प्रदायिक निर्णय आज प्रकाशित कर दिया गया। बापू शाम तक अपना काम-काज इस तरह करते रहे जैसे कुछ हुआ ही न हो। . . . मैंने कहा कि यह नया संविधान मॉण्टेगू-चेम्सफोर्ड सुधारोंसे भी बदतर है। बापू बोले, "इसमे तो कोई शक नही। उन सुधारोंका आधार लखनऊमें कांग्रेस और मुस्लिम लीगके बीच होनेवाला समझौता था। किन्तु यह संविधान तो देशमे ऐसी फूट डालनेकी चाल है कि देश अपने पैरोंपर फिर कभी खड़ा ही न हो सके।" शामको प्रार्थनासे ठीक पहले वह मुझसे बोले, "अच्छा तुम और सरदार [वल्लभभाई] स्थितिपर विचार कर लो और तब तुम्हें जो कहना हो, वह निस्संकोच मुझे बताओ। सैमुअल होरको मैंने जो पत्र लिखा है, उसमें वर्तमान परिस्थितिसे निपटनेके लिए मुझे जो कदम उठाने चाहिए उनकी मैंने चर्चा की है। अतएव मुझे ब्रिटिश सरकारको चेतावनी देनी पड़ेगी।" . . . और फिर रातको बापू मैक्डोनॉल्डको पत्र लिखने बैठ गये।

१८ अगस्त, १९३२

बापूने सवेरे पत्र समाप्त करके कहा, "तुम कातना छोड़कर यह पत्र पढ़ डालो, ताकि इसे तुरन्त भेज दिया जाये।" सरदार और मैंने उसे पढ़ा। तब वे [सरदार] बोले, "इसमे [साम्प्रदायिक] निर्णयकी दूसरी बातोंका तो कोई उल्लेख ही नही है। इसका अर्थ कहीं यह न माना जाये कि बाकी सब बातें आपको मान्य हैं।" बापूने उत्तर दिया, "नही, मेरे विचार तो सुविदित हैं। फिर भी, यदि तुम चाहो तो एक अनुच्छेद जोड़ देता हूँ, हालाँकि तब मुझे बहसमें पड़ना होगा। मैं इस पत्रमें कोई बहस नही छेड़ना चाहता। क्योंकि दलीलें तो सैमुअल होरके पत्रमें दे ही चुका हूँ।" मैंने कहा कि बापू इतना ही लिखें कि उनकी आत्मा तो समूचे निर्णयके प्रति विद्रोह करती है, किन्तु उसका कुछ अंश ऐसा है कि उसे रद करवानेके लिए वे अपने प्राणोंकी बाजीतक लगा देंगे। बापू बोले, "नही, ऐसी तुलना करना उचित नही। ऐसा करनेपर वे यही कहेंगे कि मेरा उद्देश्य समूचे निर्णयको रद करवाना है और उसके कुछ विशिष्ट अंशोंका तो बहाना बनाया है। यह बात तो सही है कि मैं समूचे निर्णयको

१. देखिए "पत्र: रैमजे मैक्डोनॉल्डको", १८-८-१९३२।

रद करवाना चाहता हूँ, किन्तु रातको मैंने एक क्षण इस प्रश्नपर विचार किया कि दूसरे मुद्दोंको भी शामिल किया जाये या नहीं, और फिर उन्हें शामिल न करनेका ही निश्चय किया।"

शामको फिर इसी विषयपर चर्चा हुई। बापूने कहा, "दूसरे मुद्दोंको मैं शामिल कर ही नहीं सकता, क्योंकि यह तो धर्ममें राजनीति मिलानेके समान होगा। वस्तुतः दोनों प्रश्न एक दूसरेसे भिन्न हैं।" फिर कहने लगे, "मैंने सारी बातोंको अपने दिमागमें एक बार फिर दोहराकर देखा है। जो-कुछ तुम सुझा रहे हो, उन सभी बातोंपर मैंने यह निश्चय करनेसे पहले विचार किया था। मुसलमानों और अन्य लोगोंको पृथक् मताधिकार देना खतरनाक है। वे लोग अंग्रेजोंके साथ मिल जायेंगे और सब मिलकर हिन्दुओंको दबायेंगे। किन्तु इस प्रकारके गठबंधनसे निपटनेके तरीके मैं सोच सकता हूँ। [हममें आपसमें] झगड़े करानेवाले बाहरी लोग एक बार चले जायें, उसके बाद हम अपनी समस्याओंसे सफलतापूर्वक निपट सकते हैं। किन्तु जहाँतक तथाकथित अछूतोंका सवाल है, मेरे पास दूसरा कोई उपाय ही नहीं है। उन बेचारोंको मैं भला कैसे यह सब बातें समझाऊँ-बुझाऊँ? जब दुर्भाग्य पीछा करता रहे तो कष्टको अपने सिर ओढ़ लेना कोई नई बात नहीं है। सुधन्वा भला कैसे खौलते तेलकी कड़ाहीमें कूद गया और प्रह्लाद कैसे अंगारेके समान गर्म लोहेके खम्भेसे लिपट गया? स्वराज्य-प्राप्तिके बाद भी कई सत्याग्रह आन्दोलन होंगे। कई बार मनमें आया है कि स्वराज्य-स्थापनाके बाद मुझे कलकत्ता जाकर धर्मके नामपर होनेवाली पशु-बलि बन्द करवानी चाहिए। कालीघाटके बकरोंका तो अन्त्यजोंसे भी बुरा हाल है। वे मनुष्योंपर सींगोंसे भी हमला नहीं कर सकते। उनके बीच कोई अम्बेडकर कभी पैदा नहीं हो सकता। इस हिंसाका ध्यान आनेपर मेरा खून खौल उठता है। भला लोग बकरोंके बदले बाघोंकी बलि क्यों नहीं देते?"

सुबह हमने बापूके इस कदमकी सम्भावित प्रतिक्रियाओंपर विचार किया। मैंने कहा, "इसका कई ढंगसे गलत अर्थ लगाया जायेगा। यहाँ भारतमें इसका बेतुका अन्धानुकरण किया जायेगा और अमेरिकामें कहा जायेगा कि गांधीने अनशन करके रिहाई पा ली।" बापू बोले, "मैं जानता हूँ। अमेरिकामें तो कोई भी बात लोगोंके गले उतर जायेगी, और गलेसे उतारनेमें उनकी मदद करनेके लिए ब्रिटिश एजेंट तो मौजूद हैं ही। बहुतसे लोग तो यह भी कहेंगे कि मैं दिवालिया हो गया था और मेरी आध्यात्मिकता लाभका सौदा साबित नहीं हो रही थी; इसी कारण मैंने धूर्त दिवालियोंकी तरह आत्मघात कर लिया; और यहाँ इस देशमें अन्धानुकरण और अर्थका अनर्थ किया जायेगा। सरकार सम्भवतः मुझे रिहा कर देगी और जेलके बाहर मरने देगी या जैसाकि मैक्स्वीनीके मामलेमें हुआ था, शायद जेलमें ही मरने दे। हमारे अपने लोग भी टीका करेंगे। जवाहरलालको यह कदम जरा भी पसन्द नहीं आयेगा। वह कहेंगे ऐसा धर्म बहुत हो चुका। किन्तु कोई परवाह नहीं। जब मैं अपने आध्यात्मिक अस्त्रागारका ऐसा अत्यन्त शक्तिशाली अस्त्र प्रयोगमें लाने चला हूँ, तो उसको गलत अर्थ लगनेके भयसे या ऐसी ही बातोंसे हरगिज नहीं रोका जा सकता।"

१९ अगस्त, १९३२

सुपरिंटेंडेंट आया और पूछने लगा कि बापू ऐसा उग्र कदम क्यों उठाने जा रहे हैं? बापू बोले कि और कोई चारा ही नही है। सुपरिंटेंडेंटने शंका प्रगट की कि सम्भवत: होरने ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलको सूचना भी नहीं दी है। बापूने कहा, "मेरा विश्वास है कि सूचना अवश्य दी होगी। किन्तु आपकी शंका भी निराधार नही है। होर ऐसा व्यक्ति है कि शायद सूचना न भी दे। और मन्त्रिमण्डलको खबर लग ही जाये तो ऐसा भी कह सकता है कि जो व्यक्ति ऐसी छोटी-सी बातके लिए मरनेको तत्पर हो, उसके मामलेकी सूचना देकर मन्त्रिमण्डलको परेशान करनेकी आवश्यकता उसे महसूस नही हुई। लेकिन मेरे विचारमे यदि उसने सूचना नही दी है तो वह अपनी नौकरी और प्रतिष्ठा दोनो गँवा बैठेगा।" सुपरिंटेंडेंटने पूछा कि बापूके अनशनका इंग्लैंडमें क्या प्रभाव पड़ेगा। बापूने उत्तर दिया, "कुछ भी नहीं। यदि सब 'अछूत' एकमत होकर संयुक्त मताधिकारकी माँग करें तो भी अंग्रेज कह सकते है कि जो अल्पसंख्यक-जाति सदियोसे दबाई जाती रही है, उसकी भलाई किस बातमें है, इसका निर्णय केवल अंग्रेज ही कर सकते हैं, क्योकि दमनकर्ता तो उस जातिकी आवश्यकताओंको समझ नही सकते।" फिर वे बोले, "मेरा सारा जीवन ही इस प्रकार बीता है। यह अन्तिम कदम तो मेरे जीवनका श्रेष्ठतम कार्य है। मुझे भान तक नही था कि इसके लिए मुझे अपने प्राणोंकी आहुति देनी होगी। लेकिन यह एक महान हेतु है। इस दिशामें शुरुआत आजसे ५० वर्ष पहले हुई थी, जब मैं बालक ही था। मैं धूम्रपान करने लगा और फिर मुझे लगा कि मैं एक गलत चीज कर रहा हूँ और मुझे अपना अपराध स्वीकार कर लेना चाहिए। तभीसे मैं सत्यको जानने और उसका अभ्यास करनेकी दिशामे बराबर प्रगति करता रहा हूँ।"

तीसरे पहर कलेक्टर आया और कहने लगा: "यदि वे यह निर्णय न दें तो फिर क्या करें? कोई-न-कोई समाधान तो होना ही चाहिए। ऐसे मामलोंमें पूर्ण न्याय और सत्यका आग्रह कैसे रखा जा सकता है?" बापूने कहा, "नही, निराकरण अनुचित भले हो, लेकिन ऐसा होना चाहिए जो सबको मान्य हो। इस निर्णयके पीछे तो कोई सहमति नही है। सरकारने इंग्लैडमें हमसे समाधान बतानेको कहा था, किन्तु उन्होने यह नहीं देखा कि यह बात वे एक ऐसी सभामें कह रहे थे जिसमें सरकारके चुने हुए आदमी ही भरे हुए थे और इसी कारण उनका सन्तोष कभी नही किया जा सकता था।" . . .

सवेरे बापूने कहा था, "सत्याग्रहका नियम है कि यदि किसी मनुष्यके पास कोई भी हथियार न हो और उसे कोई रास्ता न सूझ पड़ता हो, तब उसे देह-त्यागका अन्तिम कदम उठाना चाहिए। राजपूत स्त्रियाँ क्या करती थीं? कमलावतीने, जिसका वृत्तान्त उस दिन हम पढ़ रहे थे, क्या किया था? उसने संकल्प कर लिया था कि जीते-जी वह शत्रुके हाथमे नही पड़ेगी। अत: उसने मित्र मानकर मृत्युका आलिंगन कर लिया।"

२० अगस्त, १९३२

आज मैंने और सरदारने तय किया कि बापूके आसन्न अनशनकी खबर किसी-न-किसी प्रकार बाहरी जगततक पहुँचानी चाहिए। किन्तु बापूका दिया हुआ वचन भंग किये बिना यह असम्भव था। उन्होंने वचन दिया है कि वे अपनी ओरसे यह सूचना बाहर नही भेजेंगे। हम उनके साथ विश्वासघात नही कर सकते थे। सरदार बहुत ही चिन्तित थे। . . .

२१ अगस्त, १९३२

सरदार बोले, "लोग हमसे कहेंगे कि हम तो यहाँ आपके साथ थे और हमें किसी-न-किसी प्रकार बाहर सूचना भेज देनी चाहिए थी, जैसेकि डाह्याभाईके साथ जो हर सप्ताह मुझसे मिलता है।"

बापूने उत्तर दिया, "ऐसी बात तो सोचने लायक भी नही है। क्या हम उनसे कह सकते हैं कि हम अब बाहरी दुनियाको किसी-न-किसी प्रकार इसकी खबर भेज देंगे? हमने अपनी ओरसे पूरी गोपनीयताका वचन दिया है और हमारे लिए तो यह चर्चा यही खत्म हो जानी चाहिए। तुमने देखा होगा कि मैंने मैक्डोनॉल्डके नाम अपने पत्रमे पूर्ण उदासीन भावसे कहा है कि यदि वे ऐसा होने दे तो मै चाहता हूँ कि जनमतपर मेरे पत्रोका प्रभाव पड़े। मान लो कि यदि आज ही मालवीयजी और राजगोपालाचारीको मेरे आसन्न अनशनकी खबर लग जाये तो भला वे क्या कर सकते हैं? यह तो कुछ ही दिनोका मामला है। मेरे विचारमे इन दोनो नेताओको भी हलका-सा आघात पहुँचना चाहिए। राजाजी चतुर व्यक्ति हैं और वे तुरन्त समझ जायेंगे कि मुझे ऐसा कदम क्यो उठाना पड़ा। यह आकस्मिक आघात उन्हे कारण समझनेमे मदद देगा। देखते नही कि इस पत्रमे मैंने कोई तर्क पेश नही किये है। क्या मै एक लम्बा आरोप-पत्र नही बना सकता था? किन्तु मैंने अपनी बात उस एक ही मुद्दे तक सीमित रखी है, जिसके लिए मै खुशीसे प्राणोका बलिदान कर सकता हूँ। मैंने यह प्राण एक ज्यादा महान उद्देश्यके लिए बचाकर रखे थे, लेकिन बीचमे यह अवसर आ गया है। अब मै क्या कर सकता हूँ? यह सत्याग्रह कांग्रेसियोके विरुद्ध तो है नही जोकि जेलमे पड़े हुए हैं; यह तो गैर-कांग्रेसियोके विरुद्ध है ताकि वे समझे कि वे क्या कर रहे हैं। देखते नही आप कि 'अछूतो' के विषयमें ब्रिटिश सरकारके प्रस्तावोसे उनमे से कोई भी व्यक्ति जरा भी उद्विग्न नही हुआ है। यह निष्क्रियता अत्यन्त घिनौनी है और इससे निपटनेका और दूसरा कोई उपाय नही है। हरिजनोको पृथक् मताधिकार मिलनेके सम्भावित परिणामोको सोचकर मेरा मन दहल उठता है। दूसरी सभी जातियोको पृथक् मताधिकार दिया जाये, तो भी इसकी गुजाइश रहेगी कि मै उनके साथ व्यवहार रख सकूँ, किन्तु 'अछूतों' के साथ व्यवहार-सम्बन्ध बनाये रखनेका मेरे पास और कोई उपाय ही नही है। ये बेचारे पूछेंगे कि मै, जो उनका मित्र होनेका दम भरता हूँ, क्या इसी कारण सत्याग्रह कर रहा हूँ कि उनको कुछ विशेष अधिकार मिल गये है; वे लोग तो अलग होकर

भी मेरे साथ ही मत देंगे। किन्तु वे नहीं समझते कि पृथक् मताधिकारके फलस्वरूप हिन्दुओंमें ऐसी फूट पैदा होगी कि रक्तपातकी नौबत आ जायेगी। 'अछूत' गुंडे मुसलमान गुंडोंके साथ समान उद्देश्यसे मिल जायेंगे और सवर्ण हिन्दुओंकी हत्याएँ करेंगे। क्या ब्रिटिश सरकारको इसका कोई अनुमान नही है? मैं ऐसा नही मानता। इतना ही नही, अब ऊपरसे वे लोग इर्विनको भी बीचमे खीच लाये हैं। कैण्टरबरीके आर्कबिशपने कहा कि इर्विनके सहयोगके बिना वे लोग कुछ कर ही नही सकते। और अब एक सच्चा ईसाई इस जघन्य योजनाका भागीदार बन गया है।"

"नही, नही, वल्लभभाई। खबर पहलेसे प्रकाशित करनेमें नुकसान ही है, आवश्यकता तो आकस्मिक आघात पहुँचानेकी है। इस कदमको अगर तुम एक गम्भीर भूल मानते, तब तो और बात थी। तुम दोनों भी मेरे इस निर्णयसे सम्बन्धित हो, इस कारण कुछ जिम्मेदारी तो तुम्हारी भी है, किन्तु [इस निर्णयकी] अन्तिम जबावदेही तो केवल मुझपर ही है, क्योंकि जो बात मुझे सूझी मैं वही कर रहा हूँ। यह मामला ऐसा है जिसमे किसी दूसरेकी सहमतिकी आवश्यकता नही है। बम्बईके दगेके दिनोमे मैंने जब अनशन किया तब चित्तरजन दास और मोतीलाल नेहरूने जोर देकर कहा था कि मुझे अनशनसे पहले उनसे सलाह कर लेनी चाहिए थी। किन्तु मैंने उन्हें समझाया कि मैंने एक कांग्रेसीके नाते नहीं, बल्कि एक मनुष्य होनेके नाते अनशन किया था। मैं एक विशेष धर्मका पालन करता हूँ, और उसीके सिद्धान्तानुसार अनशन करता हूँ। हिन्दू-मुस्लिम तनातनीके सिलसिलेमे मैंने जब अनशन किया था उसके बारेमे हकीम अजमल खाँसे भी मैंने यही बात कही थी। आज भी मेरे लिए यह राजनैतिक नही, बल्कि केवल धार्मिक प्रश्न है।"

२२ अगस्त, १९३२

[महादेव देसाईके प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजी बोले]: ". . . दलित वर्ग आज घोर सकटमे है और दु:खकी बात तो यह है कि किसीको इस खतरेका कोई भान नही है। सम्भव है कि जब मैं रिहा होऊँ, उस समयतक स्थिति ऐसी बिगड चुकी हो कि सुधारे न सुधारी जा सके। शायद अनेक 'अछूत' मुसलमान बनाये जा चुके होंगे, अथवा सम्भव है सवर्ण हिन्दुओंने उन्हें कुचलकर उनसे अपनी अधीनता स्वीकार करा ली होगी। ब्रिटिश सरकारके निर्णयका यह हिस्सा मुझे इतना खतरनाक मालूम होता है कि यदि बाकी सभी हिस्से स्वीकार्य होते तो भी एक इसीको काटनेके लिए ऐसा कदम उठाना पड़ता। . . ."

[अंग्रेजीसे]

द डायरी ऑफ महादेव देसाई, भाग-१, पृष्ठ २९१-३०४

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली : गांधी साहित्य और तत्सम्बन्धी कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय : पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जिसमें गांधीजीके सम्बन्धित कागजात रखे हैं।

'एडवांस' : कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' : बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'भावनगर समाचार' : भावनगरसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' : नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

बम्बई सरकारका गृह-विभाग।

'(द) डायरी ऑफ महादेव देसाई', खण्ड – १ (अंग्रेजी). वालजी गोविन्दजी देसाई द्वारा गुजरातीसे अनुवादित और सम्पादित, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५३।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद' : सम्पादक : काका कालेलकर, प्रकाशक : मार्तण्ड उपाध्याय, १९५३।

'बापुना पत्रो – ६ : ग० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) : सम्पादक : काकासाहब कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) : सम्पादिका : मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ९ : श्री नारणदास गांधीने', भाग १ (गुजराती) : सम्पादक : नारणदास गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६४।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' : हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम मुद्रणालय, प्रयाग, १९५७।

'महादेवभाईनी डायरी', खण्ड – १ (गुजराती) : सम्पादक : नरहरि द्वा० परीख, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) : सम्पादक : एलिस एम० बार्न्स, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५६।

'सत्याग्रहाश्रमनो इतिहास' (गुजराती) : नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५०।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ जून, १९३२ से ३१ अगस्त, १९३२ तक)

१ जून: यरवडा सेंट्रल जेलमें गांधीजीका कारावास जारी रहा। गांधीजीने मीराबहनको लिखा कि यदि सरकार तुम्हें मुझसे मिलनेकी अनुमति नही देगी तो मैं मुलाकातें बन्द कर दूंगा।

पुलिसने वर्धाके सत्याग्रह आश्रमपर कब्जा किया।

३ जून: लॉर्ड लोथियनकी अध्यक्षतामें मताधिकार समितिकी रिपोर्टका प्रकाशन हुआ।

४ जून: गांधीजीको सरकारकी ओरसे पत्र मिला, जिसमें मीराबहनको गांधीजीसे मिलनेकी अनुमति देना अस्वीकार कर दिया गया था। गांधीजीने मुलाकातियोंसे न मिलनेका निश्चय किया।

६ जून: आश्रमवासियोंके लिए "'तितिक्षा' और 'यज्ञ'के विषयमे" शीर्षक लेख लिखा।

९ जून: गांधीजीने कर्नल डॉयलको पत्र लिखा कि जबतक सरकार मीराबहनके विषयमे अपने निर्णयपर पुनर्विचार नही करती तबतक मैं किसी भी मुलाकातीसे भेंट नही करूँगा।

१० जून: सह-बन्दियो जेठालाल गांधी तथा विन्दु माधव गुर्लेसे भेंट की।

१४ जून: कर्नल ई० ई० डॉयल भेंट करने आये।

१५ जून: गोरखपुर जेलमें बन्दी देवदासकी बीमारीके सम्बन्धमें तार प्राप्त हुआ।

१८ जून: तार द्वारा सर मैलकम हेलीसे अनुरोध किया कि देवदासको यरवडा या देहरादून जेलमे स्थानान्तरित किया जाये और मीराबहनने अपने बारेमे लगाये गये तथाकथित आरोपोंका खण्डन करते हुए सरकारको जो पत्र लिखा था उसे अग्रेषित किया।

१९ जून: "प्रार्थना" शीर्षक लेख लिखा।

२४ जून: कर्नल ई० ई० डॉयल मिलने आये।

२५ जून: "अहिंसाका पालन कैसे किया जाये" शीर्षक लेख लिखा।

३ जुलाई: "सत्यका पालन कैसे करें" शीर्षक लेख लिखा।

५ जुलाई: वरदाचारीकी मृत्युपर च० राजगोपालाचारी तथा उनकी पुत्रीको सवेदनाके तार भेजे।

६ जुलाई: कर्नल ई० ई० डॉयल मिलने आये।

८ जुलाई: तेजबहादुर सप्रू तथा मुकुन्दराव जयकरने [गोलमेज सम्मेलनकी] परामर्श समितिसे त्यागपत्र दे दिया।

१० जुलाई: "शिक्षा" शीर्षक लेख लिखा।

१३ जुलाई : कर्नल ई० ई० डॉयलको पत्र लिखा, जिसमे अपनी डाकमें होनेवाले विलम्बके प्रति विरोध प्रकट किया और इस सम्बन्धमे स्पष्टीकरण माँगा।

१७ जुलाई : "व्यक्तिगत प्रार्थना" शीर्षक लेख लिखा।

२१ जुलाई : गांधीजीको देवदासके दुबारा अस्वस्थ होनेका तार प्राप्त हुआ; सह-बन्दियो छगनलाल जोशी, शकर तथा मुकुन्दसे भेंट की।

२४ जुलाई : "देखरेखकी अनावश्यकता" शीर्षक लेख लिखा। गुजराती, हिन्दी और उर्दूमे अपने पत्र-व्यवहारके सम्बन्धमें कर्नल ई० ई० डॉयलको पत्र लिखा।

३१ जुलाई : "गीता कण्ठस्थ करे" शीर्षक लेख लिखा।

३ अगस्त : रंगूनमे डा० प्राणजीवनदास मेहताका देहावसान।

४ अगस्त : डा० प्राणजीवनदास मेहताके लडके छगनलाल को सवेदनाका तार भेजा।

५ अगस्त : सह-बन्दियो जमनादास, त्रेलवी, रामदास तथा हर-गोविन्दसे भेंट की।

६ अगस्त : भूख-हड़ताल करनेवाले दो सह-बन्दियोसे भेंट की और उन्हें अनशन छोड देनेके लिए राजी किया।

७ अगस्त : एक लेखमे डा० प्राणजीवनदास मेहताको श्रद्धांजलि अर्पित की।

१४ अगस्त : "वाचन और विचार – १" शीर्षक लेख लिखा।

१७ अगस्त : मैक्डोनॉल्डने साम्प्रदायिक निर्णय (कम्यूनल अवार्ड)की घोषणा की।

१८ अगस्त : गाधीजीने सर रैमजे मैक्डोनॉल्डको लिखे पत्रमे घोषणा की कि यदि सरकारने 'कम्यूनल अवार्ड' वापस नहीं लिया तो मैं २० सितम्बरसे आमरण अनशन करूँगा।

१९ अगस्त : सह-बन्दियों गंगाधरराव, शंकर तथा देवीदास घेवरियाके भतीजेसे मिले।

२१ अगस्त : "वाचन और विचार – २" शीर्षक लेख लिखा।

२६ अगस्त : कर्नल ई० ई० डॉयल गाधीजीसे मिलने आये तथा उनसे अनुरोध किया कि वे अनशन करनेके अपने निश्चयपर पुर्नविचार करे।

२८ अगस्त : गांधीजीने "सविचार कार्य और विचाररहित कार्य" शीर्षक लेख लिखा।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

उ

ऋ

ए

ऐ

ओ

क

ख

झ

ट

ठ

ड

ध

न

प

भ

व

श

स

ह